



श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी-साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

**Shriramvriksha Benipuri ke Dairy-Sahitya ka
Vishleshnatmak Adhyayan**

अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी के हिंदी-विभाग से
पी-एच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तावित

शोध-प्रबंध-सार

सन् 2013

शोध निर्देशक

डॉ० वेद प्रकाश

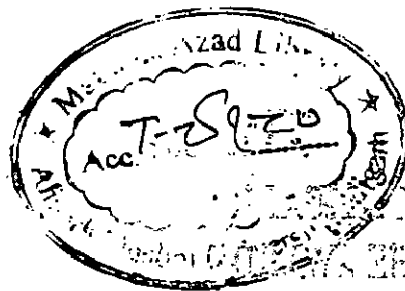
शोधार्थी

प्रेरणा माहेश्वरी

हिंदी-विभाग

अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी,
अलीगढ़

THESIS



शोध-प्रबंध-सार

श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी-साहित्य का
विश्लेषणात्मक अध्ययन

THESIS

शोध—प्रबंध—सार

श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी—साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

यूरोप में उन्नीसवीं सदी परिवर्तनों की सदी थी। इस युग में नए-नए अन्वेषण और आविष्कार हुए, धर्म और दर्शन की नई व्याख्या हुई, कला और विज्ञान की नई साधना का समारंभ हुआ, राजनीतिक और समाज व्यवस्था में नई सांस्कृतिक चेतना का संचार हुआ। धर्म की अपेक्षा दर्शन का महत्त्व बढ़ा। धर्म निरपेक्ष मानववाद का पथ प्रशस्त हुआ। बुद्धिजीवियों का पदार्पण हुआ, जो स्वभाव अथवा मन को वश में करने के बदले उसके विकास एवं परिणति में आस्था रखते थे। अंग्रेजी शिक्षा के माध्यम से हम यूरोपीय ज्ञान—विज्ञान से परिचित हुए और प्रगति का एक नया मार्ग मिला। विचारों की स्वतंत्रता का द्वार उन्मुक्त हुआ। इन परिवर्तनों के कारण साहित्य और कला के क्षेत्र में भी तेजी से नए चिंतन और नए प्रयोग दिखाई देने लगे।

भारत में नवजागरण का संबंध भी भाषा और धर्म से रहा है। इन सब परिवर्तनों का प्रभाव भारत पर भी पड़ना अनिवार्य था। अंग्रेजी के प्रभाव में आने के बाद भारतीयों के आचार—विचार, रहन—सहन और क्रिया—कलाओं में व्यापक परिवर्तन हुआ। अब वह किसी बात को मानने से पहले उसका विश्लेषण करने लगे। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल लिखते हैं—“जब अंग्रेजी का प्रभाव हम पर पड़ा तब हमें संसार की गति का ज्ञान हुआ।” भारत में सामाजिक परिवर्तन के कार्य राजराममोहन राय, रवीन्द्रनाथ टैगोर, दयानंद सरस्वती, महात्मा गांधी, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, बंकिमचन्द्र चटर्जी आदि लोगों ने किए जो अंग्रेजी शिक्षा से भली भांति

परिचित थे। भारतेन्दु हरिश्चंद्र जो कि अपने समय के हिंदी गद्य एवं पद्य दोनों क्षेत्रों में अपनी प्रतिभा रखते थे। साधारण जनता तक अपनी बात पहुँचाने के लिए उन्होंने अनेक माध्यमों को चुना। भारतेन्दु समाज के प्रत्येक भाग में आ रहे परिवर्तन को निरंतर महसूस कर रहे थे। उन्हें यह परिवर्तन हिंदी भाषा में भी लगा। सन् 1873 ई० में उन्होंने कहा था— 'हिंदी नयी चाल में ढली।' 'नयी चाल में ढलना' हिंदी भाषा का एक क्रांतिकारी परिवर्तन साबित हुआ, क्योंकि हिंदी भाषा का स्वरूप भारतेन्दु से पहले स्थिर नहीं मिलता है। भारतेन्दु युग में साहित्यकारों को अभिव्यक्ति के लिए पद्य के साथ-साथ गद्य का माध्यम भी मिल गया था; जो बुद्धि को काव्य की अपेक्षा अधिक प्रभावित करता है। फलतः इस युग में गद्य, साहित्य का समर्थ माध्यम बना है और जीवन का आभास कराने वाली अनेक नई विधाओं का विकास हुआ। आत्मकथा, यात्रा-वृत्तान्त, संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्टाज, इंटरव्यू, पत्र और जीवनी आदि गद्य विधाओं के साथ साहित्य-जगत में एक विशिष्ट विधा की रचना हुई जिसे डायरी कहा गया।

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी बहुमुखी प्रतिभा के लेखक थे। उन्होंने गद्य की अनेक विधाओं में लेखन-कार्य किया। हिंदी गद्य-साहित्य जगत् में डायरी विधा की समृद्ध होती परंपरा में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बेनीपुरी ने लगभग 13 वर्ष (1950-1963) तक डायरी 'डायरी के पन्ने' लिखी। चाहे देश में रहे या विदेश में, उन्होंने डायरी लिखने के लिए प्रायः रोज़ ही समय निकाला। पाँचवें दशक के आरंभ में उन्होंने यूरोपीय देशों की यात्राएँ की थीं। 'पैरों में पंख बाँधकर' तथा 'उड़ते चलो, उड़ते चलो', ये यात्रा-संस्मरण भी वस्तुतः डायरियाँ ही हैं। उनकी विदेश-यात्रा के दौरान लिखी डायरी में यूरोपीय भ्रमण, दर्शन, भाव-विचार, यूरोपीय

कला, कला-कृतियों का सूक्ष्म अध्ययन मिलता है। बेनीपुरी की यात्रा-डायरियाँ यूरोपीय जनता की मनः प्रवृत्तियों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करती हैं। बेनीपुरी की डायरी में गहरी संवेदना, तीखी अनुभूतियाँ, सक्रिय-विचार और सूक्ष्म दृष्टि का परिचय मिलता है, साथ ही उन्होंने अपने यात्रा-साहित्य में विदेशी जनता के बाह्य आचार-विचार, संस्कृति, वहाँ की प्रकृति, जन-जीवन, खान-पान, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों आदि सभी का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है। बेनीपुरी के यात्रा-साहित्य में कटु व मधुर दोनों ही अनुभवों का अध्ययन दिखाई देता है साथ ही हमें इन रचनाओं में बेनीपुरी के दर्शक व आलोचक दोनों ही रूप देखने को मिलते हैं।

बेनीपुरी की डायरी उनके मन का आईना है। 1950 से 1963 के बीच लिखी इन डायरियों में बेनीपुरी ने अपने जीवन और तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिदृश्य के बारे में बेबाक टिप्पणियाँ की हैं। जीवन का कोई भी कोना उनकी दृष्टि से ओझल नहीं हुआ है। डायरी में उनका श्रेष्ठ साहित्यिक आलोचक का रूप भी उभर कर सामने आता है। डायरी के माध्यम से बेनीपुरी के संवेदनशील और आकर्षक व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। डायरी साहित्य में उनकी संपूर्ण विचारधारा देखने को मिलती है।

बेनीपुरी ने अपनी डायरी में जीवन में घटित होने वाली घटनाओं का ही वर्णन नहीं किया बल्कि उससे घटित होने वाली मानसिक प्रतिक्रियाओं को भी अंकित किया है। बेनीपुरी ने डायरी में केवल सोना, खाना-पीना एवं उठना आदि दैनिक-चर्या का ही वर्णन नहीं किया अपितु बहुत सी ऐसी घटनाओं का भी वर्णन

किया है, जिनका उनके जीवन पर स्थायी प्रभाव होता है। बेनीपुरी ने डायरी में रोज़मर्रा की अत्यंत सामान्य घटना से लेकर विश्व में हो रही छोटी-बड़ी हलचलों तक का चित्रण किया है। उनका मुख्य उद्देश्य आत्मविश्लेषण रहा है। जीवन के सभी उतार-चढ़ावों का वर्णन उन्होंने डायरी में किया है। बेनीपुरी ने डायरी में केवल अपने जीवन का ही विश्लेषण नहीं किया अपितु अपने से संबंधित सभी व्यक्तियों एवं घटनाओं का विवेचन किया है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में कुछ ऐसे व्यक्ति आते हैं जिनका उन पर पूर्ण रूप से प्रभाव पड़ता है। बेनीपुरी के जीवन में कई व्यक्ति आए और उन व्यक्तियों का उल्लेख बेनीपुरी ने अपनी डायरी में किया। उल्लेख करने के साथ-साथ आवश्यकतानुसार टीका-टिप्पणी भी की है। उनकी डायरी में सहजता तो है ही साथ में अध्ययन-मनन-चिंतन की गंभीरता भी है। बेनीपुरी चिंतनशील साहित्यकार थे। उन्होंने न केवल अपनी रचनाओं में इस चिंतनशीलता का परिचय दिया है, बल्कि अपनी डायरी में भी जगह-जगह व्यक्ति, समाज, देश, राजनीति, धर्म आदि के विषय में अपने छिटपुट विचारों में भी प्रतिबिंबित किया है। इसीलिए उनकी डायरी किसी का रोज़नामचा न होकर एक चिंतनशील साहित्यकार की रचना है; जिसमें कहीं काव्यात्मकता, कहीं कहानीपन, कहीं आलोचना, कहीं विश्लेषण-मूल्यांकन, कहीं हास्य-व्यंग्य-विनोद और कहीं गहन आत्मविश्लेषण एवं तत्त्वचिंतन है। यह डायरी जहाँ उनके व्यक्तिगत जीवन पर प्रकाश डालती है वहीं तत्कालीन साहित्यिक एवं राजनीतिक जीवन से भी साक्षात्कार कराती है। वैसे उनकी डायरी का एक बड़ा हिस्सा सरस, साहित्यिक एवं रोचक है। डायरी में उनके चिंतन के विभिन्न पक्ष जैसे-समाज, देश, राजनीति,

आर्थिक, साहित्य, शिक्षा, नारी, क्रांति, कला, रूढ़िवादिता, नव-निर्माण, समाजवाद आदि पक्षों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

उनकी डायरी में उनका स्वतंत्र विचारधारा वाला व्यक्तित्व उभर कर सामने आता है। इस डायरी में व्यक्त वैयक्तिकता का भी एक सामाजिक स्वर है। इनकी डायरी में दैनिक कार्यक्रमों की श्रृंखला बनी हुई है। कोई आता है, बतियाता है, सुख-दुःख का आदान-प्रदान होता है; नये सवाल उठते हैं, नये उत्तर निकलते हैं, समकालीन वातावरण के रंग उभरते हैं। इस डायरी में भावी कल्पनाएँ, सोच-विचार की तरंगें, समाज में घटित प्रसंगों पर सुखात्मक-दुखात्मक प्रतिक्रियाएँ, परिवार की चिंताएँ, उसमें व्याप्त प्रतिध्वनियाँ हैं। इनकी डायरी में सभी कुछ अनौपचारिक रूप से अंकित है। उनकी डायरी विलक्षण वैविध्य से भरी हुई है। बेनीपुरी डायरी में एक तारतम्य है, जो उनके जीवन और व्यक्तित्व से सीधा जुड़ा है। बेनीपुरी ने अपनी व्यक्तित्व प्रेरणा को सार्वजनिक बनाने के लिए डायरी के पन्नों की रचना की। उनका जीवन वैविध्यपूर्ण अनुभवों से मुक्त था जिसके कारण बेनीपुरी ने रसात्मक, वैविध्यपूर्ण व रोचक डायरी लिखी। इस प्रकार बेनीपुरी की डायरी हर परिस्थितियों के विरुद्ध एक चुनौतीपूर्ण सकारात्मक प्रतिक्रिया है।

उनका डायरी साहित्य समूचे युग की विविध अनुभूतियों को प्रस्तुत करता है। स्पष्ट है कि श्री रामवृक्ष बेनीपुरी की डायरी उनके जीवन का दस्तावेज़, आत्मसाक्षात्कार और आत्मबल में वृद्धि करने वाली प्रेरक शक्ति है।

अध्ययन की सुविधा को देखते हुए प्रस्तुत शोध-प्रबंध को छः अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रत्येक अध्याय का विवरण निम्नलिखित है—

शोध-प्रबंध के प्रथम अध्याय में 'डायरी का स्वरूप और साहित्यिक विधा के रूप में उसके महत्त्व' को स्पष्ट किया गया है। डायरी आधुनिक हिंदी गद्य-साहित्य की नवोदित विधा है। डायरी शब्द अंग्रेजी से हिंदी में आया है। हिंदी में इसके कई पर्याय प्रचलित हैं-दैनिकी, दैनंदिनी, वासरी, वासरिका। डायरी के संदर्भ में भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने अपने-अपने मत विभिन्न प्रकार से प्रस्तुत किये हैं। डायरी विधा भी और विधाओं की भाँति अपनी कुछ प्रमुख विशेषताएँ रखती है। डायरी के भी स्वरूप निर्माण में कुछ महत्त्वपूर्ण रचना तत्त्वों की आवश्यकता होती है।

साहित्यकारों ने साहित्यिक विधा के रूप में डायरी को आधुनिक समय में प्रारंभ कर दिया था और साथ ही साथ साहित्यकारों व लेखकों ने इस विधा पर महत्त्वपूर्ण बल दिया। डायरी विधा के साथ-साथ डायरी शैली भी साहित्यिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। डायरी शैली में कई उपन्यास, कहानी, यात्रा-वृत्तान्त, संस्मरण, आत्मकथा, निबंध, रिपोर्टाज, व्यंग्य आदि लिखे गए हैं। इससे कथा की वस्तुनिष्ठता को सरलता तो मिलती ही है, साथ ही साथ पात्रों के आंतरिक एवं वाह्य जीवन में हो रहे संघर्ष को स्वाभाविकता के साथ विश्वसनीयता मिलती है, जो पात्रों के चरित्र को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करती है। इस तरह से डायरी का साहित्यिक विधा में अपना अलग स्वतंत्र महत्त्व है, जो सवर्था महत्त्वपूर्ण है।

शोध-प्रबंध के द्वितीय अध्याय में 'हिंदी में डायरी साहित्य की परम्परा' के अंतर्गत डायरी का उद्भव और विकास व हिंदी डायरी साहित्य के परिचय को स्पष्ट करने का प्रयास किया है। गद्य साहित्य की यह नवीन विधा पश्चिम से आयी है। अंग्रेजी साहित्य के इतिहास को देखें तो इस बात के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं कि

डायरियों की रचना सत्रहवीं सदी के अंतिम चरण में ही हो चुकी थी। हिंदी में इसका आगमन भारतेंदु-काल से है। भारत में डायरी लेखन की कोई सुदीर्घ परंपरा नहीं रही है और यूरोप में डायरी का इतिहास कोई कविता की तरह पुराना नहीं है। वस्तुतः डायरी का महत्त्व उत्तर नवजागरण काल में बढ़ना शुरू हुआ जब व्यक्ति के महत्त्व पर ज़ोर दिया जाने लगा। डायरी लेखन की विकास परंपरा सुविकसित नहीं थी, लेकिन आज के संदर्भ में देखा जाए तो विकसित हो रही है। विधा के रूप में प्रतिष्ठित डायरी विधा का आगमन भारत में 19वीं सदी में हो गया था। विभिन्न भारतीय भाषाओं के साथ हिंदी में भी डायरी लेखन का श्रीगणेश हुआ, तत्पश्चात् हिंदी लेखकों, विद्वानों व साहित्यकारों ने अपनी व्यक्तिगत डायरी लिखना प्रारंभ कर दिया, साथ ही साथ लेखकों एवं विद्वानों ने पत्र-पत्रिकाओं में भी डायरी के अंश रेखांकित किए।

शोध-प्रबंध के तृतीय अध्याय में 'श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य और उसमें अभिव्यक्त विषय' को अध्ययन का आधार बनाया गया है। श्री रामवृक्ष बेनीपुरी बीसवीं सदी के तीसरे दशक से छठे दशक तक लेखन में पूर्ण सक्रिय रहे। बेनीपुरी के साहित्य का उद्देश्य जीवन की सच्चाई और अनुभूति प्रकट करना था। बेनीपुरी ने अपने जीवन काल में कई महत्त्वपूर्ण कृतियों का सृजन किया। गद्य की अनेक विधाओं जैसे-कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, जीवनी, संस्मरण, निबंध, यात्रा-वृत्तांत, शब्द-चित्र, आत्मकथात्मक लेख, संस्मरण, डायरी आदि विधाओं में रचना की। बेनीपुरी ने बालोपयोगी साहित्य की रचना की। शिवाजी, गुरु गोविन्द सिंह, विद्यापति, बाबू लंगट सिंह, जवाहर लाल नेहरू की बाल-जीवनियाँ भी लिखीं। साथ ही साथ राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर के तीन समाजवादी व्यक्तियों

के राजनीतिक जीवन चरित्रों को लिखा । बेनीपुरी के साहित्य के अंतर्गत कुछ राजनीति संबंधी रचनाएँ मिलती हैं। बेनीपुरी ने टीकाएँ भी प्रस्तुत की हैं। उन्होंने कई पत्रिकाओं का संपादन भी किया। बेनीपुरी ने पत्र भी लिखे हैं। उपर्युक्त संपूर्ण साहित्य के अतिरिक्त बेनीपुरी ने एक अद्वितीय स्मृति-चित्र 'गांधी नामा' शीर्षक से एक हृदय स्पर्शी संस्मरण लिखा है। उनके साहित्य में हमें उनके सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक विचार मिलते हैं।

इस अध्याय के अंतर्गत बेनीपुरी के डायरी साहित्य का परिचयात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। बेनीपुरी की डायरी 'डायरी के पन्ने' में 28 मार्च 1950 से 26 अप्रैल 1963 तक की डायरियाँ संकलित हैं। उनकी दोनों यात्रा-पुस्तकें, 'पैरों में पंख बाँधकर' और 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' विदेश में लिखी डायरियों के ही संकलन हैं। वस्तुतः ये डायरी शैली में लिखी गई हैं, साथ ही इस अध्याय में डायरी साहित्य में अभिव्यक्त विषयों पर भी चर्चा की गयी है। बेनीपुरी की डायरी गंभीर विषयों जैसे-राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, पारिवारिक, साहित्य, कला, संस्कृति, धर्म, ज्ञान, विज्ञान, प्रकृति, यात्रा आदि को अपने में सामहित किए हुए है साथ ही हमें उनकी विदेश-यात्रा के दौरान लिखी डायरी यूरोपीय भ्रमण, दर्शन, भाव-विचार, यूरोपीय कला, कला-कृतियों का सूक्ष्म अध्ययन मिलता है।

शोध-प्रबंध के चतुर्थ अध्याय में 'श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य के विश्लेषणात्मक अध्ययन' को केंद्र में रखकर अध्ययन का आधार बनाया है। प्रस्तुत अध्याय का परिचय मात्र ही नहीं दिया, बल्कि उसका विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। जिसका अध्ययन राजनीति, आर्थिक, सामाजिक, साहित्यिक, भाषा

एवं कला व पारिवारिक स्थिति एवं आत्म-संघर्ष के दृष्टिकोण से किया गया है। इसके अतिरिक्त प्रकृति-चित्रण व यात्राओं को भी स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। उनकी यात्रा-डायरियाँ 'पैरों में पंख बाँधकर' एवं 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' के संबंध में केवल भौगोलिक वर्णन ही नहीं बल्कि इतिहास, दर्शन, साहित्य, राजनीति एवं संस्कृति के विविध रूप अंकित हैं।

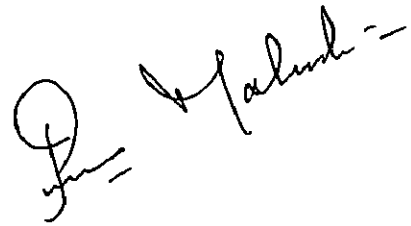
इस अध्याय में उनके जीवन-संबंधी कुछ-न-कुछ नैतिक सिद्धांत, उनका चिंतन, मान्यताएँ, उनकी विचारधारा का, उनकी जीवन दृष्टि का उद्घाटन किया गया है। डायरी में उन्होंने मौलिक विचार भी दिए, उन विचारों में गांधीवादी विचारधारा के दर्शन मिलते हैं। उनकी डायरी में कहीं-कहीं दार्शनिक विचारधारा प्रकट होती है तो कहीं प्रगतिवादी एवं समाजवादी, कहीं राजनीतिक विचारधारा दिखती है तो कहीं मानवतावादी। डायरी में बेनीपुरी कहीं-कहीं विचारक भी बन गए हैं। कहीं उनका चिंतित स्वरूप है तो कहीं विवेचक रूप दिखाई देता है। भावी कल्पनाएँ, सोच-विचार की तरंगें, समाज में घटित प्रसंगों पर सुखात्मक-दुखात्मक प्रतिक्रियाएँ, परिवार की चिंताएँ, उसमें व्याप्त प्रतिध्वनियाँ हैं। उनकी डायरी में सभी कुछ अनौपचारिक रूप से अंकित है।

शोध-प्रबंध के पंचम अध्याय में 'श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य के शिल्प-विधान' को अध्ययन का आधार बनाया गया है। सामान्यतः प्रत्येक साहित्यकार की अपनी एक निजी शैली होती है, इसलिए उस शैली की विशेषताओं को जानना परखना एवं लेखा जोखा प्रस्तुत करना आवश्यक हो जाता है। बेनीपुरी हिंदी साहित्य के अद्भुत शैलीकार माने जाते हैं, अतः इस अध्याय में बेनीपुरी के

डायरी साहित्य की शैलीगत एवं भाषागत विशेषताएँ, भाषा के विविध उपकरणों पर प्रकाश डाला गया है। बेनीपुरी के डायरी साहित्य का शिल्प—विधान सशक्त एवं भाषा समृद्ध है। ये उनके कौशल की ही बात है कि उन्होंने डायरी जैसी छोटी विधा में भी संपूर्ण शैलियों को समाहित कर लिया है। यथा—डायरी, आत्मकथात्मक, संस्मरणात्मक, निबंधात्मक, पत्र शैली, वर्णनात्मक, चित्रात्मक, व्यंग्यात्मक, प्रतीकात्मक, संवाद, संबोधन, प्रश्न इत्यादि शैलियों का प्रयोग किया है। बेनीपुरी जनता के साहित्यकार थे। जीवन के परम सत्य को सीधे—सादे ढंग से कह जाने की कला बेनीपुरी में है। इसलिए वे सरल और सुबोध शैली में लिखते थे, साहित्य सृजन में वे क्लिष्ट भाषा को कभी अनिवार्य नहीं मानते थे। अतः उन्होंने अपने डायरी साहित्य में भाषा का सरल एवं सरल एवं व्यवहारिक रूप स्वीकार किया है। उनकी भाषा सजीव, समर्थ और भावानुकूल है। उसमें भावों के अनुरूप उपयुक्त शब्दों का सहज प्रयोग किया गया है। जिसमें अरबी, फ़ारसी, अंग्रेज़ी, संस्कृतनिष्ठ आदि शब्द हैं। इसके साथ ही साथ उन्होंने ध्वन्यात्मक शब्द, शब्द—युग्म, विशेषण आदि का प्रभावशाली प्रयोग किया है। उन्होंने अनेक सरल और जन—प्रचलित मुहावरों एवं लोकोक्तियों आदि का प्रयोग जगह—जगह पर किया है। भावों को मूर्तमान करने के लिए जगह—जगह अलंकारों की सहायता ली है, जिसमें उनकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति दिखाई देती है। जीवन के गंभीर अनुभवों को व्यक्त करने वाली भावपूर्ण सूक्तियों का प्रयोग किया है। अपनी डायरी में उन्होंने काव्य का प्रयोग प्रभावशाली ढंग से किया है।

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने अपनी डायरी के माध्यम से नैतिक मूल्यों की परछाई, जीवन के प्रति निश्चित दृष्टिकोण तथा जीवन—आदर्श संबंधी विचारों की झलक

स्पष्ट कर दी है; जिसमें उनका जीवन दर्शन भी प्रकट हो गया है। अतः उनकी डायरी में हमें उनका जीवन-दर्शन एवं उनकी विचारधारा देखने को मिलती है; जो उनकी सामायिक परिस्थितियों और जीवन-अनुभवों के आधार पर बनी है। बेनीपुरी का डायरी लेखन एक सक्रिय राजनीति-कर्मी, एक संघर्षशील समाजवादी, एक संवेदनशील स्रष्टा के अनुभवों की अभिव्यक्ति है। उनकी डायरी में कोई ऐसा विषय नहीं है जिसकी अभिव्यक्ति उन्होंने न की हो।

 Dr. P. K. Pal



**श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी-साहित्य का
विश्लेषणात्मक अध्ययन**

**Shriramvriksha Benipuri ke Dairy-Sahitya ka
Vishleshnatmak Adhyayan**

**अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी के हिंदी-विभाग से
पी-एच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तावित
शोध-प्रबंध**

सन् 2013

शोध निर्देशक

डॉ० वेद प्रकाश

शोधार्थी

प्रेरणा माहेश्वरी

हिंदी-विभाग

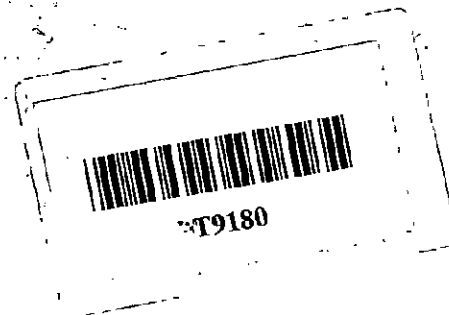
अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी,
अलीगढ़

THESIS

THESIS



20 NOV 2014



CERTIFICATE

It is certified that Miss. Perna Maheshwari, En. No. DD-6781, a candidate admitted to Ph.D. course in the Department of Hindi, AMU, Aligarh on January 08, 2008 has completed two years residency period with required percentage of attendance upto January 7, 2010. She has submitted her thesis for the Degree of Doctor of Philosophy in Hindi under the supervision of Dr. Ved Prakash., Associate Professor, Department of Hindi, A.M.U., Aligarh on 30-12.2013.

Arif Nazir,

(Prof. Arif Nazir)

Chairman

CHAIRMAN

Department of Hindi
Aligarh Muslim University.

ALIGARH

30/12/13

THESIS



**DEPARTMENT OF HINDI
FACULTY OF ARTS
ALIGARH MUSLIM UNIVERSITY, ALIGARH-202002**

Telex : 564-230 AMU IN
Phones : Off. 2700920 } Ext.
2700921 } 1460
2700922 } 1461

Dated : 30.12.2013...

Certificate

This is to certify that the thesis entitled "Shriramvriksha Benipuri ke Dairy-Sahitya ka Vishleshnatmak Adhyayan" has been written by Ms. Prerna Maheshwari under my supervision. It is an original research work and is suitable for submission for the award of Ph.D. Degree in Hindi.

She has fulfilled all the conditions laid in the ordinance of Aligarh Muslim University, Aligarh.

(Dr. Ved Prakash)

भूमिका

भूमिका

हिंदी साहित्य के आधुनिक काल में साहित्य जीवन के और अधिक निकट आया है। जीवन से जूझते हुए लेखक ने यथार्थ की गहराई को अत्यधिक निकटता से महसूस किया है। आधुनिक काल में गद्य जीवन को अभिव्यक्त करने का सशक्त माध्यम बना है। आधुनिक काल में जीवंत आभास कराने वाली अनेकों नई विधाओं का विकास हुआ है। भारतेंदु युग से गद्य का साहित्य में व्यवस्थित रूप से सूत्रपात हुआ, धीरे-धीरे गद्य की विविध विधाओं का विकास हुआ। आज के वर्तमान भौतिकवादी, सामाजिक परिवेश में जैसे-जैसे वैज्ञानिक व तकनीकी उन्नति होती गई, वैसे-वैसे नई विसंगतियों का जन्म हुआ। आदमी, आदमी से कटता चला गया। वह एकाकी बोध की स्थिति में जीवन व्यतीत करने को मजबूर हो गया। इस समस्या ने अभिव्यक्ति के नए रूपों को अपना सहारा बनाया। नयी विधाओं का जन्म पहले ही हो चुका था, उपर्युक्त स्थितियों का दबाव उन पर पड़ा। आत्मकथा, यात्रा-वृत्तान्त, संस्मरण, रिपोर्टाज, रेखाचित्र, इन्टरव्यू, पत्र और जीवनी आदि अनेकों गद्य-विधाओं के साथ साहित्य में एक विशेष विधा विकसित हुई, जिसे 'डायरी' नाम दिया गया।

जीवन की जटिल एवं सहज अनुभूतियों के बीच साहित्यकार के अन्तःकरण में कहीं न कहीं अनुभूतियाँ एक कोने में दबी रहती हैं, और यह अनुभूतियाँ किसी-न-किसी रूप में प्रतिफलित होती हैं। साहित्य की अनेक नई विकसित विधाओं को आज हम उभरता हुआ देख रहे हैं। इसके साथ-साथ कुछ को लुप्त होते हुए भी देख रहे हैं। इन विधाओं में डायरी विधा का अपना एक अलग स्थान है। डायरी बहुत ही व्यक्तिगत विधा है, जो कि व्यक्ति के सच्चे स्वरूप को, जिसमें उसकी बाह्य व आंतरिक मनःस्थितियाँ बिना किसी स्वार्थ के व्यक्त होती हैं, साथ ही इसमें व्यक्ति से जुड़े व अन्य व्यक्तियों की भी सच्चाईयाँ लिखी होती हैं। एक लेखक या साहित्यकार अपने आपको कहानियों, निबंधों, नाटकों व उपन्यासों द्वारा व्यक्त तो कर सकता है पर सीमित रूप में, पूर्ण रूप से नहीं। वह अपनी मनःस्थितियों व बाह्य परिस्थितियों को पूरी तरह तभी अभिव्यक्त कर सकता है; जब वह डायरी लिखे। लेकिन हमारे यहाँ इसका प्रचलन कम है जबकि पश्चिमी

भाषा में डायरी लिखने की प्रक्रिया अत्यधिक प्रचलित है और साहित्य का एक महत्वपूर्ण अंग समझी जाती है।

डायरी आधुनिक हिंदी गद्य साहित्य की सबसे अधिक प्रचलित, वैयक्तिक विधा व शैली है। इसमें लेखक व्यक्तिगत भावों को सहज—स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत करता है। स्फुरित भावों और दैनिक दिनचर्या को छोटे-छोटे विवरणों के साथ प्रस्तुत किया जाता है। हिंदी साहित्य में डायरी विधा का उद्भव स्वतंत्रता आंदोलन के आस-पास हुआ है; जबकि पश्चिम में यह विधा पहले से ही महत्वपूर्ण व समृद्ध रही है। वैसे भारतेंदु के 'कालचक्र' को डायरी और जर्नल के बीच का लेखन कहा जाता है। इसमें भारतीय इतिहास की प्रमुख तिथियाँ और घटनाएँ दर्ज हैं। इसी 'कालचक्र' में भारतेंदु का यह प्रसिद्ध वाक्य है—'हिन्दी नयी चाल में ढली 1873 ई० में।' स्वतंत्रता के बाद डायरी विधा का साहित्य तेज़ी से समृद्ध हुआ।

डायरी एक स्वतंत्र गद्य-विधा है साथ-साथ वह शैली के रूप में अन्य विधाओं में व्याप्त होने की सामर्थ्य भी रखती है। अब डायरियाँ स्वतंत्र रूप से लिखी जाने लगी हैं। कई ऐसी पत्रिकाएँ हैं जिनमें डायरी स्वतंत्र रूप से छप रही है, एक निरंतरता के साथ। इसमें कोई संदेह नहीं है कि डायरी एक स्वतंत्र विधा बन चुकी है।

हिंदी गद्य-साहित्य जगत् में डायरी विधा की समृद्ध होती परंपरा में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। बेनीपुरी ने लगभग 13 वर्ष (1950-1963) तक डायरी लिखी हैं। उनका डायरी साहित्य एक हजार से अधिक पृष्ठों का है। चाहे देश में रहे या विदेश में, उन्होंने डायरी लिखने के लिए प्रायः रोज़ ही समय निकाला। पाँचवें दशक के आरंभ में उन्होंने यूरोपीय देशों की यात्राएँ की थीं। उन्होंने लेखन में अपने जीवन के 13 वर्ष लगा दिए। सही अर्थों में बेनीपुरी की 'डायरी' केवल रोज़ की घटनाओं का विवरण प्रस्तुत करने वाली साधारण डायरी नहीं है, बल्कि सही मायनों में वह एक साहित्यिक कृति है, जिसमें बेनीपुरी एक राजनीतिक व साहित्यिक व्यक्ति के रूप में नज़र आते हैं। समाज की समस्याओं से लेकर राजनीति और आर्थिक, यहाँ तक की व्यक्तिगत समस्याओं जैसे-आर्थिक, परिवार व उससे जुड़ी समस्याओं को बेनीपुरी ने अपनी डायरी

साहित्य में स्थान दिया है। शायद यही कारण है कि डायरी साहित्य के माध्यम से हमें बेनीपुरी के संवेदनशील व आकर्षक व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। यद्यपि श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने हिंदी गद्य साहित्य की लगभग सभी विधाओं पर अपनी कलम चलाई। उनके डायरी साहित्य में 'डायरी के पन्ने' अपना अलग महत्त्व रखती है; साथ ही साथ उनकी डायरी शैली में लिखी गई यात्रा डायरी 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' व 'पैरों में पंख बाँधकर' डायरी का ही एक रूप है। जो उन्होंने यूरोप यात्रा के दौरान लिखी। उनकी डायरी में हमें राजनीति, सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक, पारिवारिक, यात्राएँ, प्रकृति व अन्य निजी जीवन की अनेक परिस्थितियों से दो-चार होते हुए श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के दर्शन होते हैं। जीवन का कोई भी कोना उनकी दृष्टि से ओझल नहीं हुआ है। डायरी में उनका श्रेष्ठ साहित्यिक आलोचक का रूप भी उभर कर सामने आता है। यह डायरियाँ वास्तव में हिंदी साहित्य जगत की श्रेष्ठ उपलब्धियों में से एक हैं। डायरी में बेनीपुरी ने अपने व्यक्तित्व, संवेदनाओं, प्रतिक्रियाओं व प्रभावों को इस खूबी से दिखाया है कि देश-परदेश का जन-जीवन, वहाँ की परिस्थितियाँ, वातावरण दबा हुआ दिखायी नहीं देता है, बल्कि इन सभी के साथ उन्होंने स्वयं को केंद्र में रखा है। साथ ही उन्होंने अपनी तुलनात्मक दृष्टि व वर्ण्य-विषयों को भी स्पष्ट किया है। उनकी डायरी में हमें विश्व के विभिन्न देशों की सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण मिलता है। विदेश के व्यापक जन-जीवन का चित्रण, भावात्मक, कलात्मक दृष्टिकोण, सूक्ष्म निरीक्षण व यात्रा विवरण की तटस्था उनकी यात्रा डायरी की विशेषताएँ हैं; जिसे उन्होंने डायरी शैली में लिखकर हिंदी गद्य साहित्य को एक नई ऊँचाई दी। जिसकी व्याख्या मैंने अपने शोध-प्रबंध में की है।

बेनीपुरी की डायरी प्रकृत अर्थों में डायरी नहीं है, जिसमें दिन-रात की घटनाओं या कार्यों का ब्योरेवार का जिक्र किया जाता है। यह सही अर्थ में एक साहित्यिक कृति है और साहित्य के व्यापक प्रसार का पता देती है।

बेनीपुरी 'डायरी' और 'जर्नल' में फर्क मानते हैं। डायरी को ही अंग्रेजी में 'जर्नल' कहते हैं। बेनीपुरी कहते हैं—'जब मैंने डायरी लिखना शुरू किया, मैं नहीं जानता था कि मैं अनजाने ही 'जर्नल' लिख रहा हूँ। 'डायरी' वह है, जिसमें

प्रतिदिन के जीवन का उल्लेख होता है। 'जर्नल' वह है, जिसमें लेखक अपने विचारों, अनुभवों या भावनाओं को लिपिबद्ध करता है। 'जर्नल' के संबंध में वे लिखते हैं—अच्छा हुआ कि मैंने 'जर्नल' लिखना शुरू किया, शायद हिंदी में यह पहला 'जर्नल' होगा।" डायरी लिखना बेनीपुरी ने अचानक नहीं शुरू किया था। उसकी प्रेरणा उन्हें सन् 1947 में समाजवादी नेता यूसुफ़ मेहर अली द्वारा भेंट की गई एक पुस्तक से मिली थी—जेम्स एगोट की 'ए शार्टर इगो।' इस प्रकार उन्हें डायरी लिखने की प्रेरणा मिली। बेनीपुरी लिखते हैं—“पं० हज़ारीप्रसाद द्विवेदी जी ने तो यहाँ तक लिखा है कि हिंदी के लेखक डायरी लिख ही नहीं सकते। द्विवेदी जी के इस कथन में दो बातें रही होंगी—हिंदी लेखकों के जीवन की एकरसता और आत्मगोपन की प्रवृत्ति।” लेकिन बेनीपुरी के व्यस्त यायावर जीवन में एकरसता नहीं थी। वे साफ़ और दो टूक व्यक्ति थे, कुछ आत्मगोपन भी नहीं था। इसलिए वे लंबे समय तक डायरी लिख पाए और इस विधा को नया रूप प्रदान किया।

स्पष्ट है कि श्री रामवृक्ष बेनीपुरी की डायरी उनके जीवन का दस्तावेज़, आत्मसाक्षात्कार है और आत्मबल में वृद्धि करने वाली प्रेरक शक्ति है। शायद यही कारण है कि श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का अध्ययन आज भी प्रासंगिक और नई दिशा की ओर अग्रसर है।

प्रस्तुत शोध—प्रबंध में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का विश्लेषण करने का विनम्र प्रयास किया गया है। इस शोध—प्रबंध में मैंने श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य के विश्लेषणात्मक अध्ययन को केंद्र में रखकर अध्ययन का आधार बनाया है। शोध की दिशा में यह कार्य इसलिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि मेरी जानकारी में इस विषय पर कोई कार्य नहीं हुआ है। विषय की नवीनता इस शोध—प्रबंध की अपनी निजी विशेषता है, फलस्वरूप श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य के विश्लेषण की महत्त्वता व प्रासंगिकता और भी अधिक बढ़ जाती है।

अध्ययन की सुविधा को देखते हुए प्रस्तुत शोध—प्रबंध को छः अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रत्येक अध्याय का विवरण निम्नलिखित है—

शोध—प्रबंध के प्रथम अध्याय में डायरी का स्वरूप और साहित्यिक विधा के रूप में उसके महत्त्व को रेखांकित किया गया है। जिसके अंतर्गत डायरी शब्द की

उत्पत्ति व डायरी की परिभाषा भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार दी गई है। साहित्यिक विधा के रूप में डायरी विधा की महत्त्वता को केंद्रित करने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त प्रस्तुत अध्याय में डायरी शैली का प्रयोग गद्य की अन्य विधाओं में किस प्रकार हुआ है इसे भी अध्ययन का आधार बनाया गया है।

शोध-प्रबंध के द्वितीय अध्याय में हिंदी में डायरी साहित्य की परंपरा के अंतर्गत डायरी का उद्भव और विकास व हिंदी डायरी साहित्य के परिचय को रेखांकित व स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

शोध-प्रबंध के तृतीय अध्याय में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य और उसमें अभिव्यक्त विषय को अध्ययन का आधार बनाया गया है। इसके अंतर्गत बेनीपुरी के साहित्य का परिचय व डायरी साहित्य का परिचयात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही बेनीपुरी के डायरी साहित्य में अभिव्यक्त विषयों पर चर्चा की गई है।

शोध-प्रबंध के चतुर्थ अध्याय में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन है। प्रस्तुत अध्याय में डायरी साहित्य का परिचय मात्र ही नहीं दिया, बल्कि उसका विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। यह अध्ययन राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, साहित्यिक, भाषा एवं कला व पारिवारिक स्थिति एवं आत्म-संघर्ष के दृष्टिकोण से किया गया है।

शोध-प्रबंध के पंचम अध्याय में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य के शिल्प-विधान का विवेचन है। इसके अंतर्गत बेनीपुरी के डायरी साहित्य में युक्त विधागत शैलियों व अन्य शैलियों का विश्लेषण है। बेनीपुरी के डायरी साहित्य में भाषागत विविधता बहुत रोचक रूप में देखने को मिलती है। प्रस्तुत अध्याय में इन सभी विषयों पर विचार करने का प्रयास किया गया है।

शोध-प्रबंध के अंतिम अध्याय उपसंहार में शोध-प्रबंध के सभी अध्यायों का निष्कर्षात्मक उल्लेख किया गया है। शोध-प्रबंध के अंत में ग्रंथ-सूची के अंतर्गत

आधार ग्रंथों, सहायक ग्रंथों, पत्र-पत्रिकाओं, हिंदी कोश व अंग्रेजी पुस्तकों की सूची दी गई है।

यह शोध कार्य मैंने, डॉ० वेदप्रकाश, हिंदी विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी, अलीगढ़ के निर्देशन में किया है। उन्होंने शोध-कार्य के दौरान उठने वाली शंकाओं एवं समस्याओं का समाधान किया। उनके उत्साह-वर्द्धन व सुझावों के द्वारा ही मेरा शोधकार्य अंतिम रूप तक पहुँच पाया है। उनके प्रति मैं हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ

मैं अपने विभागाध्यक्ष प्रो० आरिफ नज़ीर के प्रति कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने मुझे यह शोध-प्रबंध प्रस्तुत करने की अनुमति दी।

मैं उन समस्त विभागीय गुरुजनों के प्रति आभारी हूँ, जिनसे मुझे ज्ञान एवं आशीर्वाद मिलता रहा। मैं प्रो० प्रदीप सक्सेना, प्रो० अब्दुल अलीम, प्रो०एम०ई० जुबैरी, डॉ० अजय बिसारिया जी का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने शोध संबंधी सामग्री उपलब्ध कराने में मेरी मदद की।

डॉ० वेदप्रकाश 'अमिताभ' जी की आभारी हूँ, जिन्होंने समय-समय पर प्रत्यक्ष रूप से शोध-कार्य के दौरान मेरा मार्गदर्शन किया।

मैं हिंदी विभाग में कार्यरत श्री सलमान भाई, श्रीमती (डॉ०) परवेज़ फातिमा, श्री मिर्जा शकील बेग, श्री बिसारत अली, श्री वहाब व शादाब जी के प्रति कृतज्ञ हूँ, जिनका सहयोग एवं समर्थन निरंतर मिलता रहा।

शोध-सामग्री के संकलन में अलीगढ़ मु० यू० की मौलाना आज़ाद लाइब्रेरी का महत्वपूर्ण सहयोग है। लाइब्रेरी में कार्यरत श्री पीर मोहम्मद व श्री नदीम अहमद के प्रति भी आभार व्यक्त करना चाहूँगी। इसके अतिरिक्त शोध-सामग्री के संचयन में लखनऊ विश्वविद्यालय, आगरा विश्वविद्यालय व दिल्ली विश्वविद्यालय का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ।

विभागीय मित्र नाज़िया कमाल, नीरू, आयशा ख़ातून, अस्मा ज़ावेद, नीतू रानी, कपिल कुमार, दौलत राम साथ ही मेरे अन्य मित्रों निसारा आपा, आसिया,

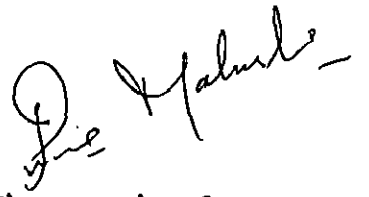
फराह आदि का सहयोग एवं सुझाव सदैव मिलता रहा। इनके सहयोग ने मुझे आत्मबल प्रदान किया।

मैं अपनी परमादरणीय माँ एवं (स्व) ताऊजी की सदैव ऋणी रहूँगी, जिनका स्नेह आशीर्वाद सदैव मेरे साथ रहा है। उनका असीम स्नेह और परिस्थितियों से लड़ते रहने की निरंतर प्रेरणा मुझे प्रोत्साहित करती रही है। मैं अपनी माँ की दीर्घ आयु की कामना के साथ यह शोध-प्रबंध उन्हें समर्पित करती हूँ। साथ ही मैं अपनी बड़ी बहन दीपिका माहेश्वरी जिन्होंने मेरे कार्य में विशेष रुचि दिखाई और हृदय से मेरी सफलता की कामना की। जीजाजी आशीष माहेश्वरी की सदैव आभारी रहूँगी। साथ ही कुछ सुन्दर अनुभूतियाँ मेरे भांजे 'शौर्य' के रूप में सदैव मेरे साथ रहीं।

मैं श्री हमेन्द्र कुमार शर्मा और मनीष शर्मा के प्रति विशेष रूप से आभारी हूँ, जिन्होंने टंकण कार्य में व्यक्तिगत रुचि दिखाते हुए मेरे शोध-कार्य को पूर्ण करने में विशेष सहयोग दिया है।

अंत में उन समस्तजनों के प्रति आभारी हूँ जिनका सहयोग प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में मेरे साथ रहा है।

मेरा यह शोधकार्य यदि श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के साहित्य के अध्ययन में कुछ नयी कड़ियाँ जोड़ सका व नई दिशा दिखा सका तो मैं अपनी मेहनत को सफल समझूँगी।


(प्रेरणा माहेश्वरी)

विषयानुक्रमणिका

अध्याय	पृष्ठ सं०
भूमिका	i - vii
प्रथम अध्याय : डायरी का स्वरूप और साहित्यिक विधा के रूप में उसका महत्त्व	1 — 67
द्वितीय अध्याय : हिंदी में डायरी साहित्य की परंपरा (क) डायरी का उद्भव और विकास (ख) हिंदी डायरी साहित्य का परिचय	68 — 108
तृतीय अध्याय : श्री रामवृक्ष बेनीपुरी का डायरी साहित्य और उसमें अभिव्यक्त विषय (क) बेनीपुरी के साहित्य का परिचय (ख) बेनीपुरी के डायरी साहित्य का परिचय (ग) बेनीपुरी की डायरी में अभिव्यक्त विषय	109 — 163
चतुर्थ अध्याय : श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन (क) राजनीतिक दृष्टि (ख) आर्थिक दृष्टि (ग) सामाजिक दृष्टि (घ) साहित्यिक, भाषा एवं कला दृष्टि (ङ) पारिवारिक स्थिति एवं आत्म-संघर्ष (च) प्रकृति-चित्रण (छ) यात्राएँ	164 — 234
पंचम अध्याय: श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का शिल्प-विधान (क) डायरी साहित्य में प्रयुक्त शैलियाँ (i) आत्मकथात्मक शैली	235 — 295

- (ii) संस्मरणत्मक शैली
- (iii) निबंधात्मक शैली
- (iv) पत्र शैली
- (v) व्यंग्य शैली
- (vi) चित्रात्मक शैली
- (vii) प्रश्न शैली
- (viii) संबोधन शैली
- (ix) संवाद शैली
- (x) प्रतीकात्मक शैली
- (ख) भाषागत विशेषताएँ**
- (i) प्रकृति का मानवीकरण
- (ii) बिंब-विधान
- (iii) कल्पना का प्रयोग
- (iv) संवेदनशीलता
- (v) सहज एवं सरल भाषा का प्रयोग
- (vi) यथार्थता का पुट
- (vii) भाषा-शैली के प्रमुख उपकरण

शब्द चयन— अरबी भाषा के शब्द, फ़ारसी भाषा के शब्द, अंग्रेज़ी भाषा के शब्द, संस्कृतनिष्ठ शब्द, शब्द-युग्म, ध्वन्यात्मक शब्द, विशेषण; वाक्य—विन्यास; मुहावरे; कहावतें—लोकोत्तियाँ; अंलकार; सूक्तियाँ; काव्य का प्रयोग

उपसंहार

296 — 304

ग्रंथ-सूची

आधार व सहायक ग्रंथों की सूची, अंग्रेज़ी पुस्तकें, शब्दकोश, पत्रिकाएँ

305 — 317

प्रथम अध्याय

डायरी का स्वरूप और साहित्यिक विधा के रूप
में उसका महत्त्व

प्रथम अध्याय

डायरी का स्वरूप और साहित्यिक विधा के रूप में उसका महत्त्व

आधुनिक काल में गद्य का प्रवर्तन प्रमुख साहित्यिक घटना है। आधुनिक हिंदी गद्य का प्रारंभ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समय से माना जाता है, हालाँकि उनके पूर्व हिंदी गद्य साहित्य की नींव पड़ चुकी थी। भारतेन्दु का आविर्भाव हिंदी साहित्य के विकास के लिए प्रेरक सिद्ध हुआ। उन्होंने जिस प्रकार गद्य की भाषा को बदला, उसे नया रूप दिया; उसी प्रकार हिंदी साहित्य को नई दिशा की ओर मोड़ दिया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल लिखते हैं—“देश काल के अनुकूल साहित्य निर्माण का कोई विस्तृत प्रयत्न तब तक नहीं हुआ था। बंगदेश में नए ढंग के नाटकों और उपन्यासों का सूत्रपात हो चुका था जिनमें देश और समाज की नई रुचि और भावना का प्रतिबिंब आने लगा था, पर हिन्दी साहित्य अपने पुराने रास्ते पर ही पड़ा था। भारतेन्दु ने उस साहित्य को दूसरी ओर मोड़ कर जीवन के साथ फिर से लगा दिया। इस प्रकार हमारे जीवन और साहित्य के बीच जो विच्छेद पड़ रहा था उसे उन्होंने दूर किया।”¹ भारतेन्दु के सद्प्रयत्नों का फल यह हुआ कि साहित्य ने न केवल नये रूपों को ग्रहण किया वरन् वह जनता के निकट भी आया। इस युग में जनता की विचार-परंपरा नई दिशाएँ खोज रही थीं। साहित्य के विविध क्षेत्रों में भारतेन्दु का प्रभाव व्यापक रूप से पड़ा। हिंदी-गद्य विधाओं की समृद्धि उन्हीं की साहित्यिक चेतना का प्रसार थी। हिंदी साहित्य का आधुनिक काल गद्य की अनेक नई विधाओं के प्रवर्तन का काल है। आधुनिक काल में साहित्य जीवन के और अधिक निकट आया है। जीवन की नित्य समस्याओं से जूझते हुए लेखक ने यथार्थ के दबाव को अधिक गहराई से महसूस किया है। साहित्य की जनतात्रिकता का प्रसार भी हुआ है। यही कारण है कि गद्य साहित्य का समर्थ माध्यम बना और विविध रूपों में जीवंत आभास कराने वाली (आत्मकथा, डायरी, संस्मरण, रिपोर्टाज, यात्रावृत्तान्त, रेखाचित्र, आदि) गद्य विधाओं का विकास हुआ है।

समय के परिवर्तन के साथ धीरे-धीरे मुख्य विधाओं की भाँति ये विधाएँ भी समृद्ध हुईं और रचनाकार इन्हें महत्त्व देने लगे और पाठकों का ध्यान इनकी ओर

‘जायसी’ सर्वोत्तम माध्यम है।”

है—“किसी दैनिक घटना के संदर्भ में अपने मन की उधड़-बुन व्यक्त करने के लिए उधड़-बुन की व्यक्त करने का माध्यम बताया है। उन्होंने जायसी के संबंध में कहा कि जायसी का विशेष गुण मानते हैं, जबकि जो रामचन्द्र जायसी ने इसे मानव-मन के हरिवंश राय बच्चन स्वामाविकता, सच्चाई, सरलता और सजीवता को जायसी

गुण पाया जाता है जिसके लिए सचेत-साहित्य श्रेष्ठ मारता है।”

प्रकाशित होती है तो उनमें स्वामाविकता, सच्चाई, सरलता और सजीवता का वह है कि—“प्रायः जायसियों प्रकाशित करने के ध्येय से नहीं लिखी जाती, पर जब सुविख्यात कवि और गद्यकार हरिवंश राय बच्चन जायसी के संबंध में लिखते

से प्रस्तुत किये हैं—

जायसी के संदर्भ में भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों ने अपने-अपने मत विभिन्न प्रकार के लेखन साध ही साथ हमें इसकी एक सीमा रेखा निर्धारित करना भी आवश्यक है ‘जायसी’ शब्द को परिभाषित करना इसकी व्यापकता को संकुचित करना है

जायसी से रोज लिखे जाने वाले तथ्यों, घटनाओं का पता चलता है।

शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। नाम और प्रवृत्ति से ही स्पष्ट हो जाता है कि शब्दों का प्रयोग होता है—“जायसी और जनल” इस प्रकार जायसी के लिए जनल रोजनामचा के नाम से अभिव्यक्ति किया गया है। ‘दैनिकी’ के लिए अंग्रेजी में कई पर्याय प्रचलित हैं—“दैनिकी, दैनिकी”³ “वासी, वासरिका”⁴ और चर्च में जायसी शब्द को कई नामों से भी अभिव्यक्ति किया गया है। हिंदी में इससे

‘अ बुक टु कन्टेन दिस्’ में होने लगा। इसका एक रूप ‘जायस’ भी है।”²

दैनिक भस् के लिए होता है। यह बाद में जायसी के वर्तमान अर्थ ‘अ डेली रिकार्ड’ कि—“अंग्रेजी का जायसी शब्द लैटिन के ‘डियम’ से व्युत्पन्न हुआ जिसका प्रयोग जायसी शब्द अंग्रेजी से हिंदी में आया है। जो माजदा अखद लिखती है

बनाया है। इन विधाओं में से ‘जायसी’ विधा का अपना एक अलग स्थान है।

आधुनिक हिंदी साहित्य को अधिक यथार्थवादी, समावेशी, जनतांत्रिक तथा व्यापक अभ्यसर हुआ। लोकतांत्रिकता के चलते अनेक साहित्यिक विधाओं एवं शैलियों ने ही

डॉ० बलभीमराज गोरे का डायरी के संबंध में कहना है कि—“डायरी को कुछ विद्वान आत्मकथा का ही एक और रूप मानते हैं तथापि आत्मकथा और डायरी में उल्लेखनीय फर्क यह है कि ‘आत्मकथा’ में लेखक का सारा अतीत (सारांश रूप में या यथा-विस्तार) आ जाता है जबकि ‘डायरी’ में ज्यादातर ताज़े अनुभवों को ही लिख दिया जाता है।”⁸ यद्यपि आत्मकथा और डायरी में अधिक अंतर नहीं होता फिर भी आत्मकथा व्यक्ति के जीवन का सारांश रूप है और डायरी जीवन के ताज़ा अनुभवों की अभिव्यक्ति।

डॉ० वैजनाथ सिंहल ने डायरी को कुछ इस प्रकार स्पष्ट किया है कि—“उसमें (डायरी में) व्यक्ति नहीं, व्यक्तित्व के माध्यम से एक प्रकार से जीवन ही रूपायित होता है। डायरी, व्यक्ति का नहीं, व्यक्ति द्वारा रोज़ाना जिये गए जीवन की झांकी प्रस्तुत करती है। वह दैनिक स्थूलता में से सूक्ष्म की पकड़ को प्रस्तुत करती है। वह लेखक की संवेदनात्मक पक्ष की प्रस्तुति है। डायरी में कल्पना के लिए कोई स्थान नहीं, परन्तु यथार्थ का रूप-चित्रण भी उसमें नहीं हो सकता।”⁹ इस प्रकार डायरी में व्यक्ति ही नहीं बल्कि उसके व्यक्तित्व के माध्यम से मानव जीवन का प्रस्तुतिकरण होता है। लेखक जीवन को अति सूक्ष्म दृष्टि से देखता है। पुनः वह डायरी के माध्यम से इसे प्रस्तुत करता है। साथ ही इसमें लेखक की संवेदनात्मक पक्ष की भी प्रस्तुति मिलती है।

डॉ० शशिभूषण सिंघल का डायरी के बारे में विचार है कि—“डायरी में ऊपर-ऊपर से सामयिक जीवन की चर्चा रहती है किन्तु उसकी गहराई में लेखक का आत्म-निरीक्षण या आत्म-सम्बोधन रहता है।”¹⁰ अतः डायरी जीवन का केवल ऊपरी निरीक्षण न होकर बल्कि व्यक्ति का आत्म-निरीक्षण होता है।

डॉ० शान्ति खन्ना डायरी के विषय में लिखती हैं कि—“जब लेखक अपने प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं का वर्णन ही नहीं इसके साथ-साथ मानसिक प्रतिक्रियाओं का वर्णन भी जिस पुस्तक में संक्षिप्त एवं सुसंगठित रूप से करता है उसे डायरी कहते हैं।”¹¹ स्पष्ट है कि डायरी केवल प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं का वर्णन ही नहीं अपितु मन की व्यवस्था का संक्षिप्त रूप है।

अरुण प्रकाश डायरी के संबंध में कहते हैं कि—“डायरी एक प्रकार का आत्मकथात्मक रूपबंध बन गया है जिसमें लैटिन शब्द ‘डायरियम’ के अनुरूप ही

उसमें लिखने वाली गतिविधियाँ, चिन्तन समाहित रहती हैं।... डायरी सिर्फ लिखने वाले के व्यक्तित्व का ही उद्घाटन नहीं करती, सामाजिक और राजनीति इतिहास के दस्तावेजीकरण में भी उसका उपयोग होता रहा है।¹² इस प्रकार डायरी केवल व्यक्ति के व्यक्तित्व का उद्घाटन न होकर एक प्रकार से व्यक्ति के सामाजिक व राजनीतिक जीवन का दस्तावेज भी होती है।

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित 'हिन्दी विश्वकोश' में डायरी की व्याख्या करते हुए लिखा गया है कि—“नित्यप्रति के व्यक्तिगत लिखित अनुभवों को डायरी की संज्ञा दी गयी है। इसे दैनंदिनी, रोज़नामचा और दैनिकी भी कहते हैं। जीवन के आरंभिक दिनों में डायरी लेखन का कार्य कालांतर में बड़ा मूल्यवान सिद्ध होता है। प्रौढ़ावस्था में जाकर अपनी ही पिछली डायरी पढ़ने पर व्यक्ति को यह अनुभव होता है कि उसके विचार किस रूप में परिपक्व हुए। अनुभवों, विश्वासों और आकांक्षाओं की प्रौढ़ता का विकासक्रम समझने का यह साधन सचमुच बड़ा आकर्षक और रमणीय है।¹³ अतः डायरी लिखना व्यक्ति का व्यक्तिगत अनुभव होता है साथ ही उसमें विश्वास, आकांक्षा, रोचकता व आकर्षण जैसे गुण भी होते हैं। संक्षेप में डायरी व्यक्ति के दैनिक जीवन का अध्ययन भी कही जा सकती है।

'हिन्दी साहित्य कोश' के अनुसार—“डायरी सीमित अर्थ में तो वह कापी, नोटबुक या पुस्तिका है, जिसमें हर रोज़ दैनिक घटनाओं का या दिन-भर में किये गये कार्यों का लेखा रखा जाए।¹⁴ अतः डायरी दिन-भर किये गए कार्यों का लेखा-जोखा है।

कुछ प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वानों ने भी डायरी के संबंध में अपने विचार इस प्रकार प्रस्तुत किये हैं—

प्रसिद्ध विद्वान एवं लेखक रॉय पास्कल ने डायरी के संबंध में लिखा है कि—“डायरी एक आईना है जिसमें समय एक श्रृंखलाबद्ध रूप में दिखाई देता है। डायरी लेखक ने जो डायरी लिखते समय लिखा है, हो सकता है वह उस समय उसके लिए अधिक महत्वपूर्ण हो लेकिन उसकी भावी उपयोगिता को आँका नहीं जा सकता।¹⁵ डायरी जीवन की वह श्रृंखलाबद्ध रूप में बँधी हुई आईना होती है जिसमें उसकी भावी उपयोगिता महत्वपूर्ण होती है।

श्री डी०जी० नायक डायरी के विषय में लिखते हैं—“डायरी दिन-प्रतिदिन के व्यक्तिगत कार्यकलापों का व्यक्ति द्वारा किया गया लेख प्रमाण है। इसमें कलात्मक तत्वों के लेख प्रमाण का स्थान अमूल्य है।”¹⁶ इस प्रकार डायरी एक प्रकार का दैनिक रिकॉर्ड है जिसमें कलात्मक तत्त्व भी निहित होते हैं।

‘न्यू शार्टर ऑक्सफोर्ड इंगलिश डिक्शनरी’ में इसकी व्याख्या की गई है—“डायरी: दैनिक भत्ता, मृत्यु, दिनचर्या, रोज़मर्रा का दैनिक संव्यवहार का लेखा-जोखा विचारों का आदि जिसमें लिखने वाला सम्मिलित हुआ हो। एक पत्रिका और कैलेण्डर, रोज़मर्रा का सामान लिखने के साथ विशेषकर उन लोगों के हित लिए हुए है। यह एक व्यक्ति की संभावी घटनाओं का क्रमबद्ध संकलन है।”¹⁷ अतः डायरी में दैनिक संव्यवहार अंकित होने के साथ-साथ व्यक्ति के संभावी घटनाओं का भी संकलन होती है।

‘दी ऑक्सफोर्ड इंगलिश डिक्शनरी’ में डायरी के संबंध में इस प्रकार व्याख्या दी है—“नित्यकर्म की घटनाएँ और संव्यवहार, एक पत्रिका; विशेषकर जो लेखक के निजी अनुभवों के अंतर्गत आती है, दैनिक बातों का संग्रह है, जो उसको निजी रूप में प्रभावित करता है।”¹⁸ इस प्रकार डायरी दिन-भर की बातों का एकत्रीकरण न होकर निजी जीवन को भी प्रभावित करती है।

‘दी ऑक्सफोर्ड इंगलिश डिक्शनरी’ में डायरी की कुछ इसी प्रकार की परिभाषा मिलती है—“एक पत्रिका हाशिया के साथ दिनांक अंकित किये हुए दैनिक स्मरण पत्र के साथ, कैलेण्डर पर भी रोज़ के स्मरण पत्र और जो विशेष व्यक्ति पर उनके विशेष पेशों के दैनिक रिकॉर्ड को रखने के लिए तैयार की गई हो।”¹⁹ अतः डायरी को एक प्रकार का दैनिक कैलेण्डर कह सकते हैं।

‘दी न्यू एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटैनिका’ में डायरी की दी गई परिभाषा में कुछ साहित्यिक तत्त्व दृष्टिगत होते हैं—“आत्मकथा लेखन का प्रारूप; जो दैनिक रिकॉर्ड, डायरीकार की हरकतें उसका प्रभाव, वस्तुतः लेखन के प्रयोग के लिए केवल, दिनचर्या पत्रिका, उन्मुक्तता लिये हुए जो कि प्रकाशन के लिए अनुपयुक्त होती है। यह प्राचीन वंशावली में उत्पन्न हुए ‘लेटिन’ शब्द ‘डेरियम’ जो डायस (दिन) से लिए हुए संकेत करती है।”²⁰ अतः डायरी आत्मकथा का ही एक रूप है और दिनचर्या के अनुभवों का सांकेतिक अध्ययन है।

‘एजुकेशनल्स न्यू मिलेनियम एडवान्सड 21st सेन्चुरी डिक्शनरी’ में डायरी की परिभाषा इस प्रकार है—“दैनिक पत्रिका—रोज़ाना (दैनिक) घटनाएँ, मिलने और विचारों का रिकॉर्ड है।”²¹

इस प्रकार भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों तथा कोशों में दिए हुए मतों से यह स्पष्ट हो जाता है कि डायरी व्यक्ति द्वारा जिए गए जीवन के भिन्न-भिन्न पहलुओं से सजी हुई होती है, जिसमें तरह-तरह के अच्छे एवं बुरे दोनों प्रकार के अनुभव, सोच-विचार, भावनाएँ, वैयक्तिक बातें और संपूर्ण जीवन की तस्वीरें होती हैं। डायरी में लेखक प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं का वर्णन ही नहीं करता, बल्कि इसके साथ ही साथ मानसिक प्रतिक्रियाओं का वर्णन भी करते हुए चलता है। वह डायरी में अपने जीवन का ही विश्लेषण नहीं करता अपितु जीवन में आए हुए सभी व्यक्तियों एवं जीवन में घटित घटनाओं का भी विवेचन करता है। स्पष्ट है कि डायरी व्यक्तित्व प्रकाशन का एक साधन है जिससे मनुष्य के वास्तविक रूप का सही पता चलता है। रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं—“डायरी का रूप सम्भावतः अधिक आत्मपरक है, क्योंकि उसका लेखन साधारणतः यह मानकर होता है कि उसका पाठक स्वयं लेखक ही होगा। इसलिए डायरी जैसी और स्वच्छंद अभिव्यक्ति अन्यत्र अकल्प्य है।”²² डायरी व्यक्ति का एक विशेष दिन, विशेष समय की मन की स्थितियों के चित्र प्रस्तुत करती है। हाँ इतना अवश्य है कि डायरी किसी अन्य को संबोधित नहीं करती। वह एक तरह की नियमित और रचनात्मक आत्मालाप है जैसे रचनाकार चलते हुये अपने आप से बात कर रहा हो। गोपाल राय ‘उपन्यास की संरचना’ में लिखते हैं—“डायरी स्वयं से संवाद है। आत्मकथा का वह रूप जो लेखक के चेतना-प्रवाह या उसके स्वयं से संवाद के रूप में सामने आता है, डायरी के बहुत निकट होता है। डायरी लिखते समय लेखक परिवेश से स्वतंत्र, केवल स्वयं के भीतर रहता है। यदि कोई समाज या परिवेश या ‘धर्म’ होता है, तो वह उसके भीतर ही होता है। वह चाहे तो कुछ देर के लिए देश, समाज, धर्म, नैतिकता, कानून सभी के बन्धनों से मुक्त हो जा सकता है।”²³ डायरी में साधारण और विशेष दोनों स्थितियों में व्यक्ति के मन की अभिव्यक्ति बनी रहती है। आधुनिक समय की बात देखी जाए या परखी जाए तो हर आदमी का दोहरा रूप

दिखलाई पड़ता है। आदमी दोहरा जीवन जीता है, उसी तरह स्थिति और व्यक्ति के अनुसार ही उसके व्यवहार में लगातार बदलाव आता रहता है। हर तीसरे व्यक्ति के साथ उसका बदला हुआ व्यवहार दिखलाई दे जाता है। आज के व्यस्त वैज्ञानिक युग में, डायरी ही ऐसा प्रमुख माध्यम है, जिसके द्वारा व्यक्ति अपने आंतरिक भावनाओं एवं अपनी सोच को अभिव्यक्त कर सकता है।

डॉ० सत्येन्द्र का मानना है कि—“डायरी में व्यक्तित्व की उन्मुक्तता अधिक रहती है।”²⁴ वैसे तो और भी विधाएँ अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने का माध्यम बनती हैं किंतु उसमें सत्यता की प्रतीति छुप जाती है और काल्पनिकता का अधिक पुट दिखलायी पड़ता है। इससे सच्चाई का पता लगाना मुश्किल हो जाता है। जबकि डायरी काल्पनिकता से कोसों दूर है। डायरी में किसी भी बात को छिपाने या कल्पना का साथ लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती है, ना ही कलात्मकता की ओर ध्यान दिया जाता है। यदि कलात्मकता की ओर लेखक का रुझान है तो स्वाभाविकता नष्ट हो जाएगी। रामधारी सिंह दिनकर लिखते हैं—“डायरी हो या आत्मकथा, आदमी अपने सही रूप को उस तरह आँक नहीं सकता, जिस तरह उसे कोई तटस्थ व्यक्ति आँक सकता है। जीवन में हम बहुत से ग़लत काम करते हैं, लेकिन इसका ध्यान हमें बराबर रहता है कि वे गलतियाँ हमारे लेखों में न आ जाएँ। हम हर समय कोई न कोई मुखौटा लगाकर चलते हैं। लेकिन मुखौटा बहुत पुराना पड़ जाए तो उसमें छेद हो ही जाते हैं। और तब मुखौटे के होने पर भी आदमी का रूप पारखियों से छिपा नहीं रहता। मगरं मेरे लिए इसमें शरमाने की क्या बात है? आप और हम, दोनों एक ही नाव में हैं।”²⁵ इसलिए डायरी सत्यता के कवच को पहने हुए यथार्थ के धरातल पर सदैव खड़ी दिखाई पड़ती है। कैलाश चन्द्र भाटिया ने ‘साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ’ में लिखा है—“डायरी में लेखक शुद्ध हृदय से वही लिखता है जो अनुभव करता है, वह अपने मन के भावों को सत्यता के साथ प्रस्तुत करता है।”²⁶ डायरी को लिखते समय शुद्ध हृदय के साथ-साथ सत्यता का होना बहुत आवश्यक है। डायरी में घटनाओं के क्रम का ध्यान भी रखा जाता है। यदि कोई उल्लेख करने वाली महत्वपूर्ण घटना भूल से छूट जाती है तो बाद में भी लिखी जा सकती है। ये घटनाएँ लेखक स्वयं भोगता

है, देखता है या किसी और विश्वनीय सूत्रों के द्वारा पता लगाता है और ध्यानपूर्वक समझता है। सही मौका पाते ही या उसके बाद में छोटी-छोटी विशेष महत्वपूर्ण टिप्पणियों को प्रतिदिन लिखता है और यदि लेखक इन छोटी-छोटी महत्वपूर्ण टिप्पणियों को सबके हित के लिए उपयोगी समझता है, तो बाद में प्रकाशित भी कर देता है। जो समाज के लिए हितकर साबित होती हैं।

डायरी विधा और विधाओं की भाँति अपनी कुछ प्रमुख विशेषताएँ रखती है। डॉ० हरिमोहन ने डायरी की प्रमुख विशेषताएँ कुछ इस प्रकार रेखांकित की हैं—

- “1. डायरी किसी व्यक्ति के दैनिक कार्यकलापों, विचारों और विविध प्रसंगों—घटनाओं आदि पर उसकी प्रतिक्रियाओं का अंकन है।
2. डायरी में डायरी लेखक के आस-पास के जीवन, सामयिक प्रसंगों आदि के अंकन के साथ-साथ लेखक के आत्मनिरीक्षण अथवा आत्मसम्बोधन को नित्यप्रति अंकित किया जाता है।
3. इसमें व्यक्ति ही नहीं अपितु व्यक्तित्व के माध्यम से जीवन की झाँकी रहती है।
4. यह लेखक के संवेदनात्मक पक्ष की प्रस्तुति है।
5. डायरी में व्यक्तिगत अनुभूतियों का तिथि-क्रम से अंकन किया जाता है, अतः यह निरन्तर चलने वाला लेखन है।
6. इसमें एक विशिष्ट समय की लेखकीय मानसिक स्थिति, विचार-धारा अनुभूतियों आदि का सहज, अकृत्रिम, यथार्थ चित्र उपस्थित रहता है।
7. डायरी को हम विभिन्न ‘मूड्स’ के ‘स्नेप्स’ कह सकते हैं, इसलिए उसके पृष्ठ खण्डानुभूतियों के रिकॉर्ड हैं।”²⁷

डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया डायरी की सबसे बड़ी विशेषता मानते हैं कि—“वह निजी होते हुए भी समसामयिक समस्याओं, विचारों तथा जीवन को भी उसमें आत्मसात करके लिखी जाए। युगीन परिस्थितियाँ तथा समस्याएँ उसमें अभिव्यंजित हों।”²⁸ इस प्रकार की डायरी में उल्लेखनीय है—डॉ० विवेकीराय द्वारा कृत ‘मास्टर मनबोध की डायरी’। यह डायरी डॉ० विवेकीराय के अध्यापक जीवन की त्रासदियों

का प्रामाणिक दस्तावेज़ प्रस्तुत करती है। डॉ० माजदा असद "विविधता"²⁹ को डायरी की विशेषता मानती हैं, क्योंकि इसमें अनेक विषयों पर लिखा जा सकता है। डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया मानते हैं कि डायरी में "सत्यता सर्वोपरि है साथ ही स्पष्टता, सजीवता, संक्षिप्तता, सरलता, सहजता आदि।"³⁰ अपनी पुस्तक 'गद्य की नई विधाओं का विकास' में डॉ० माजदा असद डायरी की भाषा-शैली की विशेषता के संदर्भ में लिखती हैं—"डायरी की भाषा-शैली में "निस्संकोच आत्म-विश्लेषण, घटनाओं में संबद्धता, स्पष्टता, सजीवता, मानसिक प्रतिक्रियाओं का संक्षिप्त विवरण, सत्यता एवं स्वाभाविकता अनिवार्य है।"³¹ डायरी की इन सभी विशेषताओं को दृष्टिगत करते हुए कह सकते हैं कि डायरी में एक व्यक्ति विशेष से गहरा एवं (प्रत्यक्ष) सीधा संबंध स्थापित होता है और उसके कारण डायरी में 'वैयक्तिकता की प्रधानता' विद्यमान रहती है। डायरी में लेखक धीरे-धीरे अपना कच्चा-चिट्ठा खोलता है और वह अत्यन्त गोपनीय बातें भी प्रकट कर देता है साथ ही साथ सत्यता का स्पर्श और स्वाभाविकता को भी साथ रखता है। तिथि, समय तथा स्थान आदि चीज़ों को अवश्य सम्मिलित करते हुये चलता है। डायरी लिखते समय लेखक अपने मन का चिंतन एवं भोगे हुए अच्छे और बुरे अनुभवों को प्रस्तुत करते हुए चलता है। डायरी निरंतर चलाएमान लेखन है। निरंतर चलते रहने पर भी सत्यता, स्पष्टता, सरलता, सजीवता तथा स्वाभाविकता नष्ट नहीं होती है।

डायरी कोई यूँ ही नहीं लिख दी जाती है, इसके भी कुछ अपने महत्त्वपूर्ण उद्देश्य होते हैं। डॉ० माजदा असद के अनुसार—"डायरी" का प्रमुख उद्देश्य आत्म-विवेचन और आत्म-विश्लेषण होता है। यह स्वांतः सुखाय लिखी जाती हैं।"³² डायरी का मुख्य रूप से उद्देश्य पाठक को जानकारी, ज्ञान और प्रेरणा देना है। डायरी का मुख्य उद्देश्य डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया ने "आत्मालोचन, आत्मविवेचन, आत्मविश्लेषण"³³ इन तीनों को माना है जबकि डॉ० माजदा असद अपनी पुस्तक 'गद्य की नई विधाओं का विकास' में दो ही उद्देश्यों आत्म-विवेचन और आत्म-विश्लेषण को मानती हैं। डायरी की विशेषताओं एवं उद्देश्यों को देखने के पश्चात् डायरी के रूपों का अध्ययन दो प्रकार से किया जा सकता है एक व्यक्तिनिष्ठ आधार पर दूसरा वस्तुनिष्ठ। डायरी के व्यक्तिनिष्ठ रूप के अध्ययन में

व्यक्ति के पूरे दिन की घटनाएँ समाहित होती हैं तथा व्यक्ति स्वयं पूर्ण रूप से समाहित रहता है। डायरी के वस्तुनिष्ठ रूप में व्यक्ति-पक्ष के साथ-साथ अर्थात् व्यक्ति के पूरे दिन की घटनाओं का ही अध्ययन न होकर बल्कि व्यक्ति के सामाजिक व अन्य पक्षों को भी समाहित किया जाता है। 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास' में डायरी के रूप के संबंध में चर्चा हुई है उसमें लिखा है कि—“डायरी के दो रूप सामने आते हैं—1. व्यक्तिनिष्ठ और 2. वस्तुनिष्ठ। किन्तु दोनों रूप अन्योन्याश्रित और परस्पर गुंफित हैं। यह असंभव है कि व्यक्तिगत डायरी में घटना का एकांत अभाव हो और वस्तुनिष्ठ डायरी में व्यक्ति एकदम अनुपस्थित हो। पाश्चात्य साहित्य में दोनों प्रकार की डायरियों को साहित्यिक मान्यता प्राप्त हुई। यदि टालस्टाय की डायरी व्यक्तिनिष्ठ डायरी के रूप में प्रख्यात है तो सेम्युअल पेपिस की डायरी वस्तुनिष्ठ डायरी के रूप में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।”³⁴ जो अच्छी डायरियाँ होती हैं उनमें ये दोनों रूप मिले-जुले दिखाई देते हैं। व्यक्तिगत जो डायरियाँ होती हैं, उनमें घटना का पूरी तरह से अभाव नहीं हो सकता है और वस्तुगत डायरियों में व्यक्ति-पक्ष की अप्राप्ति सम्भव नहीं है। ‘पाश्चात्य समीक्षकों’ ने भी ‘व्यक्तिनिष्ठ’ और ‘वस्तुनिष्ठ’ इन दोनों रूप का समर्थन किया है।

डॉ० बलभीमराज गोरे ‘हिन्दी भाषा, लिपि व साहित्य’ में पाश्चात्य समीक्षकों के अनुसार लिखते हैं—“व्यक्तिनिष्ठ डायरी वह है जिसमें किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रकाशन होता है तो वस्तुनिष्ठ डायरी में मनुष्य के जीवन से संबंधित किसी कालखंड अथवा मानवी समाज के किसी वर्ग-विशेष का शब्दांकन होता है।”³⁵

स्पष्ट है कि जब डायरी किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के व्यक्तित्व का संपूर्ण उद्घाटन करती है तो व्यक्तिनिष्ठ कहलाती है, जब वह किसी काल-खंड अथवा मानव समाज के किसी वर्ग-विशेष को चित्रित करती है तो वस्तुनिष्ठ कहलाती है।

किसी भी आकृति का स्वरूप निर्माण करने के लिए जल, मिट्टी आदि तत्त्वों की आवश्यकता पड़ती है, ठीक उसी प्रकार डायरी का भी स्वरूप निर्माण के लिए कुछ महत्त्वपूर्ण रचना तत्त्वों की आवश्यकता होती है। हिंदी साहित्य में जो भी

डायरियाँ एवं डायरियों के पन्ने पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं उनको ध्यान में रखते हुए डायरी के तत्त्व निम्नलिखित हैं।

डॉ० हरिमोहन ने डायरी के पाँच रचना-तत्त्वों को माना है—

1. व्यक्तिगत जीवन के क्रमिक चित्र
2. आंतरिक सत्य
3. तल्लीनता
4. सहजता
5. कलात्मकता के प्रति उदासीनता।³⁶

व्यक्तिगत जीवन के क्रमिक चित्र

‘डायरी’ स्वयं का लेखन है। इसलिए इसमें लेखक के व्यक्तिगत जीवन की प्रधानता होती है। कुछ व्यक्तियों को रोज़ाना डायरी लिखने की आदत सी पड़ जाती है, और कुछ व्यक्ति एक या दो दिन छोड़कर डायरी लिखते हैं। फिर भी डायरी को लिखते समय तिथि-क्रम की ओर ध्यान देना आवश्यक होता है। तिथि-क्रम से वह पहचानी जा सकती है। उसके अपने विचार, भावनाएँ आदि उस डायरी में होते हैं। “डायरी लेखक के व्यक्तिगत जीवन के क्रमिक चित्रों की अलबम होती है। वह उस व्यक्ति के वैयक्तिक जीवन का सबसे प्रमाणिक दस्तावेज़ होती है।”³⁷ डायरी में व्यक्ति-पक्ष के जीवन की विविध घटनाएँ विद्यमान रहती हैं।

आंतरिक सत्य

लेखक जब-जब डायरी लिखता है, वह डायरी को अपना दूसरा मन समझता है। डायरी लेखक अपनी निजी अनुभूतियाँ, अपनी भावनाएँ, विचार आदि सत्यता के साथ लिखता है तब वह, उसे दूसरों से बचाकर एवं छिपाकर भी रखना चाहता है जो उसके मन में है। इसलिए डायरी का महत्वपूर्ण तत्त्व आंतरिक भाव का उद्घाटन करना होता है। ‘रसेल’ ने भी डायरी (माई डायरी इन इण्डिया) के लिए संकल्प लिया था। उन्होंने इस डायरी की भूमिका में लिखा है कि—“मेरा वश जहाँ तक चलेगा मैं सत्यप्रिय रहूँगा। सत्य में ही निष्ठा रखूँगा। सत्य के सिवा और कुछ नहीं।”³⁸ डायरी में हम अपना दोहरा जीवन प्रकट करके नहीं चल सकते,

क्योंकि इससे डायरी का महत्त्वपूर्ण तत्त्व 'आंतरिक सत्य' नष्ट हो जाएगा। डायरी लिखते समय हम अपने सभी चेहरों को उतार कर अलग कर देते हैं। "आंतरिक सत्य, वह चाहे कितना ही निर्मम क्यों न हो, हमारे सामने रहता है। इसी से जुड़ा तत्त्व है—आत्मनिरीक्षण, आत्मविश्लेषण और आत्मसम्बोधन। व्यक्ति औरों के बहाने अपने को जांचता है। स्थितियों, घटनाओं और परिस्थितियों के बीच अपने को रखकर आत्मविश्लेषण करता है। इसलिए डायरी प्रायः आत्म-परिष्करण और आत्ममुक्ति का सबसे अच्छा साधन भी है।"³⁹ डायरी लिखने से मानसिक तनाव से भी मुक्ति मिल सकती है। इसके अतिरिक्त व्यक्ति डायरी के माध्यम से अपना रास्ता चुन सकता है। आंतरिक सत्य डायरी को विश्वास के योग्य बनाता है जो कि डायरी का महत्त्वपूर्ण पक्ष है।

तल्लीनता

डायरीकार अधिकतर अकेलेपन और अपने निजी क्षणों में डायरी को लेखनीबद्ध करता है, डॉ० हरिमोहन के अनुसार—“जब डायरी लेखक तल्लीनता पूर्वक किसी घटना पर सोच रहा होता है, अपने विचार व्यक्त कर रहा होता है, जीवन-दर्शन के मोती खोज रहा होता है, तब कल्पना स्वतः ही उसके विचार क्रम में साथ-साथ चलने लगती है। कई बार ऐसा होता है कि हम डायरी लिखते-लिखते, सोचते-सोचते कहीं दूर कल्पनालोक में निकल जाते हैं, अपने ही विचारों में अथवा अपने में ही डूबकर सोचने लगते हैं, रचनात्मक कल्पना के दरवाजे हमें नये लोक में ले जाकर नये जीवन-सत्यों का साक्षात्कार कराने लगते हैं। ऐसे में कल्पना तत्त्व को डायरी लेखन के लिए त्याज्य नहीं माना जा सकता।”⁴⁰ लेखक जब भी डायरी लिखता है, तब वह तल्लीनता के साथ अपने अनुभवों, भावनाओं, विचारों, टिप्पणियों आदि को शब्दों में बाँधता है।

सहजता

‘तल्लीनता’ के साथ-साथ जुड़ा हुआ है, डायरी का विशेष रचना तत्त्व ‘सहजता’। तल्लीनता में बसकर सहजता को लेकर व्यक्ति अपनी डायरी लिखता है। इस संबंध में ‘डॉ० माजदा असद’ लिखती हैं—“डायरी में सहजता स्वाभाविक रूप से ही पाई जाती है क्योंकि लेखक डायरी अपने लिए लिखता है,

किसी दूसरे व्यक्ति से उसका कोई सम्बन्ध नहीं होता। न ही डायरी लेखन के द्वारा वह दूसरों की समीक्षा और प्रशंसा की अभिलाषा करता है। अतः अपने विचारों एवं घटनाओं को सहज रूप में डायरी के माध्यम से प्रस्तुत कर देता है।⁴¹ सहजता के कारण की वह छिपाव-दुराव और कृत्रिमता (बनावट) से दूर रहता है। कोई झूठ उसके सामने ठहर नहीं पाता। इसलिए सहजता भी डायरी लेखन में अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण तत्त्व है। डॉ० हरिमोहन का डायरी के विषय में कहना है—“डायरी में व्यक्ति की अकुण्ठ, अकृत्रिम मानसिक स्थिति आकार पाती है।”⁴² एक-एक विशेष क्षण में वह अपने मन में क्या सोचता है, किसी स्थिति या घटना विशेष पर उसकी क्या सहज और तत्कालिक प्रतिक्रिया हुई, यह सब डायरी के पृष्ठों पर लिखता है, इसलिए वहाँ उस विशेष क्षण में सहजता अवश्य रूप से विद्यमान रहती है।

कलात्मकता के प्रति उदासीनता

डायरी का यह तत्त्व तल्लीनता एवं सहजता से प्रभावित है। डायरी लेखक यह सोचकर नहीं लिखता है कि वह कोई कलात्मक वस्तु को बना रहा है। डॉ० माजदा असद के अनुसार—“वह तो नितान्त निजी लेखन होने से अपने व्यक्तिगत विचार-आवेग को शब्दबद्ध कर अपने को ‘हल्का’ करने का साधन है ×××। परिणामतः डायरी लेखन कलात्मकता से बेखबर निर्झर के समान निर्द्वन्द्व होने वाला स्वाभाविक लेखन है।”⁴³ डायरी लेखक को कभी भी यह सोचकर नहीं लिखना चाहिए कि वह जो डायरी लिख रहा है वह किसी को प्रभावित करने के लिए या किसी की आलोचना या प्रशंसा के पक्ष से या फिर एक अच्छी साहित्यिक कृति के रूप में। डायरी लेखक को बहुत ही सहज-भाव से तल्लीनता के साथ-साथ अपने मन की बातें बताते हुए आगे बढ़ना चाहिए। तभी वह डायरी सत्य के मार्ग पर अग्रसर रहेगी और सच्ची डायरी कहलाएगी।

इन रचना तत्त्वों के अतिरिक्त ‘डायरी’ के कुछ और रचना तत्त्व उभरकर सामने आते हैं। जो इस प्रकार हैं—

विश्वसनीयता

संपूर्ण हिंदी साहित्य में केवल ‘डायरी’ ऐसी साहित्यिक विधा है, जिसे किसी भी सीमा तक ले जाया जाए, तो उस पैमाने पर भी खरी साबित होगी। डायरी

शत-प्रतिशत विश्वसनीय समझी जा सकती है क्योंकि डायरी में डायरी लेखक अपने जीवन के बुरे एवं अच्छे दोनों अनुभवों को निर्मित करता है। जैनेन्द्र कुमार एक सच्चे लेखक के विषय में लिखते हैं—“जिसे अपना और अपने नाम का मोह न हो, वह अपने आदर्श के प्रति सच्चा हो, स्पष्ट के प्रति खरा हो। उसका आदर्श ही अमर होकर विराजे, पूजनीय हो।”⁴⁴ अभिव्यक्ति का कोई अन्य माध्यम नहीं होता। ईमानदारी से आत्माभिव्यक्ति होने के कारण सचमुच डायरी की विश्वसनीयता को पूर्णरूपेण माना जाता है। डायरी पूर्ण रूप से यथार्थ के धरातल से जन्म लेती है और अंत भी यथार्थ के धरातल पर करती है। डायरी की प्रमाणिकता को न्याय-सत्ता द्वारा स्वीकार भी कर लिया गया है। डायरी साहित्य को देखने के पश्चात् हम यह मानते हैं कि डायरी ही एक ऐसी अनोखी विधा है, जिसमें रचनाकार की आत्माभिव्यक्ति के द्वारा किया गया अनुशीलन, विश्वसनीयता और प्रमाणिकता आदि विशिष्ट गुणों से परिपूर्ण है।

वैयक्तिकता (निजी अंतरंगता)

डायरी लेखन की विशिष्टता इसी अंतरंगता में निहित है। अपनी दुर्बलताओं और सबलताओं का स्वीकार करना ही अंतरंगता की पुष्टि है। डायरी लेखक प्रायः लिखते समय उसके प्रकाशन की आकांक्षा से निर्लिप्त होता है। अतः वह डायरी में अपनी नितांत निजता का पुट-प्रत्यांकन करता है। अपने भीतर अंतर्द्वन्द्वों और बहिर्द्वन्द्वों को अभिव्यक्त करता है जो उसकी दिन-प्रतिदिन की मानसिक उधेड़बुनों और अन्तः विचारों का सुनिश्चित परिणाम है। ‘निजता’ भी डायरी लेखन का मूल तत्त्व है। डायरी अपनी निजता के कारण ही लेखक की अपनी निजी संपत्ति होती है, क्योंकि ऐसी अनुभूतियाँ जो नग्न-वास्तविकता (यथार्थ) को स्पर्श करती हुई चलती हैं तथा जिसे व्यक्त करना असंभव सा होता है, वे डायरी में समाहित हो जाती हैं। अंग्रेजी साहित्य में प्रतिष्ठित ‘सेमुअल पेपिस’ की डायरी अपनी सहज अभिव्यक्ति के कारण ही इतनी प्रसिद्धि पर पहुँच पाई है, जिसमें पेपिस के जीवन संघटनाओं का, उसके निजी क्षणों का, प्रेम, घृणा और दुर्गुणों की व्याख्या बड़ी सच्चाई के साथ मिलती है।

‡ डायरी की सहजता, आत्मीयता और अकृत्रिमता के गुणों से जिस अंतरंगता और निजता का जन्म होता है, वह लेखक के व्यक्तित्व की परत-दर-परत को पाठक के सामने खोल देता है, कभी मनुष्य अकेले रहने की इच्छा रखता है और कभी अकेलापन उसे काट खाने को दौड़ता है। अपने इसी अंतर्द्वन्द्व का आत्म-विश्लेषण करते हुए मोहन राकेश 26.01.57 की रात्रि में लिखते हैं—“आज सवा साल के बाद, बल्कि सोलह महीने के बाद—इस दौरान जिंदगी के सबसे बड़े द्वन्द्व से गुज़रा हूँ—मैंने पिछले छह साल की घुटन को समाप्त करना चाहा है—जिस औरत से मैं प्यार नहीं कर सकता, उसके साथ मैं जिंदगी किस तरह काट सकता हूँ? आज वह मुझपर ‘वासना से चालित’ और ‘इन्सानियत से गिरा हुआ’ होने का आरोप लगाती है—क्योंकि मैंने उससे तलाक़ चाहा है—क्योंकि मैं अपने अभाव की पूर्ति के लिए एक ऐसे व्यक्ति का आश्रय चाहता हूँ, जो मुझे खींच सकता है, बाँधकर रख सकता है।”⁴⁵ ‘मोहन राकेश’ के वैवाहिक जीवन का सारा द्वन्द्व और संकट इन पंक्तियों में जिस तरह उजागर हुआ है वह उनके अंतर्गत की निश्छलता को भी व्यक्त करता है। डायरी में लेखक अपना कच्चा-चिट्ठा प्रस्तुत करता है। डॉ० सरला शुक्ल ‘पाश्चात्य जीवनी कला’ में लिखती हैं—“डायरी का सम्बन्ध प्रत्यक्षतः एक व्यक्ति के होने से इसमें वैयक्तिकता की प्रधानता होती है और बहुधा अत्यन्त गोपनीय बातें भी इसमें व्यक्त होती हैं। डायरी लिखते समय लेखक को यह विश्वास रहता है कि यह डायरी कभी प्रकाश में नहीं आयेगी और लेखक के अतिरिक्त कोई और इसे नहीं पढ़ेगा। अतः डायरी के माध्यम से भावनाओं की स्पष्ट एवं प्रत्यक्ष अभिव्यक्ति संभव है।”⁴⁶ इस प्रकार डायरी में आंतरिक अनुभवों की व्यापक अभिव्यक्ति की चेष्टा रहती है और डायरी की अंतरंगता इसी पर आधारित है।

आत्मानुशीलन

‡ वैसे तो कोई भी रचनाकार सामान्य जन से अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील, चिंतक और युगदृष्टा होता है। उसकी यही व्यवहारगत प्रवृत्तियाँ उसके व्यक्तित्व के अनुशीलनता के तत्त्व समाहित करती हैं। वह अपनी आँखों से युग के जिन संतापों को देखता है, जिन संत्रासों को भोगता है उन पर मनन स्वभावगतः ही करने

लगता है क्योंकि डायरी लिखना उसकी दिनचर्या है, वह उसकी नियमितता है। अतः किसी भी घटना जिसका उल्लेख वह डायरी में करता है, उस पर मनन करता है, अगर वह अंकन योग्य है तो ठीक है अन्यथा वह उसे छोड़ देता है और किसी अन्य प्रसंग पर मनन करने लगता है। दिनकर ने अपनी डायरी में अपने पुत्र के निधन की घटना कितने मनन और अनुशीलन के बाद लिखी है। 12.04.1967 की डायरी में लिखते हैं कि—“आज बुधवार को तीन बजकर पैंतालीस मिनट पर रामसेवक का देहान्त हो गया। कोई २५ मिनट तक मैं बिना रोए मित्रों को फोन से सूचना भिजवाता रहा। उसके बाद जब मित्र आने लगे, मेरा धीरज टूट गया।... रामसेवक पहले मेरे पुत्र थे। जब घर का बोझ संभाल कर उन्होंने मुझे निश्चिंत कर दिया, वे मेरे पिता हो गए। उन्हीं के भरोसे मैं देश-विदेश घूमता रहा। फिर ६३ के जून से ६६ के दिसंबर तक उन्होंने मुझे घोर कष्ट दिया। तब वे ६६ के दिसंबर में फिर मेरे पुत्र हो गए और मेरी गोद में आकर बैठ गए। जब तक कलह था वे जीवित रहे। कलह शान्त हुआ नहीं कि वे चल बसे।”⁴⁷ इस प्रकार दिनकर ने अपने पुत्र की मृत्यु पर बड़े ही सधे हुए ढंग से आत्मानुशीलन कर अपनी दुःखद स्थिति को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया है जो कि सामान्य मनुष्य के अंदर ये बात नहीं हो सकती है। यह जो स्थिति हमें दिखाई दी, ये थी असामान्य परिस्थिति की बात। यही अनुशीलन सामान्य सी परिस्थिति में आत्मानुशीलन हो जाता है। डायरी में लेखक, जो हो रहा है और जो हो चुका है (वर्तमान, भूत) दिनभर का शांत और गंभीर मनःस्थिति (भूत) को याद करके और रचनात्मक अनुशीलन करता है। दैनिक-जीवन का ‘आत्मानुशीलन’ डायरी का विशिष्ट रचना तत्त्व है।

जीवंतता

वही साहित्य सजीव या जीवंत माना जाता है, जो अनुभूति एवं सुविचारों के स्तर पर पाठक को उद्बलित करता हो। रचनाकार चाहे किसी भी विधा का सर्जनकर्ता हो वह हर वो प्रयास करता है जिससे उसकी अभिव्यक्ति सजीव लगे क्योंकि सजीवता ही साहित्य की प्रमुख और अनिवार्य विशेषता है। साहित्य जगत में साहित्य को उसी तरह दिखाया जाता है, “जिसे मनुष्य ने देखा है, अनुभव किया

है, सोचा है और समझा है।⁴⁸ इसी बात को सिद्ध करने की कोशिश में हम हरिवंश राय बच्चन की 'प्रवास की डायरी' देखते हैं।

बच्चन ने अपनी डायरी में लिखा है—“प्रायः डायरियां प्रकाशित करने के ध्येय से नहीं लिखी जाती, पर जब वे प्रकाशित होती हैं तो उनमें स्वाभाविकता, सच्चाई, सरलता और सजीवता का वह गुण पाया जाता है जिसके लिए सचेत साहित्य झख मारता है।⁴⁹ डायरी लेखन में लेखक की भावनाएँ, मन की वृत्तियाँ, संस्कार और अनुभव आदि बातें किसी न किसी रूप में हमारे सामने उपस्थित हो जाती हैं, जिससे और भी अधिक सजीवता उत्पन्न हो जाती है। अपनी डायरी में बच्चन लिखते हैं—“जीवन की वास्तविकताएँ अब इतने नग्न रूप में मेरे सामने आती हैं कि मैं उनसे धोखा नहीं खा सकता, मेरी आत्मा अपने को नहीं खो सकती। गया प्रसाद ने अपनी तस्वीर 'कौन' के लिए मेरे पाँच गीत चाहे हैं। पर 100 रु० प्रति गीत देना चाहते हैं। यह तो कुछ भी नहीं, 500 रु० प्रति गीत से कम पर राजी नहीं हो सकता। ठीक है, आप मेरे अध्यापक रहे हैं, मित्र हैं पर आप तो व्यापार करने जा रहे हैं और व्यापार किसी का मित्र नहीं होता। मित्र हैं तो मित्र के नाते उन्हें मुझे और देना चाहिए था। पर यहाँ तो कायदा यह है कि मित्र का गला काटो, क्योंकि काटना आसान होता है।⁵⁰ देखा जाए तो इन पंक्तियों में जीवन का जो कड़वा सत्य है कितना सजीव दिखायी देता है। डायरी लेखक से बँधी होती है, डायरी की सजीवता (जीवंतता)। डायरी लेखक जिस क्षण डायरी लिखता है, उन-उन क्षणों में डायरी लेखक अभिव्यक्ति के रूप में, विचारों में, भावों में और शब्दों में होता है। इसलिए डायरी में लेखक की आत्मा सदा जीती है। डायरी के एक-एक पन्नों में, एक-एक क्षणों में (जिन-जिन क्षणों में उसने डायरी को लिखा है) डायरी लेखक स्वयं जीता है।

चिंतनशीलता (मनन)

प्रारंभ से ही मानव एक चिंतनशील प्राणी रहा है, तो साहित्यकार के कहने ही क्या... साहित्यकार एक विशेष रूप से चिंतनशील प्राणी होता है। साहित्यकार जब किसी साहित्य की रचना करता है तो उसकी रचना में कल्पना, विचार-भावनाएँ और अनुभव तीनों तत्त्वों का समावेश होता है। रचनात्मकता की

इसी रचना प्रक्रिया में विचार, संवेदना एवं उससे बने चित्रों के परस्पर संबंधों की चर्चा करते हुए 'एक साहित्यिक की डायरी' में मुक्तिबोध लिखते हैं—"कला का पहला क्षण है जीवन का उत्कृष्ट तीव्र अनुभव क्षण। दूसरा क्षण है इस अनुभव का अपने कसकते दुखते हुये भूलों से पृथक हो जाना और एक ऐसी फैंटेसी का रूप धारण कर लेना मानो वह फैंटेसी अपनी आँखों के सामने खड़ी। तीसरा और अन्तिम क्षण है इस फैंटेसी के शब्दबद्ध होने की प्रक्रिया का आरम्भ और उस प्रक्रिया की परिपूर्णावस्था तक की गतिमयता।"⁵¹ डायरी लिखते समय डायरी लेखक के विचार और भावनाएँ बिना किसी दबाव के कारण प्रकट होते हुए आगे बढ़ते हैं, इसलिए उसके विचार और भी महत्वपूर्ण हो जाते हैं। दिनकर अपनी डायरी में लिखते हैं कि—"आविष्कार जितने सूक्ष्म होते हैं, उनके परिणाम उतने ही दूरगामी और विशाल होते हैं। वैज्ञानिक इस भाव से भले काम करें कि वह निर्दोष है, मगर वह जीवित रहा तो यह भी संभव है कि उसे अपने को पापी समझना पड़े।"⁵² जीवन में ऐसे तमाम सत्य-असत्य हैं, जो प्रत्यक्ष अनुभवों की धारणा के आपसी विरोधी रूप अन्तःमन में एक वैचारिक भावना को जन्म देते हैं। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा 'मेरी कालेज डायरी' में लिखते हैं—"एक ओर बूढ़ा मनुष्य जनेउ पहने माथे पर चंदन लगाए स्नान करके कुशासन पर बैठा गायत्री का जाप कर रहा है। दूसरी ओर जूते और कपड़े पहने गिरजाघर में खड़ा मनुष्य आँखें मूँद कर ईसा-मसीह से पापों की क्षमा करने की प्रार्थना कर रहा है। तीसरी जगह बकरे मारकर झटपट हाथ धो, कंधे पर के सुर्ख अंगोछे से मुँह पोंछ मुल्ला साहब मस्जिद में घुटनों के बल बैठे हुए 'या मोहम्मद रसूल अल्लाह' श्रद्धापूर्वक कह रहे हैं। इसमें कौन ठीक है, ऐसा मालूम होता है कि दुनिया में सत्य और झूठ कुछ भी नहीं है अथवा एक ही बात सच्ची और झूठी दोनों हो सकती है। जिन बातों को बचपन से ही सत्य और उत्तम कहके बताया जाता है, उसे दूसरे लोग बुरा भी समझते हैं, जैसे एक आदमी कच्चे मांस को देखकर घृणा के कारण मुँह फेर लेता है, किन्तु दूसरा आदमी उसी को मुँह में पानी भरकर टक-टकी लगाकर देखता है। क्या यह ऊपर के मत का काफी प्रमाण नहीं है। फिर इनमें से ठीक कौन है।"⁵³

श्रीकान्त वर्मा ने 10 मार्च, न्यूयार्क की डायरी में चिंतनशीलता के विषय में लिखा है—“मनुष्य की अपनी इच्छा, ज्ञान, दृष्टि, कल्पना के परे बहुत कुछ है; हम जिसके विषय में कुछ नहीं जानते और कभी नहीं जान पाएँगे।”⁵⁴ डायरी लेखक की मुक्त रूप धारण किये हुये चिंतनशीलता उसका साहित्य के प्रति दृष्टिकोण, सामाजिक दृष्टि तथा और अन्य संदर्भों के प्रति उसके खुले विचार स्पष्ट करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

जगत् गति एवं परिवेश की आत्मानुभूत प्रविध्वनि

डायरी में डायरीकार अपने तात्कालिक विगत से साक्षात्कार करता है और यह उस नियमित दिनचर्या का एक रचनात्मक आत्मालाप बन जाता है। इस दैनिक नियमितता में वह स्वयं के इर्द-गिर्द जो कुछ देखता-भोगता है उसके प्रत्यांकन से वह बच नहीं पाता इसलिए जो जगत् में हो रहा है उसकी अनुभूति उस डायरी में स्वतः ही आ जाती है उसके लिए उसे कोई प्रयास नहीं करने पड़ते। वह स्वतः ही उसकी कलम से रूपायित होते रहते हैं। इन्दिरा गांधी की हत्या और उसके बाद की घटनाओं का वर्णन ‘श्रीकान्त वर्मा’ 1 नवम्बर की डायरी में इस प्रकार करते हैं—“स्वतःपात आरम्भ हो गया है। हिन्दू युवक सिखों पर टूट पड़े हैं। इन्दिरा गाँधी की हत्या जिन्होंने करायी, शायद वे चाहते भी यही थे। सांप्रदायिक आधारों पर हिन्दू-सिख-विभाजन। उनकी मनोकामना पूरी हुई। मन पर दुःख की कई परतें पड़ी हुई हैं। उन्हें हटा नहीं पा रहा हूँ।”⁵⁵ इस जगत् की अनुभूति स्वतः ही डायरी में अंकित हो जाती है।

गतिशीलता

डायरी गतिशीलता व नियमितता को धारण किए रहती है। डायरी लेखक डायरी में विचार व भावों का प्रदर्शन इस प्रकार से करता है कि वह किसी एक व्यक्तित्व की, किसी विशेष घटना या प्रसंग को किसी एक समय विशेष के संदर्भ में वह उसके मन का आत्मचिंतन का विश्लेषण होता है। डायरी एक नियमितता या अंतरालगत व्यवधान के अंतर्गत लिखी जाती है, इसलिए डायरी में नियमितता का पुट एक सीमा तक अभिव्यक्त होता है। ‘प्रवास की डायरी’ में यह पुट देखने को मिलता है—

रविवार, 14 सितम्बर 1952 की डायरी में—

“गीतमय लेटा।

गीतमय सोया।

गीतमय जागा!

राग उतर फिर—फिर जाता है,

बीन चढ़ी ही रह जाती है।’

बार—बार गीत लिखने के पश्चात् मन फिर कोई नया गीत लिखने को व्यग्र होता है। इसी पर एक गीत लिखना चाहता था। गीत जैसे पूरा दिमाग में था।⁵⁶

बच्चन अपनी डायरी में लिखते हैं—“कविता की कोई पंक्ति दिमाग में लेकर सोना बड़ा सुखद अनुभव है। जैसे...जग—जीवन की सारी चिन्ताएँ मधुमय रागिनी बनकर शिरा—शिरा में गूँजती रहती हैं—रात—भर!!”⁵⁷ प्रायः देखा गया है कि डायरी की नियमितता एवं गतिशीलता और भी जीवंत बना देती है डायरी को।

लालित्य

जब हम गद्य की बात करते हैं तो गद्य—साहित्य के क्षेत्र में लालित्य का अर्थ लेखक की वस्तु या विषय के प्रति रागात्मक प्रतिक्रिया, उसकी हास्य—व्यंग्य प्रवृत्ति, उसका सूक्ष्म निरीक्षण, उसकी पाठक के मन को अनुभूत कर लेने की क्षमता, उसका ज्ञान प्रसार, विषय के प्रति लेखक की रागात्मक प्रतिक्रिया से विषय विवेचन में माधुर्य और सरसता का गुण उत्पन्न होता है। हास्य और व्यंग्य के समायोजन से अभिव्यक्ति में रोचकता आ जाती है। लेखक का विषय के प्रति सूक्ष्म निरीक्षण एवं कथन की नाटकीयता आदि से मिलकर रचना में स्वतः लालित्य के गुण उभर आते हैं। 9 दिसम्बर, 1947 की डायरी में लिखते हैं—“जाड़े की बरसात धीमी रफ़्तार से बरसती बूँदें। पाकर की छाँह में बसेरा लेते पंक्षी। अंधेरे में काँपती हुई परछाइयाँ। गूलर के पत्तों से झरती हुई थकी बूँदें। उत्तर के काले आकाश की तेज बिजलियाँ। बूँदों से धुले हुए ठिठुरते आम के दूँठ। आसमान में घिरे, सपनों की गोद में झूमते हुए बादल। सूनी सेज वाली रात। ऊजड़ खेतों में जागते हुए सियार। दुनिया के सोते हुए इन्सान।”⁵⁸ इन पंक्तियों में लेखक के सूक्ष्म—निरीक्षण और

विषय के प्रति रागात्मकता के भाव लालित्य तत्त्व की अभिव्यंजना करने में सहायक हुए हैं। चूँकि डायरी में रचनाकार पूर्णतः स्वतंत्र होता है इसलिए वह मुक्त भाव से विषय विवेचन में रुचि लेता है जिसके कारण उसमें स्वतः लालित्य तत्त्व उभर कर सामने आ जाता है। इस प्रकार मनुष्य पर पड़ने वाले बाह्य जगत् के प्रभाव, उसकी भावना और उसके विचार, उसकी सोच पर एक रेखाचित्र सा खींच देते हैं और लेखक इन सबसे विमुख नहीं हो सकता।

जीवन—दर्शन

डायरीकार मन के आइने पर उभरे हुए अक्सों से रू—ब—रू होता है, इस प्रक्रिया में उसे एक अनुभूति या स्वानुभूति होती है जिसका आत्म—विश्लेषण कर वह डायरी में अपने स्वतंत्र चिंतन का प्रत्यांकन करता है और इस प्रत्यांकन में उसकी चिंतनशीलता के साथ—साथ एक और चीज़ झलकती है वह है उसका जीवन के प्रति दृष्टिकोण, उसका जीवन दर्शन, चूँकि प्रत्येक मनुष्य का एक निश्चित जीवन—दर्शन होता है या वह किसी निश्चित जीवन—दर्शन से प्रभावित होता है तो सृजनकर्ता इससे कैसे बच सकता है? तभी तो वह कहता है—“हमारा हिन्दू दर्शन, हमारे ग्रन्थ, कितने सही हैं। बार—बार वे जिस एक जगह पर लौटकर आते हैं, जिस एक शब्द को वे बार—बार दोहराते हैं; वही सच है, वही अन्तिम सत्य है। भाग्य का अभिलेख लिखा जा चुका है। न हम उसे पढ़ सकते हैं, न बदल सकते हैं। ...जैसे राखे राम, तैसे रहिए।”⁵⁹

भाषा—शैली

शैली अंग्रेजी के ‘स्टाइल’ का ही अनुवाद है और अंग्रेजी साहित्य के प्रभाव से हिंदी में आया है। भाषा—शैली शिल्प की एक विशेषता है। विचारों तथा भावनाओं की अभिव्यक्ति का सबसे सशक्त माध्यम भाषा ही है। भाषा अपने कई रूपों के साथ साहित्य का सृजन करती है। डायरी की भाषा अत्यन्त नितांत, सहज और स्वाभाविक होती है। किसी आडंबर की उसमें आवश्यकता नहीं होती। डायरीकार जब डायरी लिखता है तब भिन्न—भिन्न स्थितियों में उसकी मानसिक सोच, विचार अलग—अलग होते हैं, इसलिए उसकी भाषा भी अलग हो जाती है। डायरी लिखते समय डायरीकार के जीवन में जब निराशा, हताशा, उल्लास, हर्ष, एवं पीड़ा के क्षण

आते हैं तो वह उन्हें संक्षिप्त, विराम-चिन्हों, संकेतों और बिंबों के माध्यम से व्यक्त करता है जो बड़ा ही सहज होता है। 'एक साहित्यिक की डायरी' में मुक्तिबोध काव्यात्मक-भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करते हैं—"शाम, रंगीन शाम मेरे भीतर समा गयी है, बस गई है। वह एक जादुई रंगीन शक्ति है। मुझे उस सुकुमार ज्वालाग्राही जादुई से यानि मुझसे डर लगता है और सचमुच तब मुझे एक कंपकंपी आ गई।"⁶⁰ इसी प्रकार सौंदर्य-बोध की व्याख्या करते हुए मुक्तिबोध अंग्रेज़ी शब्दों का उन्मुक्त होकर प्रयोग करते हैं। ऐसा लगता है कि वो उनकी सोच में आते हैं—"सबजेक्ट और आब्जेक्ट, वस्तु और उसका दर्शन, उन दो पृथक् तत्त्वों का भेद मिटाकर जब सबजेक्ट ऑब्जेक्ट से तादात्म्य प्राप्त कर लेता है तब सौन्दर्य भावना उद्बुद्ध होती है!!"⁶¹

श्रीकान्त वर्मा की डायरी में संक्षिप्तता और सांकेतिकता के चित्र रेखांकित होते हैं। 06 नवम्बर 1984 की डायरी में दृष्टव्य है—"शर्म से सिर झुका हुआ है।"⁶²

इसी प्रकार चित्त की अस्थिरता की अभिव्यक्ति करते समय एक-दो शब्दों के वाक्य-विन्यास, विस्मयादिबोधक, प्रश्नसूचक आदि विराम चिन्हों के प्रयोग भी डायरी में मिलते हैं—

मोहन राकेश की डायरी का उदाहरण इस प्रकार है—

"अब

क्या?

उठो

क्यों?

खाना खाओ

क्यों

भाड़ में जाओ

क्यों"⁶³

इसी प्रकार का उदाहरण श्रीकान्त वर्मा की डायरी में मिलता है—

"क्यों?

मैंने कहा न, मैं नहीं जानता।

या तो मैं

डोम था

या

रोहिताश्व!"⁶⁴

डायरी की भाषा—शैली में अधूरे विराम—चिन्ह, टूटे—फूटे वाक्य के प्रयोग भी देखने को मिलते हैं। प्रभावपूर्ण एवं स्वाभाविकता लाने के उद्देश्य से लोकोक्तियों, सूक्तियों, मुहावरों आदि का प्रयोग यथास्थान किया जाता है। जो कि बच्चन ने अपनी डायरी में किया है—“मंजिल, मुमकिन है, धोखा दे, पर यात्रा कभी धोखा नहीं देती।”⁶⁵

उक्तियों का प्रयोग जगह—जगह उनकी डायरी में मिलता है—“पढ़ाने की सफलता इसी में है कि विद्यार्थी की जिज्ञासा जगे।”⁶⁶

इसी प्रकार दिनकर की डायरी में भी इसका प्रयोग मिलता है—“सतत् चिंतनशील व्यक्ति का मित्र कोई नहीं बनता।”⁶⁷

डायरी की भाषा आत्मीयता, अनौपचारिकता और अन्तःस्थल को छूने वाली होती है, इसका यही गुण जीवंतता का प्रमाण भी है। डायरी की भाषा के शब्द विधान में तद्भव, तत्सम्, देशज, विदेशी एवं ग्रामीण बोलचाल के शब्दों का भी प्रयोग होता है क्योंकि डायरी की यह विशेषता है कि जो मनुष्य सोचता है हूँ—ब—हूँ उनका डायरी में अंकन करता है।

इस प्रकार डायरीकार डायरी में बहुत ही सहज रूप से अभिव्यक्ति करता है। डायरी की भाषा के संदर्भ में जैनेन्द्र कुमार का यह कथन कहना कितना उपयुक्त एवं सार्थक बन पड़ता है कि—“न भाषा का शिकंजा है, न भाव का। दोनों किसी कोड के नियमों में बँधकर नहीं रह सकते। जिसे बढ़ना है, वैसी कोई भी चीज़ शिकंजे में कभी नहीं रह सकती। शिकंजे में कस दोगे तो वह नहीं बढ़ेगी, लुंज रह जाएगी।”⁶⁸

इस प्रकार स्पष्ट है कि डायरी की भाषा सहज और स्वाभाविक होती है। न कोई जटिलता होती है न कोई तनाव, न कोई अलंकारिकता और न तो कोई शब्द जाल का मोह खींचता है।

साहित्यिक विधा के रूप में डायरी का महत्त्व

हिंदी साहित्य की बीसवीं सदी में बहुमुखी उन्नति हुई। पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी ने (1861-1938 ई०) सन् 1930 ई० में 'सरस्वती' पत्रिका के संपादन का भार स्वीकार किया। इसी पत्रिका के द्वारा हिंदी गद्य साहित्य को व्यवस्थित रूप देने के लिए विशेष प्रयास किये गए। हिंदी साहित्य के लेखकों को नवीन ढंग से लेख लिखने को उत्साहित किया गया। गीति-नाट्य, कहानी, निबंध, सूचना साहित्य, नाटक और व्यंग्य आदि विविध विधाओं ने साहित्य के अंगों की पूर्ति में 'सरस्वती' पत्रिका ने अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। कहानी और उपन्यास विभिन्न विकासात्मक पड़ावों पर पहुँच गए जहाँ मानवतावाद (मानवतावादी-दृष्टिकोण) तथा यथार्थवाद आदि का उदय हुआ। प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों एवं कहानियों को मानव-चित्रण का यथार्थ चित्रण ही कहा है।

आत्मकथा, जीवनी, संस्मरण, डायरी और रिपोर्टाज आदि विधाओं के माध्यम से यथार्थ, मनोभाव, व्यक्ति के आत्म आदि को प्रस्तुत करने के नए क्षेत्र मिले। यह यथार्थवाद को समेटने का ही एक और उद्यम है। आधुनिक युग में साहित्य में यथार्थ की अभिव्यक्ति शुरू होने लगी थी जिसमें गद्य ने सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस संबंध में डा० सिंघल लिखते हैं—“सामान्य जीवन से जुड़ने और उसकी समस्याओं को प्रस्तुत करने का सहज माध्यम गद्य है। गद्य का अर्थ है, जो पद्य नहीं। तात्पर्य है मन्तव्य को सीधे-सादे ढंग से व्याकरण सम्मत शैली में प्रस्तुत करना गद्य का कार्य है। गद्य, पद्य की भाँति अतिरिक्त आग्रहों को लेकर नहीं चलता यह यथार्थ जीवी है।”⁶⁹

जीवन और साहित्य का संबंध बहुत गहरा है। साहित्य और जीवन के परिप्रेक्ष्य में विलियम हेनरी हडसन ने अपनी पुस्तक 'एन इंट्रोडक्शन टू दि स्टडी ऑफ लिटरेचर' में लिखा है—“साहित्य के सूत्र हमें जीवन में मिलते हैं और वैयक्तिक जीवन में लौकिक रुचि के गूढ़ तत्व निहित हैं।”⁷⁰ ना तो हम साहित्य को

जीवन से अलग कर सकते हैं, और ना ही जीवन को साहित्य से। इसमें भी वैयक्तिक जीवन का संबंध साहित्य से अधिक निकट का है।

विलियम हेनरी हडसन इस बात को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं—“साहित्य एक पोषक रिकॉर्ड है, आदमी ने जीवन में जो देखा अनुभव किया जो सोचा है और महसूस किया है उन सब का धैर्यवान हित जो सबके लिए है, यह एक मौलिक जीवन का अनुभव भाषा के माध्यम से है।”⁷¹

सच्चा साहित्य वही है जो जीवन को समृद्ध बनाता है। अनेक साहित्यकारों एवं विद्वानों ने बड़ी लगनपूर्वक श्रम से साहित्य के अनेक नवीन मार्गों को ढूँढ निकाला है, जो कि साहित्य की नई-नई विभिन्न विधाओं के रूप में प्रचलन में आते दिखाई देते हैं। इन भिन्न-भिन्न विधाओं में लौकिकता के गूढ़ तत्त्व समाहित हैं, जिन्हें साहित्य से परे नहीं किया जा सकता। जहाँ तक साहित्य और रचना के आपसी संबंध की बात है तो वह सतत् और शाश्वत् है क्योंकि साहित्य है इसलिए (कला) ही रचना है, यदि रचना है तो विधा भी है और उसके तमाम विधा स्वरूप भी हैं। यदि परखा जाए तो बुद्धि ही नहीं बल्कि हृदय (मन) की वस्तु है साहित्य। जिसमें पीड़ा है, सौंदर्य है, चेतना है, हृदय के भाव हैं और साथ ही साथ परिपक्वता भी है।

लेखक प्रेमचंद का भी यही कहना है कि—“साहित्य उसी रचना को कहेंगे, जिसमें कोई सच्चाई प्रकट की गयी हो, जिसकी भाषा प्रौढ़, परिमार्जित और सुन्दर हो और जिसमें दिल और दिमाग पर असर डालने का गुण हो और साहित्य में यह गुण पूर्ण रूप में उसी अवस्था में उत्पन्न होता है, जब उसमें जीवन की सच्चाईयाँ और अनुभूतियाँ व्यक्त की गयी हों।”⁷² अतः उपर्युक्त विशेषताएँ साहित्य की अन्य मुख्य विधाओं (उपन्यास, कहानी, नाटक, कविता) के अतिरिक्त ‘डायरी’ विधा में भी नियमित रूप से विद्यमान रहती हैं, इसीलिए इन गद्य विधाओं के साथ ही डायरी हिंदी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण गद्य-विधा है। डॉ० हरिमोहन ने अपनी पुस्तक ‘साहित्यिक विधाएं: पुनर्विचार’ में लिखा है कि—“एक साहित्यिक विधा के रूप में ‘डायरी’ अभी तक हाशिए पर ही रही, किन्तु अब धीरे-धीरे यह भी एक गद्य-विधा मान ली गई है। इसका श्रेय उन रचनाकारों को है, जिनकी डायरियों ने

उच्चस्तरीय रचनात्मकता, वैचारिकता और अपने समय के ज्वलन्त एवं महत्त्वपूर्ण सन्दर्भों को उजागर किया और पठनीय साहित्यिक सामग्री प्रदान की है।⁷³ डायरी का महत्त्व सर्वविदित है। मानव की स्वाभाविक विशेषता है, आत्माभिव्यक्ति करना। अभिव्यक्ति की तृष्णा तब तक शान्त नहीं बैठती, जब तक मनुष्य अपने सुविचारों, भावों को लिखता नहीं है या किसी के सामने प्रकट नहीं कर पाता है। अभिव्यक्ति की तृष्णा साहित्य का सृजन करती है। साफ तौर पर हम यह कह सकते हैं कि अभिव्यक्ति की ही तृष्णा से हमें साहित्य को सृजन करने की प्रेरणा मिलती है। डायरी में सामान्य और विशेष दोनों ही स्थितियों में व्यक्ति मन की अभिव्यक्ति रहती है।

डॉ० रामचन्द्र तिवारी लिखते हैं—“दैनिक जीवन में ऐसी अनेक घटनाएँ घटित होती हैं जो हमारे मन को प्रभावित करती हैं कुछ घटनाएँ हमें हर्ष—मग्न करती हैं, कुछ अवसाद ग्रस्त। कुछ से खीझ उत्पन्न होती है, कुछ से वितृष्णा। कुछ हमें उत्साह और स्फूर्ति से भर देती है और खेद से खिन्न कर देती है।⁷⁴ इसलिए कई बार हमें यह बात सोचने पर मजबूर कर देती है कि डायरी को साहित्य की एक स्वतंत्र विधा माना जाए अथवा नहीं? लेकिन अब इस प्रश्न का उत्तर हमारे पास है और न तो अब यह विधा ज्यादा बहस का मुद्दा रही है। फिर भी एक साहित्यिक विधा के रूप में डायरी को परखना आवश्यक लगता है। जब हम साहित्यिक विधा के रूप में डायरी को देखेंगे तो उसमें लेखक की मानसिक—स्थिति, उसकी सुविचारधारा, भावनाएँ और अनुभूतियों आदि के सहज, अकृत्रिम और यथार्थ चित्रों को महत्त्व देंगे। डायरी को एक साहित्यिक विधा के रूप में महत्त्वपूर्ण मानते हुए डॉ० हरिमोहन लिखते हैं—“डायरी ऐसी वर्णनात्मक कथेतर गद्य विधा है जो अपनी प्रकृति में जीवनीपरक है। इसमें लेखक की अनुभूतियाँ, उसके आस—पास घटित होने वाली घटनाओं आदि पर तत्कालिक प्रतिक्रियाएँ, विचार, जीवन—दर्शन, दृष्टिकोण आदि का तिथि—क्रम से अंकन किया जाता है। यह लेखक के जीवन खण्डों की संवेदनात्मक प्रस्तुति है, जिसमें आत्मनिरीक्षण, आत्मसम्बोधन की प्रमुखता होती है।⁷⁵ डायरी को जीवनी—साहित्य का एक रूप और आत्मकथा का आरंभिक रूप कह सकते हैं। डायरी लेखन कोई नई घटना नहीं है, वैसे अपने

अनुभव, विचार, भावनाओं को लिखने की पद्धति पुरानी है पर साहित्यिक विधा के रूप में इसका प्रारंभ साहित्य में बहुत पुराना नहीं है। इसका आगमन भारतेंदु-काल की देन है। साहित्य से इस कला का संबंध मुख्यतः आधुनिक-काल में स्थापित हुआ।

डायरी क्या है? इस प्रश्न का उत्तर बहुत सरल दिखाई पड़ता है, साहित्य की दृष्टि से डायरी को देखा जाए तो इसका अपना एक अलग निजी महत्त्व दिखाई देता है।

डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया लिखते हैं—“भारतीय परम्परा में चिन्तन और चिन्तन को स्वातः सुखाय लिपिबद्ध करना प्राचीन काल से चलता आ रहा है। फिर जब कोई सामग्री लिपिबद्ध है तो दूसरों के लिए भी कालान्तर में उपयोगी हो सकती है। निजी उपयोग की सामग्री भी समाजोपयोगी हो सकती है। निजी चिन्तन भी दूसरों को दिशा-निर्देश दे सकता है।”⁷⁶ इसलिए साहित्यिक विधा के रूप में डायरी विशेष महत्त्व रखती है। वास्तविक घटनाओं के साथ क्रमबद्ध रूप से अंकित होने वाली डायरियाँ ऐतिहासिक दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण सिद्ध होती हैं। ‘डायरी’ यूँ तो किसी व्यक्ति विशेष की व्यक्तिगत संपत्ति होती है, किंतु प्रकाशित (सार्वजनिक) हो जाने के पश्चात् अपनी निजी भावनाओं के कारण साहित्य जगत की संपत्ति बन जाती है। देखा जाए यदि डायरी लेखक कोई महान् एवं प्रसिद्ध व्यक्ति है, तो उसकी डायरी अधिक लोकप्रियता को प्राप्त हो जाती है। उदाहरण के लिए महात्मा गांधी तथा टॉलस्टाय जैसी महान् व्यक्तियों की डायरियाँ ले सकते हैं।

अधिकांशतः यह माना जाता है कि साहित्यिक विधा के रूप में ‘डायरी’ केवल वही स्वीकार के योग्य समझी जाती है, जो किसी बड़े विद्वान, साहित्यकार व लेखक से संबंध रखती हो अर्थात् किसी बड़े साहित्यकार द्वारा लिखी गई डायरी साहित्यिक विधा के रूप में परिलक्षित होती है। डायरी का साहित्यिकी संबंध होने में यह कोई विशेष अनिवार्य शर्त नहीं है। सामान्य व्यक्तियों की डायरियों का भी साहित्यिक विधा के रूप में अध्ययन करना चाहिए। सामान्य मनुष्यों द्वारा लिखी डायरियों में भी बहुत से मूल्यवान्—तथ्य, विचार, प्रतिक्रियाएँ, टिप्पणियाँ और संदेश आदि निहित रहते हैं। इसलिए उन डायरियों को भी डायरी-विधा की सीमा में

लिया जाए जिनका शुभ-संदेश साहित्यिक दृष्टि से मूल्यवान हो। ऐसी स्थिति में डायरी लेखक की प्रसिद्धि ज्यादा महत्त्व नहीं रखती। लेखक या विद्वान की सामान्य सी डायरी उसकी मानसिकता या अनुभव और प्रतिक्रियाएँ आदि मूल्यवान प्रतीत होती हैं, जो इस विधा का अहम अंग बनती है। जैसा कि हम पहले ही डायरी के संबंध में महत्त्वपूर्ण बात कह चुके हैं कि सामान्य सी डायरियाँ हों परंतु वे साहित्यिक महत्त्व के प्रश्न उठाती हों, किसी रचना या लेखक के वैशिष्ट्य को उद्घाटित करती हों, कोरी प्रशंसा के स्थान पर कड़वी वास्तविकता को सामने रखती हों। डायरी व्यक्ति के जीवन का संपूर्ण अध्ययन है क्योंकि डायरी जीवन के सभी अंगों को स्पर्श करती है, साथ ही साथ जीवन का निरीक्षण भी करती है। उदाहरण के लिए, आम लोगों से मिलकर बातें करना, दिन-प्रतिदिन घटने वाली घटनाएँ जैसे-खाना-पीना, रहना-सहना, जाना-आना, सोचना-विचारना और अनुभव करना आदि इन सभी को प्रतिदिन लिखना एक रचनात्मक (साहित्यिक) विधा के रूप में स्वीकार किए जाने योग्य है।

स्पष्ट है कि डायरी व्यापक रूप में मानव के जीवन के हर अंग का अध्ययन कराती है तथा जीवन की हर परिस्थितियों से प्रभावित होती है।

डायरी लेखन को मज़बूत आधार पर स्थापित करने का श्रेय 'महात्मा गांधी' को है। गांधी ही डायरी विधा के मूल प्रेरणा स्रोत रहे हैं। उनके ही परिवार के कई नेता लोग कई अनेक व्यक्तियों ने उन्हीं से ही डायरी लेखन की प्रेरणा ली। जैसे-जमुनालाल बजाज, घनश्यामदास बिड़ला, नरदेवशास्त्री, राजेन्द्र बाबू, महादेव देसाई और बिनोवा आदि कई महान् विद्वानों ने व्यक्तिगत डायरियाँ लिखीं। इन सभी महान् विद्वानों का डायरी लिखने का उद्देश्य आत्मालोचन रहा। गांधी ने डायरी लेखन में 'सत्य' की प्रधानता पर बल दिया है। इसके लेखन के महत्त्व पर गांधी ने अपना विचार भी प्रकट किया है—“डायरी का विचार करके देखता हूँ तो मेरे लिए तो वह एक अमूल्य वस्तु हो गई है। जो सत्य की आराधना करता है उसके लिए वह पहरेदार का काम करती है, क्योंकि उसमें सत्य ही लिखना है। आलस्य किया हो तो लिखे ही छुटकारा, काम किया हो तो लिखे ही छुटकारा। डायरी लेखन की आदत ही हमें अनेक दोषों से बचा लेगी।”⁷⁷

साहित्यकारों ने साहित्यिक विधा के रूप में डायरी को आधुनिक समय में प्रारंभ कर दिया था और साथ ही साथ साहित्यकारों व लेखकों ने इस विधा पर महत्वपूर्ण बल दिया, धीरे-धीरे यह विधा पूर्ण रूप से साहित्य का एक अंग बन रही है। चूँकि, प्रारंभ में जो डायरियाँ लिखी गयीं, वह अपने स्वतंत्र व मौलिक रूप में थीं, क्योंकि डायरी का लेखक अपने व्यक्तिगत जीवन से जुड़ी हुई कुछ ऐसी बातों का विवरण उसमें लिखता था कि वह प्रकाशित होने योग्य नहीं थी। आज साहित्य में डायरियाँ लिखी जा रही हैं और प्रकाशित भी हो रही हैं लेकिन वह अपने मूल स्वरूप में नहीं हैं। यही कारण है कि डायरी के मूल रूप व उसकी मौलिकता पर गहरा असर पड़ा है, इसीलिए हिंदी साहित्य में स्वतंत्र कृति के रूप में डायरियाँ बहुत ही कम मिलती हैं। साहित्यिक दृष्टि से देखा जाए तो कम मात्रा में होने के कारण भी कुछ डायरियाँ अपना निजी महत्व रखती हैं।

कुछ मुख्य डायरियाँ जो कि साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी गई हैं—

हिंदी साहित्य में सबसे महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय कृति साहित्यिक दृष्टि से गजानन माधव मुक्तिबोध की रचना (डायरी) 'एक साहित्यिक की डायरी' जो सन् 1968 में प्रकाशित हुई। यह डायरी शैली, विचार और गुण तीनों दृष्टियों से महत्वपूर्ण है।

सन् 1958 में प्रकाशित हुई डॉ० धीरेन्द्र वर्मा की लिखी 'मेरी कालिज डायरी'। इस डायरी को पढ़ने पर हमें उनके कॉलेज जीवन के सात वर्षों का लेखा-जोखा मिलता है।

सुन्दरलाल त्रिपाठी रचित सन् 1939 की दैनंदिनी मिलती है, जो सन् 1945 में प्रकाशित हुई। साहित्यिक दृष्टि से यह डायरी महत्वपूर्ण समझी गई है।

सन् 1971 में डॉ० हरिवंशराय बच्चन की 'प्रवास की डायरी' प्रकाशित हुई। डॉ० रामचन्द्र तिवारी इस डायरी के बारे में लिखते हैं—“बच्चन की डायरी में उनका जीवन-संघर्ष तो है ही आज के अभिजात वर्ग की मानसिकता के चित्र भी उभरे हैं।”⁷⁸

सन् 1973 में रामधारी सिंह दिनकर की 'दिनकर की डायरी' नाम से प्रकाशित हुई। इसकी भूमिका में स्वयं दिनकर ने लिखा है—“मैं जो डायरी प्रकाशित कर रहा हूँ वह डायरी और जर्नल दोनों का मिश्रण है।”⁷⁹

इस विधा को आगे बढ़ाने का सतत् रूप से प्रयास किया गया है। इस विधा के विकास को आगे बढ़ाने में पत्र-पत्रिकाओं का योगदान विशेष रूप से अग्रणीय रहा है। जैसे— हंस, ज्ञानोदय, समालोचक, सारिका, लहर आदि। आधुनिक समय में बहुत सी प्रमुख पत्रिकाओं में साहित्यकारों एवं लेखकों और विद्वानों की डायरियों के अंश छप रहे हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि डायरी की अपनी सत्ता और अस्मिता है। डायरी साहित्य की अखंड-चेतना को व्यक्त करने में और साहित्यिक विधाओं की भाँति अपना समुचित स्थान पर रही है। मुख्य विधाओं की तरह प्रधान न होते हुए भी मानव की अखंड-चेतना की अभिव्यक्तियों के रूप में इसे अस्वीकार कर देना संगत नहीं होगा। 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास' के संपादक डॉ० हरवंशलाल शर्मा लिखते हैं—“डायरी अपनी वैयक्तिक घनिष्टता, अनुभूति की एकांतिक तीव्रता, वर्णन की प्रत्यक्ष सजीवता के कारण आज साहित्य में एक लोकप्रिय रचनाशैली के रूप में प्रतिष्ठित हो गई है।”⁸⁰ देखा जाए तो डायरी में ही ऐसी बहुत सी बातें होती हैं जो डायरी को जीवन से जोड़ती हैं, क्योंकि डायरी जीवन के लिए हुए क्षणों का ब्यौरा या कह सकते हैं कि दस्तावेज़ हैं। डायरी में जीवन का आत्मनिरीक्षण तो होता ही है साथ ही विश्लेषण भी होता है। जिस प्रकार जीवन और साहित्य पूर्णतः एक ही दृष्टि में गुथे हुए हैं ठीक उसी प्रकार साहित्य की वे सभी विधाएँ, जिनमें जीवन का सजीव (जीवंत) चित्रांकन है, वे जीवन का ही एक भाग है, उन्हें साहित्य से परे नहीं किया जा सकता है।

इस तरह से डायरी का साहित्यिक विधा में अपना अलग स्वतंत्र महत्त्व है, जो सवर्था महत्त्वपूर्ण है। डायरी विधा के साथ-साथ डायरी शैली भी साहित्यिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जिसका अध्ययन हम आगे निम्नलिखित प्रकार से करेंगे।

हिंदी के अनेक रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में जायसी शैली का प्रयोग किया है। जायसी शैली में कई उपन्यास, कहानी, यात्रा वृत्तान्त, संस्मरण, आत्मकथा, निबंध, रिपोर्ताज और व्यंग्य आदि लिखे गये हैं। जिनमें समसामयिक इतिहास, जीवन और साहित्य का विश्लेषण हुआ है। डॉ० हरवंशालाल शर्मा 'हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास' में लिखते हैं—“जायसी में जो आत्मकथात्मकता, एक आत्यंतिक नैकट्य, वैयक्तिक संस्पृष्ट और सत्यवता है, दैनिक जीवन में वर्तित घटित होने वाली घटनाओं को आनुपूर्व्य के साथ कह जालने की उत्सुकता है, मन के प्रत्यक्ष भावों और मरिचक के सघन स्फूर्त विचारों को लिपिबद्ध कर जालने की जो आकुलता है, उसी ने आधुनिक अनेक लेखकों को साहित्य की अन्य विधाओं के रचना के लिए भी जायसी शीर्षक देने के लिये आकर्षित किया।”⁸¹ साहित्य की अन्य गद्य विधाओं में जायसी शैली के प्रयोग के कारण लेखक अपनी रचना को सरल सहज और सुगमता से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। इस शैली के प्रयोग से रचनाकार को पात्रों के चरित्र-चित्रण की अन्य शैलियों से छुटकारा मिल जाता है इस शैली के द्वारा वह अंतर्दृष्टि में जाकर जिस रूप की तलाश करता है, वह अन्य किसी शैली से संभव नहीं है। कथा साहित्य में यह विधा अधिव उपयोगी प्रमाणित होती है, क्योंकि इसमें स्वभाविकता, विश्वसनीयता और निरंतरता बनी रहती है, इसलिए पाठक बड़े चाव से, बड़ी ही आत्मीयता के साथ स्वयं के पात्र और कथावस्तु से जोड़कर चलता है। गद्य विधाओं में जब जायसी की प्रतिष्ठा का उपयोग होता है, तो उससे अपेक्षा यह होती है कि व्यक्त का सच मौलिक का अराजकता क्यों न हो, जायसी में अभिव्यक्त हो सकते हैं। पर इस प्रतिष्ठा की एवं कहते हैं—“व्यक्ति की स्वकेन्द्रित संवेदना, चिन्तन, मूल्य बोध चाहें उसमें किन्ती भी उपयोगी होती है। जिसमें व्यक्ति का सच केंद्रीय कथ्य होता है। डॉ० गोपाल शर्मा सामने आ सके, इसलिए जायसी शैली गद्य की अन्य विधाओं के लिए अधिव का उपयोग होता है, तो उससे अपेक्षा यह होती है कि व्यक्ति का सच मौलिक का पात्र और कथावस्तु से जोड़कर चलता है। गद्य विधाओं में जब जायसी की प्रतिष्ठा बनी रहती है, इसलिए पाठक बड़े चाव से, बड़ी ही आत्मीयता के साथ स्वयं के उपयोगी प्रमाणित होती है, क्योंकि इसमें स्वभाविकता, विश्वसनीयता और निरंतरता है, वह अन्य किसी शैली से संभव नहीं है। कथा साहित्य में यह विधा अधिव इस शैली के द्वारा वह अंतर्दृष्टि में जाकर जिस रूप की तलाश करता रचनाकार को पात्रों के चरित्र-चित्रण की अन्य शैलियों से छुटकारा मिल जाता है सहज और सुगमता से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। इस शैली के प्रयोग से गद्य विधाओं में जायसी शैली के प्रयोग के कारण लेखक अपनी रचना को सरल रचना के लिए भी जायसी शीर्षक देने के लिये आकर्षित किया।”⁸¹ साहित्य की अन्य आकुलता है, उसी ने आधुनिक अनेक लेखकों को साहित्य की अन्य विधाओं के भावों और मरिचक के सघन स्फूर्त विचारों को लिपिबद्ध कर जालने की जो वाली घटनाओं को आनुपूर्व्य के साथ कह जालने की उत्सुकता है, मन के प्रत्यक्ष भावों और मरिचक के सघन स्फूर्त विचारों को लिपिबद्ध कर जालने की जो नैकट्य, वैयक्तिक संस्पृष्ट और सत्यवता है, दैनिक जीवन में वर्तित घटित होने का बृहत् इतिहास’ में लिखते हैं—“जायसी में जो आत्मकथात्मकता, एक आत्यंतिक जीवन और साहित्य का विश्लेषण हुआ है। डॉ० हरवंशालाल शर्मा 'हिन्दी साहित्य निबंध, रिपोर्ताज और व्यंग्य आदि लिखे गये हैं। जिनमें समसामयिक इतिहास, किया है। जायसी शैली में कई उपन्यास, कहानी, यात्रा वृत्तान्त, संस्मरण, आत्मकथा, हिंदी के अनेक रचनाकारों ने अपनी रचनाओं में जायसी शैली का प्रयोग

गद्य की अन्य विधाओं में जायसी शैली का प्रयोग

पड़ता है। जहाँ यह संयम नहीं होता है वहाँ वह सब कुछ अविश्वसनीय हो जाता है।⁸² डायरी एक प्रकार से जीवन की वास्तविकताओं को रेखांकित करती है। इसमें किसी भी प्रकार का दिखावा नहीं होता और न ही बनावटीपन होता है क्योंकि डायरी में अनौपचारिकता स्वाभाविक गुण है। डायरी विधा आत्माभिव्यक्ति की निश्छल एवं अनुकूल विधा है, और यही कारण आत्माभिव्यक्ति के लिए डायरी शैली के प्रयोग की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है। इस विद्या का विकास और शैली के रूप में प्रयोग की प्रवृत्ति स्वतंत्रता के बाद तेज़ और प्रखर हुई। आज इस आधुनिक औद्योगीकरण के दौर में व्यक्ति के जीवन का कर्म-क्षेत्र अत्यन्त संकुचित हो जाने के कारण अपने मन के अंतर्द्वन्द्व को व्यक्त करने के लिए यही एक विधा एवं शैली उपयुक्त है। डायरी शैली के कारण ही औपचारिक तथ्यों का आभास एक सीमा तक होता है। डायरी का नायक स्वयं एक रचनाकार होता है। यह कितने आश्चर्य की बात है कि खुद रचनाकार स्वयं को विभिन्न विधाओं के माध्यम से और पात्रों के भिन्न-भिन्न वेश में शब्दों के पीछे खड़े रहकर छिप-छिप कर अपने को उजागर करता है। डायरी रचनाकार स्वयं केंद्र बिंदु बनकर अपनी कही-अनकही बातों को डायरी शैली के माध्यम से व्यक्त करता चलता है। कथा-साहित्य के बहुमुखी आयामों में सूक्ष्म विवेचन के लिए यह शैली सहजता एवं सुगमता प्रदान करती है। डायरी शैली का प्रयोग करते हुए कई उपन्यास, कहानी, यात्रा-वृत्तान्त, आत्मकथा, संस्मरण, रिपोर्टाज, व्यंग्य, निबंध आदि लिखे गये हैं। कुछ उपन्यास पूर्णतः डायरी शैली में लिखे गये हैं—

‘शह और मात’—राजेन्द्र यादव ‘1959’, ‘जयवर्धन’—जैनेन्द्र ‘1965’, ‘अजय की डायरी’—डॉ० देवराज ‘1960’, ‘पीले गुलाब की आत्मा’—विशम्भर मानव, ‘लफट्ट पिगसन की डायरी’—बेढब बनारसी ‘1961’, ‘बबूल’—विवेकीराय ‘1967’, आदि उपन्यास हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे प्रकार के उपन्यास वह हैं जो बीच-बीच में डायरी शैली में लिखे गये हैं—‘द्वाभा’—प्रभाकर माचवे ‘1955’, ‘बीज’—अमृतराय ‘1953’, ‘उखड़े हुए लोग’—राजेन्द्र यादव ‘1965’, ‘धरती मेरा घर’—रांगेय राघव, ‘1961’, ‘नदी के द्वीप’—अज्ञेय, ‘1951’, और ‘अपने अपने अजनबी’—अज्ञेय आदि उपन्यास हैं।

शह और मात

यह कृति डायरी शैली के प्रयोग का सर्वोत्कृष्ट प्रमाण है। इस कृति के नायक और नायिका के रूप में सुजाता और उदय को प्रस्तुत किया गया है। आधुनिक युग के मध्यम वर्गीय नगरीय सम्यता का प्रभाव पूरी कृति में देखने को मिलता है। इसमें दो संवेदनशील पात्रों को सुजाता एवं उदय के रूप में प्रस्तुत कर प्रेम के जिस अजनबीपन को अभिव्यक्त किया है। उसका एक कलात्मक रेखाचित्र इस उपन्यास की विशेषता है। एक सुजाता स्त्री, दूसरी सुजाता लेखिका। एक तरफ उदय व्यक्ति दूसरी तरफ लेखक भी है। पात्र भी है। कहानी भी है। इस जटिल विश्लेषण के संदर्भ में डायरी शैली में उपन्यास की मनोवैज्ञानिकता को सुरक्षित रखते हुए जिस स्वाभाविक विश्वसनीयता को प्रमाणित किया गया है, वह अत्यन्त उल्लेखनीय है। यह डायरी 42 दिनों में तीन सौ पृष्ठों में लिखी गई है। यह डायरी एक चरित्र प्रधान डायरी है। आधुनिक युग का व्यक्ति खंडित जिंदगी व्यतीत कर रहा है। उसी की अभिव्यक्ति इस डायरी में हुई और इसमें गुणात्मक सहयोग डायरी ने प्रदान किया है। उपन्यास के कथ्य और उलझी हुई संवेदनाओं को व्यक्त करने के लिए डायरी शैली सहजता प्रदान करती है। बौद्धिक उपन्यास की नीरसता को रोचकता प्रदान करने के लिए डायरी शैली के अतिरिक्त दूसरी कोई विधा विकसित नहीं हुई। समूचा उपन्यास मानसिक अंतर्द्वन्द्व में लिखा गया प्रतीत होता है। इसमें डायरी शैली का प्रयोग निःसंकोच ग्रहण किया गया है। इस उपन्यास में सुजाता और उदय के मध्य में मनोवैज्ञानिक पक्ष के अंतर्द्वन्द्व को डायरी शिल्प के अंतर्गत अभिव्यक्त किया गया है।

जयवर्धन

‘हूस्टन’ अमेरिका के एक पत्रकार, दार्शनिक और कूटनीतिज्ञ थे। उनकी डायरी के रूप में यह उपन्यास है। इन उपन्यास की रचना 1965 की है। इस उपन्यास के प्रारंभ में लेखक ने लिखा है—“यह एक उत्कृष्ट उपन्यास है जो डायरी शैली में रेखांकित है। एक पत्रकार एवं दार्शनिक बिलवर शेल्डन हूस्टन की डायरी के रूप में लिखा गया है। जैनेन्द्र ने इस कृति के माध्यम से एक ऐसे भारतीय भावभूमि की अभिव्यक्ति की है जो सहज संभव नहीं है। जीवन का सच्चे अर्थों में

साक्षात्कार कराना इस उपन्यास का उद्देश्य है।⁸³ इस डायरी के लेखक बिलवर शेल्डन हूस्टन ने 21 जनवरी... से 12 अप्रैल... तक, कभी तो लगातार और कभी एक-दो दिन के अंतर से, 42 दिनों की डायरियाँ लिखी हैं। जयवर्धन की डायरियों के प्रारंभ में तिथि और माह तो लिखे गए हैं, लेकिन वर्ष का उल्लेख नहीं किया है। वैसे डायरी की प्रमाणिकता काल और स्थान के उल्लेख से ही बनती है। कुछ डायरियों में स्थान का उल्लेख है, लेकिन अधिकांश में नहीं। इसको किस दृष्टि से देखा जाए ? अधिक से अधिक जहाँ तक अनुमान लगाया जाए तो पाठक को भ्रम में डालना हो सकता है। डॉ० गोपाल राय अपनी पुस्तक 'उपन्यास की संरचना' में जैनेन्द्र के संबंध में लिखते हैं कि—“जैनेन्द्र उन लेखकों में हैं जो पाठक के प्रति अपेक्षित शिष्टाचार का भाव नहीं रखते... वह समझे न समझे, इससे लेखक को क्या ? वे मानते हैं कि समझने का काम पाठक का है, लेखक इसकी चिन्ता क्यों करें ?”⁸⁴

इस उपन्यास के सभी पात्रों का परिचय डायरी के रूप में किया गया है। इसकी रोचकता में उपन्यास विधा के साथ-साथ डायरी शैली का सम्मिश्रण अद्भुत है। इस रचना के पात्रों एवं चरित्रों और उनके विशाल परिवेश का विस्तार डायरी शैली के ही कारण हुआ है। जयवर्धन के जीवन में इला एक द्वन्द्व के रूप में प्रस्तुत हुई है। इला का प्रस्तुतीकरण डायरी शैली के कारण और भी मुखर होकर उभरा है। यह सत्य है कि 'जयवर्धन' उपन्यास विश्लेषणात्मक एवं वर्णनात्मक औपचारिक तत्त्व पर आधारित है, किंतु उसमें ताज़गी एवं स्फूर्ति जैसी नवीनता और रोचकता डायरी शैली के कारण आई है। जैनेन्द्र के उपन्यासों में जो एकरसता दिखाई देती है वह डायरी शैली के कारण इस उपन्यास में नहीं है। पात्रों के बीच संवाद की शैली या कह सकते हैं स्पष्ट कथन और पात्रों का विश्लेषण करने की सुगमता डायरी शैली के कारण ही संभव हुई है। हूस्टन 'जयवर्धन' के चरित्र पर टिप्पणी करते हुए कहता है—“जयवर्धन को देखा मिला, बात हुई। व्यक्ति नहीं घटना है पर हुआ कहीं तो बिजली का जीता तार जैसे छू गया।”⁸⁵ चरित्र निरूपण की सहजता, गहनता आदि दिखलाई पड़ती है, वह डायरी शैली के कारण अधिक प्रभावशाली बन पड़ी है। इस कृति के संबंध में नेमिचन्द्र जैन ने लिखा

है—“जयवर्धन का रूपबंध विचारों और इन्सान के क्रियाकलापों के रिश्तों और संघर्षों की बुनावट से रचा गया है। उसमें विचार ही चरित्रों को रूप देते हैं, उनके व्यवहार को, उनके आवेगों को, उनके आपसी संबंधों और उनके तनावों को निर्धारित करते हैं।”⁸⁶ दार्शनिकता की जो झलक इस कृति में मिलती है तथा पात्रों द्वारा तर्क—वितर्क करते हुए तथा रोचकता लाकर सम्प्रेषणीय बना देना डायरी शैली के कारण संभव बन पड़ा है। डॉ० प्रेम भटनागर ‘जयवर्धन’ की विशिष्टता पर टिप्पणी करते हुये लिखते हैं—“जयवर्धन हिन्दी का ही नहीं प्रत्युत भारतीय साहित्य का प्रथम उपन्यास है जो डायरी शैली में वर्णनात्मक शिल्प विधि में कलात्मक कौशल ला सका है।”⁸⁷ जयवर्धन एक विचार—प्रधान और भविष्यवादी उपन्यास के रूप में हिंदी का विशिष्ट उपन्यास है।

अजय की डायरी

डॉ० देवराज द्वारा लिखित ‘अजय की डायरी’ डायरी शैली के उपयोग की दृष्टि से प्रमुख है। जिसका प्रकाशन 1960 में हुआ। इस संबंध में डॉ० गोपाल राय अपनी पुस्तक ‘उपन्यास की संरचना’ में लिखते हैं—“अजय की डायरी का केन्द्रिय कथ्य तो मध्यवर्गीय जीवन में विवाहेतर प्रेम समस्या ही है पर लेखक ने इस परम्परागत और आधुनिक मूल्यों के टकराव के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है और इसके लिए डायरी की प्रविधि का सहारा लिया है।”⁸⁸

एक शोध छात्र के जीवन की जो गतिविधियाँ बनती रहती हैं इस उपन्यास का कच्चा माल है। अजय एक उच्च शिक्षा प्राप्त युवक है जो एक शोध छात्र है। यदि इस उपन्यास के माध्यम से अजय के जीवन को वर्णनात्मक रूप में अभिव्यक्त किया गया होता तो निश्चित तौर पर ऊबाऊ होता, किंतु डायरी शैली के कारण अजय का जीवन और उसका चिंतन, मनन, सहज, सरल और रोचक हो गया है। डायरी शैली के कारण अजय एक संपूर्ण अजय होने की विभिन्न प्रक्रियाओं को इस प्रकार प्रस्तुत करता है जिससे लगता है उसके जीवन की घटनाएँ पाठक के जीवन की ही घटनाएँ हों। यदि उपन्यास डायरी शैली में न लिखा गया होता तो अजय के संपूर्ण जीवन की अभिव्यक्ति, मित्र—मण्डली, सुबह—शाम हँसी उहाका और अपने शोध विषय की विवेचना और उनका विश्लेषण जैसे संदर्भ

अप्रासंगिक एवं नीरस से हो जाते। जीवन के हर पहलू का स्पर्श इस उपन्यास को छूता है। जितनी नई बातें उद्घाटित हो चुकी हैं उन सभी का मूल्यांकन भारतीय संदर्भ में कहाँ तक उचित होगा या अनुचित इस बात पर विभिन्न पात्रों के माध्यम से विचार विमर्श भी हुए हैं। डॉ० भारत भूषण अग्रवाल ने इस उपन्यास के संदर्भ में अपनी टिप्पणी दी है—“अजय की डायरी शैक्षिक वातावरण का ही चित्रण करता है एवं उसमें अनेक विवरण हैं जिनसे सामान्य पाठक किसी तादात्म्य का अनुभव नहीं कर सकता।”⁸⁹ इस कृति की पृष्ठभूमि में डायरी शैली के प्रति आत्मीयता की भावना है। जैसे छोटी-छोटी बातों को बिना किसी संकोच के कह देना, पत्रों के अंशों के उदाहरण, बातचीत के टुकड़े और उसे अभिव्यक्त करने के ढंग के प्रति ईमानदारी आदि बातों ने ही इसे आकर्षक रूप दिया है। इसे हम ‘अँदाज़े बयों’ के रूप में संबोधित कर सकते हैं। जैसे—“होटल, साढ़े ६ : डालर, बिल और टिप। मैंने सिर्फ सात डालर दिये हैं। लेडी ड्राइवर कुछ बड़बड़ाती चल रही है, शायद टिप पूरा नहीं है इसलिए। मैं हिसाब लगा रहा हूँ, रुपयों में; लेडी ड्राइवर को लगभग पैंतीस रुपये दिए गए। होटल का २४ घंटे का किराया पांच डालर, फेडरल टैक्स २५ सेंट। लम्बे खर्च वाली जगह जान पड़ती है।”⁹⁰ इस तरह बातचीत की ऐसी अनोखी अदा और उसके प्रति नाटकीयता पूरे उपन्यास में देखी जा सकती है। उपन्यास के समस्त पात्र और उनका समस्त स्वरूप अजय के क्रिया-कलापों के चारों तरफ घिरे रहते हैं अथवा कह सकते हैं कि उन पर ही निर्भर हैं।

इस कृति की सबसे अनोखी बात यह है कि इस कृति में कोई गहन, मनन, चिंतन की बात नहीं कही गई है और न ही किसी गहरे चिंतन विषय की ओर संकेत ही किया गया है और न ही किसी प्रकार की प्रतिबद्धता ही अभिव्यक्त की गई है। इस उपन्यास में डायरी शैली के ही कारण रंजकता आई है। चरित्र रेखांकन में व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग देखने को मिलता है। वस्तुएँ तथा अन्य चीजों के बारे में दो टूक बात करने का ढंग अपनाया है। अजय की हर एक कथा में देखने को मिलता है। ४ फरवरी की डायरी में—“शीला (अजय की पत्नी) स्पष्ट ही समझती व मानती है, कि मैं उसकी सम्पत्ति हूँ, जमीन और बैंक-बैलेन्स की

तरह एक प्रकार की जायदाद। उस जायदाद का हिसाब रखना, उसकी सुरक्षा का ध्यान करना, उसका कर्तव्य है।⁹¹

इस उपन्यास को पढ़ने के बाद यह ज्ञात होता है कि लेखक ने डायरी शैली को सम्भवतः इसलिए अपनाया है क्योंकि इससे अजय का मनोविश्लेषण करना रहा होगा और ऐसा प्रयास करके लेखक को सफलता भी मिली है। यदि यह उपन्यास अन्य उपन्यास विधाओं के माध्यम से लिखा गया होता तो सम्भवतः लेखक मन की सूक्ष्म परतों में प्रवेश न कर अजय का मनोविश्लेषण नहीं कर पाता और तो और पाठक के लिए यह उपन्यास रसहीन और जटिल बन जाता।

पीले गुलाब की आत्मा

‘पीले गुलाब की आत्मा’ यह उपन्यास डायरी शैली के प्रयोग का एक और उदाहरण है। इस उपन्यास की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें रहस्य, रोमांसपूर्ण भौतिक-प्रेम की कथा डायरी के रूप में प्रस्तुत है और वह भी तिथिक्रम से वर्णित की गई है। 1 जून, 1952 की डायरी में लेखक लिखता है—“सन्देह भी सत्य का एक छोर है। एक छोर पर सन्देह रहता है, दूसरे पर सत्य। बिना सत्य के सन्देह को पाया ही कैसे जा सकता है?”⁹² प्रेमी-प्रेमिका के प्रेम-प्रसंगों का वर्णन डायरी के पृष्ठों में वर्णित है। उपन्यास का ढांचा भिन्न-भिन्न तिथियों की डायरी से बनता है। डायरी का ढांचा होने से लेखक के अनुभव यथार्थ के धरातल से जुड़े रहते हैं। प्रेम की चर्चा करते हुए लेखक विशम्भर मानव 15 जुलाई, 1952 की डायरी में लिखते हैं—“प्यार के सम्बन्ध में मैं यह नहीं मानता कि वह देखते ही उत्पन्न हो जाता है। देखते ही, जो उत्पन्न होता है, वह आकर्षण है। उसमें प्यार की सम्भावनाएँ रहती भी हैं और नहीं भी रहतीं। यह आकर्षण जब स्थायी होता है, तभी प्यार कहलाता है। आकर्षण प्यार में परिवर्तित हो, इसके लिए इस बात की आवश्यकता है कि दो व्यक्ति एक-दूसरे से परिचित हों... इसी से मैंने प्यार को एक पथ कहा है।”⁹³ पूरे उपन्यास में एक तरफ तो जीवन के प्रति विश्वसनीयता और दूसरी तरफ अविश्वसनीयता को एक साथ निरूपित किया गया है। इस प्रकार यह उपन्यास डायरी शैली का एक सफल प्रयोग है। कल्पना और विश्वास दोनों एक

दूसरे के विरुद्ध हैं। दोनों का समन्वय भी असहज है, किंतु डायरी शैली के प्रयोग के कारण सहजता दिखाई दी है।

लफ्टेंट पिंगसन की डायरी

‘लफ्टेंट पिंगसन की डायरी’ उपन्यास 1961 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास भी डायरी शैली में लिखा गया है। इस उपन्यास के विषय में बेढब बनारसी लिखते हैं—“सात-आठ दिन हुए, गुदड़ी बाजार की ओर चला गया था। वहां एक मोटी, जिल्दबन्धी कापी एक दुकान पर मिली। दीमकों ने उसका जलपान भी किया था। देखने पर एक डायरी निकली। लेफ्टिनेंट पिंगसन सन् १९२१ में भारत में आए थे। यह डायरी दो साल की है। अन्त के कुछ पृष्ठ नहीं हैं। डायरी कितनी मनोरंजन है, पढ़ने से पता चलेगा।”⁹⁴ इस उपन्यास के पात्र लेफ्टिनेंट पिंगसन हैं, जो 1921 में भारत में नगरों की यात्रा करने निकले थे, जो मूलतः एक काल्पनिक पात्र है। इस उपन्यास के लेखक स्वयं एक प्रसिद्ध व्यंग्यकार रहे हैं इसलिए इस उपन्यास की मुख्य भावना रंजकता और व्यंग्य है, जो कि डायरी शैली में अभिव्यक्त की गई है। इस उपन्यास के नायक स्वयं लेखक बनारसी हैं। जो बम्बई से लेकर मंसूरी तक की यात्रा करते रहते हैं। बनारस के आस-पास ही, क्योंकि पान वहाँ मिलता है, मालिश भी होती है। काशी के घाट वही हैं, सारनाथ और विश्वनाथ की गलियाँ और कुल मिलाकर ठेठ बनारसी रंग और तरंग का अनुभव तो वहीं बनारस में रहकर ही हो सकता है। लेखक ने वहीं बैठे-बैठे सारी यात्राएँ कर डालीं। किंतु इन सारी वस्तुस्थितियों का चित्रण उन्होंने यात्रा के विभिन्न पड़ावों में किया है। इस उपन्यास की विषयवस्तु बहुत रोचक और प्रभावशाली तो नहीं है, किंतु डायरी शैली के प्रयोग के कारण पर्याप्त रोचक बन जाने से लेखक की उपलब्धि मानी जा सकती है। इस उपन्यास में तिथिक्रम का पालन नहीं हुआ है, लेकिन इसके शीर्षक और उपन्यास का नाम यही प्रमाणित करते हैं कि यह तिथिक्रम के अनुसार नहीं बल्कि घटनाक्रम के अनुसार लिखा गया है। हिंदी साहित्य के व्यंग्यात्मक उपन्यासों की श्रेणी में यह कृति डायरी शैली में रचित एक उपलब्धि हो सकती है।

बबूल

‘बबूल’ विवेकीराय द्वारा 1967 का उपन्यास है। यह पूर्णतः डायरी शैली में लिखा हुआ है। यह उपन्यास मूलतः एक आंचलिक उपन्यास है, पूर्वांचल का घर-गाँव उसके सुख-दुःख, संघर्ष, मोह, अच्छाई-बुराई, कल्पना, विश्वास और सत्य इत्यादि इतना सभी कुछ इस औपन्यासिक कृति में व्याप्त है। मान्धता राय इस उपन्यास के प्रारंभ में लिखती हैं—“कथाकार ने इस आंचलिक उपन्यास में अपने गाँव को केन्द्र बनाकर गाजीपुर जनपद के पूर्वांचल के मजदूरों की ज्वलन्त समस्याओं एवं यातनाओं का दृश्य चित्र खींचा है जिसमें लगाव या चिपचिपाहट न होकर यथार्थता है परन्तु सपाटबयानी न होकर मार्मिकता है। उपन्यास क्या है डायरी के कुल छब्बीस पन्ने हैं जिनमें फिल्म की रीलों जैसी अनेक तस्वीरें एक-एक करके सामने आती हैं।”⁹⁵ संपूर्ण कृति में एक मधुर आत्मीयता व्याप्त है। इस औपन्यासिक कृति के प्रारंभ में या कहें तो डायरी लिखने के पहले दिन से ही उक्त आत्मीयता की अभिव्यक्ति एक श्रृंखला के रूप में दिखाई देती है। इस उपन्यास की जीवंतता और उसके प्रति विश्वसनीयता बनाये रखने में लेखक द्वारा प्रयुक्त डायरी शैली का विशेष योगदान है। इस औपन्यासिक कृति को पढ़कर ऐसा लगता है कि सारी स्थितियाँ हमारे समक्ष प्रस्तुत हो रही हैं। लेखक अपनी स्मृतियों के माध्यम से ग्राम्य-जीवन के दृश्यों को दर्शाता चला गया है। लेखक द्वारा डायरी शैली अपना लेने के कारण इस कृति की संरचना सहज और सुगठित हुई है। जहाँ कहीं भी कथानक के विस्तार की आवश्यकता जान पड़ी है, वहाँ डायरी शैली का प्रयोग होने पर स्वतः ही कार्य सरल व सहज हो गया है और आगे की घटनाओं की कौतुहलता पाठक के मन में बनी रहती है। इस औपन्यासिक कृति के कथा सूत्रों के सफल संयोजन, कौतुहलता एवं रंजकता डायरी शैली के कारण ही सम्भव हुई है।

मकान

‘मकान’ श्री लाल शुक्ल द्वारा 1976 का डायरी शैली में लिखा गया एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है। इस उपन्यास में लगभग तीन महीनों की अवधि में पात्रों की जीवनानुभूति को बड़े ही सार्थक रूप में लेखक ने दर्शाया है। उपन्यास की पूरी की

पूरी कथा नारायण सिम्मी और श्यामा के इर्द-गिर्द घूमती है। लेखक का मुख्य उद्देश्य समाज में एक कलाकार की विडम्बना और उसकी जिंदगी की व्यवस्थाओं को अभिव्यक्त करना और साथ ही रुढ़िवादी एवं विसंगति युक्त सामाजिक व्यवस्थाओं और संबंधों की खिल्ली उड़ाना है। 21 अक्टूबर, 1974 में लिखते हैं—“मैं अब नारायण नहीं रहा हूँ, जड़ भारत हो गया हूँ।”⁹⁶ इस उपन्यास में नारायण समग्र रूप से छाया हुआ है, इसमें महानगरीय जीवन के अन्य सभ्य लोगों का अर्थहीन जीवन उनकी अस्त-व्यवस्तता के साथ बस यूँ ही चित्र अंकित होते रहते हैं। लेखक ने कलाकारों में नितांत प्रेम एवं भावुकता के स्थान पर कामुकता का पूरा चित्रण किया है। 3 नवम्बर, 1974, रविवार में लिखते हैं—“ओ रे अभागे नारायण! इस प्रौढ़ वयस में, जब तेरे कर्णमूल के निकट के केश उज्ज्वल होने लगे हैं, तू किशोरों की-सी प्रणय-विह्वलता से किसी चारुकेशी, तन्वंगी नायिका को खोज रहा है! इस पावन शरत्काल का क्या तेरे लिए कोई दूसरा अर्थ नहीं है?... ”⁹⁷ डायरी शैली के प्रयोग के कारण यह औपन्यासिक कृति अत्यन्त आत्मीय बन पड़ी है। लेखक ने निरंकुश प्रदर्शन, लोभी भाग-दौड़, मूल्यहीनता और भौतिक स्तर पर आधारित समाज के स्वरूप को बिना किसी हिचक के अभिव्यक्त किया है। जो आत्मीय अनौपचारिकता के कारण प्रभावशाली बन पड़ा है, और यह सब इसी डायरी शैली का परिणाम है। लेखक ने डायरी शैली का प्रयोग कर अपने चिंतन-मनन की गहराई में जाकर उसे और गहरा बना देने की महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

द्वाभा

‘द्वाभा’ प्रभाकर माचवे का सन् ‘1953’ में लिखा एक मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है। कथा-संयोजना की दृष्टि से यह एक नया प्रयोग है। इस औपन्यासिक कृति में भारतीय नारी के भिन्न-भिन्न रूप को अंकित किया गया है। इस कृति की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें एक ही साथ निबंध, पत्र, काव्य तथा डायरी शैली के समन्वय का असाधारण प्रयोग करते हुए लेखक ने अपनी रचना कला को प्रस्तुत करने का जो प्रयत्न किया है, यह अपने आप में एक महत्त्वपूर्ण बात है। इस कृति का मुख्य केंद्र बिंदु आभा है। आभा आधुनिक समाज

पूर्णतः मनोविश्लेषण पद्धति पर आधारित है, जिसमें एक प्रेम कथा को प्रस्तुत किया 'नदी के द्वीप' अक्षय द्वारा लिखा गया 1951 का एक प्रसिद्ध उपन्यास है जो

नदी के द्वीप

के कारण समाज का स्वरूप गूढ़ार्थ रूप से प्रकट हुआ है। उपन्यास की धारिद्रिक विशेषताएँ ज़ायसी के पन्नों में विजित होती हैं। ज़ायसी शैली उपन्यास युद्धोपरांत समाज की राजनीति एवं व्यवस्था को उद्घाटित करता है। इस रालेन्द यादव का 'उखड़े हुए लोग' 1956 का उपन्यास है। यह

उखड़े हुए लोग

अंतर्द्वन्द्व को स्वाभाविक रूप से व्यक्त करने में सार्थक सहयोग भी प्रदान करती है। कुल मिलाकर उपन्यास में जो ज़ायसी शैली प्रयुक्त हुई है वह पात्रों के मानसिक रात-रात भर तारे गिनना भी है, अँधेरे में आँखें गड़ाये सबरे की प्रतीक्षा भी है...।¹⁰⁰ नींद ही नहीं है, उसमें रतजना भी है, टूटते-बिखरते खौफनाक डरावने सपने भी हैं धारिद्रिक गुणों को उजागर करता है। अमिता की ज़ायसी से—“जिन्दगी मीठी-मीठी व्यक्तित्व एक अलग प्रकार के जीवन का नज़रिया प्रस्तुत करता है। जो अमिता के पुरुष-वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, दूसरी तरफ ज़ायसी के इन पन्नों में अमिता के जायेगा।¹⁰⁰ एक ओर उपन्यास के नायक श्री का संपूर्ण व्यक्तित्व आधुनिक भारतीय संयत और विचारशील हो लूँ अमिता की एक ही झाँकी से यह सब झूझा वन के पन्नों में हुई है। श्री की ज़ायसी से—“कमाल के इन काले अँधेरे में मैं किटना ही निरन्तर रिसता रहता है।⁹⁹ पात्रों के चरित्रों की जो अभिव्यक्ति हुई है, वह ज़ायसी बनने से स्थिति में कोई सुधार न होता। वह ऐसा जख्म उसके जीवन में है जो बी एन्ड यूअर्ड। परन्तु आमा का अतीत ऐसा है कि उसके लाख सबल-संकल्प नहीं निबटना, वह पड़ता है सहना...” (दूट विच कैन नाँट बी क्यूअर्ड, मस्ट आमा ने अपने पूर्ण-जीवन के बारे में सोचना छोड़ दिया है। कहते हैं कि ‘जिससे भावात्मक रूप से अलग नहीं हो पाई है। यही उसकी अपनी विडम्बना है। “वैसे ? निरी एक कठपुतली।⁹⁸ आमा अपने प्रति से अलग होने के बावजूद भी ही कोई अंधी गली है ? नाशी क्या निरी ‘नियतनदी’ के मनमाने खेल की शिकार है के नाशी शोषण की प्रतीक है। आमा का सोचना है कि—“नाशी का जीवन क्या ऐसी

गया है। आर० सुरेन्द्र लिखते हैं—“जीवन की यथार्थता को प्रभावशाली ढंग से चित्रित न करने का इन्जाम इस उपन्यास कार पर अकसर लगाया जाता है।”¹⁰² इस उपन्यास में पात्र और घटनाएँ बहुत सीमित हैं। उपन्यास में केवल चार ही पात्र हैं—भुवन, रेखा, गौरा और चन्द्रमोहन। इसमें मूलतः यौन-संबंधों को केंद्र बनाकर आंतरिक जीवन को रेखांकित किया गया है। लेखक के शब्दों में—“नदी के द्वीप समाज के जीवन का चित्र नहीं है।... वह व्यक्तियों के जीवन का चित्र भी नहीं है... वह मात्र चार संवेदनाओं का अध्ययन है।”¹⁰³ इस उपन्यास में जो चार पात्र दिखाई देते हैं वही प्रमाणभूति की चार संवेदनाएँ हैं। नीमचन्द्र जैन लिखते हैं—“आधुनिक नारी के व्यक्तित्व के इतने विविध पक्ष इतनी गहराई और सूक्ष्मता के साथ अपने आगे प्रत्यक्ष कर सकना और फिर उसे शाब्दबद्ध कर सकना अपने-आप में एक बड़ी साहित्यिक उपलब्धि है।”¹⁰⁴ इसकी पूरी कथा एक नैसर्गिक प्रेम को केंद्र बिंदु मानकर लिखी गई है। इसमें भुवन, रेखा और गौरा के त्रिगुणत्मक प्रेम संबंधों के बीच जो उलझ रही है एक संवेदना जो संवेदना जो मनःस्थिति को स्पष्ट करती है लेखक ने इस औपन्यासिक कृति में ज़ायरी शैली के साथ-साथ पत्रों का भी प्रयोग किया है। भारत भूषण अग्रवाल नदी के द्वीप के संबंध में लिखते हैं कि—“उपन्यास में अभिव्यक्ति की अनेक नई युक्तियाँ का समावेश है—पत्र-शैली, ज़ायरी शैली।”¹⁰⁵ रेखा अपनी ज़ायरी के पृष्ठों में भुवन के प्रति जो प्रेम है उसे अंकित करती है। उसे उसके व्यक्तित्व को उद्घाटित करता है। गौरा के मन में जो भावनात्मक समर्पण की भावना है। उसे रेखा आभासकर उसे भुवन को प्राप्त करने का निश्चय करती है इस संदर्भ में रेखा भुवन को संबोधित करती हुई लिखती है—“तुम सोओ। अपने स्वप्न के लिए, तुम्हें नहीं जगाऊँगी। स्वप्न में मैंने तुम्हारे प्रिय किसी को देखा था पर नहीं हुई। भुवन, मैं तुम्हारे जीवन में आऊँगी, और वही जगाऊँगी, मैं जानती हूँ बहुत प्रिय थी। उसे देखकर मैंने मन में स्नेह उमड़ आया, ईर्ष्या होनी चाहिए थी न मार्गम कौन होगी वह, लेकिन मैंने उसे देखा था, पहचाना था और वह तुम्हें स्वप्न के लिए, तुम्हें नहीं जगाऊँगी। स्वप्न में मैंने तुम्हारे प्रिय किसी को देखा था इस संदर्भ में रेखा भुवन को संबोधित करती हुई लिखती है—“तुम सोओ। अपने भावना है। उसे रेखा आभासकर उसे भुवन को प्राप्त करने का निश्चय करती है उसके व्यक्तित्व को उद्घाटित करता है। गौरा के मन में जो भावनात्मक समर्पण की रेखा अपनी ज़ायरी के पृष्ठों में भुवन के प्रति जो प्रेम है उसे अंकित करती है। उसे अभिव्यक्ति की अनेक नई युक्तियाँ का समावेश है—पत्र-शैली, ज़ायरी शैली।”¹⁰⁶ रेखा के आंतरिक व्यक्तित्व का उद्घाटन ज़ायरी शैली ने ही उजागर किया है

को प्रस्तुत किया है। अज्ञेय लिखते हैं—“वेदना में एक शक्ति है, जो दृष्टि देती है।”¹⁰⁷ वास्तव में यह त्रिगुणात्मक संबंध जो डायरी के पन्नों में अंकित हुआ है, वह किसी और का नहीं, अपितु अप्रत्यक्ष रूप से अज्ञेय का अपना जीवन है। इस त्रिगुणात्मक प्रेम-संबंधों और मानव-मन के गूढ़ रहस्यों को उद्घाटित करने में डायरी शैली के प्रयोग से सहायता मिली है।

अपने अपने अजनबी

‘अपने अपने अजनबी’ अज्ञेय द्वारा लिखा 1961 का उपन्यास है। इस कृति में भी लेखक ने डायरी शैली का प्रयोग किया है। इसमें कुल तीन अध्याय हैं तीनों ही अध्याय में अलग-अलग दृश्य हैं। गोपाल राय ‘उपन्यास की संरचना’ में लिखते हैं— “यह मात्र 80 पृष्ठों की (लग 24000 शब्द) उपन्यासिका है, जिसमें 38 पृष्ठ डायरी के हैं।”¹⁰⁸ लेखक ने योके और सेल्मा के माध्यम से मृत्यु को मुख्य केंद्र बिंदु मानकर मनुष्य की जिजीविषा, अजनबीपन, अनास्था और मृत्युबोध आदि इस तरह के प्रश्नों को स्पष्ट किया है। ‘मृत्यु से साक्षात्कार’ इस उपन्यास का मुख्य विषय है। अज्ञेय के इस उपन्यास में जीवन-संघर्ष का एक महत्वपूर्ण आयाम अंकित है। मृत्यु से साक्षात्कार इसकी मूल भूत समस्या है। योके और सेल्मा दोनों की मानसिकता एक दूसरे से भिन्न है। बर्फ के नीचे दबे तंबू में कैद इन दोनों के जीवन और मृत्यु संबंधी विचार इसमें वर्णित हैं। ‘योके’ दम घोटू वातावरण से मुक्ति पाने के लिए डायरी लिखती है। इस डायरी में 15 दिसम्बर से 14 जनवरी तक को अनवरत ढंग से लिखी गई मानसिक उधेड़बुन का चित्र है। इस उपन्यास में हर सुबह योके एक नवीन अजनबी भाव-बोध से घिरी रहती है। उसके मस्तिष्क में लगातार अंतर्द्वन्द्व और तनाव विद्यमान रहता है। डायरी शैली में उसकी इस मानसिक स्थिति का उद्घाटन करने में अत्यन्त प्रभावशाली भूमिका निभाई है। बर्फ की कैद में पड़ी सेल्मा 31 दिसम्बर में—“हाँ योके, मैं भगवान् को ओढ़ लेना ही चाहती हूँ। पूरा ओढ़ लेना कि कहीं कुछ भी उधड़ा न रह जाये। तुम नहीं जानती कि जिसे माला की मणि तक नहीं पहुँचना है उसके लिए एक-एक मनके का रूप कितना दिव्य होता है।”¹⁰⁹ योके के विचार इससे भिन्न हैं। योके में जीने की तीव्र इच्छा है। उसका विचार है कि जीवित व्यक्ति जीने का आकांक्षी होता है ना कि

मृत्यु का। वह महसूस करती है कि उसमें कहीं टूट है। कहीं न कहीं मृत्यु से डरकर वह कहेगी कि वह मरना नहीं चाहती। वह इस विचार से सहमत है। सेल्मा के विचारानुसार कोई भी स्वतंत्र नहीं है 5 जनवरी की डायरी में—“मैं जानती हूँ कि मैं बीमार हूँ। मैं क्या जान-बूझकर हुई हूँ, या कि तुम्हें सताने के लिए बीमार हुई हूँ? मैं क्या स्वतंत्र हूँ कि बीमार न रहूँ—या कि अब बीमार हूँ तो क्या इतनी भी स्वतन्त्र हूँ कि मर जाऊँ ? मैंने चाहा था कि अन्तिम दिनों में कोई मेरे पास न हो। लेकिन वह भी क्या मैं चुन सकी?”¹¹⁰ लंबे समय से बर्फ में कैद ‘योके’ एकाकीपन, निराशा आदि के कारण मानसिक तनाव से ग्रस्त है। एक-एक क्षण उसके लिए बड़ा लंबा लग रहा है। एक-एक क्षण का महत्त्व समझकर वह सोचती है। 16 दिसम्बर की डायरी में—“एक ही अन्तहीन लम्बे शिलित क्षण में मैं जी रही हूँ—जीती ही जा रही हूँ — और वह क्षण ज़रा भी नहीं बदलता, टस से मस नहीं होता।... मैं मानो काल-निरपेक्ष क्षण में टँगी हुई हूँ—वह क्षण काल की लड़ी में से टूटकर कहीं छिटक गया है और इस तरह अन्तहीन हो गया है—अन्तहीन और अर्थहीन।”¹¹¹ सेल्मा के होते हुए भी योके स्वयं को अकेली अनुभव करती है। ‘सेल्मा’ ‘योके’ के साथ रहती हुई भी उसके लिए एक अजनबी है मानो उससे उसका कोई परिचय ही न हो। कई प्रश्न योके के मन में भी उभरते हैं, वह सोचती है कि सेल्मा के जीवन में अवश्य कुछ ऐसा हुआ होगा जो मुझसे भिन्न है और वह सच भी है। 21 दिसम्बर की डायरी में—“उसके जीवन में कुछ है जो कि इन सब बातों से बिल्कुल अलग है। वह मेरे लिए अजनबी है, लेकिन लगता है कि उसमें कुछ ऐसा सच है—जो मैंने नहीं जाना है। मेरे सच से बिल्कुल अलग सच और दूसरा सच! सच!”¹¹²

इस उपन्यास में योके और सेल्मा का लगभग तीन-चार महीने का एक साथ रहना दिखाया गया है, किंतु फिर भी दोनों एक-दूसरे के लिए पहेली बने रहते हैं। डायरी शैली का प्रयोग होने के कारण ऐसे सूक्ष्म और नितांत वैचारिक दर्शन सफलता के साथ उभरा है।

धरती मेरा घर

‘धरती मेरा घर’ 1961 में लिखा रांगेय राघव का उपन्यास है। इस उपन्यास में डायरी शैली का प्रयोग एक निश्चित सीमा तक किया गया है। डॉ० लाल का

इस संदर्भ में मानना है कि—“धरती मेरा घर में इस शैली को आंशिक रूप में प्रयुक्त किया गया है।”¹¹³ डॉ० लाल की इस स्थापना का कोई उद्देश्य नहीं है, क्योंकि इस उपन्यास में डायरी शैली की आत्मकथात्मक विधा के स्थान पर वर्णनात्मक शैली को महत्त्वता दी गई है। इस उपन्यास को स्पष्ट करने के लिए कथा को चार भागों में विभाजित कर विश्लेषण किया जा सकता है। पहले खंड में विभिन्न वर्षों का उल्लेख किया गया है, जैसे—प्रथम खंड का प्रारंभिक कथन है—“सन् 1935 ई०”¹¹⁴ इसी प्रकार लेखक ने अन्य खंडों में किया है। “सन् 1943 ई०”¹¹⁵, “सन् 1952 ई०”¹¹⁶, तथा “सन् 1960 ई०”¹¹⁷। यह कथन मूलतः समय के अंतराल को प्रकट करने के लिए लिखे गए हैं। अतः यह कृति आंशिक रूप से डायरी विधा को अपनाकर लिखी गई है।

बीज

‘बीज’ अमृतराय द्वारा लिखा 1953 का उपन्यास है। अमृतराय यथार्थवादी परंपरा के रचनाकार हैं। लेखक ने गुणात्मक शैली के माध्यम से उपन्यास की संरचना की है, किन्तु पात्रों के अन्तर्मन को भली-भाँति, स्पष्ट करने के लिए डायरी शैली को अपनाया है। उपन्यास ‘बीज’ का नामकरण दो अर्थों को सार्थक करने वाला है, पहला अर्थ—नए समाज के लिए। ‘बीज’ शब्द का प्रयोजन उन अर्थों से है, जो प्रस्फुटित होने जा रहा है, और दूसरे अर्थों में बदलते हुए दृष्टिकोण हैं। यह शब्द भविष्य के लिए एक नई आशा, विश्वास, प्रेरणा और प्रकाश स्तंभ है। लेखक ने वर्णनात्मक शैली और डायरी शैली दोनों पद्धतियों को अपनाकर कथानक के सूत्रों का समानांतर और परस्पर विकास किया है। ‘तीन डायरियाँ’ शीर्षक देकर लेखक ने डायरी-विधा के प्रयोग को प्रमाणित किया है। पूरे उपन्यास में सत्य और ऊषा के अंतर्द्वन्द्व की अभिव्यक्ति और कथानक में स्फूर्ति लाने के लिए डायरी शैली का प्रयोग किया गया है। पात्रों के अन्तर्मन की उद्देहित भावना को अभिव्यक्त करने के लिए डायरी शैली को ही सर्वोपरि माना है। लेखक ने तत्कालिक सामंती समाज के वीभत्स रूप और विडम्बनाओं को उद्घाटित करने के लिए इस उपन्यास की रचना की है। समाज की इसी विडम्बना को संगठित करने के लिए जिस व्यक्ति का रूप चित्रित किया गया, उसका प्रतीक रूप ‘बीज’ है। यह जो ‘बीज’

शब्द है एक संकल्प और नई-पीढ़ी के लिए प्रेरणा है। पूरे उपन्यास का निचोड़ राज की 15 जुलाई की डायरी से स्पष्ट होता है—“सोचो तो कितने लाख आदमी मर गये भूख से ! और तो और लाखों बच्चे भी, अपनी माँओं के लाड़ले, एक-एक बूँद दूध और एक-एक कनी चावल के दाने के लिए तरस-तरस कर ! माँ की छाती में दूध नहीं था कि अपने बच्चों को पिला सकती, अपने आँख के तारे को अपने हीरे को, जिसे नौ महीने उसने अपनी कोख में रक्खा... और खाने से ही तो खून बनता है... लोग कहते हैं माँ का प्यार ही दूध बन जाता है। तो क्या उन माँओं को अपने बच्चों से प्यार नहीं था?... गलत बात है दूध माँ के प्यार से नहीं खाने से बनता है!”¹¹⁸ लेखक ने इस उपन्यास के माध्यम से पात्रों के अंतर्द्वन्द को यथार्थ के धरातल से जोड़ने का प्रयत्न किया है और यह प्रयास डायरी शैली से संभव हुआ है। रचनाकार की डायरी शैली के प्रति जो सच्ची आत्मीयता है संपूर्ण कृति में स्थान-स्थान पर मुखरित हुई है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि डायरी शैली का प्रयोग उपन्यासकारों ने कई रूपों में किया है। कभी तो पूरा उपन्यास ही एक या दो पात्रों के माध्यम से निर्मित हुआ है और कभी विभिन्न पात्रों की डायरियों के अंशों को प्रस्तुत करने से। एक ही पात्र की डायरी संयोजित करने से केवल एक ही पात्र का दृष्टिकोण ही उद्घाटित हुआ है। इससे एक ही पात्र के अंतर्द्वन्द को अभिव्यक्ति मिल पाती है। उदाहरण के लिए—‘अजय की डायरी’ है। कई पात्रों की डायरियों से विभिन्न पात्रों की मनः-स्थितियाँ, अंतर्द्वन्द और उपजी समस्याएँ उद्घाटित होती हैं। कई लेखकों ने उपन्यासों के बीच-बीच में एक या अनेक पात्रों की डायरियों के अंशों को उल्लेखित करके पात्रों की मनोवृत्तियों को उजागर किया है। इस प्रकार उपन्यासकारों ने डायरी शैली के माध्यम से कथा विषय का साकार वातावरण उपस्थित कर दिया है।

गद्य की एक और विशिष्ट विधा है ‘कहानी’। कहानी के लिए कथा शब्द भी प्रयोग किया जाता है। आज की कहानी यथार्थ से अति यथार्थ की ओर अग्रसर है। यथार्थ की दृष्टि से डायरी और कहानी में यही समानता है। चूँकि डायरी सत्य पर आधारित ही होती है, जबकि कहानी सत्याधारित भी हो सकती है। कई

कहानियाँ डायरी शैली में लिखी जाती रही हैं। छायावादोत्तर काल में विशेषकर पाँचवे दशक के बाद जो प्रवृत्ति कहानी क्षेत्र में स्थापित हुई, और जो हो रही है मन की उथल-पुथल भावनाओं को यथार्थ रूप में अभिव्यक्त करने के लिए डायरी शैली ने विशेष योगदान दिया है।

डायरी शैली में लिखी कहानियों की विशिष्टता यह है कि वे कभी बिना किसी विशेष घटना के भी पूरी कहानी पात्रों की आत्मकथा के रूप में लिखी जाती है। इसमें लेखक कथानक के अनावश्यक विस्तार से बच जाता है और साथ ही साथ चरित्र-चित्रण का मनोवैज्ञानिक पक्ष भी मुखरित हो जाता है। इस प्रकार की कहानियों में अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी और जैनेन्द्र कुमार आदि हैं। इसके अतिरिक्त राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, सुधा अरोड़ा आदि लेखकों की कहानियों में भी यह विशिष्टता देखने को मिलती है। डायरी शैली के कारण लेखक अपने को औपचारिकताओं से बचा लेता है। इस विधा का व्यापक प्रभाव हिंदी कहानियों पर जिस प्रकार पड़ा, वह मनोवैज्ञानिकता और आधुनिक जीवन की विसंगतियों से युक्त पात्रों को चित्रित करने में अधिक सुविधाजनक सिद्ध हुई है। इस संदर्भ में इलाचन्द्र जोशी की 'डायरी के नीरस पृष्ठ' नामक संग्रह को उल्लेखित किया जा सकता है। इन कहानियों में समाज की विभिन्न परिस्थितियों की अनुभूति को यथार्थ रूप में चित्रित किया गया है। डायरी शैली पात्रों के मानसिक अंतर्द्वन्द्व को व्यक्त करने में काफी सहायक बन पड़ी है। इस विधा के माध्यम से रचनाकारों ने समाज में फैले विखराव को चित्रित कर अन्तःमन की उन भावनाओं, विचारों को व्यक्त किया है जो सामान्यतः अभी तक अभिव्यक्त नहीं हुई हैं। दूसरी शैलियों के द्वारा अन्तःमन की भावनाओं को क्रमबद्ध रूप में संगठित नहीं किया जा सकता है इसलिए उन कहानियों में अरुचि दिखाई पड़ती है, किंतु डायरी शैली में लिखी कहानियाँ जहाँ तो एक तरफ क्रमबद्ध व्यौरा प्रस्तुत करती हैं, वहीं दूसरी तरफ उत्सुकता और गहनशीलता प्रस्तुत करने में सहायक सिद्ध हुई हैं।

डायरी शैली के कारण पात्र की मनःस्थिति सहज रूप से व्यक्त हो जाती है। डायरी शैली के कारण ही इलाचन्द्र जोशी जैसे कहानीकार को अधिक सुगमता मिली है। जोशी अपनी कहानियों में जहाँ एक तरफ पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं

को जानने में भली-भाँति सफल हुए हैं, तो वहीं दूसरी तरफ उनके पात्रों को स्वच्छ एवं निष्पक्ष रूप में प्रस्तुत करने में सफलता मिली है। इस संबंध में डा० देवराज का कहना है कि—“एक मनोविज्ञान के ज्ञाता के लिए इन कहानियों में एक अतिरिक्त आनन्द प्रदान करने की क्षमता है।”¹¹⁹ इलाचन्द्र जोशी की कहानी ‘डायरी के नीरस पृष्ठ’ डायरी शैली के प्रयोग के कारण एक उत्कृष्ट प्रमाण है।

छठे दशक के बाद की कहानियों में आधुनिक जीवन की खंडित विडम्बनाएँ, मोहभंग, संस्कृतियों की टकराहट, संबंधों का अजनबीपन, भावना और भौतिकता में संघर्ष, अकेलापन, मन की जटिलाताएँ, यथार्थ की उलझनें आदि की अभिव्यक्ति प्रमुख रूप से हुई है। उन अभिव्यक्तियों में कहानी की पुरानी शिल्प विधा और उसकी प्रासंगिकता धीरे-धीरे विलुप्त होती गई। कहानीकारों ने अपनी रचनाओं में नवीनता लाने के लिए नई-नई विधाओं का प्रयोग किया। इस कड़ी में जो शैलियाँ उभरकर आई उनमें डायरी शैली प्रमुख है। “एक सेन्टीमेन्टल डायरी की मौत”¹²⁰ और “अविवाहित पृष्ठ”¹²¹ आदि कहानियों में कथानक का प्रत्यक्ष रूप से न होकर सांकेतिक रूप से निर्वाह किया हुआ ज्ञान पड़ता है।

‘एक सेन्टीमेन्टल डायरी की मौत’ में—डायरी लिखने वाली एक इमोशनल लड़की की कहानी है जो एक युवक से प्रेम करती है। जितनी लड़की भावुक है, उतना युवक संवेदनशील नहीं है। दोनों की भावुकताओं में गहरा विरोधाभास है। युवक एक अन्य लड़की से विवाह कर और इस लड़की की कोमल भावनाओं को कुचलकर विदेश चला जाता है। ऐसी स्थिति में यह भावुक लड़की के पास डायरी के उदास पन्ने, असाध्य बीमारी, गहनीय भावुकता और अतृप्ति रह जाती है। इन सबके चलते अंत में उसकी मृत्यु हो जाती है। 2 मई 1965 की डायरी में लिखती है कि—“सुबह कोडोपॉयरिन खाई थी— डायरी लिखने के लिए। उसका असर एक घण्टे रहता है। मेरे पेट में कोई सुइयाँ चुभो रहा है। पर मुझे और लिखना था... और यह लड़की ‘शायद’ अब नहीं है।”¹²² लेखक ने इस असफल प्रेम की कथा को संकेतों के द्वारा अभिव्यक्त किया है। प्रेम रूपी निराशा की कथा के लिए डायरी शैली के माध्यम से मनःस्थिति की पीड़ा की अभिव्यक्ति सफल सिद्ध हुई है—“मैं भी खुशबुओं वाली सिगरेटों में थी। तुमने मुझे उठा लिया, अपने

खूबसूरत सिगरेट लाइटर से जलाया। होठों से लगाया... आधा पीकर खुरदरी ज़मीन पर फेंक दिया। अपने रबर सोल के जूतों से कुचल कर तुम आगे बढ़ गये। तब से मैं वहीं पड़ी हूँ। हवा से उड़कर एक पतझड़ी पत्ते के नीचे दबी हूँ। कोई मुझे देख नहीं सकता। उठाता भी नहीं, जलाता भी नहीं। जलना भी नहीं चाहती। मैं तुम्हारे उन्हीं रबर सोल के परिचित जूतों का इन्तजार करती हूँ ...कर रही हूँ।...

“¹²³ इसी संदर्भ में ‘अविवाहित पृष्ठ’ नामक कहानी में एक किशोर वय की मनोवैज्ञानिक अभिव्यक्ति मिलती है। इसमें आधुनिक पीढ़ी की नारी के काल्पनिक स्वप्नों और उनकी वास्तविकताओं के बीच अंतर्द्वन्द्व को पहचानने के लिए एक कोशिश की गई है। हम देखते हैं कि आज इस नए आधुनिक परिवार में एक तरफ तो लड़कियों के अपने निजी फैसले होते हैं तथा दूसरी ओर परंपरागत सामाजिक रूढ़ियाँ होती हैं। यह वास्तविकता है कि एक तरफ जीवन की कोमल संवेदनाएँ होती हैं और दूसरी ओर परंपराओं का बंधन। इस कहानी की नायिका इसी द्वन्द्व में जीती है। आधुनिक भारतीय समाज एक तरफ तो शिक्षा एवं नयी-नयी भावनाओं की ओर आकर्षित हो रहा है, चूँकि दूसरी ओर वह अपने परंपरागत मूल-भूत रिश्तों और रूढ़ियों में जकड़ा हुआ भी है। इस प्रकार दोनों स्थितियों के मध्य जो द्वन्द्व की अभिव्यक्ति है, वह सुधा के व्यक्तित्व से स्पष्ट झलकती है। इस प्रकार ‘अविवाहित पृष्ठ’ की कहानी अकेलापन, भीड़, आधुनिक समाज के रिश्ते, कविता, पार्टी, दफ़्तर, और शहरी वातावरण की भिन्न-भिन्न प्रकार की भावनाओं के मध्य होती हुई आगे बढ़ती है। छोटी बहन बेबी (सुधा) अपनी बड़ी बहन जो कि विवाहित है, उसकी जिंदगी पर व्यंग्य करती हुई कहती है—“...हाँ, हमारी जिन्दगी तो अनिश्चित, अव्यवस्थित भटकने वाली है। हमें यह डॉट्स वाली अधूरी, अनियमित जिन्दगी ही पसन्द है।”¹²⁴ सुधा का अपनी बहन पर जो व्यंग्य है, वो एक तरफ तो नारी-चित्रण को स्पष्ट करता है, तथा दूसरी तरफ वर्तमान व्यवस्था के प्रति विद्रोह की भावना को भी स्पष्ट करता है।

इसी संदर्भ में निर्मल वर्मा की ‘डायरी का खेल’ नामक कृति को भी ले सकते हैं। इसमें भी कई प्रकार की भावनाएँ उद्घेलित होती हैं, जैसे—अजनबीपन, घुटन, लिप्सा, अंतर्विरोध की भावनाएँ और उन सबके बीच ‘बिट्टो’ के

मन की अभिलाषा इस कहानी की मूल संवेदना है। 'बिट्टो' जो कि कहानी की नायिका है, जीवन की उत्कृष्ट अभिलाषा रखती है किंतु असाध्य रोग के कारण मृत्यु की भयावह स्थिति उसे क्षण-क्षण क्षीण करती रहती है। 'बब्बू' जो कि कहानी का नायक उसके मन में नायिका के प्रति अनिच्छा के भाव और एक तरफ सहृदयता भी विद्यमान है। तपेदिक के कारण 'बिट्टो' की जिंदगी बहुत कम है। इन्हीं सब परिस्थितियों का यथार्थ-चित्रण डायरी शैली में हुआ है। डायरी शैली के कारण बिट्टो के अंतर्द्वन्द्व की अभिव्यक्ति सरसता पूर्ण हुई है तथा दूसरी ओर प्रभावकारी भी।

इसी कड़ी में 'लहर' पत्रिका मार्च, 1967 में प्रकाशित 'शव यात्रा के बाद देह शुद्धि' राजकमल चौधरी की कहानी को उल्लेखित किया जा सकता है। इस कहानी की रचना मृत्यु को आधार मानकर डायरी के टुकड़ों के माध्यम से लिखी गई है। यह कहानी प्रेम और मृत्यु के बीच उत्पन्न अंतर्द्वन्द्व को व्यक्त करती है। यह कहानी अमानवीय रिश्तों की भयानकता की ओर इशारा करती है। इसमें आत्मानुभूति के सत्यों का संयोजन किया गया है। आज आधुनिक परिवेश में धर्म एक अंधविश्वास के सिवा कुछ और नहीं रहा है। राजकमल चौधरी ने जिस भयावह सत्य (यथार्थ) को अपनी इस कहानी के माध्यम से अभिव्यक्त करना चाहा है, उसको डायरी शैली में सार्थक और प्रभावशाली आधार दिया है।

'लहर' मार्च, 1967 में प्रकाशित 'डायरी में कैद जुलूस' कहानी में लेखक ने एक ऐसे रिश्ते को अभिव्यक्त करने का पूर्णतः सफल प्रयास किया है जो विशेष परिस्थितियों में पैदा होते और समाप्त हो जाते हैं। यह कहानी ऐसे ही भाव को व्यक्त करने के लिए लिखी गई है, डायरी विधा ने इसे और सशक्त बना दिया है। कहानी में अभिव्यक्त जो अनौपचारिक प्रसंग है, वो एक तरफ कौतूहल पैदा करता है, तो दूसरी ओर नयापन भी लिए हुए है।

आज का जो समय है, वो एक ऐसे सांस्कृतिक संकट के दौर से गुजर रहा है जहाँ संगीत की धुनों में जिंदगी साँसें ले रही रही है। ऐसे ही जिंदगी 'नवम्बर की एक रात' जो 'लहर', मार्च, 1967 में आई।

डायरी शैली के प्रयोग का एक और उदाहरण 'लहर' अप्रैल, 1967 में ही 'समय के पुल से गुजरता मैं' प्रेम प्रकाश भाटिया ने पुरानी और नई पीढ़ी के बीच जो अंतर्द्वन्द्व है, उसको उजागर किया है। लेखक ने इस कहानी में स्पष्ट किया है, कि पुरानी पीढ़ी भ्रष्टाचार में लिप्त होने के बावजूद भी नई पीढ़ी से सम्मान की अपेक्षा करती है। कहानी में पिता द्वारा कार्यालय से छोटी-छोटी चीजें चुराने का विरोध पुत्र करता है। पुत्र द्वारा यह विरोध धीरे-धीरे एक दिन भयंकर रूप धारण कर लेता है। पिता द्वारा कार्यालय से चुराये गए तौलिये को पुत्र उनके सामने ही जला देता है। अत्यन्त छोटी होने के बावजूद यह कहानी अपने उद्देश्य को अभिव्यक्त करने में सफल हुई है।

डायरी शैली में लिखी गई अन्य उल्लेखनीय कहानियाँ निम्नलिखित हैं। 'नई धारा', मार्च 1951 में 'तीन डायरी, तीन पृष्ठ', गजेन्द्र कुसुमेषु ने आधुनिक परिवेश में पुरुष और नारी के मध्य प्रेम संबंधों में आए हुए परिवर्तनों को उल्लेखित किया है। कहानी में नायक-नायिका और तीसरा व्यक्ति आज के समाज में प्रेम संबंधों का प्रतीक है। इस कहानी में पुरुष और नारी के प्रेम संबंधों की स्वार्थ की जो प्रवृत्ति है, यह इस कहानी में दर्शाया गया है। 'ज्ञानोदय' सितम्बर, 1959 में इन्द्रजैन की 'लावण्य की डायरी' जिसमें आधुनिक शहरी लड़कियों की खिन्नता, एवं रुमानीपन को व्यक्त करने वाली है। इसमें संघर्ष भीरु प्रेम की मनोगाथा को चित्रित किया गया है। यही कहानी की कथावस्तु है। भिन्न-भिन्न तारीखों में लिखी गई यह डायरी प्रेम-प्रसंग की विभिन्न स्थितियों का आकलन है। यह कहानी डायरी शैली के माध्यम से प्रस्तुत होने में सफल हुई है। अभिव्यक्ति का सरलीकरण डायरी का सुपरिणाम है। 'ज्ञानोदय' फरवरी, 1962 में 'ये घाटियाँ ये गूँजें' मोहिनी ओबेराय ने इस कहानी में आज की व्यस्त जिंदगी में भाग-दौड़ के बीच अन्तःमन में प्रवाहित होने वाली कोमल भावना का चित्रण किया है। कहानी स्मृतियों के माध्यम से आगे बढ़ती है। डायरी के इन पन्नों में नारी जीवन के अकेलेपन की घुटन को बड़े ही स्वाभाविक ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। 'ज्ञानोदय' अप्रैल, 1963 में 'अजन्मे की डायरी' कंचनलता सब्बरवाल की नारी मन की व्यथा को उजागर करने वाली कहानी है। पूरी कहानी का सारांश प्रेम की एक अविरल तड़प में चित्रित है। नारी

की अतृप्त चाह जो सामाजिक बंधनों से न लड़ने के कारण कुण्ठित हो गई है, इस सबको इस डायरी में स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। कहानी डायरी शैली में लिखे जाने के कारण नारी मन की उलझनें और विडम्बनाओं को अभिव्यक्त करने में सफल हुई है।

इसी प्रसंग में 'ज्ञानोदय' जनवरी, 1963 में 'डायरी में कैक्टस' ओम प्रभाकर द्वारा डायरी शैली में यह कहानी लिखी गई है। लेखक ने समाज में व्याप्त विसंगतियों का कैक्टस के प्रतीक के रूप में परंपराओं, रीति-रिवाजों, रूढ़ियों, सुख-दुख जैसे विभिन्न संदर्भों आदि सत्य का उद्घाटन किया है।

ज्ञानोदय, मार्च 1967 में 'डायरी I,II,III' वीरेन्द्र गोहिल ने वैवाहिक जीवन में आयी कड़वेपन की अभिव्यक्ति की है। इस कहानी में विवाह से पहले और विवाह के बाद के प्रेम-संबंधों को मान्यता दी गई है, किंतु पात्रों के मन के उतार-चढ़ाव की स्थिति बनी रहती है। कहानीकार ने डायरी द्वारा बाह्य और भीतर के परिवेश की स्थितियों में मूल्यहीनता का सामाजिक रूप, आधुनिक जीवन की यथार्थता, विडम्बनाओं का विश्वासों के बीच तनाव आदि को प्रतीकों और संकेतों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। इस कहानी में कोई महत्त्वपूर्ण सत्य तो नहीं है किंतु डायरी शैली के माध्यम से डायरी शैली के कथ्य को यथार्थ रूप में चित्रित करने का सफल प्रयास किया गया है।

इसी श्रृंखला में कहानी 'नये कोण से' ले सकते हैं। इस कहानी में लेखिका ने एक ऐसी नारी जीवन की कथा को वर्णित किया है, जो स्पष्टवादी है। यह एक वर्णनात्मक कहानी है, जो छोटी होते हुए भी डायरी शैली के कारण अनावश्यक विस्तार को महत्त्व देती है।

कहानी लेखकों ने सामान्यतः डायरी शैली का आंशिक प्रयोग किया है, किंतु इस विधा का पूरा-पूरा प्रयोग जिन कहानियों में मिलता है, उसमें 'एक सेन्टीमेन्टल डायरी की मौत' जो कि सुधा अरोड़ा द्वारा लिखी हुई है, और 'अविवाहित पृष्ठ' प्रमुख हैं। आज आधुनिक युग में समाज में जाति-व्यवस्था के कारण बढ़ता हुआ आडम्बर, नितांत अकेलापन, घुटन एवं बौद्धिकता आदि मनः स्थितियों की अभिव्यक्ति डायरी शैली के माध्यम से निःसंकोच होती है। इस विधा के माध्यम से

भाव प्रधान कहानियाँ अधिक लिखी गई, जिसमें पात्रों का अकेलापन, उनका अंतर्द्वन्द्व, असफल प्रेम, जीवन की विसंगतियाँ और आधुनिक जीवन के आडंबर आदि भिन्न-भिन्न स्थितियों का चित्रण अत्यन्त सहज एवं स्पष्ट रूप से किया गया है। उससे कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ये कहानियाँ जो डायरी शैली में लिखी गयीं उनमें पात्रों की नितांत निजता को अभिव्यक्त किया गया है। आज आधुनिक परिवेश में कहानीकारों ने डायरी शैली को अपनाने का सफल प्रयास कर दिखालाया है।

भारत में यात्राओं की एक सहज परंपरा रही है। यात्रा साहित्य में मुख्यतः प्राकृतिक, दार्शनिक और मनोरंजक मूलक दृष्टि का होना ज़रूरी है। यात्रा वृत्तान्त संबंधी जो कहानियाँ हैं वह स्पष्ट करती हैं कि मनुष्य चेतनशील तो है, मगर उसे विश्राम नहीं मिल पाता है। 'अज्ञेय' ने यात्रा को मानव जीवन के परम अनिवार्य दर्शन के रूप में देखा है—“देवता जहाँ मन्दिर में रुके कि शिला हो गये, और प्राण संचार की पहली शर्त है गति, गति, गति!”¹²⁵ उल्लास की भावना से प्रेरित होकर यात्रा करने वाले यायावर एक तरह से साहित्य मनोवृत्ति के माने जा सकते हैं और उस स्वच्छन्द अभिव्यक्ति को यात्रा साहित्य कहा जा सकता है।

यात्रावृत्तान्त प्रायः डायरी शैली में लिखे जाते हैं क्योंकि यात्राओं के वर्णन में डायरी शैली का प्रयोग यथा संभव होता है, क्योंकि यात्रा अनुभवों की अभिव्यक्ति सहज, सरल और अनौपचारिक बनाने के लिए सबसे सुगम विधा डायरी शैली ही है। डॉ० रामचन्द्र तिवारी का मानना है कि—“अपनी यात्रा के दौरान साहित्यकारों ने अपने अनुभवों को जिन विधाओं के माध्यम से लिपिबद्ध किया है, उसमें डायरी शैली का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है।”¹²⁶

वास्तव में यात्रा साहित्य एक स्वतंत्र विधा है और डायरी शैली से इसका सहज और स्वाभाविक संबंध है। डायरी और यात्रा साहित्य में बस इतना अंतर है कि यात्रा साहित्य में लेखक अपने को केंद्र में रखते हुए भी प्रकृति का प्रमुख नहीं होने देता। वह अपने को इतना उभारता है जितने से अन्य विषय की प्रमुखता गौण न हो, किंतु डायरी लेखन में लेखक अपनी निजता को अधिक उभारता है और यात्रा साहित्य में निजता यात्रा के विवरण क्रम का अंग होती है। यही डायरी

और यात्रा साहित्य में अंतर है। फिर भी दोनों का एक दूसरे से बहुत गहरा संबंध है।

रचनाकार भावुक और संवेदनशील प्राणी होता है। उसमें हृदय तंत्र कोमल और सहज होते हैं, जब वह यायावर की भाँति यात्रा पथ पर निकलता है तो उद्दाम, आकांक्षाओं, इच्छाओं की सीमा का अतिक्रमण कर देने का माप लिए रहता है। जीवन की जटिलताओं को छोड़कर आकाश के उन्मुक्तता को स्पर्श करने की ललक लिए रहता है। विश्वस्तरीय रचनाकारों ने भी यात्रा संबंधी डायरियाँ लिखी हैं। 'मानसरोवर यात्रा वृत्तांत' हिंदी साहित्य की प्रथम डायरी के अंतर्गत मानी गई है। साहित्य में यात्रा संबंधी डायरियाँ कम नहीं हैं। हिंदी की डायरियाँ मुख्यतः यात्रा के कारण ही संभव हुई हैं। यात्राओं में सामान्यतः व्यक्ति अकेला होता है और इसलिए वह स्वतः ही आत्मकेंद्रित हो जाता है। डायरी में जिस नितांत अंतरंगता और आत्मीयता की आवश्यकता होती है वह यात्रा ही प्रदान करती है।

यात्रा में दैनिक अनुभवों का एक लिपिबद्ध संकलन होता है। इसलिए एक तरह से यह डायरी के समान ही माना जाना चाहिए। हिंदी साहित्य के अंतर्गत हिंदी के अधिकांश साहित्यकारों ने अपनी यात्रा संबंधी डायरियाँ लिखीं। उदाहरण के लिए—'रामेश्वर यात्रा', 'बदरिकाश्रम यात्रा'—देवी प्रसाद खत्री, 1893, 'मेरी कैलाश यात्रा' और 'मान सरोवर यात्रा की डायरी'—स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, 1914, 'उत्तराखण्ड के पथ पर'—प्रोफेसर मनोरंजन, 1936, 'रोमांचक रूस में'—डॉ० सत्यनारायण, 1939, 'ईराक की यात्रा'—पं० कन्हैया लाल मिश्र, 1940, 'सुदूर—दक्षिण पूर्व'—सेठ गोविन्द दास, 1951, 'दिल्ली से मास्को'—महेश प्रसाद श्री वास्तव, 1951, 'पैरों में पंख बाँधकर', और 'उड़ते चलो, उड़ते चलो'—रामवृक्ष बेनीपुरी, 1952, 1954, 'माओ के देश में'—राम आसेर, 1952, 'बदलते दृश्य'—राजबल्लभ ओझा 1954, 'लद्दाख यात्रा की डायरी'—कर्नल सज्जन सिंह, 1955, 'हालैण्ड में 25 दिन'—रामकृष्ण रघुनाथ खाडिलकर, 1956, 'नन्दन से लन्दन'—ब्रजकिशोर नारायण, 1957, 'ज्ञान की खोज में'—डा० जगदीश शरण शर्मा, 1957, 'सागर की लहरों पर'—भगवत शरण उपाध्याय, 1959, 'सैलानी की डायरी'—राजेन्द्र

अवस्थी, 1977, 'हरी घाटी'—डा० रघुवंश, 1961 'आस्ट्रेलिया की डायरी'— विश्वनाथ शुक्ल 1979 आदि कृतियाँ उल्लेखनीय हैं।

लेखक यात्रा वृत्तान्तों में डायरी शैली को माध्यम के रूप में अपनाकर अपनी गहन अनुभूतियों का वर्णन नितांत तटस्थ भाव से करता है। उस समय लेखक वाह्य का नहीं अंतर का विवेचन प्रस्तुत करता हुआ चलता है। इसलिए इस शैली के प्रयोग के कारण यथार्थ का सजीव चित्रण होता है। मूलतत्त्व के रूप में डायरी शैली में लिखे गए यात्रा वृत्तान्तों में लेखक की आत्मानुभूति एवं अन्तः प्रकाशन ही निहित रहता है।

'मानसरोवर यात्रा की डायरी' में लेखक सत्यदेव परिव्राजक ने अपने वैयक्तिकता के आधार पर भावना को लिपिबद्ध करते हुए प्रकृति का अनूठा चित्रण प्रस्तुत किया है। सुदूर दक्षिण पूर्व यात्रा के दौरान प्राकृतिक सौंदर्य रूपी दृश्य एवं उनका विधान आदि का वर्णन डायरी शैली में किया गया है।

इस कड़ी में रोम से लंदन तक की यात्रा 'पैरों में पंख बाँधकर', 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' के वृत्तान्तों का वर्णन करने वाले श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने जिस प्रकार से घटनाओं और यात्रा-दृश्यों का वर्णन कर दिखाया है। उसमें स्पष्टता, सरलता, सहजता, साथ ही साथ प्रकृति के प्रति एक लगाव सा प्रतीत होता है। इन डायरियों में कुछ नितांत वैयक्तिक अनुभूति कुछ मुखर आत्माभिव्यक्ति और कुछ यात्रा में आए मोहक दृश्य, क्षण, रमणीय, प्राकृतिक स्थलों के वर्णन से संबंधित हैं। डायरियों में कुछ एक डायरियाँ ऐसी भी हैं जो नितांत साहित्यिक और वैचारिक धरातल को स्पर्श करते हुए चलती हैं। यद्यपि यात्रा-प्रसंग होने के कारण डायरियों का आकार अपेक्षाकृत बड़ा है, फिर भी विभिन्न देशों के जीवन संदर्भों, सभ्यता और संस्कृति चित्रण का चित्रण बड़े रोचक शैली में वर्णित है। समाज और साहित्य की नई व्याख्याएँ, परंपरा, सोच और आधुनिकता के मध्य पनपते द्वंद्व भी इन डायरियों में वर्णित हैं। गहन अनुभूतियों की यह कृतियाँ एक ओर जहाँ लेखक के विचारों को अभिव्यक्त करने वाली हैं, वहीं दूसरी ओर लेखक के वाह्य और आंतरिक यात्रा को भी प्रस्तुत करती हुई चलती हैं। वर्णन नितांत तटस्थ भाव से है।

‘लद्दाख यात्रा की डायरी’ में लेखक कर्नल सज्जन सिंह ने लद्दाख की पहाड़ियों का चित्रण और उस पर आरोहण की स्थितियों का वर्णन और प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन बड़े ही मनोहारी और प्रभावशाली रूप से किया है।

‘हरी घाटी’ में डा० रघुवंश ने 1961 में राजस्थान के कुछ भाग और बिहार के हजारी बाग की यात्रा का वर्णन किया है। डा० रघुवंश लेखक होने के साथ-साथ एक आलोचक भी हैं। इसलिए उनकी कृतियों में उनके इस आलोचक व्यक्तित्व की छाप देखने को मिलती है। हरी घाटी में लेखक ने मानवीय सौंदर्य और उसकी कोमल भावनाओं को बड़े ही सहज और प्रभावी ढंग से अभिव्यक्ति दी है। डा० रघुवंश इसके संबंध में लिखते हैं—“यह वैयक्तिक तथा घनिष्ट प्रकार का लेखन दूसरों के सामने ‘हरी घाटी’ के रूप में प्रस्तुत करना होगा, ऐसा कभी सोचा न था। ‘हरी घाटी’ के बारे में आज भी मेरे मन में संकोच है कि यह सब जो मेरा अपना व्यक्तित्व है दूसरों के लिए क्यों महत्वपूर्ण व सार्थक है। आज से बाहर वर्ष पूर्व के अपने जीवन के प्रति मैं तटस्थ हूँ। इसमें जो व्यक्त है वह सब उन्हीं क्षणों का है और उसी मनः स्थिति में लिखा गया है।”¹²⁷

यह डायरी अपने भिन्न-भिन्न शीर्षकों में जैसे कि ‘प्रतिक्षा और उल्लास’, ‘विश्राम और विस्मरण’, ‘पहली मंजिल’, ‘प्रवेश और अन्वेषण’, ‘अपरिचितों की ममता’, ‘आत्मसाक्षात्कार’, ‘घाटी का साक्षात्कार’, ‘घिरते-घुमड़ते बादलों के बीच’, ‘स्तब्ध रात के ध्वनियों के बीच’, ‘परिचय की सीमा रेखायें’, ‘आत्मथन’, ‘बीते क्षणों की घाटी से विदा’ आदि शीर्षकों में कहीं प्राकृतिक सौंदर्य के प्रति आकर्षण, कहीं मानवीय मनोविज्ञान का गहन और सूक्ष्म चित्र को और कहीं आत्मान्वेषक को निरूपित किया गया है। यह कृति उन यात्रा प्रसंगों का संग्रह है, जो भिन्न-भिन्न तिथियों के उल्लेख के साथ प्रारंभ हुई है—“मेरा रिजर्वेशन आठ जून का हुआ है, और आज वह दिन आ गया।”¹²⁸ इसके अलावा डा० रघुवंश ने कहीं-कहीं पर बिना तारीख के ही अपने अनुभव को लिख दिया है—“प्रातः आँख खुली देखता हूँ कमरे में हल्का प्रकाश है, खिड़की के बाहर, प्रकाश में उभरती हुई हरियाली के अतिरिक्त कुछ अन्दाज लगा पाना संभव नहीं है।”¹²⁹ डा० रघुवंश ने अपने अनुभवों के विभिन्न पहलुओं का उद्घाटन अपने यात्रा-वर्णन के क्रमों में भली-भाँति किया

है—“मैं विचार प्रभाव में बहता जा रहा हूँ। कभी आँखें खोल लेता हूँ, और कंपार्टमेन्ट के धूमिल प्रकाश के रहस्य के बीच अपने को पाता हूँ। मैं अनुभव करता हूँ, जैसे मेरा यह सारा प्रवास किसी रहस्य लोक में बीतेगा और यह उसी की भूमिका है। विविध गन्धे विचित्र रूपाकार और गहन संवेदनाएँ जैसे घेरने लगती हैं। यह सब मोहक है, पर यह मेरे अस्तित्व को भुला देने वाली है। एक बार लगता है कि कोई सतर्क कर रहा है। इस मोह में डूबने से पहले मुझे अपने-आप को उबार लेना ही है।”¹³⁰ इससे उनकी मननशीलता, चिंतनशीलता और उनका व्यक्तित्व हमारे सामने उभर कर आता है। यह एक ही साथ संस्मरण, यात्रा-वृत्तान्त, डायरी आदि विधाओं को अपने में समेटे हुये है, इसका अधिकांशतः भाग डायरी के रूप में लिखा गया, और शेष अंश उन्हीं दिनों संस्मरण के रूप में लिखा गया, वस्तुतः दोनों की शैली में कोई अंतर नहीं है, परन्तु इसकी आत्मा मूलतः डायरी ही है।

इसी कड़ी में भगवती शरण उपाध्याय की ‘सागर की लहरों पर’ डायरी है, जिसमें लेखक ने अपनी यात्रा के दौरान यात्रियों के मन में हो रहे उस उल्लास का वर्णन किया है, जो जहाज के भूमि तट के करीब पहुँचने पर उत्पन्न होता है।

यात्रा वृत्तान्त के संदर्भ में जितनी विस्तृत सामग्री राजेन्द्र अवस्थी ने डायरी विधा को प्रदान की है, वह अन्यत्र संभव नहीं हो सकती। इन डायरियों में कुछ नितांत वैयक्तिक अनुभूति कुछ मुखर आत्माभिव्यक्ति और कुछ यात्रा में आए मोहक दृश्य, क्षण, रमणीय, प्राकृतिक स्थलों के वर्णन से संबंधित हैं। सन् 1977 में प्रकाशित सैलानी की डायरी में राजेन्द्र अवस्थी ने अपनी यूरोपीय यात्रा का वर्णन प्रस्तुत करते हुए आधुनिक सभ्यता के रंग में रंगी यूरोपीय संस्कृति का चित्र पन्नों में अंकित करने का प्रयास किया है। उन्होंने स्वीडन, पश्चिमी जर्मनी, स्विट्जरलैंड, फ्रांस, पूर्वी बर्लिन, नार्वे, बेलजियम आदि देशों से संबंधित कृति तिथिक्रम में लिखी है।

यात्रा-वृत्तान्तों की जो रचनाएँ होती हैं वो लेखक के निजीपन, मानसिक हलचल, रुचि-अरुचि, उदासी इत्यादि को अभिव्यक्त करती है। कई एक रचनाओं में जीवन के अच्छे बुरे अनुभवों की गहरी अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है कि पाठक

के हृदय की मार्मिकता को भी अपने साथ आत्मसात कर लेती है। इन सभी रचनाओं में कहीं कविता का, कहीं कथा का, कहीं जिंदगी की आत्मबीती कहानी, कहीं प्रकृति का सौंदर्य, कहीं आँसू, कहीं खिलखिलाती आवाज़ें, कहीं आक्रोश इत्यादि भावनाओं के स्वर मिलते हैं। यात्रा करना तो एक बहाना है। सच्चाई तो ये है कि इसके माध्यम से कृतिकार का लेखन अपने जीवन के अच्छे-बुरे अनुभव, अपनी अनुभूतियाँ और आस-पास से संबंधित वातावरण का औपचारिक रूप से तथा अप्रत्यक्ष रूप से वर्णन करता है।

इस प्रकार यात्रा के संदर्भ में ये बात पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है कि उसमें एक तरह तो आत्मीयता का एहसास हो जाता है, और दूसरी ओर लेखक के व्यक्तित्व के दर्शन भी होते हैं। डायरी विधा कथ्य और शिल्प दोनों स्तरों पर विश्वसनीयता प्रदान करती है। यात्रा वृत्तान्त का लेखक नीरसता से बचने के लिए तथा पाठक के मन में कौतुहल पैदा करने के लिए रोचक घटनाओं का उल्लेख करता हुआ चलता है। सामान्यतः यात्रा संबंधी डायरियों के अतिरिक्त पत्र-पत्रिकाओं में भी कभी-कभी यात्रा से संबंधित फुटकर विवरण प्रकाशित होते रहते हैं। इस प्रकार यात्रावृत्तांत डायरियाँ हिंदी जगत में दृष्टिगत होती हैं, जो निरंतर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही हैं।

आत्मकथा लिखने की प्रथा यद्यपि नई है पर इसका थोड़ा बहुत लिखने का प्रयास आरंभ से ही चला आ रहा है। साहित्य में आत्मकथा एक ऐसी विधा है जिसे हर हाल में जीवन-वास्तव के अधीन रहना होता है।

पंकज चतुर्वेदी 'आत्मकथा की संस्कृति' में लिखते हैं—“हिन्दी में आत्मकथा और जीवन-लेखन की दुर्दशा का मुख्य कारण यहाँ व्यक्तिगत जीवन की सचाई कहने का साहस का और सहने की आदत का अभाव भी है।”¹³¹ चूँकि आत्मकथा एक ऐसी विधा है, जो न सिर्फ सत्य बात कहने की माँग करती है, बल्कि उसका संस्कार भी देती है।

आत्मकथा लिखने की भी अनेक शैलियाँ होती हैं, लेकिन डायरी शैली में लिखी आत्मकथा 'मेरी जीवन यात्रा' 'राहुल सांकृत्यायन' की मिलती है जो सन् 1946 में प्रकाशित हुई। इस आत्मकथा में डायरी शैली की काफी सहायता ली गई

है। प्रत्येक आत्मकथा के लेखक का उद्देश्य आत्मविश्लेषण, आत्मनिरीक्षण एवं आत्म-विवेचन के साथ बाह्य विश्व के साथ अपने संबंध को रेखांकित करना है। ऐसे ही इस आत्मकथा में लेखक ने भी अपनी जीवन यात्रा लिखने के उद्देश्य को प्रारंभ में ही व्यक्त कर दिया है—“मेरी जीवन यात्रा” मैंने क्यों लिखी, मैं बराबर इसे महसूस करता रहा कि ऐसे ही रास्तों से गुजरे हुए दूसरे मुसाफिर यदि अपनी जीवन यात्रा को लिख गए होते तो मेरा बहुत लाभ हुआ होता ज्ञान के ख्याल से ही नहीं, समय के परिमाण में भी। मैं मानता हूँ कि दो जीवन यात्राएँ बिल्कुल एक-सी नहीं हो सकतीं, तो भी इसमें सन्देह नहीं कि सभी जीवनों को उसी आन्तरिक बाह्य विश्व की तरंगों में पड़ता है।”¹³²

लेखक के इस वक्तव्य से स्पष्ट है कि प्रत्येक मनुष्य को जीवन में संघर्षों का सामना करना पड़ता है। उन्हीं संघर्षों के अध्ययन से और अन्य व्यक्तियों को भी प्रोत्साहन मिल सकता है। यह आत्मकथा हिंदी साहित्य की अत्यन्त एवं महत्त्वपूर्ण अधिकतम डायरी शैली में लिखित है जो पाँच खंडों में लिखी गई है। इसमें जिंदगी के साथ-साथ अपने समय और समाज की कथा भी कही गई है।

अमृता प्रीतम ने भी अपनी आत्मकथा “रसीदी टिकट”¹³³ में डायरी शैली का प्रयोग किया है। स्पष्ट है कि डायरी शैली में भी आत्मकथा लिखी गई हैं।

इसी शैली में संस्मरण, रिपोर्ताज, व्यंग्य और निबंध भी मिलते हैं। सन् 1951 में राहुल सांकृत्यायन की ‘यात्रा के पन्ने’ संस्मरणात्मक पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुई। यह संस्मरणात्मक पुस्तक डायरी शैली में लिखी हुई है। इस रचना में लेखक ने तिब्बत यात्रा का वर्णन किया है। यह चार भागों में बाँटी गई है— तिब्बत में, अज्ञात तिब्बत, प्रवास पत्र और राजस्थान बिहार। डॉ० शान्ति खन्ना बताती हैं कि प्रत्येक स्थान व घटना का वर्णन तिथि के साथ किया गया है—“२६ जुलाई को भोजन करके 6 बजे चले। शलू से शिगर्चे जाने में तीन छोटी-छोटी नदियाँ पड़ती हैं। पानी नहीं बरसा था इसलिए हमें उनके पार करने में कोई दिक्कत नहीं हुई और दोपहर को शिगर्चे पहुँच गए।”¹³⁴

इस प्रकार इस संस्मरणात्मक पुस्तक में डायरी शैली का यथासंभव प्रयोग हुआ है।

रिपोर्ताज भी इस शैली में मिलते हैं— अमृतलाल नागर का रिपोर्ताज 'गदर के फूल' '1959' और जगदीश चन्द्र जैन का 'पैकिंग की डायरी' इसी शैली में लिखित है।

कुछ व्यंग्य भी इस शैली में लिखे गए हैं—'मिनिस्टर की डायरी'—डॉ० सत्य प्रकाश, 'निठल्ले की डायरी'—हरिशंकर परसाई, 1969 और 'निजी सचिव की डायरी'— डॉ० बरसाने लाल चतुर्वेदी के व्यंग्य इसी शैली में हैं। साथ ही 'यायावर की डायरी' निबंध इसी शैली का लेखन है।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गद्य की विविध विधाओं में डायरी शैली का प्रयोग मिलता है।

आज गद्य की विधाओं में कई नई—नई शैलियाँ लेखन का माध्यम बन रही हैं। जिनमें से डायरी शैली प्रमुख रूप से सफल एवं सहज भूमिका निभाकर लेखकों द्वारा स्वीकार की जा रही है। इससे कथा की वस्तुनिष्ठता को सरलता तो मिलती ही है, साथ ही साथ पात्रों के आंतरिक एवं वाह्य जीवन में घट रहे सार्थक और असार्थक संघर्ष को स्वाभाविकता के साथ विश्वसनीयता मिलती है, जो पात्रों के चरित्र को प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त करती है। उपन्यास, कहानी, यात्रा वृत्तान्त, संस्मरण, रिपोर्ताज, आत्मकथा, निबंध, या फिर व्यंग्य हो डायरी शैली के प्रयोग के कारण उसमें कौतुहल एवं रंजकता और आत्मीयता की वृद्धि होती है। गद्य की सामान्यतः सभी विधाओं में डायरी विद्या के साथ शैली भी महत्त्वपूर्ण है।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि डायरी एक स्वतंत्र गद्य—विधा है साथ—साथ वह शैली के रूप में अन्य विधाओं में व्याप्त होने की सामर्थ्य भी रखती है। इस तरह से डायरी का साहित्यिक विधा में अपना अलग स्वतंत्र महत्त्व है, जो सवर्था महत्त्वपूर्ण है। अब डायरियाँ स्वतंत्र रूप से लिखी जाने लगी हैं। कई ऐसी पत्रिकाएँ हैं जिनमें डायरी स्वतंत्र रूप से छप रही है एक निरंतरता के साथ। साहित्य की अन्य विधाओं की भाँति डायरी भी साहित्य में अपना स्थान बना चुकी है।

संदर्भ

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० 306
2. डॉ० माजदा असद, गद्य के विविध रूप, पृ० 21
3. वही, पृ० 21
4. डॉ० हरवंशलाल शर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (चतुर्दश भाग), पृ० 526
5. रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर की डायरी, भूमिका से
6. अजित कुमार (संपादक), बच्चन रचनावली, (खंड-आठ) (प्रवास की डायरी), पृ० 217
7. डॉ० रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, पृ० 396
8. डॉ० बलभीमराज गोरे, हिन्दी भाषा, लिपि व साहित्य, पृ० 151
9. डॉ० हरिमोहन, साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार, पृ० 259
10. डॉ० शशिभूषण सिंघल, साहित्य-विधाएँ, पृ० 178
11. डॉ० शान्ति खन्ना, आधुनिक हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य, पृ० 19
12. अरुण प्रकाश, गद्य की पहचान, पृ० 140-141
13. रामप्रसाद त्रिपाठी (संपादक), हिंदी विश्वकोश, (खंड-पाँच), पृ० 226
14. धीरेन्द्र वर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य कोश, (खंड-एक), पृ० 314
15. "The Dairy however reflective, it may be moves through a series of moment in time. The Diarist notes down what at that moment seems of importance to him, its ultimate long range significance cannot be assessed." **Roy-Pascal, Design and truth in Autobiography, P. 3**
16. "A Dairy is only a day today record of an individual's activities by the individual. It may be valuable as a record of certain details; it may have certain artistic elements in it." **Dr. D.G. Naik, Art of Autobiography, p. 40**
17. "Dairy: Daily Allowance, dies, day. A Daily record of events, transactions, thought etc. exp. Once involving the writer. A book in

- which to keep such a record use having dates printed in it, a book or calander with daily memoranda, esp. for people with a particular interest. A person's list of forth coming engagements." **The new shorter Oxford English Dictionary, (Vol.I), p. 675**
18. "A Daily record of events or transactions, a journal; specifically, a daily record of matters affecting the writer personally, or which come under his personal observation." **J.A. Simpson and E.S. Cweiner, The Oxford English Dictionary, (Vol. IV), p. 612**
19. "A Book prepared for keeping a dialy record, or having spaces with printed dates for daily memoranda and jottings; also, applied to calendars containing daily memoranda on matters of importance to people generally, or to members of a particular profession, occupation, or pursuit." वही, पृ० 612
20. "Dairy: form of autobiographical writing, a regularity kept record of the dairist's activities and reflections, written primarily for the writer's use alone, the dairy has a frankness that is unlike writting done for publication. Its ancient lineage is indicated by the existence of the term in Latin, diarium itself derived from dies ('day')." **Robert P. Gwinn, The New Encyclopaedica Britanica, 15th Edition, p. 67**
21. "Diary-daily record of engagements, events or thoughts." **Bashir A. Qureshi-An Educational's New Millennium Advanced 21st Century Dictionary, p. 238**
22. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ० 168
23. प्रो० गोपाल राय, उपन्यास की संरचना, पृ० 306
24. डॉ० सत्येन्द्र, समीक्षा के सिद्धान्त, पृ० 179
25. रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर की डायरी (भूमिका)
26. डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया, साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ, पृ० 25
27. डॉ० हरिमोहन, साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार, पृ० 260
28. डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया, विद्या विविधा, पृ० 62

29. डॉ० माजदा असद, गद्य के विविध रूप, पृ० 22
30. डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया, साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ, पृ० 26
31. डॉ० माजदा असद, गद्य की नई विधाओं का विकास, पृ० 67-68
32. वही, पृ० 68
33. डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया, साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ, पृ० 26
34. डॉ० हरवंशलाल शर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (चतुर्दश भाग) पृ० 524
35. डॉ० बलभीमराज गोरे, हिन्दी भाषा, लिपि व साहित्य, पृ० 151
36. डॉ० हरिमोहन, साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार, पृ० 260
37. वही, पृ० 261
38. वागर्थ (पत्रिका), अगस्त, 2009, पृ० 19
39. डॉ० हरिमोहन, साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार, पृ० 261
40. वही, पृ० 261-262
41. डॉ० माजदा असद, गद्य के विविध रूप, पृ० 23
42. वही, पृ० 262
43. वही, पृ० 262
44. जैनेन्द्र कुमार, साहित्य का श्रेय और प्रेय, पृ० 260
45. मोहन राकेश, मोहन राकेश की डायरी, पृ० 35
46. डॉ० सरला शुक्ल, पाश्चात्य जीवनी कला, पृ० 123
47. रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर की डायरी, पृ० 108
48. हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, साहित्य सहचर, पृ० 3
49. अजित कुमार (संपादक), बच्चन रचनावली, (खंड-आठ) (प्रवास की डायरी), पृ० 513-514
50. वही, पृ० 326
51. गजानन माधव मुक्तिबोध, एक साहित्यिक की डायरी, पृ० 19
52. रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर की डायरी, पृ० 213

53. धीरेन्द्र वर्मा, मेरी कालिज डायरी, पृ0 1
54. अरविन्द त्रिपाठी (संपादक), श्रीकान्त रचनावली, (खंड-दो), (डायरी के कुछ पन्ने), पृ0 466
55. वही, पृ0 397
56. अजित कुमार (संपादक), बच्चन रचनावली, (खंड-आठ) (प्रवास की डायरी), पृ0 513-514
57. वही, पृ0 513
58. अजित कुमार, अंकित होने दो, पृ0 216-217
59. अरविन्द त्रिपाठी (संपादक), श्रीकान्त रचनावली, (खंड-दो), (डायरी के कुछ पन्ने), पृ0 466
60. गजानन माधव मुक्तिबोध, एक साहित्यिक की डायरी, पृ0 5-6
61. वही, पृ0 6-7
62. अरविन्द त्रिपाठी (संपादक), श्रीकान्त रचनावली, (खंड-दो), (डायरी के कुछ पन्ने), पृ0 399
63. मोहन राकेश, मोहन राकेश की डायरी, पृ0 19
64. अरविन्द त्रिपाठी (संपादक), श्रीकान्त रचनावली (खंड-दो), (डायरी के कुछ पन्ने), पृ0 460
65. अजित कुमार (संपादक), बच्चन रचनावली, (खंड-आठ), (प्रवास की डायरी), पृ0 130
66. वही, पृ0 108
67. रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर की डायरी, पृ0 138
68. जैनेन्द्र कुमार, परख, (भूमिका)
69. डॉ0 शशिभूषण सिंघल, साहित्य-विधाएँ, पृ0 17
70. "Literature is a vital record of what men have seen in life, what they have experienced of it, what they have thought and felt about those expects of it which have the most immediate and enduring interest for all of us. It is thus fundamentally an expression of life through the

medium of language.” **William Henry Hudson, An Introduction to the Study of Literature, p.10**

71. वही, पृ० 10
72. प्रेमचन्द, कुछ विचार, पृ० 6
73. डॉ० हरिमोहन, साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार, पृ० 258
74. डॉ० रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, पृ० 305—306
75. डॉ० हरिमोहन, साहित्यिक विधाएँ : पुनर्विचार, पृ० 260
76. डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया, साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ, पृ० 25
77. वही, पृ० 26
78. डॉ० रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, पृ० 306
79. रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर की डायरी (भूमिका)
80. डॉ० हरवंशलाल शर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (चतुर्दश भाग), पृ० 524
81. डॉ० हरवंश लाल शर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास, पृ० 526
82. गोपाल राय, उपन्यास की संरचना, पृ० 306—307
83. जैनेन्द्र कुमार, जयवर्धन, प्रारंभ से
84. गोपाल राय, उपन्यास की संरचना, पृ० 307
85. जैनेन्द्र कुमार, जयवर्धन, पृ० 17
86. डॉ० रामदरश मिश्र (संपादक), जयवर्धन की पहचान, पृ० 22
87. डॉ० प्रेम भटनागर, बदलते परिप्रेक्ष्य, हिन्दी उपन्यास शिल्प, पृ० 46
88. डॉ० गोपाल राय, उपन्यास की संरचना, पृ० 313
89. डॉ० भारत भूषण, हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव, पृ० 231
90. डॉ० देवराज, अजय की डायरी, पृ० 267
91. वही, पृ० 246
92. विशम्भर मानव, पीले गुलाब की आत्मा, पृ० 70

93. वही, पृ० 120
94. बेढब बनारसी, लफटंट पिंगसन की डायरी, पृ 5
95. विवेकीराय, बबूल, पृ० 3
96. श्री लाल शुक्ल, मकान, पृ० 62
97. वही, पृ० 122
98. प्रभाकर माचवे, द्वाभा, पृ० 3
99. वही, पृ० 3
100. वही, पृ० 51
101. वही, पृ० 54
102. आर० सुरेन्द्रन, स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास, पृ० 53
103. अज्ञेय, आत्मनेपद, पृ० 73
104. नेमिचन्द्र जैन, अधूरे साक्षात्कार, पृ० 26
105. भारत भूषण अग्रवाल, हिंदी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव, पृ० 160
106. अज्ञेय, नदी के द्वीप, पृ० 146
107. अज्ञेय, शेखर एक जीवनी (पहला भाग), पृ० 1
108. गोपाल राय, उपन्यास की संरचना, पृ० 325
109. अज्ञेय, अपने अपने अजनबी, पृ० 30-31
110. वही, पृ० 34-35
111. वही, पृ० 9-10
112. वही, पृ० 14
113. डॉ० लाल साहब सिंह, रांगेय राघव और उनके उपन्यास, पृ० 344
114. रांगेय राघव, धरती मेरा घर, पृ० 5
115. वही, पृ० 41
116. वही, पृ० 60
117. वही, पृ० 133
118. अमृतराय, बीज, पृ० 97-98

119. डॉ० देवराज, आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान, पृ० 256
120. सुधा अरोड़ा, बगैर तराशे हुए (कहानी संग्रह) पृ० 30
121. वही, पृ० 68
122. वही, पृ० 46
123. वही, पृ० 33
124. वही, पृ० 80
125. अज्ञेय, अरे यायावर रहेगा याद, पृ० 2
126. डॉ० रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, पृ० 197
127. डॉ० रघुवंश, हरी घाटी, पृ० 7
128. वही, पृ० 29
129. वही, पृ० 117
130. वही, पृ० 42
131. पंकज चतुर्वेदी, आत्मकथा की संस्कृति, पृ० 15
132. डॉ० शान्ति खन्ना, आधुनिक हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य, पृ० 139
133. डॉ० रामचन्द्र तिवारी, हिन्दी का गद्य साहित्य, पृ० 308
134. डॉ० शान्ति खन्ना, आधुनिक हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य, पृ० 215

द्वितीय अध्याय

हिंदी में डायरी साहित्य की परंपरा

द्वितीय अध्याय

हिंदी में डायरी साहित्य की परंपरा

(क) डायरी का उद्भव और विकास

साहित्य में डायरी के उद्भव और विकास के संदर्भ में हमें पाश्चात्य साहित्य पर दृष्टि डालनी होगी, क्योंकि गद्य साहित्य की यह नवीन विधा पश्चिम से आयी है। यद्यपि भारत में मध्यकाल विशेषकर मुगलकाल से डायरी लिखे जाने का पता चलता है। तारीख और तवारीख ये दोनों इतिहास के पर्यायवाची शब्द ही यह स्पष्ट कर देते हैं कि उस युग में जो ऐतिहासिक कृतियाँ होती थीं वह दैनंदिनी विवरण के रूप में प्रस्तुत हुआ करती थीं और अंत में उनका संकलित रूप इतिहास हो जाता था। इतिहासकार प्रायः इसी पद्धति के द्वारा इतिहास प्रस्तुत किया करते थे। संपन्न परिवारों में कहीं-कहीं दैनंदिनी विवरण भी रखे जाते थे। इन दैनंदिनियों में रोज़मर्रा के आय-व्यय का हिसाब-किताब, आवश्यक बातें, किसी विशिष्ट व्यक्ति का आना-जाना, जन्म-मरण और विवाह आदि संस्कार एवं सामाजिक संबंधों की चर्चा आदि महत्वपूर्ण बातें लिखी रहती थीं। उपयोगी विधा के रूप में इसका स्वतंत्र विकास नहीं हो पाया था। इसका महत्वपूर्ण कारण है कि डायरियाँ प्रकाशित करने के उद्देश्य से नहीं लिखी जाती थीं।

‘हिन्दी विश्व कोश’ में डायरी के विकास के संदर्भ में इस प्रकार वर्णित है कि—“लेखों और तथ्यों के संरक्षण का प्रचार यद्यपि भारतवर्ष में भी पूर्वमध्यकाल से ही मिलने लगता है, तथापि डायरी लेखन का वास्तविक आरंभ और विकास पश्चिम से ही हुआ। पाश्चात्य देशों में प्राचीन काल से ही डायरियाँ लिखने का पता चलता है, किंतु परिवार के मुख्य सदस्य स्वयं यह कार्य नहीं करते थे। यह कार्य किसी सेवक या दास को सौंपा जाता था। आय व्यय के हिसाब के अतिरिक्त डायरी में पारिवारिक घटनाओं का अंकन भी हुआ करता था। आगे चलकर डायरी का लेखन बहुत कुछ व्यक्तिगत रूप ग्रहण करने लगा।

साहित्यिक मूल्यों से युक्त डायरियाँ ‘रेनेसाँ’ काल के बाद लिखी जाने लगी थी, किंतु रेनेसाँ-पूर्व-युगों में, स्मरण रखने के उद्देश्य से, जो टिप्पणियाँ, संस्मरण,

भाषणों के सारसंक्षेप, पारिवारिक विवरण आदि लिखित रूप में रखे जाते थे उन सबके लिए प्रचलित अभिधान 'कमेंटराई' था। सीजर के फ्रांसीसी अभियान तथा अन्य युद्धों के विवरण-शासन के विभिन्न विभागों के विवरण आदि के लिए भी 'कमेंटरी' शब्द ही प्रयुक्त होता था और ऐसे विवरण प्रस्तुत करने वाले कर्मचारी 'कमेंटराइज' कहे जाते थे। इसी प्रकार सम्राट के राजकाल का लेखा रखने वाली पंजिका को 'कमेंटराई प्रिंसिपिस', न्याय विभाग की दैनंदिनी को 'कमेंटराई ड्यूनी' और राजा के अधिकारों तथा कर्तव्यों का एवं धर्माध्यक्ष के रूप में किए गए उसके कार्यों का लेखा रखने वाली पंजिका को 'कमेंटराई रेगम' कहते थे।¹

अंग्रेजी साहित्य के इतिहास को देखें तो इस बात के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं कि डायरियों की रचना 17वीं सदी के अंतिम चरण में ही हो चुकी थी। 'हिस्ट्री ऑफ इंग्लिश लिटरेचर' में इस बात का स्पष्ट संकेत है। अंग्रेजी में विधा के रूप में इसका सर्वप्रथम प्रयोग 'इसाक कसौबानन'(सन् 1559-1614) ने किया था। "डायरी ऑफ एन्ने फ्रेंक' फ्रेंक की 12-13 वर्ष की अवस्था में लिखी गई डायरी है।² यह वर्तमान सदी की सबसे प्रसिद्ध डायरी है, जो कि यहूदी बालिका ने लिखी थी। इस डायरी में छोटी-छोटी घरेलू बातों से लेकर नाजियो के आक्रमण का विस्तृत वर्णन है। बालिका 'एन फ्रेंक' ने अपने जीवन की मानसिक यातनाओं को अपने डायरी के पन्नों में चुपचाप लिखा है। अन्त में एक दिन वही हुआ जिसका भय था। नाजियो को किसी प्रकार इस छिपे परिवार का पता चल गया और उन लोगों ने माता और बहनों के साथ एनी की हत्या कर दी। युद्ध के पश्चात् एन फ्रेंक के पिता (आटो फ्रेंक) को अपने परिवार के अवशेषों को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते अपनी पुत्री एन फ्रेंक के द्वारा लिखी डायरी उनके हाथ लग गई। यह डायरी इतनी प्रसिद्धि पा गई कि अब तक के समय में इस डायरी के लगभग तीन लाख के करीब प्रतियाँ बिक चुकी हैं। हिटलर के अमानवीय अत्याचारों का सहज विवरण इस डायरी में उपलब्ध है।

अंग्रेजी साहित्य में 'लुई और कज़ानिया' ने जिन प्राचीन डायरियों का उल्लेख किया है उनकी रचना सत्रहवीं सदी के अन्तिम दशक में हो चुकी थी। जैसे-“फ्रांसीसी भाषा में ग्रेमॉट के मेमायर्स (रचनाकाल सन् 1701 और प्रकाशन काल 1713) सर जॉन् रेर्सवी के मेमायर्स (प्रकाशन काल 1734) लेडी वारविल की

डायरी (रचनाकाल सन् 1666-72, प्रकाशन काल 1848) और लेडी फैनेशा के मेमायर्स (प्रकाशन काल सन् 1829) इत्यादि कतिपय ऐसी रचनाएँ हैं।³ इनमें कई अपवादों के साथ डायरी के स्पष्ट सूत्र मिलते हैं। लेकिन इन रचनाओं में औपचारिक बाधाओं से मुक्त होकर तेज़ी से बदलते हुए जीवन अथवा घटना प्रवाह की कथा कहना या किसी युग की विभिन्न परिवर्तनशील प्रवृत्तियों को लिपिबद्ध करने की चेष्टा इस सृजनात्मकता की प्रेरक है।

अंग्रेज़ी साहित्य में जब डायरी पर विचार होगा तो निश्चय ही इवलिन और पेपिस का उल्लेख अवश्य होगा। इवलिन और पेपिस की कृतियों में डायरी विधा के गुण धर्मों का स्पष्ट स्वरूप दृष्टिमान हुआ है। 'इवलिन की डायरी' (1641-1706) में उनके जीवन की प्रारंभिक घटनाओं से लेकर मृत्युपर्यन्त तक की घटनाओं का विस्तृत विवरण है। इस डायरी का प्रकाशन काल 1818 ई० है।

"इवलिन की डायरी में व्यौरेवार तथ्यात्मक वर्णन अत्यन्त रोचक ढंग से प्रस्तुत किया गया है। यह डायरी सत्रहवीं शताब्दी के मध्य भाग के इटली, फ्राँस और इंग्लैण्ड के संबंध में और स्टुअर्ट शासकों के अन्तिम राजाओं के जीवन काल में उनकी जीवन पद्धति की जानकारी प्राप्त करने के लिए एक लक्ष्यात्मक आधार प्रदान करती है।"⁴ इस कृति को पढ़ने से ज्ञात होता है कि इसकी शैली सहज, अकृत्रिम, तथ्यपूर्ण तथा विशद् चिंतनयुक्त है।

सेमुअल पेपिस की डायरी में उनके जीवन के विविध रहस्यों का उद्घाटन हुआ है। जो कि उनके मृत्यु वर्ष 1704 ई० के पश्चात् प्रकाशित हुई। 'हिस्ट्री ऑफ इंग्लिश लिटरेचर' में इस डायरी के संदर्भ में उल्लेखित है—“पेपिस एक अनोखे शौक के लेखक हैं। साहित्य में कोई भी इतनी ईमानदारी से स्वीकार नहीं करता जबकि इसका प्रकाशन नहीं किया जाना है और न ही इसको तोड़ा मरोड़ा जा सकता है, इसका आशय तो केवल निजी पसन्दों को ज़िन्दा रखने और जीने के लिए दुबारा रोज़ाना जीवन के क्षणों को दोहराना है।”⁵ सेमुअल पेपिस की डायरी को एक निष्ठापूर्ण आत्मस्वीकृति की दृष्टि से अतुलनीय माना जा सकता है क्योंकि यह डायरी प्रकाशित करने के उद्देश्य से नहीं लिखी गई। इस डायरी में किसी नैतिक संकोच अथवा आत्मदर्शीकरण से मुक्त एवं असंपृक्त भाव से जीवन के तथ्यों का

संकलन किया गया है। इसमें यथार्थ के प्रति अतिशय आग्रह है। समकालीन घटनाओं और प्रवृत्तियों के निरूपण, जीवन आत्मीयता और स्वतः स्फूर्ति अकृत्रिम भाषा से मुक्त होने के कारण डायरी विधा के समस्त मूल उपादान इन रचनाओं में स्पष्ट रूप से मिलते हैं।

इस प्रकार प्राप्त सूत्रों के आधार पर यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट हो जाती है कि डायरी विधा को कला के रूप में प्रतिष्ठापित सेमुअल पेपिस ने (1633-1703 ई०) किया। सेमुअल पेपिस लंदन निवासी एक क्लर्क था। पेपिस का डायरी लेखन स्वान्तः सुखाय था उसकी मृत्यु के लगभग 100 साल बाद उसकी डायरी प्रकाशित हुई; तब से आज तक इसकी गणना अत्यन्त लोकप्रिय पुस्तकों में होती है। इस कृति को पढ़ने पर कोई भी व्यक्ति चार्ल्स द्वितीय के समय के लंदन की सामाजिक व्यवस्था का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। वास्तव में पेपिस ने अपनी डायरी में अपनी मजबूरियों का लेखांकन जिस ढंग से किया है वह सामान्य मानव की अनुभूतियों का दर्पण सा लगता है। पेपिस को वास्तव में डायरी सम्राट कहा जाता है।

कवि, लेखककार और डायरीकार बच्चन का भी सेमुअल पेपिस के संदर्भ में कुछ इसी प्रकार का कहना है कि—“अंग्रेजी में सबसे प्रसिद्ध और पुरानी डायरी सेमुअल पेपिस की मानी जाती है जो सत्रहवीं सदी के मध्य लिखी गई थी। निश्चय ही यह विश्व के डायरी साहित्य में अद्वितीय है। सेमुअल पेपिस उच्च नौ सेना अधिकारी थे, उन्होंने नौ सेना के संबंध में एक पुस्तक भी प्रकाशित की थी, जिसे आज शायद ही कोई जानता हो; पर डायरी उन्होंने नितान्त निजी अभिव्यक्ति के लिए लिखी थी—शार्ट हैंड में। डेढ़ सौ वर्षों तक यह डायरी माडलिन कॉलेज, केम्ब्रिज में सेमुअल पेपिस के कागजों में दबी पड़ी रही। बाद में शोधकों और विद्वानों की तीन पीढ़ियों ने सत्तर पचहत्तर वर्ष के परिश्रम से इस शार्ट हैंड के पोथे को पढ़ा और उसे उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में प्रकाशित किया। इसी से आज उनकी प्रसिद्धि है और वे दुनिया के प्रथम और सर्वश्रेष्ठ डायरी लेखक माने जाते हैं।”⁶ इस प्रकार सेमुअल पेपिस ने अपनी डायरी में अपने समस्त जीवन की सभी घटनाओं का खुलकर चित्रण किया है। अपने चरित्र की दुर्बलताओं—स्त्रीविषयक कुविचार, प्रेम—व्यवहार आदि का स्पष्ट रूप से चित्र खींचा है। उनकी डायरी में व्यक्तित्व के प्रत्येक पहलू के दर्शन होते हैं।

‘दी न्यू एनसाइक्लोपीडिया’ में डायरी के उद्भव के बारे में यह विकास-क्रम का उदाहरण इस प्रकार उल्लेखित है—

“डायरी पुनर्जागरण से ही प्रफुट हुई जब इसकी आवश्यकता पर सामान्य जन ने महत्त्व दिया। इसी के साथ इसका महत्त्वपूर्ण महत्त्व सामाजिक और राजनीतिक इतिहास दर्ज करने में प्रतीत हुआ।

अंग्रेजी डायरीकार जॉन एवलिन से महान डायरीकार सेमुअल पेपिस हैं जिन्होंने 1 जनवरी 1960 से मार्च 31, 1669 तक लन्दन की चकित कर देने वाली कमज़ोरियाँ का न केवल वर्णन किया बल्कि लंदन की ज़िंदगी की अपने कोर्ट की, घर की थियेटर में अपने नेवी आफिस का अद्भुत वर्णन किया।

बीसवीं शताब्दी में, कैथरीन मेन्सफील्ड की पत्रिका (1927) दो संकलन में—अन्दरीज़्ड (1939, 1954) और पहले पाँच संकलन वर्जीनिया वुल्फ की डायरी (1977–1984) के बहुत महत्त्वपूर्ण उदाहरण हैं।”⁷

इसी प्रकार ‘हिन्दी विश्व कोश’ में भी डायरी के उद्भव और विकास से संबंधित विवरण मिलता है, जो कि अंग्रेजी विवरण के समतुल्य है—

“17वीं शताब्दी में आकर इंग्लैण्ड आदि पाश्चात्य देशों में डायरी लेखन में यथेष्ट साहित्य महत्त्व लक्षित होता है, यद्यपि लेखकों ने लिखते समय शायद ही उनके प्रकाशन की बात सोची होगी। सर विलियम डगडेल (1605–86), बुलस्ट्रोड हाइट लॉक (1605–75) एवं ज्यार्ज फाक्स (1924–91) के नाम ऐसे डायरी लेखकों में उल्लेखनीय हैं। सबसे लम्बी कालावधि वाली डायरी संभवतः जान ईवलिन (1620–1706) की है, जिसमें 70 वर्ष की घटनाएँ विवृत हैं। इसका प्रकाशन 1818 में हुआ। सैमुअल पेपिस (1633–1703) ने आत्मचरित के रूप में नौ वर्षों (01.01. 1660 से 29.05.1669) तक जो डायरियाँ लिखीं वह संभवतः डायरियों के रूप में अब तक लिखी गई रचनाओं में सर्वश्रेष्ठ हैं। पेपिस के पश्चात् भावात्मक, गुणों से सम्पन्न डायरी लिखने वाले जॉनेथन स्विफ्ट उल्लेखनीय हैं जिनकी ‘जर्नल टु स्टेल्ला’, नामक डायरी में 1710 से लेकर 1713 ई० तक के वृत्तान्त संगृहित हैं। कल्पना, महत्त्वाकांक्षा और स्नेह का अद्भुत सम्मिश्रण स्विफ्ट के इस जर्नल में है। इस प्रकार की रचनाओं में अत्यन्त सराहनीय कृति फैंनी वर्नी (मैडम डाब्ले) की भी है जो 1842–1846 में प्रकाशित हुई थी।

अब तक जितनी डायरियाँ छपीं वे सब अपने लेखकों के मरणोपरांत प्रकाशित हुईं। उन्हें प्रकाशित देखकर एवं इनकी विशेषताओं के प्रति आकृष्ट होकर डायरी लिखने की ओर अनेकानेक लोगों का ध्यान गया। परिणामतः 19वीं शताब्दी में डायरियों और जर्नलों की भरमार हो गई। पर साहित्यिक उत्कृष्टता की दृष्टि से उनमें कुछ ही जर्नल उल्लेखनीय हैं, सर वाल्टर स्कार का जर्नल (1890) आर.वी. हैडन की कृति 'आटोबायोग्राफी ऐंड जर्नल' का डायरी वाला अंश तथा चार्ल्स ग्रेविल (1794-1865) तामस क्रीवी (1768-1838) हेनरी क्रैब राबिनसन (1775-1867) टाम मूर और सुप्रसिद्ध नृत्य शास्त्री डारविन, आर.डब्ल्यू. इमर्सन इत्यादि की कृतियाँ। हाल में प्रकाशित डायरियों में कैथराइन मैसफील्ड का जर्नल संभवतः सर्वोत्कृष्ट कृति है।⁸

अंग्रेजी साहित्य के पाश्चात्य विद्वानों के अतिरिक्त हमें फ्रांसीसी एवं रूसी विद्वानों, लेखकों द्वारा डायरी लिखे जाने के प्रमाण मिलते हैं। मध्यकाल में अनेक उत्कृष्ट डायरियाँ फ्रांसीसी विद्वानों द्वारा भी प्रस्तुत की गई हैं। जैसे—“चार्ल्स षष्ठ एवं चार्ल्स सप्तम के राज्यकाल में एक अज्ञातनामा पुरोहित द्वारा सन् 1409 से लेकर 1431 ई० तक जो डायरियाँ लिखी गई वह इनमें विशेष महत्वपूर्ण हैं। 1431 के आगे भी यह डायरी 1449 ई० तक किसी अन्य व्यक्ति ने चालू रखी। डेग्यू के मार्किवस (1638-1720) ने 1684 से लेकर अपने जीवन पर्यन्त जो डायरी लिखी उनमें लुई 14वें के राज्यकाल के संबंध में जैसे तथ्य एकत्र मिलते हैं वैसे अन्यत्र दुर्लभ हैं। अन्य फ्रांसीसी डायरी लेखकों में सेंट साइस, एडमंड बार्बियर, चार्ल्स कोले, पैरिट डिबैचामांट के नाम उल्लेखनीय हैं। रूसी कलाकार मेरी बैशकर्ट सेफ (1860-84) की डायरी ने जो उनके मरणोपरांत 1837 ई० में प्रकाशित हुई थी, बड़ा तहलका मचा दिया था।”⁹

डायरी की यह विकास यात्रा कालखंड के इतने पड़ावों से होती हुई जब यहाँ तक पहुँची थी तो इसने न केवल एक लंबा सफ़र तय किया था वरन् विकास और सामाजिक सभ्यता के भिन्न-भिन्न पड़ावों को पार करती हुई यह अपने चरमोत्कर्ष पर पहुँची। 19वीं सदी के अन्तिम दशक से 20वीं सदी के प्रारंभ का युग इसका चरमोत्कर्ष कहा जाएगा। कालांतर में यह विधा और भी समर्थ और स्पष्ट होती गई।

पाश्चात्य डायरी विधा के विकास क्रम को भली-भाँति समझने के लिए सारिणी द्वारा प्रस्तुत करना उचित समझते हैं—

1. "किंग एडवर्ड की VI डायरी—16वीं सदी
2. सर विलियम डुग्डवे—(1605—86)
3. एडवर्डलेक, हेनरी तुंगे और रोगर लवी—17वीं सदी
4. सिलिया फैनैश (1685)
5. जान इवलिन (1620—1706)
6. सेमुअल पेपिस (1633—1703)¹⁰

ऐसा प्रतीत होता है कि सत्रहवीं सदी में डायरी रखना एक आदत के रूप में हो गया, हालांकि ऐसा अनुमान लगाया गया है कि कई ऐसे रिकार्ड हैं जो अब खो चुके हैं, और कुछ ऐसे हैं जो सोलहवीं सदी से दिख रहे हैं। लगभग अठारहवीं सदी में डायरियाँ लिखने और रखने की एक नई परंपरा विकसित होती जा रही थी। इस काल की डायरियों की सबसे बड़ी विशेषता थी कि महिलाएँ भी डायरियाँ लिखने लगी थीं। उनमें से कुछ प्रसिद्ध महिलाएँ थीं। जैसे—“मेरी काउन्ट्स कूपर (1685—1724), ऐजिला वेथवाय रोम (1722—1801), लेडी मेरी कोक (1716—1829), फैंनी बैनी (1752—1840), मिसेस लेवी पाव (1756—1808)।”¹¹

अठारहवीं सदी के अंतिम चरण में और उन्नीसवीं सदी तक कई और डायरियाँ प्रकाश में आईं। इनमें से कुछ डायरियों को विशेष महत्त्व दिया गया। जैसे—“लेडी हॉलैण्ड (1770—1845), मेरी फेक्टन (1773—1846), ऐलिन वेटन (1776—1850) लेडी चार्लेट बूरे (1775—1861); ऐलिजाबेथ फ्राई (1780—1845), मारगेट शोरे (1819—1839) आदि।”¹² लगभगत: इसी अवधि में वड्सवर्थ के कार्यरूपी विवरण प्रस्तुत किये गये थे, वो हैं तो जर्नल के रूप में, लेकिन कहीं न कहीं पर उसकी शैली डायरी के रूप में परिलक्षित होती है। उन्नीसवीं सदी में दो महत्वपूर्ण पश्चिम महिलाओं की डायरी प्रकाशित हुई “जार्ज इलियट और क्वीन विक्टोरिया”।¹³ इसी समय जीवन चरित से संबंधित एवं ऐतिहासिक डायरी प्रकाश में आईं। उदाहरण के लिए—ग्रीवी एन्ड ग्रीविली, थॉमस फ्रीवी (1768—1858)

इन ऐतिहासिक डायरियों में विलियम IV एवं जार्ज IV के शासनकाल का प्रतिबिंब देखने को मिलता है।

इस आधुनिक काल में समाज की नियमित व्यवस्था संबंधी विधि आधारशिला रोमन शासकों द्वारा स्थापित की गई थी। डायरी का प्रचलन और उसका लेखन तभी से माना जाता है। जैसे-जैसे समाज विसंगतियों की ओर उन्मुख होता गया वैसे-वैसे विसंगतियां बढ़ती गईं, बढ़ते रहने के साथ ही साथ जटिल एवं रूढ़ होती गईं। मध्यकाल में राजा और उसके सभासद सामान्यतः वंशानुगत होते थे और यह भी सत्य है कि शासन में षडयंत्रकारियों की प्रमुख भूमिका होती थी। इसलिए जो भी प्रमुख पद पर आसीन होता था वह भी दैनिकी का प्रयोग करता था। इससे वंश के अनुयायी के यहाँ मध्यकाल एवं उच्चवर्गीय समाज में दैनिकी लिखने की एक परंपरा सी चल पड़ी और इस प्रकार से लिखी जाने वाली डायरियाँ इतिहास की सामग्री प्रस्तुत करने लगीं। इस संदर्भ में फ्रांस के लुई सोलहवें और इंग्लैंड की साम्राज्ञी विक्टोरिया की डायरियाँ अपने आप में महत्वपूर्ण एवं प्रसिद्ध हैं।

इस प्रकार उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर डायरी लिखने और रखने का प्रचलन सर्वप्रथम फ्रांस में ही विकसित हुआ। फ्रांस में उत्पन्न इस विधा का विकास लैटिन भाषा में ही हुआ और हिंदी में आकर इसने अपना एक व्यापक स्थान बना लिया। कालांतर में यह विधा और भी समर्थ और स्पष्ट हो रही है। इसके चिंतन बिंदु साहित्य रूपी समाज में छिटक चुके हैं और एक विधा के पौधे के रूप में फल-फूल रहे हैं।

(ख) हिंदी डायरी साहित्य का परिचय

वैसे तो अनुभव, विचारों एवं भावों को लिखने की पद्धति बहुत ही पुरानी है पर गद्य की विधा के रूप में हिंदी में इसका आगमन भारतेंदुकाल से हुआ है। भारतेंदु-युग से गद्य का साहित्य में व्यवस्थित सूत्रपात हुआ और धीरे-धीरे गद्य की विविध विधाओं में डायरी का उद्भव और विकास आधुनिक गद्य के समग्र उन्मुख में स्थापित हुआ। जिनमें से डायरी भी आधुनिक गद्य की नवीन विधा है। भारत में डायरी विधा का विकास अपने अनुसार भारतीय वातावरण में संपन्न हुआ। अरुण प्रकाश डायरी की परंपरा के विषय में लिखते हैं कि—“भारत में डायरी लेखन की

कोई सुदीर्घ परंपरा नहीं रही है और यूरोप में डायरी का इतिहास कोई कविता की तरह पुराना नहीं है। वस्तुतः डायरी का महत्त्व उत्तर नवजागरण काल में बढ़ना शुरू हुआ जब व्यक्ति के महत्त्व पर जोर दिया जाने लगा।¹⁴ इस प्रकार डायरी लेखन की विकास परंपरा सुविकसित नहीं थी, लेकिन आज के संदर्भ में देखा जाये तो विकसित हो रही है।

डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया इसके विकास के संदर्भ में लिखते हैं कि—“पाश्चात्य विधा होते हुए भी डायरी विधा स्वतन्त्र एवं मौलिक रूप में हिन्दी में विकसित हुई जिसके माध्यम से मौलिक चिन्तन को प्रधानता मिली।”¹⁵

डायरी वास्तव में इतनी वैयक्तिक विधा है कि इसमें लेखक के लिए किसी विषय की सीमा है और न ही किसी कलात्मक शिल्प के आग्रह का दबाव, इसलिए आत्मा की अभिव्यक्ति के सहज प्रवाह में मनोभाव, विचार, चिंतन आदि जो कुछ भी आये वह डायरी का कथ्य बन जाता है और लेखक अपने को किसी निर्धारित वर्ग में रखने का तात्पर्य है कि उसमें किसी विशेष पक्ष की प्रमुखता विद्यमान है न कि अन्य पक्षों को पूर्णतः बाँधे रखने का कोई प्रयोजन।

देखा जाए तो हिंदी में मध्यकाल, विशेष रूप से मुगलकाल से डायरी लिखे जाने का पता चलता है। इस बात का अर्थ कदापि यह नहीं है कि इससे भिन्न पद्धति द्वारा लिखी ऐतिहासिक कृतियों के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में डायरी लिखे जाने का पता नहीं चलता। “कोई इतिहासकार अथवा जीवनी लेखक समसामायिक घटनाओं पर संक्षिप्त टिप्पणी प्रतिदिन अपनी डायरी में करता है। तिथिवार, दिनांक, सन्, संवत् आदि का आनुपूर्व्य से उल्लेख करते हुए दैनंदिन अनुक्रम से जो लेखन होता है, वही डायरी विधा के रूपसंस्थान हेतु है।”¹⁶ इतिहास से संबंधित अर्थात् ऐतिहासिक कृतियाँ पहले दैनिकी विवरण के रूप में प्रस्तुत हुआ करती थीं और बाद में इनका संकलित किया हुआ रूप किसी काल विशेष का इतिहास बन जाता था।

इस प्रकार प्रत्येक ऐसा लेखक जो तारीख के साथ लिखे तो वह डायरी कहलाती है और तारीख के साथ लिखी जाने वाली ही डायरियाँ इतिहास बनाती

हैं। उदाहरण के लिए—‘आइने अकबरी’ जो कि इतिहास होते हुए भी डायरी के निकट है।

प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकों एवं बहियों आदि की खोज-बीन करने वालों को यह जानकारी थी कि संपन्न परिवारों में कहीं-कहीं दैनंदिनी का लेखा-जोखा रखा जाता था। इन दैनंदिनी में प्रायः रोज़ाना के आय-व्यय के हिसाब-किताब का विवरण विस्तार के साथ लिखा रहता था। इसके अतिरिक्त आवश्यक बातें जैसे-किसी विशिष्ट का आगमन, गमन तथा जन्म-मरण, उत्सव, विवाह एवं संस्कार आदि सामाजिक संबंधों की चर्चा उनमें बड़े ही सूक्ष्म रूप में रहती थी। अफ़सोस की बात यह है कि उपयोगी विधा के रूप में इसका स्वतंत्र विकास नहीं हो पाया। इसका मुख्य कारण है कि पहले डायरियों का प्रकाशन नहीं होता था या कह सकते हैं कि पहले डायरियों के प्रकाशन की व्यवस्था ही नहीं थी। हिंदी साहित्य का अध्ययन करें तो अध्ययन के फलस्वरूप हमें यह ज्ञात होता है कि हिंदी में भारतेन्दु-युग से पूर्व डायरी लेखन का विकास नहीं के बराबर था। यदि कहीं कोई डायरी दिख जाती थी तो वह कलात्मकता की दृष्टि से सर्वथा नगण्य ही समझी जाती थी। अब प्रश्न यह उठता है कि हिंदी की सर्वप्रथम डायरी कौन-सी है। यह एक लम्बी बहस का विषय है। अतः इस विषय पर लम्बी बहस करना, चिन्तन करना या चर्चा करना अनुपयुक्त सा लगेगा। अगर हम इतिहास को उठाकर देखें तो हिंदी के आत्म-प्रमाणित इतिहासकारों की पंक्ति ज़रूर लंबी हुई है लेकिन डायरी का विश्लेषण प्रायः नहीं के बराबर रहा है। डायरी के जन्मदाता के रूप में यदि किसी का नाम लें, तो हमारे सामने विलियम हॉवर्ड रसेल का नाम आता है, जिनकी डायरी ‘माई डायरी इन इंडिया’ है। रसेल ने बिना कुछ लीपा-पोती के, बिना कुछ मिर्च-मसाला लगाए यथार्थ का बोध कराने में अपनी गंभीर ऐतिहासिक भूमिका को निभाया है। रसेल को ‘दि टाइम्स’ (समाचार पत्र) का रिपोर्टर कहा जाता है। ‘दि टाइम्स’ ब्रिटेन का ऐतिहासिक न्यूज पेपर था।

यह जानना हमारे लिए उचित होगा कि रसेल की डायरी के टाइटल में ‘म्युटिनी’ शब्द नहीं था। उनकी डायरी का टाइटल ‘माई डायरी इन इंडिया’ लेकिन इसको ‘मिशेल एडवर्ड्स’ ने ‘माई इंडियन म्युटिनी डायरी’ टाइटल दिया। इस

डायरी के दो भाग हैं—पहला भाग 1858—1859 में प्रकाशित हुआ, जो 408 पृष्ठों का है, जिसमें 24 अध्याय हैं, और दूसरा खंड 415 का, जिसमें 21 अध्याय हैं ।

यदि रसेल को डायरी विधा का जन्मदाता या फिर प्रणेता कहें तो यह एक सत्य ही बात लगेगी। क्योंकि यह डायरी सही ढंग से डायरी विधा के रूप में तैयार की गई थी। रसेल ने इस डायरी की भूमिका में लिखा है—“दि टाइम्स को लिखे पत्रों के बाहर ऐसा बहुत कुछ छूट जाता है जिसके लिए मुझे यह डायरी लिखने की ज़रूरत पड़ी।”¹⁷ रसेल ने अपने पाठकों के प्रति और अखबार के प्रति अपनी आस्था, अपने विश्वास को प्रकट करते हुए डायरी के रूप और उसकी अंतर्वस्तु के बारे में यह माना है कि—“यह एक व्यक्तिगत तत्त्व प्रधान विधा है और लेखक का अहं इसके रूप का, विधा का अनिवार्य तत्त्व है।”¹⁸ इस डायरी में रसेल ने इस बात का दृढ़ निश्चय किया है कि—“मेरा वश जहाँ तक चलेगा मैं सत्य प्रिय रहूँगा। सत्य में ही निष्ठा रखूँगा। सत्य के सिवा और कुछ नहीं।”¹⁹ जो कि डायरी का प्रमुख आधार बिंदु है।

विधा के रूप में प्रतिष्ठित डायरी विधा का आगमन भारत में उन्नीसवीं सदी में हो गया था। विभिन्न भारतीय भाषाओं के साथ हिंदी में भी डायरी लेखन का श्रीगणेश हुआ, तत्पश्चात् हिंदी लेखकों, विद्वानों व साहित्यकारों ने अपनी व्यक्तिगत डायरी लिखना प्रारंभ कर दिया, साथ ही साथ लेखकों एवं विद्वानों ने पत्र-पत्रिकाओं में भी डायरी के अंश रेखांकित किए।

हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास में “भारतेन्दु युगीन लेखक श्री राधाचरण गोस्वामी की स्वहस्तलिखित ‘दिनचर्या’ को ही प्रथम डायरी माना है, इसका रचनाकाल सन् 1872 ई० है तथा प्रकाशन काल 1885 ई० है।”²⁰ इस डायरी में हाथ से लिखी दिनचर्या और प्रतिज्ञाएँ मिलती हैं। इससे जान पड़ता है कि हिंदी में साहित्यकारों की आरंभ से ही डायरी लेखन की ओर रुचि रही है। इसके दूसरी ओर डॉ. माजदा असद ने भारतेन्दु के समकालीन प्रसिद्ध साहित्यकार “बालमुकुंद गुप्त की डायरी के कुछ अंश, जो उन्होंने सन् १८६२ से १९०७ तक लिखे, ‘बालमुकुंद गुप्त स्मारक ग्रंथ’ (सन् 1950) में मिलते हैं। इस ग्रंथ का संपादन एवं प्रकाशन श्री बनारसीदास चतुर्वेदी एवं श्री झाबरमल ने किया।”²¹ इस डायरी से गुप्त

की दिनचर्या का पता चलता है। सुबह से लेकर शाम तक की स्थिति वह इस डायरी में लिखा करते थे। वह एकांत अवस्था में सोने से पहले डायरी लिखते थे। डॉ० चन्द्र भानु सीताराम सोनवणे अपनी पुस्तक 'हिन्दी गद्य साहित्य' में लिखते हैं कि—“कुछ विद्वान लोग डायरी लेखन का आरम्भ सन् 1930 के आस-पास मानते हैं। हिन्दी में कलात्मक, मौलिक और श्रेष्ठ डायरी 'नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ की जेल डायरी' मानी जाती है जिसका प्रकाशन सन् 1930 में हुआ।”²²

इस डायरी में गहन अनुभूतियों और सच्ची घटनाओं को लेखनीबद्ध किया गया है। डायरी आधुनिक हिन्दी गद्य साहित्य की प्रत्यक्ष रूप से अनौपचारिक विधा है फिर भी इसके साहित्यिक रूप को विशेष महत्त्व प्रदान किया गया है। इस दृष्टि से श्री राधाचरण गोस्वामी की 'दिनचर्या' एवं 'बालमुकुन्द' के डायरी के कुछ अंश (स्मारक ग्रंथ) दोनों ही डायरियाँ दैनंदिनी प्रतीत होती हैं। क्योंकि इनमें रोज़ाना के क्रियाकलापों का वर्णन मिलता है। प्रतिष्ठित साहित्यकारों की डायरी होने के बावजूद भी इनमें किसी प्रकार का व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक, देशकाल और वातावरण एवं साहित्यिक विचारों का कोई परिचय नहीं मिलता। अतएव इस श्रेणी में डॉ० माजदा असद ने जिस डायरी का नाम लिया है वह उत्कृष्ट डायरी स्वामी सत्यदेव परिव्राजक कृत 'अमेरिका भ्रमण'। इससे पूर्व उनकी 'अमेरिका पथप्रदर्शक' और 'अमेरिका दिग्दर्शन' मिलती है। "अमेरिका भ्रमण" का प्रसंग साढ़े आठ महीनों के विवरण में पूरा होता है। यह ढाई और छः महीने के अलग-अलग वृत्तान्त के रूप में दो भागों में है। पहला भाग सन् 1912 में छपा। 'अमेरिका भ्रमण' की डायरी 6 जून, 1910 को वाशिंगटन की सिएटल नगरी से प्रस्थान के समय से प्रारम्भ होती है। यह तिथि क्रम के हिसाब से लिखी गई है। × × × कभी-कभी कई दिनों का विवरण एक साथ लिखा गया है। अमेरिका भ्रमण का सजीव चित्र यात्रा-विस्तार के साथ दिया गया है।”²³

जिस समय हमारे पूर्वज विद्वानों एवं साहित्यकारों की व्यक्तिगत डायरियाँ प्रकाश में आयीं, उस समय हमारे साहित्यिक इतिहास को एक नया आलोक मिला। अब तक तो लगभगतः सभी पत्र-पत्रिकाओं में डायरियों के अंश मिल जाते हैं। इसी बीच मैथलीशरण गुप्त व माखनलाल चतुर्वेदी की कुछ पुरानी डायरियों के अंश

मिलते हैं। किंतु एक साहित्यिक अभियान के उत्साह से अपने पूर्वज साहित्यिकारों एवं विद्वानों की डायरियों की खोज करना एवं उन्हें जानना हमारा अवश्य कर्तव्य बनता है।

डायरी लेखन के मूल प्रेरणा स्रोत महात्मा गांधी रहे हैं। उन्होंने न केवल अपने अनुयायियों को डायरी लिखने की प्रेरणा दी साथ ही साथ अपने युग के अनेक साहित्यिकारों को भी डायरी लिखने की प्रेरणा दी। पश्चिम की इस स्वागत और यथार्थवादी विधा 'डायरी' को गांधी ने सत्य की आराधना का एक माध्यम बनाकर वास्तव में एक भौतिक प्रयोग किया है। अतः हिंदी में आत्म-निरीक्षण प्रधान शुद्ध डायरी के मूल प्रेरणा स्रोत के रूप में महात्मा गांधी का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

हिंदी की पहली डायरी का प्रारंभ हिंदी में कब और कहाँ से हुआ यह बड़ा विवादास्पद प्रश्न है! डॉ० बच्चन अपनी 'प्रवास की डायरी' को पहली रचना कहते हैं। अपने पाठकों से बातचीत में उन्होंने लिखा है—“आज आपके हाथों में अपनी एक नई पुस्तक प्रवास की डायरी रखते हुए मैं बड़ी और कुछ विशेष प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ। ‘कुछ विशेष क्यों?’ इसलिए कि यह नई पुस्तक ही नहीं, एक नए प्रकार की पुस्तक है। मेरी रचनाओं में ही नहीं शायद हिन्दी की रचनाओं में भी। डायरी के रूप में मेरी यह पहली रचना है। डायरी के ढाँचे में हिन्दी में एकाधिक कहानियाँ, उपन्यास, लघु निबंध अथवा साहित्यिक चिंतन प्रकाशित हो चुके हैं पर जहाँ तक मुझे मालूम है किसी ने अभी तक अपनी नियमित, वास्तविक डायरी नहीं प्रकाशित की।”²⁴

डॉ० बच्चन की यह डायरी 1971 में पहली बार प्रकाशित हुई है तथा डॉ. बच्चन का दावा है कि यह हिंदी की प्रथम डायरी है। हालांकि इस बात पर काफी बहस हुई। यहाँ उसकी चर्चा करना आवश्यक होगा।

इस संबंध में डॉ० जीवन जोशी ने स्वयं बच्चन जी से एक लंबी बहस छेड़ी जिसका उल्लेख करना अनुपयुक्त न होगा। ...“पर एक बात निश्चित है कि इंग्लैंड की भूमि पर बैठा हिन्दी का एक कवि-लेखक जिस तरह से नियमित 'प्रवास की डायरी' लिख रहा था, वैसी डायरी तब तक, और आगे अब तक भी किसी दूसरे ने

नहीं लिखी। बात मूल्य-महत्वांकन की नहीं है। यह है कि इस डायरी का गद्य उल्लेखनीय इसलिए है क्योंकि पहली बार पूरब की एक हिन्दी-प्रतिभा, पश्चिमी परिदृश्यों और प्रतिभाओं पर प्रमाणिक तौर पर, कुछ अध्ययन-मनन-चिन्तन के बल पर, मौलिक गद्य-लेखन में प्रवृत्त हुई। जैसा कि डायरी लेखक ने भूमिका में कहा है कि सेमुअल पीप्स (सत्रहवीं सदी) के डायरी लेखक के बारे में-उससे साफ जाहिर है ही कि विधागत रूप में यह डायरी कम-से कम हिन्दी-गद्य-लेखन के क्षेत्र में ज़रूर एक नई चीज थी। उसकी प्रेरणा के पीछे 'पीप्स' भी हो सकते हैं और ईट्स आदि अन्य पाश्चात्य लेखक भी, पर डायरी लेखक का दावा यह है कि वही उसका सहज गद्य है। -जब कि तथ्य यह कहता है कि यह सन् १६७१ में स्वयं लेखक द्वारा ही संपादित की गई है। पता नहीं संपादन से इसकी सहजता पर क्या प्रभाव पड़ा होगा-होगा तो ज़रूर ही।²⁵ इसी बहस को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने डॉ. बच्चन से प्राप्त प्रश्न-पत्रोत्तर का संदर्भ दिया जो इस शोध के लिए काफी सार्थक है। उसे ज्यों का त्यों दिया जा रहा है-

“२७-११-७३

श्रद्धेय,

आपका कार्ड मिल गया। मेरा 'प्रख्यापन' मिला होगा। उसमें कुछ बढ़ाया है। अब Final डाफ्ट है। आपके अवलोकनार्थ टाइप-प्रति भेजूंगा।

अब दो आवश्यक प्रश्न:-

१. मुक्तिबोध की 'एक लेखक की डायरी' 'प्रवास की डायरी' से पहले की लिखी-छपी पुस्तक है- शायद १६४६-४८ में लिखी और सन् ६४ में छपी- भले ही उसमें पश्चिम चर्चा न हो। यों, आपकी डायरी का लेखन-प्रकाशन, ऐतिहासिक-सृजनात्मक दृष्टि से, दूसरे नम्बर पर ठहरता है। कुछ और भी उल्लेखनीय सामग्री हो सकती है। कृपया इस पर कुछ कहेंगे?

२. आपके लिखे अनुसार ही, 'प्रवास की डायरी' सन् १६७१ में, आप द्वारा ही संपादित होने के बाद, प्रकाशित हुई है। क्या इस संपादन से उसके सर्वाधिक शुद्ध-सहज-लेखन पर अन्यथा असर न पड़ा होगा?

आपका
जीवन²⁶

डॉ. बच्चन का पत्रोत्तर इस प्रकार है—

"C/o जया बच्चन

बम्बई

२६.११.१९७३

प्रिय जोशी जी,

पत्र के लिए धन्यवाद।

मुक्तिबोध की डायरी के पूर्व डॉ. धीरेन्द्र वर्मा की डायरी भी प्रकाशित हो चुकी थी— उन सबके प्रति मैं अपनी भूमिका में सचेत हूँ। मुक्तिबोध की डायरी आलोचना है— धीरेन्द्र वर्मा की डायरी निबन्ध—

डायरी प्रकाशन के लिए नहीं लिखी गई थी— वह तो मैंने अपने परिवार के लिए लिखी थी—प्रकाशित करने के विचार से Press Copy बनाना भी संपादन ही कहा जाएगा, संपादन में कुछ भी ऐसा नहीं किया गया कि उसके सहज रूप को कृत्रिम कहा जाए—

सप्रेम

बच्चन¹²⁷

इस प्रकार डॉ० बच्चन ने न केवल अपनी डायरी से पूर्व लिखित, प्रकाशित मुक्तिबोध तथा धीरेन्द्र वर्मा की डायरियों को पहली डायरी मानने को अस्वीकार किया है वरन् पहली डायरी के रूप में अपनी 'प्रवास की डायरी' को हिंदी की पहली डायरी कहा है, हालाँकि मुक्तिबोध और धीरेन्द्र वर्मा की डायरियों से पूर्व भी हिंदी में डायरी प्रकाशित हो चुकी थीं लेकिन निम्न तथ्यों से इस बहस में एक और नया आयाम जुड़ता है हिंदी में डायरी लेखन कला का प्रारंभ सन् 1930 के आसपास हुआ है। हिंदी में इस कला के प्रथम लेखक पं० नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ हैं। उनकी नरदेव शास्त्री वेद तीर्थ की जेल डायरी नामक रचना सजीवता पूर्ण ढंग से लिखी गई है।

हिंदी की अधिकांशतः डायरियाँ विशुद्ध डायरियों की कोटि में नहीं आती हैं, क्योंकि बहुत सी डायरियाँ व्यक्तित्व प्रकाशन को अपेक्षाकृत कम महत्त्व देकर वस्तु

के उद्घाटन में अधिक प्रवृत्त होती दिखलायी दी हैं। डायरियाँ विशुद्ध रूप से सत्य और ईमानदारी की कसौटी हैं, जिसमें जीवन के तमाम वो कड़वे सच, और खट्टे-मीठे अनुभवों का संकलन होता है। डॉ० विश्वनाथ शुक्ल 'आस्ट्रेलिया की डायरी' की भूमिका में डायरी के संबंध में लिखते हैं कि—“डायरी किसी व्यक्ति की मानसी सृष्टि और अन्तर्दर्शन है। किन्तु जब वह प्रकाशित होकर साधारणीकृत हो जाती है तो वह भी साहित्य के व्यापक प्रयोजन 'शिवेतरक्षीत' (मंगलसाधना) की साधिका बन सकती है।”²⁸

भारत आत्मविसर्जन की संस्कृति का देश रहा है। अतः यहाँ पर आत्मप्रकाशन की कोई परंपरा ही नहीं रही है। यही कारण है कि डायरियाँ भारतीय भाषाओं में कम पायी जाती हैं, वैसे भी इस विधा का उद्भव एवं विकास भी पाश्चात्य जगत् से हुआ है अतएव इनकी संख्या पश्चिम में अधिक है। इस बात को अनीता राकेश ने इस प्रकार स्पष्ट किया है—“हिन्दी में डायरी लिखने और प्रकाशित करने का प्रचलन कम है, जबकि अंग्रेजी और दूसरी पश्चिमी भाषाओं में इन्हें निस्संकोच छपा जाता है और साहित्य का जरूरी हिस्सा माना जाता है। साहित्य की आधुनिकता भी कहीं इस तरह की सच्चाई के साथ जुड़ी है।”²⁹ हिंदी की अधिकांश डायरियाँ, यात्रा, संस्मरण, आत्मकथा आदि को आधार बनाकर लिखी गई हैं। निजी जीवन को सच्ची ईमानदारी के साथ व्यक्त करने की क्षमता प्रायः हिंदी लेखकों में कम रही है। फिर भी हिंदी का डायरी साहित्य स्वीकृत साहित्य है जो निरंतर विकसित हो रहा है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है कि हिंदी लेखकों की व्यक्तिगत डायरियों के प्रमाण हमें भारतेंदु-युग में ही मिलते हैं जैसे कि— 1885 में गोस्वामी की 'दिनचर्या' एवं मौलिक डायरी लेखन के शिलान्यास का श्रेय श्रीनरदेव शास्त्री वेदतीर्थ को माना गया है। 1930 के लगभग श्रीनरदेव शास्त्री वेदतीर्थ की जेल डायरी के नाम से प्रकाशित हुई। शुद्ध विधा के रूप में इसका प्रारंभ हिंदी में पाँचवे दशक से होता है। श्री सुन्दर लाल त्रिपाठी की 'दैनंदिनी' हिंदी के डायरी साहित्य की एक विशेष उपलब्धि मानी जाती है। यह डायरी 1945 में प्रकाशित हुई। इस डायरी को सवर्था शुद्ध अर्थात् वैयक्तिक अनुभूति से जुड़ी हुई डायरी माना जा सकता है। इसमें दैनिकता का पालन करते हुए वैयक्तिक अनुभूतियों का प्रकाशन

किया है। 1939 में लेखक डायरी लिखने का संकल्प करता है। "वर्धा की 12.06.39 की मेरी डायरी अधूरी रह गई। डायरी ही सिर्फ क्यों जीवन के ऐसे अनेक मेरे कार्य हैं, जो अधूरे रह गए।"³⁰

इस दैनंदिनी में वैयक्तिक और पारिवारिक संबंधों की चर्चा हुई है। सामाजिक विषयों में नारी के प्रति उनके मन की अपार श्रद्धा उजागर हुई है। इसमें घटनाओं का वर्णन बड़े रोचक ढंग से किया गया है, और इसमें चित्रात्मक शैली का प्रयोग हुआ है। इस डायरी में शरतचंद्र चट्टोपाध्याय और महात्मा गांधी के संबंध में लेखक के अलावा हिंदी के साहित्यकारों के संबंध में समीक्षात्मक विवरण भी मिलता है। भाषागत जटिलता के कारण यह रचना अधिक लोकप्रिय नहीं हो सकी, फिर भी इस डायरी का महत्त्व वैयक्तिक अनुभूति प्रधान डायरी के रूप में स्वीकार होगा, साथ-ही-साथ यह डायरी साहित्यिक दृष्टि से अपना विशेष महत्त्व रखती है। यह सन् 1958 में प्रकाशित हुई।

डायरी साहित्य में डॉ० धीरेन्द्र वर्मा की लिखी 1958 में प्रकाशित 'मेरी कॉलेज डायरी' अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझी जाती है। ये एक साहित्यकार की यथार्थ एवं व्यक्तिगत डायरी है। इस डायरी में उनके कॉलेज जीवन के सात वर्षों का विवेचन है। इस डायरी के बारे में स्वयं लेखक का कहना है कि—"यह डायरी मेरे मानसिक जीवन के लगभग सात मूल्यवान वर्षों का सच्चा आत्मचरित है; जो आज नहीं लिखा जा रहा है, बल्कि उसी कच्चे-पक्के रूप में है जिनमें यह तभी लिखा गया था, जब मैं कालिज का एक साधारण विद्यार्थी था और यह नहीं जानता था कि जीवन की नदी के थपड़े मुझे किधर ले जाएँगे। इसकी अपूर्णता और सच्चाई में ही इसका महत्त्व है। यदि शेष आत्मचरित्र किसी रूप में भी लिखा गया तो वह जीवन का सिंहावलोकन मात्र होगा। वह अधिक प्रौढ़, परिमार्जित और परिपक्व हो सकता है किन्तु उसमें मन के इस कच्चेपन और गदरापन का आनन्द नहीं प्राप्त हो सकेगा जो इस डायरी में मिलेगा।"³¹

डॉ० वर्मा नियमित रूप से डायरी लिखते थे उन्होंने अपनी दिनचर्यात्मक प्रारंभिक डायरी का कुछ नमूना दिया है—"छह बजे से पहले उठा। सुबह तीन बजे पढ़ा। दिन में पाँच घंटे पढ़ा। शाम को टेनिस खेला था। संध्या को नित्य पार्क जाने

लगा हूँ। आँखें ठीक न होने के कारण रात में बिल्कुल नहीं पढ़ा। नौ बजे सो गए थे।”³² किंतु युवावस्था में प्रवेश करने पर उन्हें इस रूप में डायरी लिखकर संतोष नहीं मिला, उनका कहना है कि युवावस्था में प्रत्येक नवयुवक के मन में बदलाव आते रहते हैं। वर्मा जी अपने मन में उठने वाली उलझनों और आंतरिक बातों को सही-सही लिखकर मन को हलका कर लेते थे। किशोर मन की आदर्शवादिता के मोहभंग का वर्णन करते हुए वे लिखते हैं कि—“जो व्यक्ति अब तक मेरे धार्मिक, राजनीतिक व सामाजिक विचार बनाने के कारण थे व जिन पर मेरा अटल विश्वास तथा श्रद्धा थी। अब वे वैसी बातें करते हुए भी कार्य करने का प्रश्न आने पर उलटी राय-समझदारी व दुनियादारी की देते हैं। मैं उलझता हूँ व खींझता हूँ, किन्तु आत्मिक निर्बलता के कारण विद्रोह नहीं कर पाता हूँ।”³³ इस डायरी को चार खंडों में विभाजित किया गया है। संदेह, संसार, देश-दशा और मायाजाल। कॉलेज जीवन में उत्पन्न समस्याओं के साथ-साथ उनके समाधान का भी उल्लेख किया गया है। व्यक्तिगत घटनाओं के वर्णन के साथ मानसिक प्रभाव और प्रतिक्रियाओं पर भी विचार किया गया है। वैयक्तिकता की छाप डायरी में चारों ओर विद्यमान है। डायरी के समस्त गुण इस रचना में मिल जाते हैं। जैसे कि—रोचकता, मार्मिकता, मानसिक प्रतिक्रियाओं का संक्षिप्त विवेचन, संकोच-रहित, आत्मसमीक्षा आदि गुण इसमें मिलते हैं। अतिशयोक्ति और अलंकारिता का पुट नहीं है। वास्तविकता और यथार्थ-चित्रण इसकी विशेषता है। इस डायरी में आत्ममंथन एवं चिंतन की गहराई भले ही कम हो लेकिन एक तरह की स्पष्टता और सजीवता इसमें मिलती है।

सन् 1958 में प्रकाशित डॉ० धर्मवीर भारती की कृति ‘ठेले पर हिमालय’ है। जिसमें समकालीन नवयुवक, साहित्यकार, पूँजीपति और बुजुर्गों का वर्णन उन्होंने अपने ढंग से किया है। इसमें 6 रचनाएँ हैं—“एक सपना और उनके बाद, काले पत्थर की अँगूठी, क्षणों की अथाह नीलिमा, चाँदनी में कोकाबेली, उचटी नींद और कौतुकवश डायरी विद्या में है।”³⁴ धर्मवीर भारती ने अपने इन डायरी के पन्नों में साहित्य पर प्रभाव दिखलाने में अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय दिया है, उन्होंने आधुनिक साहित्य को परिस्थितियों से प्रभावित कर दिखाया है कि—“आज का युग

मानव-चेतना के लिए कितना भयानक रेगिस्तान साबित हुआ है, उसमें कितनी पथभ्रष्ट वाली मृग-मरीचिकाएँ रही हैं, (जिनमें कुछ की असलियत वर्षों पहले खुल गई है और कुछ की अब खुल रही है)।³⁵ वैचारिक दृष्टि से इनका विशेष महत्त्व है।

सन् 1952 में इलाचन्द्र जोशी की प्रकाशित 'डायरी के नीरस पृष्ठ' और आचार्य विनय मोहन शर्मा की 'डायरी के कुछ पन्ने' प्रकाशित हुए। इलाचन्द्र जोशी ने अपनी डायरी को साहित्यिक रूप दिया है। वास्तव में यह डायरी एक सरस रचना है। इस डायरी के अंश जैसे कि 'फटे-पन्ने' दिनांक 30 जनवरी 1971 को लिखे गये। इस अंश में उनके जीवन के अनुभव, विचार और परिवेश के प्रति प्रतिक्रियाएँ आदि भावनाएँ मुखरित होती हैं।

आचार्य विनय मोहन शर्मा ने अपनी डायरी में सोलह वर्ष की अवस्था में टाइफाइड होने और उसके बाद प्रकृति के पथ पर चलने का हुनर का परिचय दिया है, साथ ही प्राकृतिक स्वास्थ्य और चिकित्सा संबंधी सामग्री भी दी है।

सन् 1959 में उपेन्द्रनाथ 'अश्क' की प्रकाशित रचना 'ज्यादा अपनी कम पराई' है। नई पुरानी डायरी के पन्नों में 'अश्क' ने जीवन के गूढ़ रहस्यों को काव्य भाषा में रूपायित किया है। इस डायरी में सुन्दर भाषा के साथ सुकुमार शब्दों का प्रयोग हुआ है। जीवन की घटनाओं को संस्मरण शैली में अभिव्यक्त किया है। तिथि एवं दिन के ध्यान के साथ ही साथ घटनाओं को शीर्षक के साथ उभारा गया है।

साहित्यकारों में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने भी इस विधा पर कलम चलायी है। 'नई धारा' के 1960 के जुलाई अंक में उनकी डायरी के कुछ पन्ने प्रकाशित हुए। इसके साथ-साथ उन्होंने यात्रा के काल को भी डायरी शैली में लिखा। इनमें 'पैरों में पंख बाँधकर, 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' प्रमुख हैं। श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने 'डायरी के पन्ने' 1950 से लिखना शुरू किया और 1963 तक नियमित रूप से लिखते रहे। संभवतः बेनीपुरी डायरी विधा को साहित्यिक गौरव प्रदान करने वाले पहले भारतीय लेखक हैं। डॉ० गजानन चव्हाण बेनीपुरी द्वारा लिखित 'डायरी के पन्ने' को एक चुनौती का सुपरिणाम मानते हैं। बेनीपुरी ने अपनी डायरी में एक साधारण व्यक्ति

के रूप में ही नहीं, साहित्यकार, राजनीतिक एवं समाजसुधारक के रूप में अपने विविध अनुभवों को लेखनीबद्ध किया है।

सन् 1960 में प्रकाशित डायरी के पृष्ठों में भगवान महावीर का अंतस्थल स्वामी सत्यभक्त द्वारा लिखित डायरी है। इस डायरी में भगवान महावीर के विचारों को रोचक शैली में चित्रित किया गया है।

1960 की ही प्रकाशित गुलाबराय की 'मेरी असफलताएँ', जिसमें 21 सितम्बर 1945 का विवेचन है। गुलाबराय ने अपने व्यक्तित्व के विषय में स्पष्ट रूप से लिखा है—“मैं उन लोगों में से हूँ जो अपने निजी निबन्धों के लिए बिना कुछ पढ़े नहीं लिख सकता, वास्तव में मेरे लेखन में एक तिहाई दूसरों से पड़ा होता है, एक बटा छह उसके आधार से स्वयं प्रकाशित और ध्वनित विचार होते हैं, एक बटा छह सप्रयत्न सोचे हुए विचार रहते हैं और एक तिहाई मलाई के लड्डू की बर्फी बना चोरी को छिपाने वाली अभिव्यक्ति की कला रहती है... मैं गलत पढ़ाने का पाप नहीं करता किन्तु जो मुझे नहीं आता उसे कभी-कभी कौशल के साथ छोड़ देता हूँ। यदि कोई छंद इम्तहान में आने लायक हुआ तो मैं बेईमानी नहीं करता।”³⁶ इस रचना के शीर्षक 'मेरी दैनिकी का एक पृष्ठ' में लेखक ने समस्त व्यक्तित्व की आलोचना स्पष्ट रूप से की है।

सन् 1960 की भगवतीशरण सिंह कृत 'राज्यपाल की डायरी में' इस डायरी में राज्यपाल महोदय की कर्तव्यनिष्ठा, सत्यासक्ति उनके जीवन की अंतरंग घटनाओं का पता चलता है। राजनीतिक जीवन का सफल चित्र इस डायरी के माध्यम से सवर्था चित्रित होता है।

एक और डायरी सन् 1960 में ही प्रकाशित बाल्मीकि चौधरी द्वारा कृत 'राष्ट्रपति भवन की डायरी' उल्लेखनीय है। यह एक मनोरंजन कृति है। इस डायरी में लेखक ने 1950 से लेकर 1952 तक राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद के साथ राष्ट्रपति भवन में निवास के दौरान अपने मार्मिक संस्मरणों का तिथिवार उल्लेख किया है। राष्ट्रपति बनने के बाद राजेन्द्र बाबू ने निश्चय किया था कि जहाँ तक संभव होगा वे प्रतिदिन अपनी डायरी लिखा करेंगे। इस डायरी में उनके महामानव के पद पर दर्शन होते हैं। डॉ० माजदा असद ने अपनी पुस्तक में बाल्मीकि कृत 'राष्ट्रपति भवन

की डायरी' के संबंध में लिखा है कि—“इस डायरी में राजेन्द्र प्रसाद के व्यक्तित्व की छाप मिलती है। बाल्मीकि चौधरी ने अपनी डायरी में राष्ट्रपति भवन में रोजमर्रा की घटनाओं, तत्संबंधी क्रिया—कलापों, राजनीतिक चित्रपट के बनने—बनाने में जो तरह—तरह के दृश्य मेरे सामने आये उन्हें मैंने गूँथने का प्रयास किया है।”³⁷

सन् 1961 में आयी डॉ० रामकुमार वर्मा द्वारा लिखित ‘वाराणसी की डायरी’ और सीताराम सेक्सेरिया द्वारा रचित ‘डायरी के पन्नों में बसन्त पंचमी’ प्रकाशित हुई। डॉ० रामकुमार वर्मा की डायरी में बनारस का वर्णन बहुत ही मार्मिक और चित्रात्मक शैली के साथ हुआ है। यह एक स्केच है जो कि डायरी शैली में लिखा हुआ है।

सीताराम सेक्सेरिया ने अपनी डायरी में तीन वर्षों की बसन्त पंचमी का वर्णन किया है। इसमें तीन वर्षों के उत्सव पर तीन प्रकार की मनः स्थितियों का विवेचन किया गया है। जैसे कि पहली बार वह जेल में थे, इसलिए बसन्त पंचमी के प्रति उनके मन में ईर्ष्या थी। दूसरी बार वह जेल में नहीं थे, जेल से छूट गये थे तो भाई जेल में थे। इस साल की भी बसन्त पंचमी धूम—धाम से नहीं मना सके। तीसरी बार देश तो स्वतंत्र हो गया लेकिन बापू की मृत्यु का शोक था। इस प्रकार यह डायरी तीन प्रकार की मनोदशा को अंकित करती है।

सन् 1962 में अजित कुमार की ‘अंकित होने दो’ और ‘शान्तिप्रिय द्विवेदी’ की ‘पारिव्राजक की प्रजा’ प्रकाशित हुई। ‘अंकित होने दो’ में अजित कुमार ऐसे ही विविध रूपों के साथ एक डायरी लेखक के रूप में भी हैं। इसी संदर्भ में महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचंद, और बाबू बालमुकुन्द आदि अनेक लेखकों की रचनाएँ इसी विधा के समीप पहुँच जाती हैं। अजित कुमार की डायरी एक तरफ अनुभूतियों को स्पष्ट करने वाली है वहीं रचना धर्मिता के मूल संवालों को भी उभारने में है। इसमें लेखक आधुनिकता के बढ़ते दबाव से व्यथित सा लगता है। इस डायरी में इस पक्ष को भी उठाया गया है कि आज औद्योगिक और नगरीकरण के कारण मानव अत्यन्त व्यस्त और व्यर्थ की भाग—दौड़ की समस्याओं के घेरे में उलझा है। लेखक इस डायरी से व्यक्ति को एक तरफ सजग और ईमानदार होने की सोच उत्पन्न करना चाहता है। वहीं दूसरी ओर सहृदय होने का सन्देश भी देना चाहता है। इस

बात से लेखक के व्यक्तित्व को समझने में आसानी हो जाती है। आधुनिक या नए साहित्यकार की यह एक विशेषता मानी जाती है। 'अज्ञेय' के शब्दों में—“आज का साहित्यकार अपने युग के बहुविध, बहुमुख और नए संघर्षों के पूरे आयाम को अंकित करने के लिए एक से अधिक नई नई साहित्यिक विधाओं या माध्यमों में रचना करता है। एक ही लेखक अब कवि, उपन्यासकार, कहानीकार, रेडियो रूपककार और डायरी लेखक हो गया है।”³⁸ वह न केवल परंपरा से चली आ रही कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक आदि विधाओं की रचना करता है बल्कि नवीन विधाओं जैसे—डायरी, रिपोर्टाज, इंटरव्यू आदि माध्यमों से जीवन का उल्लेख करता है।

सन् 1962 की शान्तिप्रिय द्विवेदी कृत 'परिव्राजक की प्रजा' में उनके ही जीवन के अनुभवों का सार तत्त्व है। “गाँव की पगडंडी पर विचरण करने वाले मुच्छन और चलकर साहित्य के क्षेत्र में ख्यातिलब्ध साहित्यकार के अलग-अलग अनुभवों को सहज भाषा एवं वर्णनात्मक शैली में प्रस्तुत किया गया है। परिव्राजक का पुत्र होना ही परिव्राजक ही प्रजा होना है।”³⁹ इस डायरी में लेखक ने विगत जीवन को संस्मरणात्मक रूप से मूल्यांकित किया है।

सन् 1960 से 1963 तक रघुवीर सहाय की 'दिल्ली की डायरी' शीर्षक से क्रमशः प्रकाशित स्तम्भों का संकलित रूप 'दिल्ली मेरा परदेश' नाम से सन् 1976 में प्रकाशित हुई। इसमें लेखक ने महानगरीय-सभ्यता एवं संस्कृति की समस्याओं को उठाया है। तथा उन समस्याओं के समाधान करने की कोशिश की है। एक पत्रकार होने के नाते इनकी अभिव्यक्ति का मूल स्वर व्यंग्य का है। इसमें विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत लिखी गई टिप्पणियाँ सांस्कृतिक संकट, अवमूल्यन, अस्मिता विहीनता और आधुनिक-सभ्यता के दिखावटीपन आदि की ओर संकेत करती हैं। जिसका अहसास आधुनिक समाज के हर संवेदनशील व्यक्ति को भली-भाँति हो रहा है।

डायरी ही एक विधा है जो अपने स्वभाव और चारित्रिक विशेषताओं के कारण विभिन्न सामाजिक-समस्याओं, समसामयिक परिवेश, लेखक के छंद तथा भिन्न-भिन्न साहित्य संदर्भों के माध्यम से लेखक के चिंतन प्रक्रिया को व्याख्यायित करती है। चिंतन एवं सृजनक्रम के उद्घाटन में सहायक डायरियों में साहित्यिक

दृष्टि से सबसे उल्लेखनीय कृति है गजानन माधव मुक्तिबोध की डायरी 'एक साहित्यिक की डायरी' जो कि सन् 1968 में प्रकाशित हुई। इसे समीक्षकों ने नवीनतम डायरी-विधा की मौलिक रचना कहा है। 'हिन्दी साहित्य के बृहत् इतिहास' में इस डायरी के संबंध में लिखा है कि—"साहित्यिक की वर्तमान जटिल परिस्थिति एक ईमानदार लेखक के दायित्व बोध और सृजन के दौरान उसके युग बोध के विभिन्न स्तरों को बड़ी ही कलात्मकता तथा सच्चाई से व्यक्त किया है। इस डायरी में मुक्तिबोध की चरम संवेदनशीलता और बौद्धिकता का अद्भुत योग है। एक साहित्यकार की आस्था और संघर्षों का यह प्रामाणिक दस्तावेज है।"⁴⁰

पहली बार इसमें साहित्य शास्त्र की कुछ समस्याओं को बहुत सरलता से उल्लेख किया गया है। इस डायरी की सामग्री नयी कविता के स्वभाव एवं चरित्र को रेखांकित करती है। नयी कविता का जो साहित्यशास्त्र है, उससे मानव और समाज दोनों के संदर्भ में समझाने का प्रयत्न किया गया है कि—"साहित्य जीवन से उपजता है और अन्ततः उसका प्रभाव भी जीवन पर ही होता है।"⁴¹ साहित्यकार परिवर्तन के परिणामों को देखता है न कि परिवर्तन की प्रक्रिया से साक्षात्कार होता है। इसके फलस्वरूप उसमें "झूठ का निर्माण होता है और डबल पर्सनैलिटी का वह शिकार हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में उसकी ईमानदारी पर प्रश्न चिह्न लगता है और वह अपनी तथाकथित अन्तर्दृष्टि वस्तु तत्त्व पर थोपता है, फाड़ हो जाता है।"⁴²

यह डायरी आधुनिक साहित्य की विसंगतियों, विषमताओं, समस्याओं तथा सामाजिक परिवेश जीवन के विभिन्न संदर्भों को एक-एक कर उभारने वाली रचना है। उन्होंने साहित्य संबंधित परंपराओं, मूल्यों और मान्यताओं जैसे संदर्भ पर भी विचार व्यक्त किये हैं। जिसके कारण उनकी रचना सृजन के आंतरिक बहाव को समझा जा सकता है। इस डायरी में मौलिक चिंतन का भी पक्ष उभर कर सामने आता है। सौंदर्य के पक्ष पर ये पंक्तियाँ कुछ इस प्रकार हैं—"प्राकृतिक सौंदर्य या नारी सौंदर्य का अवलोकन व्यक्तिबद्ध होने से सही अर्थों में सौन्दर्यानुभव नहीं कहा जा सकता। × × × सौन्दर्य तब उत्पन्न होता है जब सृजनशील कल्पना के सहारे, संवेदित अनुभव ही का विस्तार हो जाये।"⁴³ इसका भाव स्वर डायरी का है। इसमें दस प्रकरण हैं। प्रत्येक प्रकरण का प्रत्येक चरण विषय जगत् की परतें खोलता

जाता है। यथार्थ और स्पष्टता की दृष्टि से यह रचना डायरी के समीप चली आती है। कुछ चिंतन-मनन में डूबते हुए चलना और मनःस्थिति के अनुसार विवेचन करते चलना इसकी विशेषता है। कुछ इसी प्रकार कर्ण सिंह चौहान की रचना 'एक समीक्षक की डायरी' है।

सन् 1971 में प्रकाशित डॉ० हरिवंश राय बच्चन की 'प्रवास की डायरी' मिलती है। डायरी के नाम से ज्ञात होता है कि यह किसी यात्रा से संबंधित होगी किंतु इसमें बच्चन की अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा उभरकर सामने आयी है। "यह डायरी हमें लेखक की अंतरंग दुनिया में ले जाती है और उसके जीवन के उन महत्वपूर्ण क्षणों से हमारा साक्षात्कार कराती है जो उसकी जिन्दगी में कहीं निर्णायक तो रहे ही होते हैं। साथ ही जो ऊपर से बेहद सामान्य और खामोश भी होते हैं, लेकिन अन्तरगता से यही साक्षात्कार कभी-कभी डायरी की सीमा भी बन जाती है।"⁴⁴ इसमें लेखक एक चिंतक बना दिखाई देता है।

सन् 1973 की प्रकाशित 'दिनकर की डायरी' रामधारी सिंह दिनकर द्वारा कृत है। यह डायरी दिनकर के समूचे व्यक्तित्व को उजागर करती है। इस डायरी में 1961 से 1972 तक की घटनाओं और उनकी प्रतिक्रियाओं की अभिव्यक्ति मिलती है। वैयक्तिक, पारिवारिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय स्तर पर उनके चिंतन को समझने में उनकी यह डायरी विशेष सहायक सिद्ध हुई है। "इस डायरी से उभरती है एक समूचे कालखंड की तस्वीर। यही नहीं, यह डायरी पाठक को दिवंगत महाकवि के मनोजगत की यात्रा भी कराती है।"⁴⁵ इस डायरी में बारह वर्षों की झाँकी एवं लेखक के व्यक्तित्व की झाँकी के साथ ही उनके निजी विचार प्राप्त होते हैं। बहुत सी व्यक्तिगत बातें छोट दी गई हैं फिर भी कुछ उल्लेखनीय हैं। 23 मई, 1963 की डायरी में लिखते हैं—"मैं बहुत बेचैन हूँ चाहता हूँ कि कोई आकर कान में कह दे, 'तुम बेचैन क्यों हो? कुछ भी नहीं हुआ है।'"⁴⁶

सामान्यतः साहित्य की विविध विधाओं पर, हिंदी भाषा जगत की विभिन्न समस्याओं तथा समकालीन साहित्य पर उनके महत्वपूर्ण विचार उनकी इस डायरी में मिलते हैं। जिसमें से कुछ उल्लेखनीय अंश इस प्रकार हैं—

12 फरवरी, 1962 की डायरी में वह लिखते हैं—“पंत जी शालीन व्यक्ति हैं। वे जहर पीकर भी चुप रह जाते हैं। निराला जी थे औघड़ फकीर। जीवन भर उनका रास्ता गड़बड़ रहा। मगर मरकर तो इस फकीर ने सबको मार डाला। निराला जी पर जनता की जो भक्ति उमड़ी है, वही अन्ततः साहित्य को ही अर्पित भक्ति है।”⁴⁷

भाषा के साथ किए जाने वाले संघर्ष पर टिप्पणी करते हुए दिनकर ने 15 जनवरी, 1962 की डायरी में लिखा है—“ऐसी भाषा कहीं है ही नहीं, जो हर विचार के लिए, हर भावना के लिए, एक अलग शब्द रखती हो। चेतना की हर सनसनाहट एक नया शब्द मांगती है, लेकिन हर सनसनाहट के लिए अलग शब्द किसी भी भाषा में नहीं है। यानी सनसनाहट की ठीक-ठीक मात्रा का भी अभिव्यंजक शब्द कहीं नहीं है। प्रेम और घृणा, केवल दो शब्द हमारे पास हैं; जिनसे हम हजारों तरह की प्रीति और घृणा को अभिव्यंजित करते हैं। भाषाएं उसी तरह अपूर्ण हैं, जैसे मनुष्य खुद है।”⁴⁸

जगह-जगह पर डायरी में आध्यात्मिकता का पुट भी है और लेखक द्वारा लिखी गई सूक्तियाँ। उर्वशी की रचना प्रक्रिया को भली-भाँति समझने के लिए यह डायरी पढ़ना आवश्यक है। इस डायरी का अपना ऐतिहासिक महत्त्व है।

मोहन राकेश की डायरी सन् 1985 में उनकी मृत्यु के कई वर्ष बाद प्रकाशित हुई। यह डायरी 1948 से 1968 तक का कालखंड अपने भीतर समेटे हुए है। जो कि आधुनिक हिंदी साहित्य का महत्त्वपूर्ण दस्तावेज़ है। मोहन राकेश अपने समय के काफी विवादास्पद व्यक्ति रहे। लोगों के साथ उनकी दोस्ती दुश्मनी के किस्से बराबर चर्चा के विषय भी बनते रहे। उपेन्द्रनाथ अशक के साथ राकेश के बड़े घनिष्ठ संबंध थे। डायरी के अनेक पृष्ठों में अशक संबंधी चर्चाएँ हैं। मोहन राकेश ने अपनी डायरी में दूसरों के कथनों को भी संस्मरणात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है जिससे कुछ लोगों के व्यक्तित्व और कृतित्व पर कुछ प्रकाश पड़ जाता है। डायरी के तमाम पृष्ठ इस तरह के प्रसंगों से भरे हुए हैं। यद्यपि उन्होंने अपनी डायरी बहुत व्यवस्थित ढंग से नहीं लिखी है किंतु सन् 1948 से मई 1968 के बीच जिन प्रसंगों और घटनाओं का उन्होंने जिक्र किया है उसके आधार पर उनके

जीवन के 34 वर्षों की संघर्षभरी कथा बड़ी आसानी से रेखांकित की जा सकती है। डायरी के आरंभिक पृष्ठों में उन्होंने पत्नी के प्रति अपने घोर असन्तोष को व्यक्त किया है। मोहन राकेश की डायरी के पन्ने स्पष्ट करते हैं कि रचनाकार ने अपने भोगे हुये यथार्थ को अभिव्यक्त करने में कंजूसी नहीं बरती है। 8.8.64 की डायरी में लिखते हैं—“वे क्षण जबकि आदमी कुछ भी नहीं कर पाता, कुछ भी नहीं सोच पाता, कुछ भी नहीं चाह पाता, जबकि अपना आप रुका सा महसूस होता है—बहते पानी में रहकर घने सेंवार में उलझा—सा! जबकि अपनी शक्तियों पर अपना वश नहीं होता—जबकि गति नहीं होती, बहाव नहीं होता। केवल एक कंपकपी सी होती है—कंपकपी...”⁴⁹ सामाजिक परिवेश की परिस्थितियों ने लेखक के अंतर्द्वन्द्व को जिस तरह प्रभावित किया है, उसे वैसे ही डायरी में वर्णित किया है।

विवेकी राय की लिखी ‘मनबोध मास्टर की डायरी’ सन् 1986 में प्रकाशित हुई। इस डायरी के संबंध में डॉ० माजदा असद बताती हैं कि इस डायरी के आरंभ में लेखक लिखता है—“डायरी लिखने बैठा हूँ तो हरीकीर्तन कानों में गूँजने लगता है। पुस्तक के अन्त में ‘अरे क्या यही आठ जुलाई है जिसके प्रति मेरा इतना खिंचाव था।’⁵⁰

डॉ० विवेकी राय के अध्यापक जीवन की त्रासदियों का प्रामाणिक दस्तावेज़ है। ये रचनाएँ समकालीन अध्यापक—जीवन का समग्र रूप में समूची आड़ी—तिरछी रेखाओं और मुहावरों के साथ जीवंत चित्र खड़ा करती हैं। वर्तमान में शिक्षा की जो स्थिति है वह कहीं से भी शुभावह नहीं लगती। ऐसा नहीं लगता कि स्थिति में कभी परिवर्तन होगा और लेखक पाठकों को इसी चिंता में ले जाकर छोड़ देता है। शिक्षा की स्वातन्त्र्योत्तर स्थिति तो और भी भयावह है। शिक्षा की वर्तमान स्थिति का एक चित्र जैसे इसे एकदम नंगा कर देता है—“आज शिक्षा की मूल समस्या यह है कि स्कूल दुकान हो गये हैं। कॉलेज और यूनिवर्सिटियाँ मिल या फ़ैक्टरी हो गयी हैं। उनके संचालक निजी स्वार्थ में पवित्र उत्तरदायित्व को भूल गये हैं। सबसे शैक्षिक गन्दगी माध्यमिक स्कूलों में है। थोड़े से स्कूल सरकारी हैं, शेष सभी जनता द्वारा चलाए जाने की आड़ में व्यावसायिक केन्द्र, पार्टी केन्द्र और अधोगति केन्द्र बने हैं। वहीं अँगरेजी राज का एजुकेशन कोड का मजाक, वही अध्यापक की शारीरिक और

मानसिक दासता वहाँ मौजूद है। स्वराज्य के बाद जनसेवा के नाम पर प्रशासक जिस प्रकार सत्ताधारी होकर एकदम अंग्रेजी 'साहब' हो गये, उसी प्रकार शिक्षा-संस्थाओं के छोटे से लेकर बड़े सभी अधिकारी 'साहब' हो गये। वे रोब के पुतले हैं या अधिकारी के पुतले हैं। सत्ताधारी हैं। वे शिक्षा-जगत के सामन्त हैं। छात्र और अभिभावक उनकी प्रजा है। अध्यापक उनके नौकर हैं।⁵¹ शिक्षा में व्याप्त भ्रष्टाचार को लेखक ने पूरी तरह से उजागर कर दिया है।

श्रीकान्त वर्मा की 11 जनवरी, 1972 से 11 मार्च, 1986 तक की डायरियाँ मिलती हैं। श्रीकांत वर्मा अपनी डायरी में बनारस शहर का जो जीवंत वर्णन करते हैं उसकी कोई सानी नहीं है। 9 जनवरी, बनारस की डायरी में लिखते हैं— "बनारस, जो मेरी कविताओं में, काशी बनकर, बार-बार आता है, मेरा प्रिय शहर है। शिव का भी प्रिय शहर हैं, बंगाल की विधवाओं का भी, यूरोप और अमेरिका के गँजेड़ी और अफीमची युवकों का भी, मूर्तियों की तस्करी करने वालों का भी और जीवन-भर बगैर कुछ किए सिर्फ मरनेवालों का भी।... मैं बनारस में नहीं बसा। मगर बनारस मुझमें बस गया। मैं कैसे रोक सकता था बनारस को बसने से? उसने मुझमें जहां भी खाली जगह देखी, घर बना लिया।"⁵²

सन् 1988 में अमृता प्रीतम की रचना 'सात मुसाफिर' प्रकाशित हुई। इसमें रुमा की 'डायरी एवं मेरी 1985 की डायरी' मिलती है।

मलयज की डायरी तीन खंडों में है। पहले दो खंड एक-एक दशक के हैं और तीसरा खंड बारह वर्षों का। मलयज ने 1951 से डायरी लिखना शुरू की, तब वे सोलह साल के थे। यह सिलसिला सन् 1982 तक चलता रहा। इस प्रकार उन्होंने बत्तीस साल तक डायरी लिखी। नामवर सिंह 'मलयज की डायरी-1' (1951-1960) की भूमिका में लिखते हैं— "मलयज की डायरी रोजनामचा नहीं है। रोज़-रोज़ पन्ना भरने की कोई कसम नहीं। लिखा तभी जब लिखने का मन हुआ, कोई वाक्या ऐसा हुआ जो टीप कर रख लेने लायक लगा। लेकिन लिखा तो फिर पूरी तरह डूब कर ही— उसी तन्मयता के साथ जैसे कविता, कहानी या समीक्षा ! कोई पूछता तो मलयज शायद यही कहते कि जिन दिनों की डायरी नहीं है उन्हें उनकी उम्र में शामिल न किया जाए ! 'जे दिन गए राम बिनु देखे। तो विरंचि जनि

पारहिं लेखे।⁵³ 'हँसते हुए मेरा अकेलापन' (1982) में मलयज ने अपनी डायरी का संकलन और संपादन किया।

मलयज की डायरी के विषय में रमेशचन्द्र शाह अपनी डायरी में लिखते हैं—
“मलयज की डायरियाँ मलयज के अन्तर्जीवन का सबसे गहरा साक्ष्य रचती हैं।”⁵⁴
मलयज की डायरी अन्तरात्मा का आईना ही नहीं, बल्कि शब्दों से रची हुई एक भरी पूरी-दुनिया है।

‘धुंध से उठती धुन’ निर्मल वर्मा की नवीनतम कृति है। यह कृति साहित्यिक विधा की दृष्टि से डायरी है। यह 1997 में प्रकाशित हुई।

आज के संदर्भ में प्रकाशन जगत में देखें तो डायरी की बाढ़ आई हुई है, जो डायरियाँ प्रकाशित हो रही हैं, उनसे लेखक के विचार पर तो रोशनी पड़ती है किंतु उसके जीवन पर रोशनी नहीं पड़ती है। इस संदर्भ में एकांत श्रीवास्तव की डायरी कविता और आलोचना के संबंध में विचार करती है। इसमें लेखक का रोज़मर्रापन नहीं झाँकता, जबकि डायरी में लेखक का रोज़मर्रापन के साथ चिंतन-मनन होना आवश्यक है।

‘डायरी : अंतर्जीवन के साक्ष्य’ में दस लेखकों की डायरी के पन्ने सम्मिलित हैं—रमेशचंद्र शाह, महेन्द्र राजा जैन, मनोहर काजल, रामेश्वर द्विवेदी, रजनी गुप्त, राजेश जैन, महावीर अग्रवाल, राजेन्द्र उपाध्याय, विजय कुमार और शीला त्रिपाठी।

शीला त्रिपाठी ने ‘दुख ही जीवन की कथा रही’ डायरी अंश प्रस्तुत किया है। यह अंश एक परिवार के वृत्तान्त को दर्शाता है। यह 10 मई 1985 को लिखा गया और 2006 में प्रकाशित हुआ।

‘कोहरे में बाँसुरी’ रामेश्वर द्विवेदी का डायरी अंश शीला त्रिपाठी के डायरी अंश के विपरीत है। यह वर्तमान में चलता है, अतीत में नहीं। यह 2006 ‘मार्च’ से लेकर अगस्त 2006 तक है। इस डायरी अंश में रामेश्वर द्विवेदी माता-पिता, संतान, बीमारी, नौकरी, आदि को प्रस्तुत करते हैं।

महावीर अग्रवाल की डायरी 1972 से लेकर 2006 तक फैली पड़ी है। उसी के महत्वपूर्ण चुनिंदा अंश ‘डायरी : अंतर्जीवन के साक्ष्य’ में प्रकाशित हैं। इस डायरी

के अंशों में हमें उनकी रणनीति, उनकी कमजोरियाँ, सीमाएँ आदि जान लेते हैं। इन डायरी के अंशों को पढ़कर हम यह जान लेते हैं कि महावीर अग्रवाल अपने बड़प्पन को कितने जतन से ढँककर चलते हैं। अरुण प्रकाश 'गद्य की पहचान' में लिखते हैं— "यदि डायरी में अत्यधिक पॉलिश हुई तो वह कंस्ट्रस्ट लगने लगती है। यदि उसका खुरदुरापन थोड़ा भी बचा रह जाता है वह उसे विश्वसनीय ही नहीं सत्य के निकट भी बनाए रखता है।"⁵⁵ यह खुरदुरापन सबसे अधिक हमें इस संकलन में महावीर अग्रवाल की डायरी में लगता है।

रमेशचंद्र शाह की डायरी में एक रचनाकार, एक नागरिक, एक मनुष्य, एक परिवारी सभी एक साथ उपस्थित हैं। कृष्ण बिहारी मिश्र 'अकेला मेला' के विषय में लिखते हैं— "अकेला मेला में सूखे तथ्यों का सपाट बयान नहीं है, तथ्यभित्तिक चिन्तन की ऊष्मा और विरल सर्जनशीलता है। किन्तु इस चिन्ता के साथ कि 'अकेला मेला' सामान्य व्यक्ति की डायरी नहीं है, जिसमें निजी दुःख-सुख और परिजन-पुरजन के मार्मिक जीवन-प्रसंगों का अलंकृत विवरण होता है। यह एक पांतेय बौद्धिक और विशिष्ट रचनाकार की डायरी है, जो समानधर्माओं से निरंतर संवादरत है। यहाँ संवाद के बिन्दु अनेक हैं।"⁵⁶ स्पष्ट है कि यह डायरी सामान्य सहृदय की नहीं, बल्कि विशिष्ट बौद्धिक की डायरी है।

सन् 2008 में प्रकाशित रामदरश मिश्र की 'आते जाते दिन' है। इस डायरी के प्रारंभ में ही इसके संदर्भ में रामदरश मिश्र लिखते हैं— "स्व भी है, पर भी है, यात्राएँ भी हैं, गोष्ठियाँ भी हैं, आलोचना भी है, कथा भी है, प्रश्न भी है, उन पर चिंतन भी है, क्षण भी है, प्रहर भी है और सभी कुछ सहज-भाव से है।"⁵⁷

उनकी एक और डायरी (आस-पास) 2010 में प्रकाशित हुई।

नरेंद्र मोहन की डायरी दो भागों में आई 'साए से अलग' और 'साथ-साथ मेरा साया'। आजकल (पत्रिका) में वरिष्ठ लेखक-समीक्षक महेश दर्पण 'साहित्य इस वर्ष' (शीर्षक) में लिखते हैं— "नरेन्द्र उन लेखकों से सहमत नहीं हैं, जो यह कहते हैं कि डायरी केवल निजी क्षणों का संग्रह है। वह डायरी को ऐसी चीज़ भी नहीं मानते कि वह लेखक के निधन के बाद ही प्रकाश में आए।... उनका कहना है कि डायरी भयभीत व्यक्ति नहीं लिख सकता।"⁵⁸

इस विधा की ओर सजग रूप से कुछ आधुनिक रचनाकार प्रवृत्त भी हो रहे हैं। डायरी विधा की स्वतंत्र कृतियों के अतिरिक्त विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में फुटकर रूप में डायरियों का प्रकाशन हुआ और इसके प्रकाशन की निरंतरता बनी हुई है। जिसमें लेखकों ने अपनी मानसिकता का प्रसंगवश प्रकाशन किया है और जिसमें लेखकों के निजी एवं आत्मीय अनुभवों का उल्लेख हुआ है। हिंदी के कई ऐसे लेखकों का साहित्य डायरियों के रूप में पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होता रहा है और निरंतर हो रहा है। कई साहित्यिक पत्रिकाओं ने तो इस विधा के महत्त्व को समझ कर डायरी अंक भी निकाले हैं। जिसमें डायरी विधा की रूप-रेखा और डायरियों की समीक्षाओं के साथ-साथ डायरियों के अनेक रूप भी प्रकाशित हुए। इस विधा के माध्यम से रचनाकारों में चिंतन और उनके सृजन के परिप्रेक्ष्य में एक सहज अभिव्यक्ति भी सम्भव हुई। इस प्रकार पत्र-पत्रिकाओं और स्फुट लेखन ने डायरी विधा का एक विस्तृत संसार पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया, जिसके परिणामस्वरूप डायरी उन सब गद्य विधाओं से ऊपर उठकर वैयक्तिकता और यथार्थ शाश्वत् सत्य को व्यक्त करने में समर्थ हुई।

‘हंस’ पत्रिका के आत्मकथा अंक (जनवरी, 1932) में कुछ डायरियों के अंश मिलते हैं। ‘महात्मा गांधी’ के चरणों में मुंशी अजमेरी के राय कृष्णदास को लिखे गए दो पत्र हैं। इनमें गांधी जी के साथ संपर्क के क्षणों का विवरण प्रस्तुत है जो कि दिनचर्या के रूप में है। यह सिलसिला 11.9.1929 से 19.9.1929 तक का है। सन् 1933 के भगवद्दयाल वर्मा द्वारा लिखित ‘सिंधिया’ व ‘होल्कर’ की डायरी मिलती है। इस डायरी में पूना के दफ्तर में प्राप्त लगभग सौ वर्ष पहले के प्राचीन 3,000 पत्रों के आधार पर राजाओं की दिनचर्या का पता चलता है। ‘हंस’ पत्रिका के ‘प्रेमचन्द’ अंक में शिवरानी देवी की 25 जून, 1936 की लिखी डायरी का अंश मिलता है। ‘नयी धारा’, जून, 1950 में ‘डायरी के पन्ने एकान्त विचार’-प्रोफेसर हंसराज के मिलते हैं। ‘ज्ञानोदय’, मार्च व मई 1956 में, हस्ती के दास्तान उल्टे बरक-गोपी कृष्ण और डायरी की धड़कने-कन्हैया लाल मिश्र प्रभाकर। ‘कल्पना’ जनवरी, 1958 में मौखिक साहित्य की डाइलैक्टिक्स और नवलेखन-राम स्वरूप चतुर्वेदी, लेखक की नोटबुक से-शमशेर बहादुर सिंह के डायरी के पन्ने मिलते हैं।

इसी प्रकार 'समालोचक' 1959 के मई व अक्टूबर में दिल्ली डायरी-शिवदान सिंह चौहान, ताशकंद की डायरी-शिवदान सिंह चौहान। ज्ञानोदय में क्रमशः मार्च, 1960, नवम्बर 1961, सितम्बर, अक्टूबर 1964, जनवरी, मार्च, सितम्बर, अक्टूबर 1965 में हाशिये पर-जगदीश नारायण माथुर, भविष्य का वातायन-भिक्षु, अन्धेरी रात का गुलाब-शिवप्रसाद सिंह, थका हुआ पानी और शमशीरे-कमलेश्वर, बर्फ के टुकड़े-दुधनाथ सिंह, लीविंग मैटर और मैं-वीरेन्द्र कुमार जैन, बम्बई की डायरी-नारायण मुदगल, तरल पीड़ा की धारा-राजनाथ सुमन, हम वे और भीड़-हरिशंकर परसाई, एक था समाज एक है कला-मिर्जा इस्माइल बेग, नास्तिक की खोखल और युगीन आशंका; कैलाश बाजपेयी। सारिका 1965 के नवम्बर में देवदासी की डायरी-माताहारी। ज्ञानोदय के दिसम्बर 1965, जुलाई, नवम्बर 1966 ने डायरी के स्वर-सोमावीरा, नितान्त निजी-ममता अग्रवाल, डायरी के पाँच पृष्ठ-विश्वनाथ त्रिपाठी, पेरिस नगर जो खुद कलाकार है-प्रेमलता वर्मा, बम्बई पुरुषत्वहीन द्वीप पर-रविन्द्र कालिया, कलकत्ते का जाक जिक्र तूने हमनशी-अहमद सलीम। धर्मयुग, जनवरी, अप्रैल, मई, 1967 में एक शरतीय आत्मा की डायरी-रामनारायण उपाध्याय, एक सैनिक माँ की डायरी-चतुष्पाणि सलवान, एक बनजारे की डायरी-जितेन्द्र सिंह।

यह समस्त विवरण अधूरा रहेगा, जब तक कि 'लहर' पत्रिका का उल्लेख न किया जाए। यही मात्र एक ऐसी पत्रिका है, जिसका डायरी विशेषांक दो भागों में सन् 1967 में प्रकाशित हुआ। जिसका पूरा-पूरा श्रेय श्री प्रकाश जैन एवं मनमोहनी को जाता है।

'लहर' 1967 मार्च 'डायरी अंक' में कई डायरियाँ प्रकाशित हुईं जिनके शीर्षक इस प्रकार हैं- आज का पृष्ठ-गोविन्द मिश्र, चिन्तन की प्रक्रिया में-शिवकरी लाल वर्मा, जलते प्रश्न और डायरी के कुल पृष्ठ-धनन्जय, डायरी के प्रसंग-सुरेन्द्र चौधरी, होने और न होने के बीच-कुमारेन्द्र पारसनाथ सिंह, बक रहा हूँ-अजित कुमार, विगत कुछ वर्षों में-राजेन्द्र किशोर, डायरी के पृष्ठ-जितेन्द्र पाठक, इतिहास की मृत्यु-सुरेन्द्र अरोड़ा।

इसी प्रकार 1967 के 'लहर' अप्रैल 'डायरी अंक' में भी डायरियाँ देखने में आती हैं—स्पीकरान्टक—सुदर्शन चोपड़ा, बारिस बाहर और भीतर—गजानन माधव मुक्तिबोध, अनुराग की कोयलें—सुरेश जोशी, आत्मलीन—जगदीश चतुर्वेदी, संवेदना के स्तर पर, अपराधियों के बीच—रमेश गौड़, चेतना के ये अंतरंग क्षण—विष्णु प्रभाकर, भारत की जनता—माऊ समर्थ, एक हजार चार सौ बत्तीस दिन पूर्व—ओम प्रभाकर, डायरी के पृष्ठ—श्री मति विजय चौहान। 'धर्मयुग' जनवरी 1971 के अंक में भी डायरी मिलती हैं। जलता हुआ कुन्दा, चीटियाँ और बुनियादी अधिकारी—धर्मवीर भारती। सारिका में क्रमशः अगस्त 1972, नवम्बर 1977, नवम्बर 1978 में लाइट्स आउट्स—लाइट्स इन—कामता नाथ, वर्जीनियाँ गुल्फ की डायरी—सरोज वशिष्ठ, ब्रज की डायरी—रमेश मिश्र।

डायरी के संदर्भ में हम आज की पत्र-पत्रिकाओं को देखे तो एक निरंतरता के साथ अब लगभगतः सभी पत्र-पत्रिकाओं में डायरियाँ प्रकाशित हो रही हैं और इस विधा के प्रति जागरूक भी हो रही हैं। उदाहरण के लिए—“दक्षिण अफ्रीका की डायरी—गिरिराज किशोर”⁵⁹, “डायरी से—परमानंद श्रीवास्तव”⁶⁰, “मोहन गाता जायेगा—विद्यासागर नौटियाल”⁶¹, “गालिब देर में तुझे मुसलमाँ गिना गया है—प्रमोद वर्मा”⁶², “मेरी डायरी में गालिब—विष्णुचन्द्र शर्मा”⁶³, “लेखक की नोटबुक से—परमानंद श्रीवास्तव”⁶⁴, “सभ्य समाज में असभ्य कवि—एकान्त श्रीवास्तव”⁶⁵, “मलयज की नज़र में—रामशेर बहादुर सिंह”⁶⁶, “सोच की परतें—यशपाल वैद”⁶⁷, “एक मृत्यु का साक्ष्य—ओभा शर्मा”⁶⁸, “निसर्ग का वरदान—विजेन्द्र”⁶⁹, “बंगलूर डायरी—नरेन्द्र जैन”⁷⁰, “एक वकील की डायरी—विष्णुस्वरूप श्रीवास्तव”⁷¹, “क्या हम बुरे नहीं फँसे?—तेजनाथ धर”⁷², “डायरी के पन्नों से—रमेश चन्द्र शाह”⁷³, “वेनिस में विश्राम—कृष्ण बलदैव वैद”⁷⁴, “यायावर की डायरी—सत्यनारायण”⁷⁵, “सी.आई.सी.यू. 9/19—रामकुमार कृषक”⁷⁶, “शशांक की डायरी से कुछ पृष्ठ”⁷⁷ अंकित हैं। “डायरी के पन्नों से—रमेश चंद्र शाह”⁷⁸, “एक साहित्यिक की राजनीतिक डायरी—श्रीकान्त वर्मा”⁷⁹ (जो पहली बार प्रकाशित हो रही है) “नंदीग्राम डायरी—पुष्प—राज”⁸⁰ “दि गर्ल व्हू प्लेड विद फायर—फ्रैंक हुजूर”⁸¹ आदि डायरियाँ हैं। नवम्बर, 2004 की पत्रिका में ‘शिवांक’ की डायरी की विवेचना रामकुमार कृषक करते हैं जिसका

शीर्षक 'आज पेड़ बहुत खुश हैं'। हीरक जयंती वर्ष, मई, 2004 आजकल पत्रिका में नरेन्द्र मोहन की 'चार दिवसीय लाहौर यात्रा की डायरी' के कुछ अंश छपे। 'रामविलास जी की पहली डायरी' शीर्षक से आजकल पत्रिका, सितम्बर, 2012 में छपी। इसी अंक की पत्रिका में शीर्षक 'डायरी के पन्ने' छपी।

'वर्तमान साहित्य' वर्ष 2013 की पत्रिकाओं में डॉ० रामविलास शर्मा जी की डायरी की किश्तें एक निरंतरता के साथ प्रकाशित हो रही हैं। जिसकी प्रस्तुति विजय मोहन शर्मा ने की है।

'हंस' वर्ष 2013 की पत्रिकाओं में निरंतर रूप से 'अवध डायरी' के अंश छप रहे हैं। जिनका अनुवाद एवं प्रस्तुति राजेन्द्र चंद्रकांत राय ने की है।

इस प्रकार डायरियाँ पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशित हो रही हैं। ये डायरियाँ अपने मर्म उद्घाटन द्वारा पाठक के हृदय को छूती हैं। तथा इस विधा को सही ढंग से समझने में सहायक सिद्ध होती हैं।

उपर्युक्त डायरियों के अतिरिक्त हमें राजनीतिक डायरियाँ भी मिलती हैं जिनको संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि इस विधा को आरंभ करने तथा उसे मज़बूत आधार प्रदान करने का श्रेय स्वतंत्रता संग्राम के मध्य के राजनीतिज्ञ नेताओं को है लेकिन विशेष रूप से इसका श्रेय महात्मा गांधी को है क्योंकि डायरी की मौलिक धारणा को महात्मा गांधी के ही प्रभाव से भारत में डायरी लेखन प्रारंभ हुआ।

मुख्यतः राजनीतिक डायरियों में भी दो प्रकार की डायरियाँ मिलती हैं, पहली वह डायरियाँ जिसमें प्रसिद्ध राजनेताओं के जीवन को आधार बनाकर उसके निकटतम व्यक्तियों द्वारा डायरियाँ लिखी गई हैं दूसरी वह जो स्वयं राजनेता द्वारा लिखी गई हैं। राजनेताओं की डायरी राजनीतिक गतिविधियों की दृष्टि से तो महत्वपूर्ण हैं ही, साथ ही अन्य प्रकार की सामग्रियाँ भी मिलती हैं। प्रायः इन डायरियों में समसामयिक घटनाओं का इतिहास रहता है। इनकी डायरियों में इनके पीछे छिपे रहस्यों का उद्घाटन हुआ करता है, तत्कालीन राजनीतिक घटनाओं का

विवेचन होता है। इसलिए इतिहास लेखन के लिए इनको पढ़ना आवश्यक है। राजनीति से जुड़े व्यक्तियों की जीवन-दृष्टि एक विशिष्ट दिशा से संबंधित होती है। जिसके लिए नितान्त ईमानदारी की आवश्यकता होती है। फिर भी विशिष्ट राजनीतिक महापुरुषों ने अपनी डायरियों में बड़ी ईमानदारी से लिखने का प्रयास किया है।

गांधी युग के डायरी-साहित्य की ओर दृष्टि डालें तो हमें कुछ ऐसी महत्वपूर्ण कृतियाँ प्राप्त होती हैं, जो न केवल भारतीय भाषाओं के साहित्य में बल्कि समस्त विश्व के डायरी-साहित्य में विशिष्ट स्थान की अधिकारिणी बनने योग्य हैं। इनमें से प्रमुख डायरी 'महादेव भाई की डायरी' जो मूल गुजराती से हिंदी में आयी। महादेव भाई नियमित रूप से डायरी लिखा करते थे। यह डायरी तीन भागों में 1948-1951 में प्रकाशित हुई। महात्मा गांधी जी के संपर्क में आने वाले संसार-भर के सैकड़ों राजनीतिज्ञों, कूटनीतिज्ञों, विद्वानों एवं पत्रकारों आदि की चर्चा महादेव भाई ने बड़ी ही सूक्ष्मता एवं गम्भीरता से की है। भारत की स्वतंत्रता के लिए किये गये संघर्षों का उल्लेख तो ऐतिहासिक किताबों से भी हो जाता है, लेकिन देश की झाँकी इस डायरी के अतिरिक्त कहीं नहीं मिलती। गांधी के अभिन्न मित्र एवं अनुयायी 'महादेव भाई' को विश्व के महान् डायरी लेखकों में गिना जाता है। 1917 में गांधी का साथ होने से लेकर 1942 में अपने निधन वर्ष तक निरंतर अपनी डायरी लिखते रहे। यह डायरी यरवदा जेल में 1932-33 में लिखी गई थी। डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि महादेव भाई ने डायरी में स्पष्ट लिखा है कि—“सन् 1917 से सन् 1942 तक की डायरी याने भारत के अहिंसक राष्ट्रीय आंदोलन का जीता जागता दिलचस्प इतिहास।”⁸²

डायरी का पहला भाग गांधी जी द्वारा सर सम्यूअल होर को लिखे गए पत्र में प्रारंभ होता है। महादेव देसाई अपनी डायरी के ऐसे आकर्षक प्रसंग 'नव-जीवन', 'यंग इंडिया' और हरिजन पत्रों में प्रकाशित करते रहते थे। महादेव भाई का निधन हो जाने पर उनका कार्यभार बहुत दिनों तक मनुबहन गांधी को संभालना पड़ा था। मनुबहन का प्रशिक्षण राष्ट्रपिता ने अपनी देख-रेख में किया था और प्रारंभ से ही उनमें डायरी लिखने की प्रवृत्ति पैदा की थी। महादेव देसाई की डायरी के समान

ही मनुबहन गांधी की गुजराती से अनूदित डायरी है। जो भिन्न-भिन्न शीर्षकों में 1952 और उसके बाद प्रकाशित हुई। महात्मा गांधी के परिवार की सदस्या होने के कारण 'मनुबहन की डायरी' दिसम्बर 1946 से 30 जनवरी 1948 (निधन तिथि तक) उनके जीवन का सच्चा दस्तावेज है। वे डायरी लिख-लिखकर गांधी जी को दिखाती थीं और उस पर गांधी जी के हस्ताक्षर लेती थीं। इस डायरी में उनकी उस समय की मनोभावनाएँ, मनोस्थिति, कार्यकलापों और गतिविधियों का यथार्थ चित्रण है। यह विशाल डायरी हिंदी में चार भागों में विभक्त है—

1. एकता चलो रे— '19.12.46 से 4.3.47 तक' इस डायरी में गांधी की नोआखली यात्रा का वर्णन है।
2. कलकत्ते का चमत्कार—'1.8.47 से 7.8.47 तक' यह गांधी के कलकत्ता प्रवास की डायरी है।
3. बिहार की कौमी आग में— '5.3.47 से 24.5.47 तक' इसमें गांधी की बिहार यात्रा है।
4. दिल्ली यात्रा—'8.9.47 से 30.01.48 तक' है।

इस डायरी में गांधी का दिल्ली निवास एवं उनके निधन तक का वर्णन है। इस समस्त डायरियों में महात्मा गांधी के महान् प्रयत्नों का विवरण है। गांधी युग की एक और महत्त्वपूर्ण डायरी जमुनालाल बजाज की डायरी है। बजाज की डायरी में सन् 1912 से 1915 तक के जीवन का चित्रण है। इसका प्रकाशन सन् 1966 में हुआ। इसके प्रथम खंड में जमुनालाल बजाज के गांधी के संपर्क में आने से पहले का वर्णन है। उनके संपर्क में आने के बाद उनके जीवन में बदलाव आया। यह डायरी दैनिकता के साथ लिखी गई है। इसमें व्यक्तिगत दिनचर्या, विविध-यात्राओं, प्रवासों एवं विविध क्षेत्रों के व्यक्तियों से सम्पर्क और महत्त्वपूर्ण घटनाओं का संक्षिप्त उल्लेख मिलता है।

श्री बिड़ला एक बड़े उद्योगपति होते हुए भी अपने जीवन को साहित्य एवं कला की धारा से जोड़े हुए थे। सुशीला नायर की डायरी गांधी कारावास कथा का वर्णन करती है। राष्ट्रपिता जैसी ही एक विभूति आचार्य विनोबा भावे हैं। भूदान-आंदोलन के संबंध में उन्होंने सारा देश पैदल छान मारा। सन् 1948 में

उन्होंने जो पद-यात्रा की थी उसमें जगह-जगह अनेक भाषण दिये थे जिनका सारा संकलन डायरी के रूप में हुआ है। डायरी के ही रूप में भाषणों का ही दूसरा संकलन "राज्यपाल की डायरी भाग-1 के नाम से प्रकाशित हुआ। इसमें पदग्रहण वाले दिन (15.6.1957) के भाषण से लेकर 21.06.1958 तक के भाषण संकलित हैं।"⁸³

पद यात्रा से संबंधित लिखी गई निर्मला देश पांडे और दामोदर दास मूँदडा की दो डायरियाँ हैं—1. सर्वोदय पदयात्रा, 2. विनोबा के साथ।

सीताराम सेक्सेरिया की डायरी 'एक कार्यकर्ता की डायरी' सन् 1972 में प्रकाशित हुई, जिसमें सन् 1929 से लेकर 1942 तक के अनुभवों का उल्लेख है।

भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद की डायरी प्रकाशित डायरियों में से है। राजनेताओं द्वारा जो डायरियाँ लिखी गईं उनमें स्वतंत्रता से पूर्व तथा स्वतंत्रता के बाद की डायरियाँ प्रमुखतः सम्मिलित हैं। इन डायरियों में पत्रकार कुलदीप नैय्यर की डायरी, भूतपूर्व प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर की 'मेरी जेल डायरी' है। इसका दूसरा भाग भी बाद में प्रकाशित हुआ।

इसी श्रृंखला में जयशंकर नारायण की जेल डायरी, रामलाल वर्मा की 'विद्रोही कैदी डायरी' लालकृष्ण आडवाड़ी की जेल डायरी नजर बंद लोकतंत्र। शांताकुमार की 'एक मुख्यमंत्री की डायरी' आदि। जबकि इससे पूर्व राष्ट्रपिता गांधी की प्रकाशित डायरियों की श्रृंखला में श्रीमती विजय लक्ष्मी पंडित की 'जेल के वे दिन' सीताराम सेक्सेरिया की डायरी प्रकाशित हो चुकी थी। इस प्रकार राजनीतिक डायरियों को देखते हुए यह स्वतः ही सिद्ध हो जाता है कि इतिहास-लेखन के लिए इन डायरियों का पढ़ना नितांत आवश्यक है।

उपर्युक्त संदर्भों व तथ्यों द्वारा स्पष्ट है कि डायरी आधुनिक लोकप्रिय विधा है। इसका समूचा साहित्य निरंतर विकसित होता जा रहा है। अनेकानेक पत्र-पत्रिकाएं डायरी साहित्य को विकसित कर रही हैं तथा पूर्ण रूप से अपना सहयोग प्रदान कर रही हैं। जिसके विकास की भविष्य में काफी संभावनाएँ हैं।

संदर्भ

1. रामप्रसाद त्रिपाठी (संपादक), हिन्दी विश्वकोश, (खंड-पाँच), पृ० 226-227
2. डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया, विधा विविधा, पृ० 61
3. "The Memories du Comte de Grammont, by Hamilton. Belong to French literature. Written about 1701, it was published at Cologne in 1713. Sir John Rerisby, his memoirs were published in 1734; Lady Warwick; her diary, which covers the period 1666-72, was published in 1848. The Memoirs of Lady Fanshawe, of great historical interest, appeared in 1829." **Lagouis and Cazania, History of English literature, P. 680**
4. "Evelyn is interesting. Historians give great credit to his precise, detailed narrative, which aims only at exactitude, and yet will offer notations that go beyond mere facts, opening up new perspectives. The story of his travels is a mine of information about France, Italy, and Holland in the middle of the seventeenth century; and the idea that we can form of English life under the last Kings of the Stuart dynasty and William III owes much to his pages." वही, पृ० 681
5. "Pepys is a writer of unique interest. In no literature can one find so absolutely sincere a confession; for it was not written with a view to being published, nor even deciphered, and its intention was only to recall the minutest detail of daily life to a personality naively fond of preserving and living through it again." वही, पृ० 682
6. अजित कुमार (संपादक), बच्चन रचनावली, (खंड-आठ) (प्रवास की डायरी) (भूमिका से)
7. "The diary form began to flower in the late Renaissance when the importance of the individual began to be stressed. In addition to their relation to the diarists' Personality, diaries have been of immense importance for the recording of social and political history.

...the English diarist John Evelyn is surpassed only by the greatest diarist of all Sammaul Papys whose diary from Jan. 1, 1660 to May 31, 1669 given both an astomishingly frailties and a stunning picture of life in London, at the court and the theatre in his own house hold and in his Navy Office...

In the 20th Century, the 'Journal of Katherine Mansfield (1927) the two volume. Journal of Andregide (1939, 1954) and the five volume Diary of Virginia Woolf (1977-1984) are among the most notable examples."

The New Encyclopédica Britanica, Vol-4, P.67-68

8. रामप्रसाद त्रिपाठी (संपादक), हिन्दी विश्वकोश, (खंड-पाँच), पृ० 226-227
9. वही, पृ० 226-227
10. "The diary kept by King Edward VI as a boy. Sir William Dugdale (1605-86), Edward Lake, Henry Teonge and Roger Lowe. Celia Fiennes 1685... But two great 17th C. diarists were John Evelyn (1620-1706) and Samuel Pepys (1633-1703)." **J.A. Cuddon, A dictionary of literary terms, p. 187**
11. "Mary, Countess Cooper (1685-1724), Elizabeth Byrom (1722-1801), Fanny Burney (1752-1840), Lady Mary Coke (1756-1829), Mrs. Lybbe Powys (1756-1808)." वही, पृ० 187
12. "Lady Holland (1770-1845), Mary Frampton (1773-1846), Lady Charlotte Bury (1775-1861), Ellen Weeton (1776-1850), Elizabeth Fry (1780-1845), Caroline Fox (1819-71) and Margaret Shore (1819-39)." वही, पृ० 187-188
13. "George Eliot and Queen Victoria." वही, पृ० 188
14. अरुण प्रकाश, गद्य की पहचान, पृ० 140
15. डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया, साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ, पृ० 25
16. डॉ० हरवंशलाल शर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (चतुर्दश भाग), पृ० 523
17. वागर्थ (पत्रिका), अंक 169, अगस्त, 2009, पृ० 19

18. वही, पृ० 19
19. वही, पृ० 19
20. डॉ० हरवंशलाल शर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (चतुर्दश भाग), पृ० 524
21. डॉ० माजदा असद, गद्य की नई विधाओं का विकास, पृ० 68
22. डॉ० चन्द्र भानु सीताराम सोनवणे, पृ० 183
23. डॉ० माजदा असद, गद्य की नई विधाओं का विकास, पृ० 69
24. अजित कुमार (संपादक), बच्चन रचनावली, (खंड—आठ) (प्रवास की डायरी) (भूमिका से)
25. डॉ० जीवन प्रकाश जोशी, गद्यकार बच्चन, पृ० 140—141
26. वही, पृ० 141
27. वही, पृ० 141—142
28. डॉ० विश्वनाथ शुक्ल, आस्ट्रेलिया की डायरी, (भूमिका से)
29. मोहन राकेश, मोहन राकेश की डायरी, (भूमिका से)
30. डॉ० माजदा असद, गद्य की नई विधाओं का विकास, पृ० 60
31. डॉ० धीरेन्द्र वर्मा, मेरी कालेज डायरी, (परिचय से)
32. वही, पृ० 41
33. वही, पृ० 69
34. डॉ० कैलाश चन्द्र भाटिया, विद्या विविधा, पृ० 69
35. धर्मवीर भारती, ठेले पर हिमालय, पृ० 69
36. गुलाबराय, मेरी असफलताएँ, पृ० 168—170
37. डॉ० माजदा असद, गद्य की नई विधाओं का विकास, 75
38. डॉ० हरवंशलाल शर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (चतुर्दश भाग), पृ० 535
39. शान्तिप्रिय द्विवेदी, परिव्राजक की प्रजा, (भूमिका से)

40. डॉ० हरवंशलाल शर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (चतुर्दश भाग), पृ० 534
41. गजानन माधव मुक्तिबोध, एक साहित्यिक की डायरी, पृ० 11
42. वही, पृ० 126
43. वही, पृ० 18-19
44. अजित कुमार (संपादक), बच्चन रचनावली (खंड-आठ) (प्रवास की डायरी) (रेपर से)
45. रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर की डायरी, (रेपर से)
46. वही, पृ० 85
47. वही, पृ० 41
48. वही, पृ० 281-282
49. मोहन राकेश, मोहन राकेश की डायरी, पृ० 259
50. डॉ० माजदा असद, गद्य की नई विधाओं का विकास, पृ० 76
51. विवेकी राय, मनबोध मास्टर की डायरी, पृ० 148
52. रामप्रसाद त्रिपाठी (संपादक), श्रीकान्त रचनावली, (खंड-दो), पृ० 460
53. नामवर सिंह (संपादक), मलयज की डायरी-1 (1951-1960), (भूमिका)
54. वागर्थ (पत्रिका), सितम्बर, 2010, पृ० 106
55. अरुण प्रकाश, गद्य की पहचान, पृ० 147
56. वागर्थ (पत्रिका), सितम्बर, 2010, पृ० 106
57. रामदरश मिश्र, आते जाते दिन, (भूमिका से)
58. आजकल (पत्रिका), दिसम्बर, 2013, पृ० 6
59. आजकल (पत्रिका), अक्टूबर, 1995, पृ० 19
60. साक्षात्कार (पत्रिका), मार्च, 1997, पृ० 75
61. साक्षात्कार (पत्रिका), अगस्त, 1997, पृ० 24
62. साक्षात्कार (पत्रिका), अगस्त, 1997, पृ० 34

63. साक्षात्कार (पत्रिका), अक्टूबर, 1997, पृ0 37
64. साक्षात्कार (पत्रिका), अगस्त, 2003, पृ0 27
65. साक्षात्कार, जून, 2003, पृ0 24
66. आजकल (पत्रिका), मई-जून, 1994 पृ0 10
67. आजकल (पत्रिका), जनवरी, 2001 पृ0 40
68. साक्षात्कार (पत्रिका), मार्च, 2004, पृ0 85
69. प्रगतिशील बसुधा (पत्रिका), वर्ष-4, अंक-3, अक्टूबर-दिसम्बर, 2007, पृ0 187
70. प्रगतिशील बसुधा (पत्रिका), वर्ष-4, संख्या-1, अक्टूबर-दिसम्बर, 2007, पृ0 156
71. प्रगतिशील बसुधा (पत्रिका), वर्ष-5, संख्या-2, अक्टूबर-दिसम्बर, 2007, पृ0 338
72. प्रगतिशील बसुधा (पत्रिका), वर्ष-4, अंक 2, जुलाई-सितम्बर, पृ0 294
73. वागर्थ (पत्रिका), अगस्त, 2008 ,पृ0 79
74. साहित्य अमृत (पत्रिका), अगस्त, 2008, पृ0 48
75. कथादेश (पत्रिका), नवम्बर, 2010, पृ0 98
76. प्रगतिशील 'बसुधा' (पत्रिका), जनवरी-मार्च, 2010, पृ0 193
77. प्रगतिशील बसुधा (पत्रिका), जनवरी-मार्च, 2010, पृ0 82
78. साक्षात्कार (पत्रिका), अप्रैल-मई, 2010,पृ0 37
79. साक्षात्कार (पत्रिका), अप्रैल, 2004, पृ0 5
80. वागर्थ (पत्रिका), मई, 2010, पृ0 38
81. हंस (पत्रिका), जून, 2011, पृ0 57
82. डॉ0 कैलाश चन्द्र भाटिया, साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ, पृ0 28
83. रामप्रसाद त्रिपाठी (संपादक), हिन्दी विश्वकोश, (खंड-पाँच), पृ0 228

तृतीय अध्याय

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का परिचय
और उसमें अभिव्यक्त विषय ।

तृतीय अध्याय

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी का डायरी साहित्य और उसमें अभिव्यक्त विषय

प्रत्येक साहित्य में अपने युग का प्रतिबिंब होता है। प्रेमचंद ने इस संदर्भ में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा है—“साहित्यकार बहुधा अपने देशकाल से प्रभावित होता है। जब कोई लहर देश में उठती है, तो साहित्यकार के लिए उससे अविचलित रहना असंभव हो जाता है। उसकी विशाल आत्मा अपने देश-बन्धुओं के कष्टों से विकल हो उठती है और तीव्र विकलता में वह रो उठता है, पर उसके रुदन में व्यापकता होती है वह स्वदेश का होकर भी सार्वभौमिक रहता है।”¹ अतः साहित्य की श्रेष्ठता तथा मौलिकता का आधार देशकाल का प्रभाव है।

साहित्यकार सदैव समाज में रहकर ही अनुभूतियाँ ग्रहण करता है। वह समाज के लोगों के सुख-दुख का हिस्सेदार होता है। वह अपनी तर्क शक्ति और संवेदनशीलता के कारण अपने विचारों, सुझावों व निर्णयों को समाज के सामने प्रस्तुत करता है। इस बात का उल्लेख बेनीपुरी के संदर्भ में करते हुए डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान लिखते हैं—“बेनीपुरी जी ने सामाजिक और ऐतिहासिक सन्दर्भ में व्यक्ति की सत्ता एवं शक्ति को स्वीकार करके यथार्थ साहित्य का सृजन किया।”² बेनीपुरी का साहित्य उस समय के हिंदुस्तान और उसके स्वाधीनता आंदोलन का प्रतिबिंब है। बेनीपुरी का जब साहित्यिक जीवन प्रारंभ हुआ तो उस समय देश में अनेक आंदोलन चल रहे थे। बेनीपुरी के साहित्य का उद्देश्य जीवन की सच्चाई और अनुभूति को प्रकट करना है। साहित्य में प्रभाव उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि वह जीवन की सच्चाईयों का प्रतिबिंब हो। मानव जीवन में जो भी कुछ सत्य और सुन्दर है उसका उद्घाटन करना ही कथा साहित्य का लक्ष्य है। प्रेमचंद लिखते हैं—“जिस साहित्य में हमारे जीवन की समस्याएँ न हों, हमारी आत्मा को स्पर्श करने की शक्ति न हो, जो केवल भाषा-चातुरी दिखाने के लिए रचा गया हो, वह निर्जीव साहित्य है, सत्यहीन, प्राणहीन। साहित्य में हमारी आत्माओं को जगाने की, हमारी मानवता को सचेत करने की, हमारी रसिकता को

तृप्त करने की शक्ति होनी चाहिए।³ अतः साहित्य मानव जीवन को पूर्ण रूप से प्रभावित करता है। साहित्य की ये सभी विशेषताएँ हमें श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के संपूर्ण साहित्य में देखने को मिलती हैं।

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी बीसवीं सदी के तीसरे दशक से छठे दशक तक लेखन में पूर्ण सक्रिय रहे। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में पत्र-पत्रिकाओं में उनकी कविताएँ प्रकाशित होने लगी थीं। यद्यपि बेनीपुरी के साहित्यिक जीवन का विधिवत् आरंभ सन् 1921 ई० में पत्रकारिता से हुआ। यह वह समय था जब पत्र-पत्रिकाएँ राष्ट्रीय आंदोलन में आज़ादी के स्वर को मुखर करने के साथ ही साथ सामाजिक सुधार का भी कार्य कर रही थीं। उन्होंने कई पत्रिकाओं (तरुण भारत, गोलमाल, बालक, युवक, योगी, कर्मवीर, जनता, और नई धारा आदि) का सफल संपादन किया।

डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान लिखते हैं—“बेनीपुरी जी ने अपनी साहित्यिक उपलब्धियों का प्रारम्भ सबसे पहले सन् 1917 ई० में कविता के माध्यम से किया। यह साल उनके साहित्यिक जीवन का मंगल-प्रभात माना जाएगा। वस्तुतः लेखन की ओर बेनीपुरी जी की प्रवृत्ति बचपन से ही रही है। उनकी पहली रचना सोलह वर्ष की अवस्था में ‘प्रताप’ में छपी थी।⁴ इस प्रकार बेनीपुरी के साहित्य का प्रारंभ कविता से हुआ था। वह ‘प्रताप’, ‘कर्मवीर’ आदि पत्रिकाओं में कविताएँ भेजने लगे थे और इन पत्रिकाओं में उनकी कविताएँ छपी भी थीं, लेकिन वह मूलतः पत्रकार ही थे। बेनीपुरी ने एक जगह लिखा भी है—“इस जीवन में मैंने बहुत से काम लाचारी में किए पत्रकारिता को मैंने अंतः प्रेरणा से अपनाया। इसमें कोई संदेह नहीं।⁵ उन्होंने पत्रकारिता को भरण-पोषण का माध्यम नहीं बनाया बल्कि अभिव्यक्ति का साधन माना।

साहित्य और पत्रकारिता का यह घनिष्ठ संबंध बेनीपुरी के लिए कोई नया नहीं था। उनके सामने तो भारतेन्दु और प्रेमचंद की परंपरा थी। रामविलास शर्मा ने बेनीपुरी जी के संबंध में ठीक ही कहा है—“पत्रकारिता में बेनीपुरी जी का योगदान गणेशशंकर विद्यार्थी और माखनलाल चतुर्वेदी की तरह ही है।⁶ बेनीपुरी की पत्रकारिता का लक्ष्य सामाजिक सुधार था। बेनीपुरी इसी दौरान अपना साहित्यिक लेखन भी करते रहे।

उन्होंने अपनी बाल्यावस्था से लेकर युवावस्था तक आते-आते साहित्य के विभिन्न रूपों को पहचान लिया था। बेनीपुरी को साहित्यिक प्रेरणा अपने जीवन के अनुभवों से प्राप्त हुई, वे साहित्य और राजनीति के बीच एक सेतु-बंध थे। उनकी राजनीति सत्ता की नहीं थी, बल्कि संघर्ष की राजनीति थी। अपने साहित्य को रूपबद्ध करने में उनके व्यक्तित्व और परिवेश का महत्वपूर्ण योगदान है। "बेनीपुरी जी ने अपना जीवन एक ओर साहित्य की देवी सरस्वती को अर्पित कर दिया था तो दूसरी ओर वे राजनीति से भी अछूते नहीं रहे। फलतः उन्हें साहित्यिक जीवन और राजनीतिक जीवन दोनों का अनुभव हुआ है। राजनीति में रहकर भी उन्होंने अनेक मूल्यवान् रचनाएँ प्रस्तुत की हैं। मौलिक रचनाओं के साथ ही उन्होंने अनूदित रचनाओं का भी सृजन किया है।" ⁷ बेनीपुरी के साहित्य में हमें राजनीति के बिंदु भी दिखाई पड़ते हैं। उन्हें साहित्यिक और राजनीतिक दोनों प्रकार के जीवन का अनुभव प्राप्त था। उनके साहित्य में गुण और परिमाण दोनों मौजूद हैं। उनका साहित्य मौलिक व अनूदित दोनों रूपों में प्राप्त होता है।

(क) श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के साहित्य का परिचय

बेनीपुरी ने अपने जीवन काल में कई महत्वपूर्ण कृतियों का सृजन किया। गद्य की अनेक विधाओं जैसे—कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, जीवनी, संस्मरण, निबंध, यात्रा-वृत्तांत, शब्द-चित्र और डायरी आदि विधाओं में उन्होंने लगभग सत्तर पुस्तकों की रचना की। रामवचन राय बेनीपुरी के साहित्य के विषय में लिखते हैं—“उनका साहित्य शांति के क्षणों का बुद्धि-विलास नहीं है, वह संघर्ष और यातना के दौर से गुजरते हुए आदमी का अनुभव-विस्तार है। एक राजनीतिक कार्यकर्ता के रूप में स्वतंत्रता-आन्दोलन में भागीदारी और एक सर्जक साहित्यकार के रूप में जीवन के उन तमाम अनुभवों की अभिव्यक्ति बेनीपुरी के साहित्य की मुख्य रचना-भूमि है।” ⁸ इसलिए उनका लेखन सामाजिक सरोकारों से जुड़ा हुआ है, उनका जीवन-संघर्ष और रचना-कर्म दोनों एक-दूसरे के पर्याय हैं।

भारतेन्दु-युग से लेकर अब तक हिंदी साहित्य में जो भी बालसाहित्य लिखा गया है उसको ध्यान में रखकर उसे बालगीत, बालकहानियाँ, बालनाटक, बालउपन्यास एवं बालजीवनी में बाँटा गया है। साहित्यकारों ने बाल-साहित्य के

नाम पर धार्मिक उपदेश एवं नीतियाँ सिखाने वाली कहानियाँ अधिक मात्रा में लिखी हैं। बच्चों के समुचित विकास के लिए न केवल मनोरंजन के लिए बल्कि भारतीय संस्कृति से बच्चों को अवगत कराने के उद्देश्य से बाल-साहित्य की रचना की है। बेनीपुरी ने विराट बालोपयोगी साहित्य की रचना की। “बाल-साहित्य की रचना भी वे बराबर करते रहे। उनका लिखा हुआ बाल-साहित्य बहुत ही सुन्दर उत्तरा है।”⁹ बेनीपुरी साहित्य में बाल-साहित्य अपनी विशिष्ट अभिव्यक्ति के साथ प्रस्तुत है। जिसका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

बाल-साहित्य

पृथ्वी पर विजय (प्रथम एवं द्वितीय भाग), प्रकृति पर विजय (प्रथम एवं द्वितीय भाग), बेटे हो तो ऐसे, बेटियाँ हो तो ऐसी, इनके चरण चिन्हों पर, अमर कथाएँ (प्रथम एवं द्वितीय भाग), संसार की मनोरम कहानियाँ, हम इनकी संतान हैं, साहस के पुतले, झोपड़ी से महल, अमृत की वर्षा, पद चिन्ह, फलों का गुच्छा, अनोखा संसार, रंग बिरंग, हीरामन तोता, बगुला भगत, म्याऊँ आदि ।

बाल-जीवनियाँ

शिवाजी, गुरु गोविन्द सिंह, विद्यापति, बाबू लंगट सिंह, जवाहर लाल नेहरू ।

‘पृथ्वी पर विजय’ संग्रह में साहस की कहानियाँ हैं। इसमें सागरीय यात्राओं, अज्ञात प्रदेशों की खोज संबंधित छः कहानियाँ हैं। जिसमें ‘महाजन और मणिमेखला’ प्रथम कहानी है। इस कहानी में आचार्य मञ्जुनिक, आचार्य सोन, आचार्य महारक्षित, आचार्य उत्तर और अशोक कन्या संघमित्रा की यात्राओं का विवरण है। इस कहानी में लेखक अंत में कामना करता है—“क्या ऐसे दिन फिर आयेंगे, जब हमारी टोलियाँ इसी तरह ज्ञान का, शांति का संदेश संसार को सुनाने के लिए फिर प्रस्थान करेंगी।”¹⁰ यह बिहार के साहसी युवक महाजन की समुद्रीय यात्रा की कहानी है। इसी प्रकार ‘नई दुनिया की ओर’ में इटली के किस्टोफर कोलम्बस की यात्रा-कथा है। इस संग्रह में ‘उत्तरी ध्रुव की ओर’, अफ्रीका के अन्तः प्रदेश में, ‘दक्षिणी ध्रुव की बलिदेवी पर’, ‘हिमालय के उच्चतम शिखर पर’ आदि कहानियाँ हैं।

‘प्रकृति पर विजय’ संग्रह दो भागों में प्रकाशित है। दोनों भागों में दस-दस कहानियाँ हैं। बच्चों को वैज्ञानिक आविष्कारों से परिचित कराने के उद्देश्य से ये कहानियाँ लिखी गई हैं। इसके प्रथम भाग में—‘रेलगाड़ी’, ‘भाप की ताकत’, ‘मोटर गाड़ी’, ‘जहाज’, ‘छापाखाना’, ‘टाइपराइटर’, ‘हवाई जहाज’, ‘पनडुब्बी जहाज’ और ‘पौधे भी हँसते-रोते हैं’ आदि कहानियाँ संग्रहीत हैं। दूसरे भाग में—‘तार’, ‘बिजली’, ‘टेलीफोन’, ‘ग्रामोफोन’, ‘सिनेमा’, ‘बेतार का तार’, ‘परमाणु शक्ति’, ‘रेडियो’ और ‘रेडियम’ आदि कहानियाँ हैं। तार के आविष्कार में जिन-जिन वैज्ञानिकों ने योगदान दिया उसका विवरण ‘तार’ में किया है। उदाहरण के लिए—“मोर्स का जन्म 1791 ई० में हुआ था। वह बड़ा तेज था। 19 वर्ष की उम्र में उसने बी.ए. पास किया था। पहले वह चित्रकला का काम करता था। वह दो बार यूरोप गया था। एक बार जब, वह यूरोप से लौट रहा था, जहाज के यात्रियों ने बिजली और तार के सम्बन्ध में बातें छेड़ीं, उसमें वह भी शामिल था।”¹¹

‘परमाणु शक्ति’ शीर्षक रचना में बेनीपुरी ने बच्चों को परमाणु बम से परिचित कराया है। अणु क्या है? परमाणु क्या है? इनकी विवेचना भी उन्होंने की है। 26 जुलाई 1945 ई० में परमाणु का परीक्षण किया गया था। उसके परिणाम के संबंध में बेनीपुरी ने लिखा है—“(बम के) फटते ही इतनी रोशनी हुई कि सूर्य भी छिप गये और वहाँ से उजला-सा गरम धुआँ निकलकर बीस हजार फीट ऊँचे तक अम्बार-सा खड़ा हो गया।... बीस हजार टन बारूद के उड़ने से जो शक्ति पैदा होती वह इस छोटे से बम से पैदा हुई। वहाँ कोई जीव जन्तु तो था नहीं जो मरता, लेकिन मरुभूमि का बालू गलकर शीशा बन गया।”¹² इस रचना में परमाणु बम बनाने का इतिहास भी संक्षेप में प्रस्तुत किया है।

‘बेटे हों तो ऐसे’ संग्रह में विदेशों के पुरुषों की ग्यारह साहसिक कहानियाँ हैं। इन कहानियों का उद्देश्य बच्चों को साहसी एवं वीर बनने की प्रेरणा देना है। ‘झण्डाचोर’ में जल सेनापति होटसन की साहस कथा है। ‘हाथ या मोमबत्ती’, ‘बाप-बेटा’, ‘अनजान खेवैया’, ‘तैराक लड़के’, ‘पृथ्वी के धधकते गर्भ से’, ‘चमार का बेटा’, ‘बच्चे का मातृ-प्रेम’, ‘सच्ची दोस्ती’, ‘मौत को हाथ में लेकर’ और ‘अलबेले साड़ीदार’ आदि साहसिक एवं प्रेरणादायी कहानियाँ संग्रहीत हैं। ‘हाथ या मोमबत्ती’

रोम के देशभक्त नौजवान पुलिस की कहानी है। पुलिस आक्रमणकारी पोर्सना की हत्या के प्रयत्न में पकड़ा गया। जिंदा जलाने की सजा से भी भयभीत न होकर उसने षड़यंत्र नहीं बताया। पोर्सना ने उसकी देशभक्ति व साहसिकता का सम्मान किया। पोर्सना ने यह कहते हुए उठाया—“जिस देश में तुम्हारे जैसे युवक हैं, उसे कोई जीत नहीं सकता।”¹³ इस प्रकार इस संग्रह में बालकों की साहस कथाएँ हैं। ‘बेटियाँ हों तो ऐसी’ संग्रह में पश्चिमी देशों की साहसिक लड़कियों की 11 कथाएँ संग्रहीत हैं। ‘आँचल में बारूद’, ‘सोनिया के सुनहले काम’, ‘लहरों पर घुड़दौड़’, ‘पिता की मुक्ति के लिए’, ‘वह छोटी सी बच्ची’, ‘लेखक की पत्नी’, बुढ़िया और उसकी बेटी’, ‘नरककुण्ड’, ‘प्राणरक्षक दुशाला’ और ‘धन्य बेटी’ आदि साहसिक लड़कियों की कहानियाँ हैं।

‘इनके चरण चिन्हों पर’ संग्रह में कुल छः कहानियाँ संग्रहीत हैं। ‘ऋषियों की परम्परा’, ‘भारत की खोज में’, ‘शारदा के सपूत’, ‘बीमारियों पर विजय’ और ‘मानव कल्याण की ओर’ आदि कहानियाँ हैं।

‘अमर कथाएँ’ संग्रह दो भागों में प्रकाशित हुआ है। प्रथम भाग में लगभग पच्चीस कहानियाँ संग्रहीत हैं। इसमें भारतीय महापुरुषों की कहानियाँ हैं। ‘दादा’, ‘जंगल में मंगल’, ‘सिंह से खिलवाड़’, ‘सोने का हल’, ‘गंगा मैया का बेटा’, ‘मृत्यु पर विजय’, ‘चीला झपट्टा’, ‘देवानाम प्रिय’, ‘रामराज्य’, ‘वंशीवाला’, ‘दो ताज’, ‘पाँच बनाम सौ’, ‘अहिंसा का अवतार’, ‘भारत का द्वारपाल’, ‘विक्रम का सिंहासन’, ‘पुरुष से जीते स्त्री से हारे’, ‘मुगलपठान’, ‘घास की रोटी’, ‘पहाड़ी चुहा’, ‘देवी बलिदान चाहती है’, ‘ये फिरंगी’, ‘स्वराज्य की ओर’, ‘अस्सी वर्षों की हड्डी में’, ‘जन-गण-मन’ और ‘बापू’ आदि कहानियाँ हैं।

‘अमर कथाएँ’ के दूसरे भाग में बीस कहानियाँ हैं। ये कहानियाँ धार्मिक पुरुषों, दार्शनिकों तथा साहसी लोगों पर आधारित हैं। ‘हम बच्चों की तरह रहें’ में चीन के प्राचीनतम लाव-धर्म के संस्थापक लावजे की कहानी है। बेनीपुरी ने लाव-धर्म के मुख्य सूत्र को इन शब्दों में व्यक्त किया है—“कोई काम अपने स्वार्थ के लिए मत करो। किसी चीज में अपने को डुबा मत दो। खाओ तो स्वाद के लिए नहीं। छोटे को बड़ा और बड़े को छोटा समझो। जो तकलीफ में हैं, उन्हें दया और

प्रेम दो।”¹⁴ बीस कहानियों में—‘जो हँसते हुए जन्मा’, ‘काँटो का ताज’, ‘जो पढ़ो सो करो’, ‘भगवान एक है’, ‘जहर का प्याला’, ‘तूर का नूर’, ‘खतरे का बड़ा भाई’, ‘खलीफा या फकीर’, ‘रोग या मृत्यु’, ‘आँधी बोई तूफान उठा’, ‘वह विचित्र राजा’, ‘जो जिन्दा जलाई गई’, ‘देश की आजादी के लिए’, ‘आदमी या हैजा’, ‘टर्की का पिता’, ‘मजदूर राष्ट्रपति’, ‘नए चीन का विधाता’ और ‘लाश को फाँसी’। ‘जो पढ़ो सो करो’ कहानी में चीन के महापुरुष कन्फूसियस की विवेचना की गई है। कन्फूसियस के चुटीले उपदेश भी बेनीपुरी ने कहानी के अंत में दिए हैं। जैसे—“लोग तुम्हें पहचान न सके, इस बात से दुखी मत बनो। दुख की बात यह है कि तुम लोगों को पहचान न सके। वह विद्या बुरी जिसमें विचार न हो, वह विचार बुरा जिसमें विद्या न हो।... जो पढ़ो उसे काम में लाओ और हर दिन कुछ न कुछ पढ़ा करो।”¹⁵ ‘भगवान एक है’ में मुहम्मद पैगम्बर की कहानी कही गयी है।

‘संसार की मनोरम कहानियाँ’ संग्रह में आठ कहानियाँ संग्रहीत हैं। इन कहानियों का मुख्य विषय ‘आदर्श-प्रेम’ है। इन कहानियों में मौलिकता का समावेश कम है। ‘स्वप्न वासवदत्ता’ बेनीपुरी की मौलिक कहानी न होकर संस्कृत नाटक के आधार पर लिखित है। ‘उड़न-बछेड़ा’, ‘पंडुक का जोड़ा’, ‘रानी की चोरी’, ‘गरीब की लड़की’, ‘कुमुद कुमारी’, ‘चोंच कटा गौरैया’ और ‘आभागा’ आदि कहानियाँ हैं।

‘हम इनकी सन्तान हैं’ संग्रह में भारतीय पुराण एवं महाभारत आदि की कहानियाँ हैं। प्रथम कहानी दधीच की है। जिसने अपने शरीर की हड्डियाँ तक दान कर दी थीं। दूसरी कहानी में राजा का कर्त्तव्य-भाव और त्याग दिखाया गया है। तीसरी कहानी में पहलाद की भगवत प्रेम की विवेचना है। ‘राजा से श्वपच’ में राजा हरिश्चन्द्र की सत्यनिष्ठा की कथा है। ‘शरीर नाप दिया’ में राजा बलि की कथा है। ‘प्राणों का दानी’ में दानवीर कर्ण की कथा है। बेनीपुरी इसके सम्बन्ध में लिखते हैं कि—“सत्यव्रती दानी के समक्ष प्राणों का क्या मूल्य ?”¹⁶ कर्ण महाभारत कालीन दानवीर था। ‘सौ पुत्रों का बलिदान’ में विश्वामित्र की कथा है। ‘अँगूठा दे दियौ’ में अँगूठा का दान करने वाले एकलव्य की कथा है। ‘पृथ्वी पर गंगा’ में भागीरथ की कहानी है।

‘साहस के पुतले’ संग्रह में बेनीपुरी ने इतिहास प्रसिद्ध विदेशी व्यक्तियों की साहस एवं वीरता संबंधी कथाएँ लिखी हैं। इस संग्रह में कुल आठ कहानियाँ हैं।

‘संसार की परिक्रमा’ पुर्तगाल के एक युवक मैगेलन की साहसिक कथा है। मैगेलन की साहसिकता के संबंध में बेनीपुरी लिखते हैं—“उसकी हिम्मत, उसकी बहादुरी, खतरे का सामना करने की उसकी शक्ति, सुख विलास त्यागकर, ज्ञान की खोज में किया गया उसका यह अन्वेषण आज भी दुनिया के विज्ञ लोगों की जबान पर है।”¹⁷ ‘एवरेस्ट की चोटी पर’, ‘नई दुनिया की ओर’, ‘अन्वेषण की बलिवेदी पर’, ‘उपनिवेश की स्थापना’, ‘उत्तरी ध्रुव तक’, ‘दक्षिणी ध्रुव का अन्वेषक’ और ‘अफ्रीका के अन्तः प्रदेश’ आदि कहानियाँ हैं।

‘झोपड़ी से महल’ संग्रह में गरीब घर के उन बच्चों की जीवन की कहानियाँ हैं, जो अपनी मेहनत और लगन से समाज में प्रतिष्ठित व्यक्ति बने। इस संग्रह में दस कहानियाँ संग्रहीत हैं। ‘संसार का सबसे बड़ा धनी’, ‘लोहे से सोना’, मोटर का बादशाह’, ‘अखबारों का नेपोलियन’, ‘सबसे बड़ा महाजन’, ‘बैंक आफ इंग्लैण्ड का जन्म दाता’, ‘मौत का व्यवसायी’, ‘साबुन का राजा’ और ‘आधुनिक भारत का सबसे बड़ा उद्योगी’ कहानियाँ हैं। ‘मोटर का बादशाह’, कहानी में मोटर निर्माण करने वाले दुनिया के प्रसिद्ध उद्योगपति फोर्ड की जीवन कथा है। ‘फोर्ड’ के पास काम करने और सोचने की विशाल योग्यता थी। उनका कहना था—“आराम और काम दोनों के भिन्न-भिन्न नतीजे होते हैं। तुम आराम चाहते हो, तो करो, किन्तु याद रखो तुम आराम भी करोगे और काम का सुफल भी चखोगे, यह हो नहीं सकता।”¹⁸ संग्रह की अंतिम कहानी ‘जीवदया’ अन्य कहानियों से थोड़ा अलग है। ‘अमृत की वर्षा’ संग्रह में कुल पाँच कथाएँ हैं। इसमें सभी कहानियाँ काल्पनिक हैं। ‘अमृत की वर्षा’, ‘टिलटिल की शादी’, ‘मिश्र की शहजादी’, ‘सच्ची दोस्ती’ और ‘दिनों की कहानी’ आदि सभी काल्पनिकता के साथ मनोरंजक भी हैं। ‘पदचिन्ह’ संग्रह में साहसी, साहित्यिक, देशभक्त, वैज्ञानिक तथा मानव हितैषी आदि के पाँच पदचिन्ह संकलित हैं। ‘भारत की खोज’, ‘शारदा के सपूत’ और ‘देश के नाम पर’ आदि कहानियाँ हैं।

‘जीवन त्राता’ में आधुनिक ढंग की चिकित्सा संबंधी आविष्कारों की जीवनियाँ हैं। जिसमें ‘मानव कल्याण की ओर’ एक ऐसी कहानी है जिसमें मानवता के कल्याण के मार्ग में शोध करने वाले यूरोपीय विचारकों की कथा है। ‘फूलों का गुच्छा’ कहानी संग्रह में कुल नौ कहानियाँ हैं। यह कहानियाँ वस्तुतः यूरोपीय

लेखकों की कहानियों का संक्षिप्त रूप है। इन कहानियों का विषय अत्यधिक मनोरम है। 'अभागा', 'रानी की चोरी', 'गरीब की लड़की', 'टिलटिल की शादी', 'सच्चा राजकुमार', 'मित्र की शहजादी', 'अलबेले बहादुर', 'सच्ची दोस्ती', 'नटखट लड़का' आदि अनुवादित किंतु मनोरम कहानियाँ हैं। 'अनोखा संसार' संग्रह में कुल 12 कहानियाँ संग्रहीत हैं। इसमें 'खेलकूद का संसार', 'नाच का संसार', 'टोपियों का संसार', 'सवारियों का संसार', 'कंजड़ों का संसार', 'पाठशालाओं का संसार', 'नावों का संसार', 'फेरीवालों का संसार', 'जाल और वंशी का संसार', शिकारियों का संसार' और 'पुलिस का संसार' आदि कहानियाँ संग्रहीत हैं।

'पाठशालाओं का संसार' में बेनीपुरी लिखते हैं—“कैसा अच्छा होता कि एक पाठशालाओं की नगरी बनाई जाती, जिसमें सभी देश के लड़के अपने-अपने ढंग से चलने वाली पाठशालाओं में पढ़ाये जाते। जब एक देश के बच्चे धूमते-फिरते, दूसरे देश की पाठशाला में जाते, तो उन्हें एक-दूसरे को देखकर कितना आश्चर्य और कितना आनन्द होता?”¹⁹ बेनीपुरी के ये विचार राष्ट्रीय भावना के घोटक हैं।

'रंगबिरंग' कहानी संग्रह पाँच भागों में विभाजित है। प्रथम भाग में 12 कहानियाँ संग्रहीत हैं। यह कहानियाँ सदाचरण से संबंधित हैं। 'बापू सब से प्रेम रखते थे', 'हम भगवान से छिपाकर कोई भी काम नहीं कर सकते', 'गांधीजी ने गाँव को साफ किया', 'मेल से क्या नहीं होता?', 'जैसा करोगे वैसा पाओगे', 'लाचार की सहायता', 'दुखियों का दुःख दूर करो', 'ईमानदार बढ़ जाता है', 'लूले-लंगड़े की सहायता करो', 'फूट का फल बुरा होता है', 'लाचार के प्राण बचाओ', 'झूठे की जान जाती है'। रंगबिरंग के दूसरे भाग में बच्चों को भौगोलिक ज्ञान देने के उद्देश्य से परिचयात्मक कहानियाँ लिखी गयी हैं। ये कहानियाँ प्रश्नोत्तर शैली में लिखी हुई हैं, क्योंकि ज्ञान, जिज्ञासा-पूर्ति जैसे विषयों के लिए यही शैली उपयुक्त होती है। 'रात क्यों आती है?' की कुछ पंक्तियाँ—“वीरेश, क्या तुम्हें मालूम हैं कि पृथ्वी पर दिन-रात होने का क्या कारण है?” ‘नहीं भाई, मैं नहीं जानता, क्या तुम बता दोगे?’ ‘अच्छा सुनो, आज ही गुरुजी ने हमें यह बताया है देखो, एक लट्ठू में गड़ी हुई काँटी को अपनी चुटकी से पकड़ो और उसे चिराग के पास ले जाओ, रोशनी किधर पड़ेगी?’ ‘भाई वाह। ऐसा क्यों पूछते हों? जो भाग चिराग की ओर

रहेगा उधर रोशनी पड़ेगी और जो भाग चिराग की दूसरी ओर रहेगा उधर अँधेरा रहेगा।”²⁰ इस प्रकार बेनीपुरी ने सूर्य और चन्द्रमा के उदय, सूर्य का दक्षिणायन, उत्तरायन आदि बातों का ज्ञान छोटे-छोटे कथात्मक निबंधों में दिया है।

‘रंगबिरंग’ के तीसरे भाग में ‘घर साफ रखना’, ‘पड़ोस और पड़ौसी’, ‘गाँव की उन्नति के लिए सहयोग’, ‘गाँव का सामाजिक जीवन’, ‘गाँव और शहर’ और ‘वर्ग की सफाई’ आदि कथात्मक निबंध लिखे हैं। ‘रंगबिरंग’ के चौथे भाग में देश-विदेश की प्राकृतिक विशेषताओं से अवगत कराने के लिए लेखक ने कई कथात्मक निबंध लिखे हैं, उदाहरण के लिए—‘ताहमहल’, ‘चीन की दीवार’, ‘मिश्र के पिरामिड’, ‘आँधी की करामात’, आदि विषयों पर लिखकर जानकारी दी है। ‘रंगबिरंग’ के अंतिम भाग में बेनीपुरी ने छोटे बच्चों के लिए उपदेशात्मक निर्देश स्पष्ट रूप से लिखे हैं। भोजन के संबंध में उन्होंने लिखा है—“जीभ काबू में रखकर हम लोगों को निरोग रहने के लिए खाना चाहिए और उतना ही खाना चाहिए। जितना आवश्यक हो।”²¹ स्वास्थ्य संबंधी उपदेश भी उन्होंने लिखे हैं—“मच्छरों से सावधान रहो।”²²

इस प्रकार बेनीपुरी ने बच्चों के लिए उपयुक्त भौगोलिक, शारीरिक, प्राकृतिक और स्वास्थ्य संबंधी जानकारी दी है। ‘हीरामन तोता’ एक लंबी कहानी है जो जायसी के ‘पद्मावत’ की कथावस्तु पर आधारित है। इसके अतिरिक्त इस संग्रह में ‘चार लाल बुझकड़’, ‘गरीब ब्राह्मण’ और ‘धनीबनिया’ हैं।

‘बगुला भगत’ पशु-पक्षी से संबंधित यह एक लंबी कहानी है। नाम के अनुसार ही अपनी धूर्तता से दूसरों को धोखा देने वाले एक बगुले की कहानी है। जिसका अंत में भण्डा फूट जाता है। यह कहानी आकर्षक एवं मनोरंजक है।

‘म्याऊँ’ संग्रह में चार कहानियाँ हैं। ये कहानियाँ पशु-पक्षियों से सम्बन्धित हैं। इसमें ‘बिलाई मौसी’, ‘चोर राजकुमार’, ‘मिट्टी का घोड़ा’, ‘फूलों का देश’ आदि हैं।

बेनीपुरी ने बाल-कहानियों के अतिरिक्त प्रेरणादायी महान् एवं आदर्श लोगों की बाल-जीवनियाँ भी लिखी हैं। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है—

शिवाजी

‘शिवाजी’ की जीवनी बेनीपुरी ने तेरह परिच्छेदों में लिखी है। प्रथम परिच्छेद ‘जन्म और शिक्षा’ द्वितीय परिच्छेद ‘बाल सूर्य की तीखी किरणें’, इसके अतिरिक्त ‘स्वराज्य संस्थापन’, ‘अफजल की दुर्गति’, रणचण्डी का तांडव’, ‘पितृभक्त’, ‘शिवाजी’, ‘मुगलों से मुठभेड़’, ‘शिवाजी और जयसिंह’, ‘विचित्र कैद और अद्भुत छुटकारा’, ‘क्रुद्ध केसरी’, ‘राज्याभिषेक और विजय यात्रा’, ‘स्वराज्य सूर्य का अचानक अस्त’, ‘शिवाजी और शौर्य’ आदि परिच्छेदों के अंतर्गत शिवाजी की जीवनी लिखी गई है।

गुरु गोविन्द सिंह

गुरु गोविन्द सिंह की जीवनी में उनके जीवन चरित्र को कई परिच्छेदों में विभाजित करके लिखा गया है। ‘पूर्व कथा’, ‘जन्म और शिक्षा’, ‘धर्म बलि और प्रतिज्ञा’, ‘शक्ति संचय’, ‘साधना और परीक्षा’, ‘अकाली’, ‘लड़ाईयाँ’, ‘सिंह का बेटा सिंह’, ‘अच्छे दिन भीषण बदला’, ‘मृत्यु’ आदि परिच्छेदों में गुरु गोविन्द सिंह का जीवन परिचय है। इसमें उनके वीर, प्रतापी, धर्मरक्षक एवं निडर व्यक्तित्व को दर्शाया गया है।

विद्यापति

कवि विद्यापति की जीवनी में विविध परिच्छेदों के माध्यम से विद्यापति के जीवन और कार्य का विवेचन किया है। इसमें ‘जन्म-स्थान’ ‘वंश-विवरण’, ‘संस्कृत-रचनाएँ’, ‘उपाधियाँ’, ‘धर्म-सम्प्रदाय’, ‘आश्रयदाता-शिवसिंह’, ‘मृत्युकाल’, ‘हरस्ताक्षर’, ‘परिवार’, ‘पदावली’, आदि हैं।

लंगट सिंह

बिहार के शिक्षा-क्षेत्र में परिवर्तन करने वाले बाबू लंगट सिंह की जीवनी भी लिखी है। इस जीवनी में दस परिच्छेद हैं। यह बच्चों के लिए एक प्रेरणादायक जीवनी है।

जवाहर लाल नेहरू

नेहरू जी की यह जीवनी सात परिच्छेदों में लिखी गयी है। ‘जन्म और बचपन’, ‘शिक्षा-दीक्षा’, ‘अपने देश में’, ‘देश के सेवक’, ‘काँग्रेस के राष्ट्रपति’,

‘प्रधानमन्त्री’, ‘शान्ति के अग्रदूत’, ‘हमारे नेहरू जी’ आदि परिच्छेदों में बेनीपुरी ने नेहरू जी का जीवन परिचय दिया है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि बेनीपुरी का बाल-साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। बालकों के लिए उन्होंने प्रेरक एवं आदर्श साहित्य को रचा। एक बाल-साहित्यकार के रूप में बेनीपुरी जी श्रेष्ठ हैं।

शब्द-चित्र

बेनीपुरी जी के शब्द-चित्रों के तीन संग्रह हैं— ‘लालतारा’, ‘माटी के मूरतें’, ‘गेहूँ और गुलाब’।

‘लालतारा’ बेनीपुरी के शब्द-चित्रों का पहला संग्रह है। उन्होंने स्वीकार किया है—“इसका पहला रूप उस ज़माने में निकला था, जब मैं सिर से पैर तक लाल-लाल था।”²³ इसमें सोलह शब्द-चित्र हैं। ‘लाल तारा’, ‘हलवाहा’, यह और वह’, ‘हँसिया और हथौड़ा’, ‘कुदाल’, ‘डुगडुगी’, ‘शहीदों की चिताओं पर’, ‘आँधी में चलो’, ‘कस्मै देवाय हविषा विधेम’, ‘इन्कलाब ज़िन्दाबाद’, ‘नयी संस्कृति की ओर’, ‘कुछ क्रांतिकारी विचार’, ‘रेलगाड़ी’, ‘जवानी’, ‘कलाकार’, और ‘दीपदान’ हैं। ‘लालतारा’ के विषय में बेनीपुरी लिखते हैं—“लाल तारा’ एक नए प्रभात का प्रतीक था। वह प्रभात अब अधिक सन्निकट है। शायद इसीलिए अंधकार भी अधिक सघन हो चला है।”²⁴ लालतारा बेनीपुरी जी के विद्रोही और मार्क्सवादी दृष्टिकोण का परिचायक है। इसमें उनकी समाजवादी एवं क्रांतिकारी विचारधारा को अभिव्यक्ति मिली है।

माटी की मूरतें

‘माटी की मूरतें’ के विषय में स्वयं बेनीपुरी लिखते हैं—“डरता था, सोने-चाँदी के इस युग में मेरी ये ‘माटी की मूरतें’ कैसी पूजा पाती हैं? किंतु इनमें से कुछ जो प्रकाश में आईं, हिन्दी-संसार ने उन्हें सिर-आँखों पर लिया! यह मेरी कलम या कला की करामात नहीं, मानवता के मन में मिट्टी के प्रति जो स्वाभाविक स्नेह है, उसका परिणाम है।”²⁵ ‘माटी की मूरतें’ बेनीपुरी के शब्द-चित्रों का दूसरा संग्रह है। इसमें ग्रामीण-जीवन से संबंधित बारह व्यक्तियों की कथाएँ प्रस्तुत की

गयी हैं। ये बारह व्यक्ति हैं—‘रजिया’, ‘बलदेव सिंह’, ‘सरजू भैया’, ‘मैंगर’, ‘रूपा की आजी’, ‘देव’, ‘बालगोबिन भगत’, ‘मौजी’, ‘परमेश्वर’, बैजू मामा’, ‘सुभान खाँ’ और ‘बुधिया’ हैं। इन चरित्र-कथाओं की रचना की कल्पना बेनीपुरी ने हजारी बाग सेंट्रल जेल में की थी। ‘गेहूँ और गुलाब’ बेनीपुरी के शब्द-चित्रों का उत्कृष्ट संग्रह है। इस शब्द-चित्र के विषय में बेनीपुरी लिखते हैं—“यह पुस्तक है और आन्दोलन भी। पुस्तक, जिसमें मेरी कुछ नई कृतियाँ संग्रहीत हैं।...और आंदोलन जो हमें भौतिकता की अंधगुफा से उठाकर सांस्कृतिक धरातल की ओर ले जाए। जो संघर्ष के बीच भी हमें सौन्दर्य देखने की दृष्टि दे। पैर कीचड़ को ठेलते बढ़ रहे हों, किन्तु आँखें इन्द्रधनुष पर जमी हों।”²⁶ इस प्रकार उन्होंने इस पुस्तक को आंदोलन भी कहा है। क्योंकि इस कृति में वैचारिक नवीनता की उष्मा इतनी ज्यादा है कि इसमें एक व्यक्ति नहीं, पूरा समाज पूर्ण रूप से गरम हो सकता है। इस संग्रह में पच्चीस शब्द चित्र हैं। इसमें भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं के समन्वय पर बल दिया है। इसमें प्रमुख शब्द चित्र हैं—‘गेहूँ बनाम गुलाब’, ‘जहाज जा रहा है’, ‘चरवाहा’, ‘फल-सुँघनी’, ‘तितलियाँ’, ‘नींव की ईंट’, ‘गेंदा’, ‘हरसिंगार’, ‘गुलाब’, ‘पुरुष और परमेश्वर’, ‘ये मनोरम दृश्य’, ‘कंजड़ों की दुनिया’, ‘गोशाला’, ‘घास वाली’, ‘पनिहासि’, ‘बचपन’, ‘पहली वर्षा’ और ‘लागल करेजवा में चोट’ आदि। विषय की दृष्टि से इन शब्द-चित्रों में काफी विविधता है।

नाटक

बेनीपुरी ने बारह नाटकों की रचना की है जिनमें कुछ एकांकी और ध्वनि नाटक भी हैं। उनके नाटकों की कथा-वस्तु भारत की प्राचीन ऐतिहासिक और सांस्कृतिक घटनाओं तथा महापुरुषों से संबंधित हैं। बेनीपुरी के सभी नाटकों में मानवीय मूल्यों की अभिव्यक्ति मिलती है।

‘अम्बपाली’ एक ऐतिहासिक नाटक है। इस रचना का आधार बौद्ध-युग की लोकविश्रुत नारी अम्बपाली का जीवन है। लेखक ने अम्बपाली के प्रेम और कर्तव्य की भावना के बीच संघर्ष-पूर्ण स्थिति का चित्रण किया है। सामाजिक चेतना की दृष्टि से भी अम्बपाली अत्यन्त समर्थ कृति है।

‘तथागत’ में भगवान बुद्ध के व्यक्तित्व के उदान्त पक्षों को प्रस्तुत किया गया है। इस नाटक में लोक मंगल की भावना के माध्यम से ‘बहुजन-हिताय, बहुजन-सुखाय’ की सामाजिक चेतना को रूपायित किया गया है।

‘विजेता’ एक ऐतिहासिक नाटक है। जिसमें चार अंक हैं। नाटक का नायक इतिहास प्रसिद्ध चन्द्रगुप्त है। ऐतिहासिक नाटक होते हुए भी बेनीपुरी ने इनमें कल्पना के आधार पर चन्द्रगुप्त के चरित्र को काफी ऊँचा उठा दिया है। मंचन की दृष्टि से भी यह एक सफल नाटक है।

‘संघमित्रा’ एक एकांकी नाटक है। इस एकांकी नाटक में सम्राट अशोक की पुत्री संघमित्रा का हृदय परिवर्तन दिखाया गया है। मानवीय मूल्यों को ध्यान में रखते हुए इसमें युद्ध के विरुद्ध ‘शान्ति’ का उद्घोष किया गया है। यह पूर्णतः ऐतिहासिक एकांकी नाटक है।

‘नेत्रदान’ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा एकांकी नाटक है। बेनीपुरी ने इस नाटक की भूमिका में लिखा है—“नेत्रदान’ भारतीय इतिहास की अत्यन्त करुण घटना पर आधारित है।”²⁷ इसमें सम्राट अशोक के कनिष्ठ पुत्र कुणाल द्वारा विमाता तिष्यरक्षिता के प्रति नेत्रदान की कथा है। कलाकार ने जिस उद्देश्य से कलम उठाई है उसमें उन्हें सफलता मिली है। बेनीपुरी लिखते हैं—“मेरा विश्वास है, बिहार की आने वाली पीढ़ी अपने पूर्वजों की कीर्ति को उनके गौरव के अनुरूप ही नाना रूपों में ढालेगी। ‘नेत्रदान’ उस सुनहले भविष्य की ओर एक अंगुलि निर्देश मात्र है। यदि इसने प्रेरणा हमारे किशोरों और किशोरियों में भरी, तो समझूँगा, मेरी मेहनत सफल हुई।”²⁸ लेखक ने इस नाटक के अंतिम भाग को अपनी कला से अभिनव रूप प्रदान किया है।

‘नया समाज’ एक सामाजिक एकांकी नाटक है। बेनीपुरी ने इसमें आर्थिक विषमता का चित्रण करते हुए एक नए तथा आदर्श समाज की कल्पना की है।

‘रामराज्य’ एक प्रकार से रेडियो नाटक है। रेडियो नाटक सामान्य नाटक एवं एकांकी से अलग होता है। वस्तुतः ध्वनि तत्त्व की प्रधानता रेडियो नाटक को सामान्य नाटकों से अलग करती है। इस नाटक में गांधी के आदर्श

समाज की रचना के सिद्धान्त पर आधारित एक समाज की कल्पना की है। यह एक सफल रेडियो एकांकी नाटक है।

‘गाँव के देवता’ सफल रेडियो एकांकी नाटक है। इसमें बेनीपुरी ने अपने गाँव के उन देवताओं का परिचय दिया है जो कभी समाज के ही मनुष्य थे और किसी अपूर्व गुण के कारण बाद में गाँव के देवता माने गए।

‘अमरज्योति’ एक रेडियो रूपक है। यह महात्मा गांधी के जीवन पर आधारित नाट्य-कृति है। बेनीपुरी ने ‘तथागत’ नाटक की भूमिका में लिखा है—“एक विदेशी लेखक ने कहा भी था कि बुद्ध के बाद बापू का ही व्यक्तित्व उतना महान है।”²⁹ ‘अमरज्योति’ शीर्षक महात्मा गांधी का सूचक है। ऐसे महान व्यक्तित्व वाले गांधी ने अपने ज्ञान की अमरज्योति देश-विदेश में भी फैला दी।

‘सीमा की माँ’ पौराणिक एकांकी नाटक और स्वोक्ति रूपक (रेडियो मोनोलॉग) है। इसमें एक ही पात्र अपने अंतर्द्वन्द्व को स्वागत के माध्यम से प्रस्तुत करता है। अन्य पात्र स्टेज पर नहीं आते। ‘सीता की माँ’ में सीता की माँ प्रमुख पात्र है। यह नाटक बेनीपुरी की मौलिक कल्पना का आधार है।

‘शकुन्तला’ एक रेडियो नाटक है। यह ‘अभिज्ञान शाकुन्तलम्’ पर आधारित है। यह पौराणिक कथा का आधार है, किंतु आज भी इसमें नवीनता विद्यमान है। इसमें शकुन्तला के माध्यम से प्रेम और मानवीय संवेदना के शाश्वत मूल्यों को रेखांकित किया गया है। इस प्रकार अशान्ति और हिंसा के इस दौर में बेनीपुरी ने अपने नाटकों के माध्यम से शांति, प्रेम और अहिंसा का संदेश दिया है।

निबंध

बेनीपुरी ने साहित्यिक और वैचारिक निबंध भी पर्याप्त लिखे। डॉ० रामगोपाल सिंह चौहान लिखते हैं—“रामवृक्ष बेनीपुरी भी हिन्दी के सशक्त निबन्धकार है। सशक्त रेखाचित्र एवं संस्मरण लेखक के रूप में बेनीपुरी जी का स्थान हिन्दी गद्य-साहित्य में महत्त्वपूर्ण है। निबन्धकार के रूप में भी आप को वह स्थान प्राप्त है।”³⁰ आधुनिक युग के प्रमुख निबंधकारों में बेनीपुरी का स्थान भी उल्लेखनीय है। विभिन्न विषयों पर अपनी अनुभूतियाँ एवं विचारों को व्यक्त करते हुए

निबंध—साहित्य का सृजन किया। बेनीपुरी ने चार निबंध संग्रह लिखे— 'नई नारी', 'मशाल', 'हवा पर' 'वन्दे वाणी विनायकौ'। निबंधों में बेनीपुरी के सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विचार मिलते हैं।

'नई नारी' समानता के अधिकार के प्रति जागरुकता उत्पन्न करने की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। बेनीपुरी ने नारी—जीवन संबंधी रुढ़िगत भावनाओं के प्रति अपनी भावोत्तेजक भावनाएँ स्पष्ट की हैं। बेनीपुरी इस निबंध की भूमिका में लिखते हैं कि—“इन प्रबन्धों में मैं बातें कुछ तीखी कह गया हूँ— लेकिन इस सम्बन्ध में जैसी जड़ता दिखाई पड़ती है, उसके लिए आवश्यकता थी कि एक ज़बरदस्त झिंझोर दी जाए कि गहरी नींद में सोए आदमी को जो झकझोरकर जगाता है।”³¹ इस निबंध में बेनीपुरी ने अपने क्रांतिकारी विचारों के माध्यम से नारी को नई रोशनी देने एवं जागरुक बनाने का सशक्त प्रयास किया है।

'मशाल' बेनीपुरी जी के व्यक्तिवादी निबंधों का संग्रह है। इसकी भूमिका में बेनीपुरी लिखते हैं—“भिन्न—भिन्न विषयों पर, भिन्न—भिन्न प्रेरणाओं से मेरे मन में जो विचार उठे, मैं उन्हें उसी क्रम में कलमबन्द करता गया और अन्ततः उनके जो परम्परागत स्वरूप तैयार हुए, वे आपके सामने प्रस्तुत हैं। निबंध का जो परंपरागत स्वरूप है, उससे ये पृथक् पड़ते हैं। ये रेखाचित्र भी नहीं हैं। क्या उन्हें विचार—चित्र कहा जा सकता है।”³² इस रचना को बेनीपुरी के विचार—चित्र के संदर्भ में भी पहचाना जाता है।

'हवापर' संग्रह में कुल पाँच निबंध हैं। इसमें पहला निबंध 'मैं कैसे लिखता हूँ' में बेनीपुरी ने अपनी लेखन शैली से लेकर लेखन के तरीके तक की सभी बातों पर विस्तृत लेख लिखा है। 'बिहार के लोकगीत', 'मैथिली साहित्य', 'जेल के वे दिन' तथा 'शकुन्तला' आदि निबंध भी इसमें संकलित हैं।

'वन्दे वाणी विनायकौ' साहित्यिक निबंधों का नवीन संग्रह है। बेनीपुरी ने इसमें स्वतंत्र रूप में पच्चीस निबंधों का संकलन किया है। इस निबंध—संग्रह का शीर्षक 'वन्दे वाणी विनायकौ' क्यों रखा गया? इस संबंध में बेनीपुरी लिखते हैं—“तुलसी ने बचपन से ही मुझे अभिभूत कर रखा उनके 'मानस' के प्रथम वन्दना—श्लोक में ही मुझे नाम भी मिल गया। वन्दे वाणी विनायकौ! वाणी को

वन्दना विनायक को वन्दना या वाणी—विनायक को वन्दना!”³³ बेनीपुरी ने इस निबंध संग्रह की भूमिका में कुछ साहित्यिक प्रश्न प्रस्तुत किए हैं। हम साहित्य को किस दिशा में ले जाएँ, हमारी भाषा कैसी होनी चाहिए, लिपि क्या होनी चाहिए? इन प्रश्नों के सम्बन्ध में सोचने के लिए भी कहा है। बेनीपुरी जी लिखते हैं—“अपने इस साहित्यिक जीवन के सिलसिले में मेरे मन में कुछ प्रश्न उठते रहे, कुछ समस्याएँ आती रहीं। उन प्रश्नों के उत्तर, उन समस्याओं के समाधान ढूँढ़ने के प्रयत्न में तो विचार मेरे मन में उठे, उन्हें लिपिबद्ध करता गया।”³⁴ इस प्रकार बेनीपुरी ने साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक विषयों में उनके पहलुओं पर निबंध लिखे हैं।

उपन्यास

बेनीपुरी के दो प्रमुख उपन्यास हैं, पहला उपन्यास ‘पतितों के देश में’ और दूसरा उपन्यास है ‘कैदी की पत्नी’। ‘पतितों के देश में’ एक सत्य घटना के आधार पर यह कैदी की कहानी है। यह सामाजिक एवं समस्यामूलक उपन्यास है। बेनीपुरी इस उपन्यास के संबंध में लिखते हैं कि—“यह एक कैदी की कहानी उसी की जबानी है। इसका आधार एक सत्य घटना है और इसका मुख्य भाग मैंने जेल में ही लिखा था, 1930 में, हज़ारीबाग जेल में।”³⁵ इस उपन्यास में एक ओर हमारे समाज के यथार्थ मनोविज्ञान का यथार्थ चित्रण किया गया है तो दूसरी ओर छोटी—मोटी कहानियों के माध्यम से जेल के नारकीय जीवन का चित्रण हुआ है। इस उपन्यास की कथा दो खंडों में विभाजित है। पहली ‘बाहरी झाँकी’ और दूसरी ‘भीतरी झाँकी’। पहला खंड नौ शीर्षकों में विभाजित है और दूसरा खंड भी छोटे—मोटे नौ शीर्षकों में।

‘कैदी की पत्नी’ उपन्यास वस्तुतः बेनीपुरी के स्वयं के जीवन, अनुभवों पर आधारित है। कैदी की पत्नी कोई और नहीं बल्कि लेखक की पत्नी है। कैदी स्वयं बेनीपुरी ही हैं। इसका वर्ण—विषय नारी—जीवन से संबंधित है। नारी—मनोवृत्ति का सच्चा और यथार्थ रूप चित्रित किया है। बेनीपुरी इस उपन्यास के विषय में लिखते हैं—“राजनीतिक पुरुषों के गले में जयमाला पड़ती है, उनका जय—जयकार होता है। इस रूप में उनकी जेल—यात्रा या त्याग—तपस्या की क्षतिपूर्ति होती जाती है।

किंतु, उनकी पत्नियों की क्या दशा होती है, उन्हें किन तकलीफों और परेशानियों में ज़िन्दगी गुज़ारनी होती है— क्या इस ओर कभी ध्यान दिया गया है? शरीर के कष्ट तो सह भी लिए जाते हैं, किन्तु मानसिक चिन्ताएँ और वेदनाएँ—बिच्छू के डंक भी क्या खाकर मुकाबला करेंगे उनका! 'कैदी की पत्नी' में मैंने उन्हीं वेदनाओं को साकार करने की चेष्टा की है।³⁶ वास्तव में यह कोई एक कैदी या एक पत्नी की कहानी नहीं है, बल्कि देश की आज़ादी के लिए जेल में कड़ी यातनाएँ भुगतने वाले अनेक कैदियों की तथा उनकी पत्नियों की सच्ची कहानी है।

कहानी

'चिता का फूल' बेनीपुरी का एक मात्र कहानी संग्रह है जिसमें कुल सात कहानियाँ संकलित हैं—'चिता के फूल', 'कहीं धूप कहीं छाया', 'जुलेखा पुकार रही है', 'वह चोर था', 'भिखारिन की थाली', 'जीवन तरु', 'उस दिन झोंपड़ी रोई'। ये कहानियाँ आदर्शवाद की अपेक्षा यथार्थवाद के अधिक निकट हैं। साथ ही उन्होंने 'झोंपड़ी का रुदन' कहानी—संग्रह का संपादन भी किया जिसमें सात कहानियाँ संग्रहीत हैं। यह कहना बिल्कुल सही होगा कि इनकी कहानियों का स्वर प्रेमचंद की कहानियों के निकट है। जिस तरह से प्रेमचंद खुली आँखों से समाज को देखते थे उसी तरह बेनीपुरी भी देखते हैं। इनकी सभी कहानियाँ सामाजिक हैं। बेनीपुरी ने समाज का एक्स-रे लेने का कार्य किया है। बेनीपुरी इस संग्रह में लिखते हैं—“अपनी इन सात कहानियों में देश और समाज की विषम स्थिति से उत्पन्न मृत्यु और संहार की विभीषिकाओं को ही मैंने कलात्मक रूप देने की चेष्टा की है, किंतु इनमें ढँकने की कोशिश कहीं नहीं की गई है, बल्कि उभारने का ही प्रयास है। हम इन विभीषिकाओं को देखें, समझें और समाज को ऐसा नया रूप देने की चेष्टा करें, जिसमें हमें ऐसे दृश्य न देखने पड़ें।”³⁷ इस प्रकार बेनीपुरी की कहानियाँ तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक यथार्थ प्रस्तुत करती हैं।

कविता

बेनीपुरी ने कविता से ही अपनी साहित्य-यात्रा प्रारंभ की थी, उन्होंने 'कविता कुसुम' शीर्षक से विभिन्न कवियों की कविताओं का संपादन किया। इस संकलन में उनकी अपनी कोई कविता नहीं है। 'कविता-कुसुम' संग्रह बेनीपुरी की

काव्य-साधना का पहला चरण है। उनका काव्य अत्यन्त अल्प है, परन्तु जो है वह यथार्थ-चित्रण की दृष्टि से उल्लेखनीय है। उनकी प्रकाशित कविताओं में 'महाबलिपुरम्', 'कलकत्ता', और 'सिंहगढ़' प्रमुख हैं। इन तीनों ही कविताओं की भाषा समृद्ध है तथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण एवं विशिष्ट है। 'सिंहगढ़' कविता की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत हैं—

“चलो, उद्धार करें पहले उस बालिका का,
फिर यह सेना बढ़े,
छा जाए सारे महाराष्ट्र में,
छत्तीस करोड़ मानवों के इस राष्ट्र में,
जहाँ—जहाँ दीखें पड़ें भोली सुकुमारियाँ,
कुमारियाँ!
अर्द्धनग्न, क्षुधा पीड़ित!

उनका उद्धार चलो हम करें;।”³⁸

स्पष्ट है कि बेनीपुरी ने न केवल गद्य-साहित्य बल्कि काव्य-साहित्य की भी रचना की।

यात्रा साहित्य

‘पैरों में पंख बाँधकर’, ‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’, और ‘अत्र-तत्र’ बेनीपुरी की यात्रा वर्णन संबंधी रचनाएँ हैं। इसके अतिरिक्त यात्रा वर्णन संबंधी एक अन्य रचना ‘पेरिस नहीं भूलती’ लिखी थी, यद्यपि यह रचना कभी प्रकाशित नहीं हुई और न ही इसकी हस्तलिखित पाण्डुलिपि प्राप्त होती है।

‘पैरों में पंख बाँधकर’, और ‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’, वस्तुतः डायरी-शैली में लिखी गयी हैं, क्योंकि यात्रा के दौरान बेनीपुरी नियमित रूप से डायरी लिखते थे। अपनी इन्हीं डायरियों को संकलित करके इन्हें पुस्तक का रूप दिया। पूर्णतः डायरी-शैली में लिखे होने के कारण ये दोनों यात्रा-वर्णन उनका डायरी लेखन ही हैं। ओंकार शरद ने इन यात्राओं के बारे में ठीक ही कहा है—“इनमें दूसरे देशों का वर्णन तो है ही, साथ ही साथ वहाँ की संस्कृति, प्रकृति, राजनीति, मनः स्थिति और

आर्थिक स्थिति का भी आँखों देखा वर्णन है।³⁹ बेनीपुरी ने इन यात्राओं में सभी स्थितियों-परिस्थितियों का चित्रण किया है जिनकी चर्चा आगे विस्तार से की जाएगी। यात्रा सम्बन्धी 'अत्र-तत्र' रचना निबंध शैली में लिखी गई है। इसमें कुल ग्यारह यात्रा-निबंध हैं। इस रचना में देश-विदेशों दोनों प्रकार के यात्रा अनुभवों का चित्रण किया है। इस कृति के संबंध में प्रकाशक ने ठीक ही कहा है—“इस संकलनात्मक गद्यकृति में उनकी निराली गद्यशैली की छवि के दर्शन होते हैं, साथ ही इस गद्य-शिल्पी के व्यापक सांस्कृतिक संवेदनामयी दृष्टि के कलात्मक प्रसार का परिचय भी।... यात्रा के क्रम में कलाकार के हृदय पर विभिन्न स्थानों की जो रंग-बिरंगी प्रति छवियाँ अंकित हुईं उन्हें अपनी मर्मस्पर्शी तूलिका से उन्होंने बड़े जीवन्त रूप में इन आलेखों में उरेहा है।”⁴⁰ सचमुच बेनीपुरी का व्यापक दृष्टिकोण हिंदी यात्रा साहित्य के लिए गौरव का विषय है।

डायरी

बेनीपुरी ने लगभग चौदह वर्षों तक नियमित रूप से डायरी लिखी। उनके पुत्र 'महेन्द्र कुमार बेनीपुरी' 'डायरी के पन्ने' में लिखते हैं कि—“पूज्य बाबूजी श्री रामवृक्ष बेनीपुरी की डायरी के पन्नों को सबों के सामने रखने में मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। 1950 में बाबूजी ने इसे लिखना शुरू किया था और जब तक कलम में ताकत रही 1963 तक नियमित रूप से डायरी लिखते रहे।”⁴¹ बेनीपुरी की डायरी 'डायरी के पन्ने' शीर्षक रूप में आई। डायरी में उनके जीवन का एक समग्र चित्र उभरकर सामने आता है। सभी डायरियाँ एक सी नहीं होती हैं। डायरी लेखकों के कर्म-क्षेत्र डायरियों को विषय के स्तर पर एक-दूसरे से भिन्न बना देते हैं। बेनीपुरी का डायरी लेखन इसी स्वाभाविक परिणाम का एक अंग है। बेनीपुरी के डायरी साहित्य का विवेचन आगे विस्तार से किया जाएगा।

संस्मरण

बेनीपुरी ने अनुभूतियों, स्मृतियों की प्रबलता के कारण प्रतिष्ठित साहित्यकारों एवं राजनीतिज्ञों से संबंधित संस्मरण लिखे। जीवन की उन रमणीय, मर्मस्पर्शी तथा प्रेरक घटनाओं पर भी संस्मरण लिखे हैं। बेनीपुरी ने आत्मकथात्मक-संस्मरण काफी लिखे हैं। 'मुझे याद है', 'जंजीरें और दीवारें', 'कुछ

में कुछ वे' हैं। 'मील के पत्थर', संस्मरण में अनेक महत्त्वपूर्ण लोगों के व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। 'मुझे याद है' में बेनीपुरी के चौबीस आत्मपरक संस्मरण हैं। ये संस्मरण उनके निजी जीवन पर प्रकाश डालते हैं। बेनीपुरी ने एक बार आत्मकथा लिखने की कोशिश की इसके संबंध में बेनीपुरी लिखते हैं—“कुछ दिन हुए, इच्छा हुई थी, अपनी आत्मकथा लिखूँ और उसका नाम रख दिया था, बाढ का बेटा!”⁴² बेनीपुरी ने अपनी आत्मकथा नहीं लिखी कई आत्मकथात्मक लेख लिखे हैं।

‘जंजीरें और दीवारें’ में बेनीपुरी के राष्ट्रप्रेम, विद्रोह, निर्भीकता, स्पष्टवादिता और आदर्श निर्वाह की क्षमता आदि का स्पष्ट अंकन हुआ है। वस्तुतः इस संग्रह में आत्मपरक संस्मरण अधिक हैं। बेनीपुरी ने करीब जेल जीवन की अवधि सात-आठ वर्ष लिखी है। जेल के अंदर जो कुछ महसूस किया, वह ‘जंजीरें और दीवारें’ में दर्ज है। इसमें जेल जीवन के साथियों के व्यक्तित्व का व्योरा है। ‘जंजीरें और दीवारें’ भारतीय जेल जीवन तथा अपने समय के इतिहास का बहुमूल्य दस्तावेज़ है। ‘कुछ मैं, कुछ वे’ बेनीपुरी की ऐसी आत्मकथात्मक रचना है जिसमें उनके राजनीति और पत्रकार जीवन की गाथा अंकित है। इसके दो खंड हैं—‘राजनीतिक के तूफान में’ तथा ‘पत्रकार जीवन के पैंतीस वर्ष’। प्रथम खंड के अंतर्गत अपनी राजनीतिक जिंदगी का व्योरा लिखा है और दूसरे खंड में अपने पत्रकार जीवन का पूरा वृत्तान्त लिखा है।

‘मील के पत्थर’ संस्मरण संग्रहों में एक उल्लेखनीय कृति है; वस्तुतः इसमें जो संस्मरण है वे सब निबंध के रूप में हैं इसलिए इसे संस्मरणात्मक निबंध की श्रेणी में भी रखा जा सकता है। इसमें पन्द्रह संस्मरणात्मक चित्रों का संग्रह किया है। डॉ० हरवंशलाल शर्मा इसके संबंध में लिखते हैं—“मील के पत्थर’ लेखक के हृदयस्पर्शी रेखाचित्र तथा संस्मरणों का संकलन है। छोटे-छोटे वाक्यों तथा भाव भरे शब्दों के चित्रात्मक प्रयोग से भाषा सजीव होकर उस व्यक्ति का सहज में ही चित्रांकन कर देती है।”⁴³ बेनीपुरी ने महापुरुषों के जीवन की झाँकियाँ और उनकी विशेषताएँ भी बड़ी सजीवता से उल्लेखित की हैं। इस कृति में संस्मरण, रेखाचित्र, और निबंध तीनों का समन्वय देखने को मिलता है। इस प्रकार बेनीपुरी एक श्रेष्ठ संस्मरण लेखक हैं।

जीवनी

बेनीपुरी ने राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर के तीन समाजवादी व्यक्तियों के राजनीतिक जीवन चरित्रों को लिखा है—‘रोजा लुग्जेम्बर्ग’, ‘जय प्रकाश’, ‘कार्ल मार्क्स’।

बेनीपुरी ने संसार की श्रेष्ठतम समाजवादी महिला ‘रोजा लुग्जेम्बर्ग’ का जीवन और उनकी क्रांतिकारी विचारधारा का परिचय दिया है। जर्मनी की इस समाजवादी महिला की जीवनी नौ अध्यायों में लिखी गयी है। जीवन कथा, उसका साहसिक कार्यक्षेत्र, उसकी विचारधारा और क्रांतिकारी भावना तथा उसके व्यक्तित्व का सजीव रूप इन अध्यायों में मिलता है। अगस्त क्रांति का अग्रदूत ‘जयप्रकाश’ का अपना विशिष्ट स्थान है। बेनीपुरी ने इसकी रचना बड़ी ही सजीवता से की है। बेनीपुरी लिखते हैं—“किन्तु मैं शब्द चित्रकार हूँ, और इस पुस्तक में मैंने अपने चरितनायक को मुख्यतः चित्रों के एक अलबम के रूप में पेश करने की चेष्टा की है।”⁴⁴ बेनीपुरी ने अपने चरित नायक के मानसिक, बौद्धिक और राजनीतिक विकास के क्रम में देश की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थितियों का सजीवता के साथ चित्रण किया है। देशभक्त जयप्रकाश को महात्मा गांधी ने भारतीय समाजवाद का आचार्य कहकर सम्मानित किया।

‘कार्लमार्क्स’ इस कृति का अपना विशिष्ट महत्त्व है, क्योंकि एक ही स्थान पर हमें कार्लमार्क्स के जीवन वृत्तान्त का विस्तृत परिचय मिलता है, साथ-साथ मार्क्स की समाजवादी भावना, उसके जीवन के मूल आदर्श और क्रांतिकारी विचार और उनके जीवन के उत्थान-पतन का विवेचन बेनीपुरी ने बड़ी ही सजीवता के साथ किया है। इतना ही नहीं इसमें समाज, राजनीति और मानवता संबंधी उनकी विचारधारा भी इसमें अंकित की है।

पत्र

पत्र-साहित्य में साहित्यकार का असली रूप दिखाई पड़ता है। इस प्रकार किसी लिखे गए पत्रों को भी ध्यान में रखना आवश्यक है। बेनीपुरी ने जीवन की जटिल समस्याओं से सम्बन्धित पत्र, हर दिन के काम-काज के पत्र, दार्शनिक और साहित्यिक पत्र, राजनैतिक पहलुओं से संबंधित आदि पत्र लिखे हैं। बेनीपुरी ने पत्र तो कई लिखे हैं लेकिन पचपन पत्र लगभग प्रकाशित हुए हैं।

राजनीति संबंधी रचना

उपर्युक्त साहित्य के अतिरिक्त हमें बेनीपुरी का कुछ अन्य साहित्य भी मिलता है। बेनीपुरी के अन्य साहित्य के अंतर्गत कुछ राजनीति संबंधी रचनाएँ मिलती हैं—‘लाल चीन’, ‘लाल रूस’, ‘रूस की क्रान्ति’ ये तीनों रचनाएँ राजनीतिक विचार धारा से संबंधित हैं। जयप्रकाश की समाजवादी विचारधारा है, जिसमें समाजवादी विचारधारा का विस्तृत वर्णन किया गया है। इसमें समाजवाद के महत्त्व एवं आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया है। ‘लाल चीन’ में बेनीपुरी ने प्रारंभ में चीन की क्रांति का संक्षिप्त इतिहास प्रस्तुत किया है, साथ ही साथ उस क्रांति का मूल्यांकन किया गया है। ‘लाल रूस’ में रूस की क्रांति पर संक्षेप में प्रकाश डाला गया है। इसमें भी क्रांति का मूल्यांकन किया गया है। रूस देश की सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों का वर्णन प्रस्तुत किया है। ‘रूस की क्रान्ति’ में बेनीपुरी ने रूस की क्रांति की रूपरेखा अंकित की है। रूस की जनता ने ज़ारशाही से मुक्ति पाने के लिए बड़ी जन-क्रांति की थी।

टीका-साहित्य

बेनीपुरी ने टीकाएँ भी प्रस्तुत की हैं। ‘विद्यापति की पदावली’ और ‘बिहारी सतसई’। ‘विद्यापति की पदावली’ की भूमिका ‘श्री अयोध्या सिंह उपाध्याय’ ‘हरिऔध’ ने ‘मैथिल कोकिल’ शीर्षक से लिखी है। उसमें संकलनकर्ता, संपादक बेनीपुरी की प्रशंसा करते हुए उन्होंने लिखा है—“संग्रहकर्ता ने उनकी उत्तमोत्तम रचना—कुसुमावली में से सरस-से सरस सुमन के संग्रह करने में जिस मधुप-वृत्ति का परिचय दिया है, उनकी भूयसी प्रशंसा की जा सकती है। वाद-टिप्पणियाँ तो सोने में सुगंध है।”⁴⁵ हिंदी साहित्य में विद्यापति का उद्धार बेनीपुरी ने किया था। ‘विद्यापति की पदावली’ में प्रारंभ में कवि विद्यापति का विस्तृत परिचय दिया गया है। ‘कवि परिचय’ के पश्चात् ‘वन्दना’, ‘वयः सन्धि’, ‘नखशिख’, ‘सघःस्त्राता’, ‘प्रेम-प्रसंग’, ‘दूती’, ‘नौक-झोंक’, ‘सखी शिक्षा’, ‘मिलन’, ‘सखी-संभाषण’, ‘कौतुक’, ‘अभिसार’, ‘छलना’, ‘मान’, ‘मानभंग’, ‘विदग्ध’, ‘बिलास’, ‘बसंत’, ‘विरह’, ‘भावोल्लास’, ‘प्रार्थना और नचारी’ तथा विविध शीर्षकों में विद्यापति के कुल 266 पदों का वर्गीकरण कर उनके कठिन पदों के अर्थ भी दिए गए हैं। टीका-साहित्य

में 'बिहारी-सतसई' का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। 'बिहारी सतसई' में 'प्रथम शतक', 'द्वितीय शतक', 'तृतीय शतक', 'चतुर्थ शतक', 'पंचम शतक', 'षष्ठम शतक', 'सप्तम शतक', आदि शीर्षकों में बिहारी के सात सौ दोहे के अन्वय, कठिन शब्दों के अर्थ, और दोहों के सरल अर्थ भी दिये हैं। कहीं-कहीं आवश्यक नोट भी दिये गये हैं।

पत्रिका

बेनीपुरी ने कई पत्रिकाओं का संपादन भी किया। बेनीपुरी के पत्रकार जीवन का आरंभ 'तरुणभारत' से होता है और धीरे-धीरे यह अनेक मंज़िलें तय करता हुआ आगे बढ़ता है और हिंदी पत्रकारिता को एक गरिमापूर्ण ऊँचाई प्रदान करता है। पत्रकारिता के क्षेत्र में बेनीपुरी का योगदान कुछ इस प्रकार है—

- 1921 — 'तरुण भारत' (साप्ताहिक) के सहकारी सम्पादक।
- 1922 — 'किसान मित्र' (साप्ताहिक) के सहकारी सम्पादक।
- 1924 — 'गोलमाल' (साप्ताहिक) के सहकारी सम्पादक।
- 1926 — 'बालक' (मासिक) के सम्पादक।
- 1929 — 'युवक' (मासिक) के सम्पादक और संचालक।
- 1930 — 'कैदी' (हस्तलिखित) के सम्पादन, हज़ारीबाग जेल में।
- 1934 — 'लोक संग्रह' (मुज़फ्फरपुर) और 'कर्मवीर' (खंडवा) के कार्यकारी सम्पादक।
- 1935 — 'योगी' (साप्ताहिक) के सम्पादक।
- 1937 — 'जनता' (साप्ताहिक) के सम्पादक।
- 1942 — 'तूफान' (हस्तलिखित), हज़ारीबाग जेल में सम्पादक।
- 1946 — 'हिमालय' (मासिक) के सम्पादक आचार्य शिवपूजन सहाय के साथ।
- 1946 — 'जनता' (साप्ताहिक) के पुनः सम्पादक।
- 1948 — 'जनवाणी' (मासिक), काशी के सम्पादक मंडल में आचार्य नरेन्द्रदेव जी के साथ।
- 1950 — 'नई धारा' और 'चुन्नू-मुन्नू' के प्रधान सम्पादक (दोनों ही मासिक)
- 1951 — 'जनता' (दैनिक) के प्रधान सम्पादक।⁴⁶

इस प्रकार बेनीपुरी ने पत्रकारिता को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया।

अनुवाद

बेनीपुरी ने अन्य भाषाओं की रचनाओं का हिंदी में अनुवाद एवं संकलन करने का प्रशंसनीय प्रयास भी किया। उन्होंने उर्दू के कवि इकबाल की चुनी हुई कविताओं का सटिप्पण संकलन भी लिखा है। उन्होंने कवीन्द्र—रवीन्द्र की लगभग पचास कविताओं को रूपान्तरित किया। ये कविताएँ पहले बंग—भाषा में थीं, लेकिन उन्होंने चुनी हुई कविताओं का हिंदी में अनुवाद किया, फिर उस संग्रह का नाम 'रवीन्द्र भारती' रख दिया। इसी संदर्भ में जोश की रचनाएँ 'टुलिप्स' आदि हैं। 'टुलिप्स' में बेनीपुरी ने वर्ड्सवर्थ, वायरन शैली और कीट्स आदि की विभिन्न कविताओं का हिंदी रूपान्तरण किया है।

स्मृति—चित्र

उपर्युक्त संपूर्ण साहित्य के अतिरिक्त बेनीपुरी ने एक अद्वितीय स्मृति—चित्र 'गांधी नामा' शीर्षक से एक हृदय स्पर्शी संस्मरण लिखा है। साहित्य एवं संवेदना की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण कृति है, क्योंकि बेनीपुरी के दूसरे बेटे सुरेंद्र का निधन छह वर्ष की अवस्था में हो गया था। परिवार में सुरेंद्र को प्यार से गांधी कहा जाता था। गांधी के अचानक गुजर जाने की सूचना बेनीपुरी को जेल में ही मिली। बेटे की मृत्यु से पैदा हुई एक बाप की पीड़ा को बेनीपुरी ने 'गाँधी नामा' स्मृति—चित्र में अंकित किया है। दुर्भाग्य वश यह कृति अभी तक प्रकाशित नहीं हो सकी।

उपर्युक्त संपूर्ण विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि बेनीपुरी का साहित्य अनेक रंगों से रंगा हुआ है। उन्होंने साहित्य की विविध विधाओं पर लेखनी ही नहीं चलाई बल्कि 'मील के पत्थरों' का निर्माण किया। वे एक साथ ही कवि, कहानीकार, उपन्यासकार, जीवनीकार, नाटककार, निबंधकार, एंकाकीकार, संस्मरणकार, आत्मचरित्रकार, रेखाचित्रकार, बाल—साहित्यकार, यात्रा—साहित्यकार, डायरीकार, राजनैतिक—रचनाकार, पत्रकार, पत्र—साहित्यकार, संपादक, अनुवादक, टीकाकार, संकलनकार एवं रूपान्तरकार आदि अनेक रूपों में हमारे सामने प्रस्तुत हुए हैं। वास्तव में बेनीपुरी साहित्य, साहित्य की किसी एक विधा में सीमित नहीं रहा है। साहित्य का कोई भी ऐसा आयाम नहीं है, जो श्री रामवृक्ष बेनीपुरी की कलम से अछूता रहा हो।

(ख) बेनीपुरी के डायरी साहित्य का परिचय

एक व्यक्ति को जानना एक इतिहास जानने के बराबर है और जब वह व्यक्ति श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जैसा ज़मीन से जुड़ा और सादगी के साथ जीने वाला हो, जो छोटे से छोटे आदमी की पीड़ा से व्याकुल होने वाला हो, तो ज़ाहिर है, एक व्यक्ति को जानने का यह सुख बहुत अच्छा लगता है। बेनीपुरी का डायरी लेखन उनके समग्र जीवन को स्पष्ट करता है, जो उनके व्यक्तित्व की पहचान है। बेनीपुरी के लिए साहित्य वाग्विलास की वस्तु नहीं; बल्कि एक गंभीर ज़िम्मेदारी है। जो व्यक्ति इस ज़िम्मेदारी का कर्तव्य समझकर निभाता है वही सच्चा साहित्यकार कहलाने का अधिकारी होता है। बेनीपुरी ने अपनी डायरी बड़ी ही ज़िम्मेदारी से लिखी है। जीवन को जीते हुए उससे मिले अनुभवों को बेनीपुरी ने अपने लेखन का विषय बनाया। इस प्रकार उनकी डायरी उनके संपूर्ण व्यक्तित्व का आईना है।

अपनी डायरी के विषय में बेनीपुरी लिखते हैं—“मैंने लिखना शुरू किया और प्रारम्भ से ही यह तय किया कि यह दिन-दिन का व्यापार नहीं होगा। जब कोई बात लिखने लायक आ जाए, तभी लिख दूँगा। कल जब इस डायरी के पन्नों को इधर-उधर से उलटकर देख गया, तो मुझे लगा, इसे प्रारम्भ करके, मैंने कोई बेवफूकी नहीं की। कई ऐसे मधुर प्रसंग इसमें उल्लेख पा गए हैं, जो जीवन की तीव्र गति में छूट ही जाते, भूल ही जाते। हाँ, कुछ अप्रिय बातें भी आ गई हैं और यद्यपि ऐसे प्रसंगों में नाम छोड़ देने की मैंने कोशिश की है, किन्तु कहीं-कहीं नाम देने से अपने को रोक नहीं सका। क्या यह अच्छा हुआ ?”⁴⁷

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने अपनी डायरी में तद्युगीन राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक व पारिवारिक आदि परिस्थितियों के हर उतार-चढ़ाव को अंकित किया है। संपादक सुरेश शर्मा लिखते हैं—“तेरह वर्षों में उन्होंने नियमित रूप से डायरियाँ लिखीं। चाहे देश में रहे हों या विदेश में, उन्होंने डायरी लिखने के लिए प्रायः रोज ही समय निकाला। उनकी दोनों यात्रा-पुस्तकें—“पैरों में पंख बाँधकर” और “उड़ते चलो—उड़ते चलो” विदेश में लिखी डायरियों के ही संकलन हैं।”⁴⁸ बेनीपुरी की डायरी ‘डायरी के पन्ने’ में 28 मार्च 1950 से 26 अप्रैल 1963 तक की डायरियाँ संकलित हैं। इन डायरियों में बेनीपुरी के अत्यन्त मानवीय और संवेदनशील व्यक्ति होने का परिचय मिलता है। इन डायरियों में उनके जीवन तथा युगीन सामाजिक,

राजनीतिक तथा साहित्यिक घटनाओं के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। पारिवारिक जिंदगी का वृत्तान्त भी प्रस्तुत है।

बेनीपुरी अपनी डायरी के विषय में 28 सितम्बर, 1951 की डायरी में लिखते हैं—“यह डायरी इसलिए तो नहीं शुरू की थी कि इसमें अपने दुःख-द्वन्द्वों को स्थायी बनाता जाऊँ। सोचा था, जब कभी कोई उमंग मन में उठे, उसे कलमबन्द कर लिया करूँ। यों थोड़े दिनों में यह अच्छी स्केच पुस्तिका बन जाएगी, ऐसी आशा थी। किन्तु उसके बदले यह मेरी दुःख-गाथा बनती जा रही है।”⁴⁹ इस प्रकार बेनीपुरी की डायरी व्यथा से भरे हुए पन्नों की अभिव्यक्ति है। यह डायरी एक क्रांतिकारी व्यक्तित्व का आत्मविश्लेषण है।

‘नई धारा’ में बेनीपुरी के संस्मरण, डायरी के पृष्ठ भी छपे थे। ‘मुझे याद है’ तथा ‘डायरी के पन्ने’ शीर्षक रचनाएँ इसी प्रकार ‘नई धारा’ में क्रमिक रूप में छपी हैं। अतः बेनीपुरी के डायरी साहित्य को हम पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से आगे बढ़ता हुआ देख सकते हैं। पत्रिकाओं का योगदान उनके साहित्य में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है।

बेनीपुरी के डायरी साहित्य में उपर्युक्त सभी आंदोलनों की राजनीतिक पृष्ठभूमि स्वातंत्र्य-आंदोलन की हर बदलती हुई परिस्थितियों में देखी जा सकती है। डॉ० गजानन चव्हाण लिखते हैं—“स्वातंत्र्य-आन्दोलन में प्रत्यक्षतः भाग लेने से बेनीपुरी के व्यक्तित्व के राजनीतिक, साहित्यिक और पत्रकार रूप को आकार मिला था।”⁵⁰

इस प्रकार बेनीपुरी के व्यक्तित्व पर राजनीतिक आंदोलनों का गहरा प्रभाव पड़ा जिसने उनके साहित्यिक और पत्रकार रूप को आकार दिया। उनका साहित्यिक दृष्टिकोण व साहित्य का विषय राजनीतिक आंदोलन के हर उतार-चढ़ाव को देख रहा था। उन्होंने अपने डायरी साहित्य के अंतर्गत समाज में हो रही राजनीतिक उथल-पुथल को प्रत्यक्षतः दिखाने का प्रयास किया है। बेनीपुरी की डायरी से ज्ञात होता है कि—“बेनीपुरी की चेतना देश और काल की सीमा में ही आबद्ध नहीं हो गयी है, अपितु वह कालातीता है, सर्वव्यापिनी है।”⁵¹

उन्होंने युगीन परिस्थितियों और संघर्षों को दूर से देखा नहीं बल्कि उसे स्वयं महसूस भी किया। यही कारण है कि उनके डायरी साहित्य में युगीन प्रतिबिंब और जीवन की आशा-आकांक्षाएँ एक साथ दिखायी देती हैं। 'डायरी के पन्ने' के संपादक, राजेश्वर प्रसाद सिंह उनकी डायरी के विषय में बताते हैं कि उसमें—“भूत, वर्तमान और भविष्य जीवन्त होकर कुल्लूचे भर रहे हैं, दम तोड़ते से नज़र आ रहे हैं, किन्तु जिन्दगी की आस्था को छोड़ते नहीं।”⁵²

बेनीपुरी ने जिन साहित्यिक विधाओं को रूप, रंग व आकार दिया उनमें से प्रमुख डायरी विधा है। उनकी डायरी में यात्रा-वर्णन का रूप देखते ही बनता है। उन्होंने अपने डायरी साहित्य के अंतर्गत 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' व 'पैरों में पंख बाँधकर' यात्रा-वर्णन की पृष्ठभूमि पर लिखे हैं। बेनीपुरी ने यूरोपीय देशों की उन्मुक्त भाव से यात्राएँ की थीं। पहली बार एक भारतीय पत्रकार के रूप में उन्होंने इंग्लैंड, स्कॉटलैंड, स्विट्ज़रलैंड और फ़्रांस आदि देशों की यात्राएँ कीं। यह विदेश यात्रा 19 अप्रैल, 1951 से आरंभ हुई और 4 जून, 1951 को समाप्त हुई। उनकी ये यात्राएँ महत्त्वपूर्ण एवं अनेक विशेषताओं से युक्त हैं। विदेश-भ्रमण के लिए उन्हें अतिथि के रूप में निमंत्रण मिला। उन्होंने दो बार ये यात्राएँ कीं। इन यात्राओं के माध्यम से हिंदी साहित्य को यात्रा-वर्णन संबंधी महत्त्वपूर्ण रचनाएँ प्राप्त हुईं। दोनों यूरोप यात्राओं के अनुभवों पर आधारित हैं। दोनों ही रचनाएँ डायरी शैली में लिखी हुई हैं।

'पैरों में पंख बाँधकर' बेनीपुरी की पहली यात्रा के सुखद अनुभवों का सजीव चित्रण है। बेनीपुरी ने वहाँ के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास को प्रस्तुत किया है। उनकी यह यात्रा नौ अध्यायों में विभक्त है। उनके शीर्षक क्रमशः इस प्रकार हैं—उड़ता चल कबूतर, लंदन में तेरह दिन, मुफ़रिसल की ओर, स्कॉटलैंड की झलक, शेक्सपीयर के गाँव में, विदा इंग्लैंड। स्विट्ज़रलैंड में, पेरिस के दिन, पेरिस की रातें तथा घोंसले की ओर।

'उड़ते चलो, उड़ते चलो' उनकी दूसरी विदेश-यात्रा के सुखद अनुभवों का चित्रण है। इसमें बेनीपुरी की फ़्रांस, इंग्लैंड, स्विट्ज़रलैंड, रोम और इटली की यात्राएँ हैं। यह यात्रा 10 मई, 1952 से आरंभ होकर 19 जून, 1952 को समाप्त

हुई। यह यात्रा-वर्णन छोटे-बड़े 41 अध्यायों में विभक्त है। शीर्षक क्रमशः इस प्रकार हैं—उड़ता जा रहा हूँ। यह प्रभात, यह पेरिस। काँग्रेस: वासाई, दूतावास: नवोकौव : रेस्तोराँ, तानाशाही, सिनेमाघर : ईमानदारी, ईफेल टावर: सीन का किनारा, कंकर्द : त्विलरी: लुव्र: काँग्रेस, कलाकारों से : पेन्थियन में, लौमें दिए फ्रांसिस: नई कला: सांस्कृतिक स्वाधीनता, संगीत का मधुर धारा, नेपोलियन की समाधि: साहित्य के दो दौर, मेट्रो: मेला : लीडो, होटल : राजदूत: देवी जी। स्मशान भूमि और रंगभूमि, वन-विहार: चिड़ियाखाना, चित्रकला की आत्मा, जापानी लेखिका : एशियाई संगठन, क्रान्ति और कला, फुलवाडी : दूतावास सिलौने, काँग्रेस का आखिरी जलसा, पेरिस सलाम, पेरिस नहीं भूलती, इंगलैण्ड की ओर, गुलाब की दुनिया, संग्रहालयों के बीच, खुला रंग-मंच, कैम्ब्रिज : बच्चन, स्पेन्डर के घर में, कोहेनूर : रानी : आनन्द वाटिका, सोशलिस्ट ग्रुप: लेबर पार्टी, जिनेवा की सुहावनी संध्या, सामने 'जुंगफ्राउ' है। जंगफ्राउ : नई दुलहन, वेनीस की ओर: इटली की देहात; यह पानी का शहर, दाँते के नगर में, यह दाँते का घर है। फ्लोरेंस से रोम, रोम की झाँकी तथा घोंसले की ओर। इन शीर्षकों में बेनीपुरी ने अपनी विविध अनुभूतियों का आँखों देखा हाल शब्दबद्ध कर लिया है।

डॉ० पदम सिंह शर्मा (कमलेश) ने बताया—“डायरी के क्षेत्र में केवल श्री रामवृक्ष बेनीपुरी की डायरी 'नई धारा' में देखने को मिली है। वस्तुतः हमारे यहाँ इसकी प्रथा ही नहीं है।”⁵³ अतः डायरी विद्या के क्षेत्र में श्री रामवृक्ष बेनीपुरी की डायरी महत्त्वपूर्ण है; जो कि एक साहित्यिक कृति के रूप में हमारे सामने है। हिंदी गद्य-साहित्य की विधाओं में डायरी लेखन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। जिसमें साहित्यकार अपने अन्तर का यथार्थ-दर्शन प्रस्तुत करता है। बेनीपुरी ऐसे ही साहित्यकारों में से हैं। डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान के अनुसार—“डायरी भी अकृत्रिम आत्म-प्रकाशन का साधन है, अतः बड़ा ही मूल्यवान है।”⁵⁴ अतः डायरी विद्या लेखक के आत्मप्रकाशन का साधन होती है। जिसमें वह अपने व्यक्तित्व व कृतित्व का यथार्थ रूप प्रस्तुत करता है।

यदि हम ध्यानपूर्वक देखें तो हर दिन अनेक घटनाओं व जीवन के उतार-चढ़ाव को लेकर आता है। यह घटनाएँ अच्छी भी हो सकती हैं और बुरी

भी। कभी सुखवर्धक हो सकती हैं तो कभी दुःखवर्धक भी। जब साहित्यकार अपने एक-एक दिन के विचार एवं अभिव्यक्ति को लिपिबद्ध कर लेता है तब वह सर्जनात्मक अनुभूति का आईना बन जाती है। इन्हीं विचार व अनुभूतियों का सशक्त माध्यम 'डायरी' होता है। डायरी मनुष्य के संपूर्ण जीवन चरित्र को प्रस्तुत करने में समर्थ होती है। मानव जीवन की दैनिक घटनाओं व विचारों का जितना सफल आकलन 'डायरी' में लिपिबद्ध किया जा सकता है उतना किसी अन्य साहित्यिक विधा में नहीं किया जा सकता है। डायरी लेखक की यह भी विशेषता होती है कि वह कभी-कभी घटना व विचारों के साथ तिथि व स्थान के नाम का भी उल्लेख करता है। श्री रामवृक्ष बेनीपुरी की डायरी उनके विचारों व साहित्यिक प्रतिभा का एक सशक्त प्रमाण है। बेनीपुरी ने सन् 1950 ई० से डायरी लिखना प्रारंभ किया था। बेनीपुरी ने जो डायरी लिखी वह अत्यन्त सुंदर एवं महत्वपूर्ण है। उनके डायरी साहित्य पर विचार करते हुए हम उनकी डायरी में तद्युगीन राजनीतिक परिस्थिति, व्यथापूर्ण क्षण, पारिवारिक व सामाजिक परिस्थिति, आर्थिक परिस्थिति, कुछ दुःखदायी क्षण, व प्रकीर्ण वर्णन का यथार्थ चित्रण पाते हैं। जिसे उन्होंने डायरी शैली में लिपिबद्ध किया है।

'डायरी के पन्ने' के संपादक, डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह लिखते हैं—“बेनीपुरी की डायरी प्रकृत अर्थों में डायरी नहीं है; जिसमें दिन-रात की घटनाओं व कार्यों का ब्योरेवार जिक्र किया जाता है, यह सही अर्थ में एक साहित्यिक कृति है जिसमें उनके जीवन और चिन्तन की, परिकल्पना और संकल्पना की अवधारणा और विचारणा की कलात्मक अभिव्यक्ति हुई है।”⁵⁵ स्पष्ट है कि बेनीपुरी जी की डायरी एक साहित्यिक कृति है, जिसमें उनके जीवन की घटनाओं के साथ-साथ तद्युगीन परिस्थितियों का विवरण मिलता है। उनकी कलात्मक अभिव्यक्ति उनकी डायरी में देखते ही बनती है। बेनीपुरी लिखते हैं—“जब मैंने डायरी लिखना शुरू किया, मैं नहीं जानता था कि मैं अनजाने में ही 'जर्नल' लिख रहा हूँ। डायरी वह है, जिसमें प्रतिदिन के जीवन का उल्लेख है। 'जर्नल' वह जिसमें कोई लेखक अपने अनुभवों, विचारों या भावनाओं को लिपिबद्ध करता है।”⁵⁶

अतः बेनीपुरी की डायरी एक जर्नल के रूप में थी न कि वह डायरी जिसमें रात-दिन की घटनाओं का ब्योरा दिया गया हो।

जो लेखक डायरी लिखता है उसका जीवन उस लेखन से बहुत दूर तक प्रभावित होता है अपना जीवन केवल साहित्य के नाम कर देना ही बेनीपुरी का लक्ष्य नहीं था अपितु वह स्वाधीनता, पत्रकारिता, राजनीति व सामाजिक क्षेत्रों में भी कर्मशील व्यक्ति थे। यही कारण है कि उनकी डायरी इन सभी क्षेत्रों को स्पर्श करते हुए आगे बढ़ती है। बेनीपुरी लीक से हटकर चलने में विश्वास रखते थे। डायरी द्वारा वे सार्थक जीवन के दिनों को सुरक्षित रखना चाहते थे।

बेनीपुरी की डायरी में घटनाओं, प्रसंगों, तदयुगीन परिस्थितियों व विचारों का वैविध्य भी है और विस्तार भी। बेनीपुरी अपनी डायरी में अपने स्वभाव का सूक्ष्म व आत्मालोचन विश्लेषण करते हुए दिखाई देते हैं। उन्होंने अपनी डायरी में जीवन के नितांत छोटे प्रसंग भी अंकित किए हैं। जो उनके जीवन-दर्शन व विचारधारा से हमें अवगत कराते हैं। बेनीपुरी के डायरी के प्रसंग व घटनाएँ उनके व्यक्तित्व की विशेषता के प्रमाण भी हैं। "बेनीपुरी की डायरी अपने समय के हिन्दी साहित्य की ही नहीं, एक सीमा तक विश्व-साहित्य के परिदृश्य को प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत डायरी में साहित्य-संसार से सम्बन्धित विविध गतिविधियों की सूचनाएँ मिलती हैं।"⁵⁷ अतः बेनीपुरी की डायरी हिंदी साहित्य की नहीं बल्कि विश्व साहित्य का संपूर्ण परिदृश्य है। उन्होंने अपनी डायरी में स्वयं पढ़ी हुई साहित्यिक कृतियों की विशेषताएँ दर्ज की हैं, साथ ही विदेशी साहित्य-कृतियों का परिचय भी उनकी डायरी में हमें देखने को मिलता है। बेनीपुरी ने हिंदी साहित्य को उसकी उपलब्धियों व कमियों दोनों के साथ देखा। 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' और 'पैरों में पंख बाँधकर' जो कि डायरी साहित्य का महत्वपूर्ण अंश हैं, जो पूर्णतः डायरी शैली में लिखे गए हैं। बेनीपुरी उन यात्रियों में थे जिन्होंने अपने देश के साथ-साथ विदेशों के दर्शनीय स्थानों की यात्राएँ कीं। देश-विदेश के पहाड़ी रास्ते, बन्दरगाह, वहाँ के अनेकों दर्शनीय स्थान, बाग-बगीचे, फुलवारियाँ, वहाँ की संस्कृति, खेत, नहरें, झीलें आदि सभी का वर्णन हम उनके यात्रा साहित्य में पाते हैं। बेनीपुरी केवल एक साहित्यिक जागरुक व्यक्ति ही नहीं बल्कि नव संस्कृति के निर्माता भी

थे। उनकी दृष्टि देश-विदेश की सूक्ष्मातिसूक्ष्म बातों व सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक जगत का अध्ययन कर लेती है। ये सभी पक्ष उनकी यात्रा-वर्णनों में साकार हो गए हैं। बेनीपुरी के डायरी साहित्य में उनकी ये दोनों यात्राएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। यदि हम उनके यात्रा साहित्य में कला और संस्कृति की बात करें तो अपनी दोनों यूरोप-यात्राओं में उनकी सांस्कृतिक दृष्टि प्रधान रही है। उनके यात्रा-साहित्य में यूरोप की संस्कृति के विभिन्न अंगों का व्यापक वर्णन मिलता है। वे अपनी यात्रा के दौरान मार्ग में आने वाले धार्मिक स्थलों, संस्कृति के केंद्रों और वहाँ की परिस्थितियों का परिचय देते हुए आगे बढ़ते हैं।

बेनीपुरी ने अपनी यात्रा डायरी में यूरोपीय देशों के धर्म व रीति-रिवाज के संबंध में लिखा है—“पीछे वह समाधि मन्दिर है जिसमें नेपोलियन की लाश रखी गई है! पहले यह गिरजाघर था, माँसार नामक स्थापत्य-कला विशारद ने इसकी रचना की थी! इसे रोम के प्रसिद्ध गिरजाघर ‘सेंट-पिटर’ के नमूने पर बनाया गया था और पेरिसवालों का कहना है, इसका गुम्बद उससे भी अधिक शानदार है।”⁵⁸ अतः स्पष्ट है कि बेनीपुरी ने यूरोपीय देशों की संस्कृति और धर्म को अपनी यात्रा डायरी में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है।

बेनीपुरी ने प्रसिद्ध साहित्यकारों का वर्णन अपनी यात्रा डायरी में किया है। वे अलग-अलग देशों के साहित्यकारों से मिले थे। यूरोपीय देशों की संगीत-कला के विषय में बेनीपुरी ने जो देखा, महसूस किया उसकी अनुभूतियाँ उन्होंने अपने यात्रा साहित्य में की हैं। विशेष रूप से फ्रांस की संगीत कला का बड़ा ही सुन्दर वर्णन उन्होंने ‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में किया है।

बेनीपुरी ने अपनी यात्रा डायरी में यूरोपीय देशों के जन-जीवन का खूब वर्णन किया है। उन्होंने जन-जीवन के हर पहलुओं को उठाया है। बेनीपुरी ने अपनी यात्रा में यूरोप की जनता की मनः प्रवृत्तियों को स्पष्ट रूप से दिखाया है, साथ ही स्वभावगत विशेषताएँ भी महत्त्वपूर्ण रही हैं। बेनीपुरी ने यूरोपीय जनता की भोज्य-सामग्रियों की विवेचना भी अपने यात्रा साहित्य में की है। भोजन पद्धति का बड़ा ही मनोरंजक चित्रण उन्होंने अपनी यात्रा डायरी में किया है।

यूरोपीय देशों के जन-जीवन का चित्रण करते समय बेनीपुरी ने वहाँ के पहनावे का ही नहीं मकान व रहने की व्यवस्था का भी वर्णन अत्यन्त सुंदर ढंग से किया है। किसी भी देश का जन-जीवन वहाँ की शिक्षा-व्यवस्था को बहुत अधिक प्रभावित करता है। बेनीपुरी ने अपनी इंग्लैंड यात्रा के दौरान वहाँ की शिक्षा-प्रणाली व स्कूलों तथा कालेजों की कार्य व्यवस्था का परिचय दिया है। इंग्लैंड के स्लाउ शहर के एक प्राइमरी स्कूल के विषय में वे लिखते हैं—“सबसे पहले हम एक प्राइमरी स्कूल में गए। स्कूल के चारों ओर खुले मैदान हैं। स्कूल का भवन बड़ा ही सुन्दर है। इसमें चार सौ आठ विद्यार्थी हैं और बारह शिक्षक। शिक्षकों में अधिक स्त्रियाँ हैं। क्लास में छोटे-छोटे डेस्क और उनसे लगे छोटे छोट-छोटे बेंच। दीवारों पर चारों ओर सुन्दर-सुन्दर चित्र।”⁵⁹ इस प्रकार बेनीपुरी ने जन-जीवन व परंपराओं के साथ शिक्षा व्यवस्था को अत्यधिक महत्त्व दिया। बिना शिक्षा व्यवस्था के किसी भी देश का जन-जीवन अस्त-व्यस्त होता है।

बेनीपुरी ने शिक्षा-व्यवस्था के साथ-साथ यूरोपीय देशों की जन-जीवन मुख्यतः वहाँ के शहर व गाँवों में निवास करने वाले लोगों को अपनी यात्रा डायरी में इंगित किया है। उन्होंने जिन शहरों को देखा सिर्फ उसका वर्णन ही नहीं बल्कि वहाँ की विशेषताओं को भी अपनी यात्रा डायरी में स्थान दिया है।

बेनीपुरी ने अपनी दोनों यात्रा में यूरोपीय देशों की आर्थिक परिस्थितियों का विशद वर्णन भी किया है। देश-विदेश के आर्थिक ढाँचे का यथार्थ वर्णन करते हुए उन्होंने उत्पादन के साधन व आर्थिक तंगी तथा उसके संकट को भी साहित्य में स्थान दिया है। अतः बेनीपुरी ने आर्थिक परिस्थितियों के हर उतार-चढ़ाव को अपनी यात्रा में अंकित किया है। इंग्लैंड में छोटी-बड़ी औद्योगिक कम्पनियों का बड़ा ही सुंदर वर्णन उनकी यात्रा डायरी में हमें देखने को मिलता है।

उपर्युक्त क्षेत्रों के अतिरिक्त बेनीपुरी ने अपनी दोनों यात्रा में यूरोपीय देशों की कृषि-प्रणाली का भी वर्णन किया है। बेनीपुरी लिखते हैं—“खेतों में पुलियाँ पड़ी हुई हैं, बोझ पड़े हुए हैं। बोझ सिर पर नहीं ढोए जाते-घोड़ागाड़ी या बैलगाड़ी पर उन्हें ढोकर ले जाते हैं! यूरोप में यह पहली बार बैलगाड़ी देखने का अवसर मिला है। यही नहीं, वहाँ देखिए, बैलों से वहाँ जुताई भी की जा रही है। तभी तो कहता

हूँ, अपना देश अब अधिक दूर नहीं जान पड़ता। खेतों में मर्द काम कर रहे हैं, औरतें काम कर रही हैं, बच्चे भी काम कर रहे हैं! बच्चे काम करें, यह भी यहीं देखा। अभी तक बच्चे को खेलते या पढ़ते ही देखा था। लोगों के शरीर पर कपड़े भी कम हैं— मर्द प्रायः नंगे बदन हैं; बस, कमर में पैंट मात्र। हाँ, सिर पर टोप हैं— धूप कड़ी है न? औरतों की चोली और घाघरा भी अपने देश की निकटता की सूचना देते हैं।⁶⁰ अतः बेनीपुरी ने यूरोपीय देशों के लोगों की कार्यपद्धति व उत्पादन के कार्यों में लगे हुए लोगों को अत्यन्त निकटता से देखा और उससे सम्बन्धित विशेषताओं को अपनी यात्रा डायरी में अंकित किया।

यूरोप की यात्रा के दौरान बेनीपुरी का पूरा ध्यान वहाँ की कला और संस्कृति पर अधिक था इसकी तुलना में उन्होंने राजनीतिक परिस्थितियों का अंकन कम किया है। बेनीपुरी ने नेपाल की राजनीतिक परिस्थिति का विस्तृत विश्लेषण उन्होंने अपनी डायरी में किया है। डॉ० गजानन चव्हाण लिखते हैं—“नेपाल की राणाशाही के खिलाफ, बेनीपुरी ने ‘जनता’ द्वारा आंदोलन चलाया था। नेपाल की प्रजा-परिषद की स्थापना भी बेनीपुरी की प्रेरणा से ही हुई थी। कई लोग तो बेनीपुरी की प्रेरणा से ही नेपाल की राजनीति में आए थे।⁶¹ अतः बेनीपुरी जी ने नेपाल की राजनीतिक परिस्थितियों को बहुत सुंदर ढंग से अपनी डायरी में अंकित किया है। यहाँ तक की बहुत सारे लोगों ने बेनीपुरी जी की प्रेरणा से ही नेपाल की राजनीति में भाग लिया। उन्हें नेपाल का राजनीतिक वातावरण अत्यन्त अस्थिर लगा। वहाँ के वातावरण में स्थिरता लाने के लिए उन्होंने बहुत प्रयत्न किया। अतः उन्होंने अपनी यात्रा डायरी में विदेशी राजनीति को भी दर्शाया है राजनीति से सम्बन्धित हर बिंदु हमें उनके डायरी साहित्य में प्राप्त होते हैं। अतः बेनीपुरी ने इंग्लैंड की राजनीतिक परिस्थिति, वहाँ के कठोर नियम व न्यायपद्धति सभी का परिचय अपने डायरी साहित्य में किया है। यह बात अत्यन्त ध्यान देने योग्य है कि बेनीपुरी ने अपने डायरी साहित्य में इटली, फ्रांस व स्विट्ज़रलैंड आदि देशों की राजनीतिक परिस्थितियों के संबंध में कुछ नहीं लिखा है, क्योंकि वह इन देशों को कला, संस्कृति व सौंदर्य की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं। स्पष्ट है कि बेनीपुरी ने अपनी कृतियों में यूरोप-यात्रा के दौरान घटने वाली प्रत्येक घटनाओं का

विवरण दिया है। यूरोप यात्रा के दिन-प्रतिदिन की घटनाओं का विवरण समयानुसार दिया है। इस प्रकार उनका यात्रा साहित्य डायरी शैली का है और वह सरलता, संक्षिप्तता, वैयक्तिकता, स्पष्टता व आत्मीयता के हर गुणों से भरपूर है।

उपर्युक्त संदर्भों व तथ्यों द्वारा स्पष्ट है कि उनका डायरी साहित्य विलक्षण प्रतिभा से युक्त है। बेनीपुरी का डायरी लेखन हर क्षेत्र की चुनौती को स्वीकार करता हुआ दिखाई देता है। उनकी डायरी, साहित्य के क्षेत्र में एक ऐसी प्रतिक्रिया का परिणाम है जो ठोस रूप में हिंदी डायरी लेखन के क्षेत्र में आदर्श एवं महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

(ग) बेनीपुरी की डायरी में अभिव्यक्त विषय

सामान्यतः यह देखा जाता है कि एक व्यक्ति केवल अपने किसी एक क्षेत्र से जुड़ने के बाद दूसरे पेशे की ओर ध्यान ही नहीं देता। जैसे—साहित्यकार केवल साहित्यकार होता है, राजनीतिज्ञ केवल राजनीतिज्ञ होता है एवं समाज सुधारक केवल समाज सुधार के कार्यों में रुचि लेता है, जबकि बेनीपुरी एक सफल साहित्यकार होने के साथ-साथ कई क्षेत्रों से भी जुड़े हुए थे। बेनीपुरी के संबंध में दिनकर लिखते हैं—“उनके भीतर केवल वही आग नहीं थी, जो कलम से निकलकर साहित्य बन जाती है। वे उस आग के धनी थे, जो राजनीतिक आन्दोलनों को जन्म देती है, जो परम्पराओं को तोड़ती और मूल्यों पर प्रहार करती है, जो चिन्तन को निर्भीक और कर्म को तेज बनाती है। संक्षेप में वे क्रान्तिकारी मनुष्य थे और उनका ध्येय नये मूल्यों का स्थापन एवं नये समाज का निर्माण था। समाज जब बदलने लगता है तब वह अपनी प्रक्रिया को तेज करने के लिए कुछ बेचैन मनुष्यों को जन्म देता है। बेनीपुरी जी के भीतर बेचैन कवि, बेचैन चिन्तक, बेचैन क्रान्तिकारी और निर्भीक योद्धा सभी एक साथ निवास करते थे।”⁶² साहित्य के क्षेत्र में पहुँचे हुए बड़े-बड़े साहित्यकार राजनीति से हमेशा दूर ही रहते हैं, लेकिन बेनीपुरी के संबंध में ऐसा नहीं है। उनके जीवन और कार्य के अनुशीलन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि साहित्य, राजनीति और पत्रकारिता इन तीनों क्षेत्रों में उनका समान अधिकार दिखाई देता है।

‘डायरी के पन्ने’ के संपादक, डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह उनकी डायरी के संबंध में लिखते हैं—“मात्र साहित्य बेनीपुरी का कर्मक्षेत्र नहीं था। वे स्वाधीनता आंदोलन, साहित्य, राजनीति तथा पत्रकारिता के क्षेत्रों में दीर्घकाल तक कार्यरत कर्मशील व्यक्ति थे। अतः उनकी डायरी इन सभी क्षेत्रों को स्पर्श करती है। भाग्यवादी व्यक्ति की डायरी में छोटी-मोटी सफलताओं विकलताओं की एक पूर्व निर्धारित मीमांसा मिलेगी जबकि कर्मवादी की डायरी में उन्हीं सफलताओं-विफलताओं की मीमांसा में परिस्थितियों, क्षमताओं, प्रतिक्रियाओं का तर्कसम्मत विवेचन मिलेगा।”⁶³ बेनीपुरी जितने गहरे साहित्य से जुड़े थे उससे कहीं अधिक लगाव अन्य क्षेत्रों से भी रखते थे। इस बात को स्पष्ट करते हुए बेनीपुरी 17 अप्रैल, 1953 की डायरी में लिखते हैं—“कई बार मैंने आत्मकथा लिखने की कोशिश की, छिटपुट आत्मकथात्मक निबंध तो प्रायः लिखता रहा हूँ, किन्तु एक सिलसिलेवार चीज़ अभी तक नहीं दे सका। बात यह है कि मेरा जीवन कई हिस्सों में पेश हुआ है। पत्रकार बेनीपुरी, साहित्यकार बेनीपुरी, राजनीतिज्ञ बेनीपुरी, समाजवादी बेनीपुरी फिर पारिवारिक बेनीपुरी की इन सब पर एक-एक पुस्तक लिखी जा सकती थी।”⁶⁴

बेनीपुरी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उनकी प्रतिभा की छाप प्रत्येक क्षेत्र में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। हिंदी जगत के साहित्यकारों में सर्वोपरि स्थान रखने वाले बेनीपुरी ने एक ओर पत्रकार के रूप में अपनी पैनी सूझ-बूझ और अद्भुत क्षमता का परिचय दिया तो दूसरी ओर राजनीति में भी अपनी कार्य कौशल से सदैव अगली कतार में रहे। समाज सुधार तो मानो उनके जीवन का लक्ष्य था। वे सदैव गरीबों के प्रति सहानुभूति रखते थे। वे अन्याय, अत्याचार और उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष करने में कभी-भी पीछे नहीं हटे। यद्यपि उन्हें अपने जीवन में अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। तथापि वे गरीब, दीन-दलित, पीड़ित एवं शोषित जनता के लिए प्रगति-पथ का निर्माण करते रहे। अतः बेनीपुरी साहित्य से जुड़े होने के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों में भी रुचि रखते थे। यह उनके व्यक्तित्व की अपूर्व विशेषता थी। वे जितने महान साहित्यकार थे उतने ही महान पत्रकार, राजनीतिज्ञ

और समाज सुधारक भी थे। स्पष्ट है कि बेनीपुरी की डायरी में उनके इन सभी रूपों की अभिव्यक्ति देखने को मिलती है।

लगभग चालीस साल तक बेनीपुरी देश की राजनीति में सक्रिय रहे, उनकी राजनीतिक विचारधारा उनकी डायरी में देखने को मिलती है। वे राजनीति में गांधी की प्रेरणा से आये थे, अत्याचारी शासन को दूर करने के लिए बेनीपुरी ने गांधी द्वारा बताये गये मार्ग सत्याग्रह को स्वीकार किया था। वे सदैव यह मानकर चले कि जनतंत्रात्मक सत्ता द्वारा समाज की सेवा की जानी चाहिए, अर्थात् सत्ता को भी वे जनसेवा का माध्यम ही मानते थे और राजनीति से समाज की भलाई की अपेक्षा करते थे। उनकी राजनीति समाजवाद की राजनीति थी। बेनीपुरी राजनीति के विषय में लिखते हैं—“वह राजनीति भी क्या है, इससे भी गन्दी कोई चीज हो सकती है? उफ, इसमें कितना पाखंड है, झूठ है, प्रपंच है। तिकड़म तो इसकी कुंजी है। वह इतिहास को मिटाता है। झूठा इतिहास तैयार करता है। देवता को दानव और दानव को देवता के रूप में प्रस्तुत करने में इसे ज़रा भी झिझक नहीं होती। जितने अपराध इसके मंच पर होते रहते हैं, यदि उन सब पर कार्रवाई की गई होती तो हर शहर का आधा स्थान जेल ही घेरता। जिनके गले में मालाएँ मिल रही हैं उन्हें तौक मिलता। जिनके सरों पर ताज रखे जाते रहे हैं, उन पर काँटे रखे जाते और उन्हें सूली पर चढ़ा दिया जाता। किन्तु वाह रे खिलाड़ी! शरीफ लोग बकते रहें, इनका कारवाँ बढ़ता जाएगा—कल बढ़ा और आज भी बढ़ रहा है!”⁶⁵ बेनीपुरी ऐसी राजनीति को पसंद नहीं करते थे जो जनता के हित में न हो। उन्होंने देश में पनप रही गंदी राजनीति को बहुत निकट से देखा, व सूक्ष्म निरीक्षण भी किया है। अपने समय की राजनीति में पनप रही बदसूरती विद्रूपताओं और विकृतियों को स्पष्ट किया है।

बेनीपुरी ने यह प्रत्यक्ष देखा था और उसे महसूस भी किया था कि राजनीति को धर्म और जात—पाँत किस तरह भ्रष्ट कर देते हैं। धर्म और जाति के भेद—भाव प्रमुख तौर पर सरकारी पदों के लिए और बोर्डों की सीटों के लिए ही किए जाते हैं। इस बात को जब बेनीपुरी ने महसूस किया तब उन्होंने मन—ही—मन इन सब भेदभावों से दूर रहने का निश्चय कर लिया था। इस बात का स्पष्टीकरण देते हुए

लिखते हैं—“हमने अपनी पार्टी में एक विशेषता रखी थी, जो कांग्रेस के सदस्य हों, वही इस पार्टी के सदस्य हो सकते थे और उनके लिए सदा खादी का ही व्यवहार करना और अपने को जाति-पाँति के भेदभाव से बिल्कुल अलग रखना अनिवार्य शर्त थी। आज जब फिर खादी पर बल दिया जाता और हर राजनीतिक दल में जाति-पाँति का बोलबाला होता हुआ देखता हूँ, सोचता हूँ, उन दिनों कितनी बड़ी दूरदर्शिता से हमने काम लिया था !”⁶⁶ इस प्रकार बेनीपुरी स्वयं राजनीति क्षेत्र में जाति-पाँति की भेद भावना से दूर रहे साथ ही साथ अन्य लोगों को भी इस भेद-भावना से दूर करवाया।

बेनीपुरी राजनीति के संबंध में अपने विचार लिखते हैं—“राजनीति को दो ही रूप में आप ग्रहण कर सकते हैं—या तो आप उसे साधना का क्षेत्र बनाइए, त्याग-तपस्या द्वारा जनसेवा करने का साधन समझिए, नहीं तो वह आपके सिर पर उस रूप में सवार होकर रहेगी, जिस रूप में वह ‘बदमाशों का आखिरी करिशमा’ नाम पाती है।”⁶⁷ जब देश स्वतंत्र हुआ और राज्यों में अपनी सरकारें बनने लगीं तभी बेनीपुरी को विधायक बनने की इच्छा हुई; लेकिन पहली बार उन्हें सफलता नहीं मिली क्योंकि उस समय राजनीति में कांग्रेस पार्टी बड़ी सफल थी और बेनीपुरी तो समाजवादी दल में थे। वे 1952 और 1957 ई० के आम चुनावों में फिर खड़े हुए और सफल भी हुए। विजय प्राप्त करके बेनीपुरी ने विधान सभा में समाजवादी दल का प्रतिनिधित्व भी किया था। इस प्रकार बेनीपुरी ने अपनी राजनीतिक भूमिका को निभाया। बेनीपुरी राजनीति में नेताओं की चापलूसी को बिल्कुल पसंद नहीं करते थे। बेनीपुरी नेताओं की जी हुजूरी के संबंध में लिखते हैं—“नेताओं के निकट जाने से मैं सदा धबराता रहा हूँ; कोई आत्माभिमान के सिंहासन पर शान से बैठा हो और मैं उसके चरणों के निकट बैठकर उसका मुँह जोहूँ, उसकी हाँ-में-हाँ मिलाऊँ, जी-हुजूरी करूँ—यह मुझे कभी नहीं पसन्द हुआ।”⁶⁸ उनका राजनीति में प्रवेश करने का लक्ष्य सत्ता हासिल करना नहीं था बल्कि वे एक स्वस्थ सामाजिक व्यवस्था के पक्षधर थे। बेनीपुरी सरकार की ओर से होने वाली अव्यवस्था को देखकर अपनी अप्रसन्नता बड़े ही स्पष्ट शब्दों में 17 जनवरी 1952 की डायरी में व्यक्त करते हैं—“कैसा है मेरा यह देश जिसमें आदमी

अपने साथी आदमी को उसके प्रारम्भिक अधिकार के प्रयोग से रोकता है और यदि उसने हिम्मत कर उसका प्रयोग किया तो उसे पीटता है।⁶⁹

उनका राजनीतिक जीवन अत्यधिक कष्टमय रहा। उन्हें अनेकाएँ यातनाएँ झेलनी पड़ीं। 13-14 बार जेल जाना पड़ा। लगभग 8-9 वर्ष का जीवन बेनीपुरी ने जेल में ही काटा।

बेनीपुरी देश के ऐसे महान नेता थे जो देश को स्वाधीन बनाने के लिए दसियों बार जेल की यातनाएँ स्वयं झेलने को तैयार थे किन्तु देश को पराधीन होते हुए नहीं देख सकते थे। बेनीपुरी ऐसी राजनीति का सख्त विरोध करते हैं जहाँ दीन-दलितों एवं पीड़ितों के प्रति सहानुभूति का भाव न हो, हृदयों में उदारता की कमी हो तथा खुशामद और चापलूसी के बल पर ग़लत कामों को अंजाम दिया जाता हो। बेनीपुरी ऐसी व्यवस्था को बदलना चाहते थे। बेनीपुरी कहते हैं कि—“जब देखता हूँ कैसे लोगों के हाथों में राज्यसत्ता जा रही है, बड़ा दुःख होता है। जिनके हृदयों में उदारता नहीं है, चापलूसी करके जिनसे जो भी न करा लिया जा सकता है, आज अपने देश के निर्माण का काम उन्हीं के हाथों में आ गया है और वह देश जिसका अंग-अंग शीर्ण है, इसे हर जगह पुनर्निर्माण की आवश्यकता है।”⁷⁰

कभी-कभी राजनीति में रहते हुए आदमी मनुष्यता के पद से गिर जाता है किन्तु बेनीपुरी के संबंध में ऐसा नहीं है। सही अर्थ में मनुष्यता ही उनकी राजनीति थी। इस प्रकार उन्होंने अपनी डायरी में राजनीति पर पांडित्यपूर्ण चिंतन किया है।

व्यक्ति और समाज का परस्पर घनिष्ठ संबंध होता है, इसलिए व्यक्ति को सामाजिक परंपराओं एवं रूढ़ियों का निर्वाह भी करना पड़ता है; किन्तु कभी-कभी ये सामाजिक-रूढ़ियाँ एवं परंपराएँ सामाजिक विकास में बाधक सिद्ध होने लगती हैं। बेनीपुरी ने अपनी डायरी में भारतीय समाज की विकृतियों को भी रेखांकित किया है। उनकी डायरी में सामाजिक विसंगतियों का स्पष्ट और यथार्थ चित्रण मिलता है। डॉ० गजानन चव्हाण बेनीपुरी के संबंध में लिखते हैं—“बेनीपुरी की समाज सम्बन्धी विचार धारा उच्चकोटि के समाजवादी विचारक की विचारधारा है। उसमें आँधी में चलने का साहस है तो प्रशान्त मानवता की पूजा भी है, बलिदान की

भावना है तो कुठाराघात करने की शक्ति भी है, विषमताओं को उखाड़ने का कठोर प्रयत्न है, तो नैतिकता की नींव डालने की विधायक प्रवृत्ति भी है।⁷¹

अपने समय की सामाजिक समस्याओं को देखने का उनका दृष्टिकोण परिष्कृत और क्रांतिकारी था। वे वर्ग-भेद भावना को दूर करना चाहते थे, क्योंकि इसके रहते विभेद, लड़ाइयाँ, विषमताएँ पनपती हैं।

ऐसी स्थिति में किसी ऐसे महान समाज सुधारक की आवश्यकता होती है जो अपने ज्ञान, अनुभव एवं संस्कारों के द्वारा समाज में विद्यमान उन विभिन्न कुप्रथाओं को समाप्त कर सके जो सामाजिक विकास में बाधक हैं। बेनीपुरी ऐसे ही महान् व्यक्ति थे जिन्होंने समाज में व्याप्त बुराईयों को दूर करने का प्रयास किया।

समाज के दबे-कुचले लोगों के जीवन की वास्तविकताओं का उद्घाटन भी उन्होंने अपनी डायरी में किया है क्योंकि समाज का यथार्थ हमेशा उनकी पृष्ठभूमि में होता है। बेनीपुरी लिखते हैं—“समाजवाद मैंने अनुभवों से ग्रहण किया है, उसमें आपबीती समाई हुई है। मेरे आसपास जो लोग रहे या हैं उनकी पीड़ा परोई हुई है।”⁷² बेनीपुरी हमेशा जात-पाँत की भेद-भावना से दूर रहते थे। उनके आत्मकथात्मक लेख से पता चलता है कि उन्होंने जैसे ही राजनीति में प्रवेश किया वैसे ही सबसे पहले अपने-आप को धर्म और जात पाँत के भेदभाव से दूर कर लेने का निश्चय कर लिया था। बेनीपुरी लिखते हैं—“ज्यों ही राजनीति में आने की बात सोची, सबसे पहले मैंने धर्म और जाति-पाँति से अपने को दूर कर लेने का निर्णय कर लिया। धर्म का आधार है भगवान—मैं भगवान से भी द्रोह कर बैठा।”⁷³ हिंदू समाज में भेदभाव की भावना, भाषा और जाति के भेदभाव आदि इन सब भावनाओं से बेनीपुरी दूर रहने की कोशिश करते थे। बेनीपुरी लिखते हैं—“उस दिन मेरी चुटिया काट डाली, अब जनेऊ तोड़ने पर तुला है— भेद भाव के ये कुत्सित चिह्न, आत्मा को जकड़नेवाले ये बन्धन—तोड़ो इन्हें, छोड़ो इन्हें।”⁷⁴ इस प्रकार बेनीपुरी जात-पाँत, छूआ-छूत के भेद-भाव को नहीं मानते थे। किसी भी जाति के प्रति उनके मन में संकीर्ण भाव नहीं थे। सारे भेद-भावों को उन्होंने अपने जीवन से निकाल दिया था।

समाज की इस राक्षसता के विरुद्ध अपनी आवाज़ बुलन्द की ओर समता—मूलक समाज की स्थापना की लड़ाई वे लड़ते रहे। बेनीपुरी की जीवन की एक विशेषता है कि उन्होंने अपने—आप को जाति—पाँति से मुक्त कर दिया था। इसलिए तो अपने नाम के पीछे लगने वाला जाति—सूचक शब्द 'शर्मा' भी हटा दिया था। "कहाँ बचपन का चन्दन—फटाका, कहाँ किशोरावस्था की ब्राह्मणता और गायत्री का प्रतिदिन जाप और कहाँ एक मैं हूँ कि अब अपनी चुटिया काट डाली, जनेऊ उतारकर फेंका, अपने नाम से 'शर्मा' की उपाधि हटा दी और जोरों से कहने लगा—भगवान से बचो, सबसे बड़ा भूत वही है। जब तक तुम्हारे सिर पर यह भूत है, तब तक कोई अच्छा काम कर नहीं सकते।"⁷⁵ बेनीपुरी सदैव जातीय भेदों से दूर रहते थे। कभी उनके मन में जाति—पाँति की भावना नहीं उठी।

जब वह विदेश—यात्रा कर रहे थे तब भी अपने देश की स्थिति एवं समस्याओं का ख्याल उन्हें रहता था। उनके मन में सदैव मानव—कल्याण की और लोक मंगल की भावना रहती थी। वे एक सुखी समाज की कल्पना करते थे।

भारत में नारी की दुर्दशा देखकर वे बहुत चिंतित व दुःखी होते थे। वह देख रहे थे कि हमारे देश में स्त्रियों को उनके अधिकारों से वंचित रखा जाता है। 27 मई 1952 की डायरी में उन्होंने लिखा है—“स्त्रियों के प्रति जो धारणाएँ हैं, उन्हीं का अक्स लड़कियों के विवाह पर पड़ता है।... मैं इस पक्ष में हूँ कि लड़कियों को वे सारे अधिकार दे दिए जाने चाहिए जो लड़कों को प्राप्त हैं। मानता हूँ इसका दुरुपयोग भी होगा। किन्तु क्या लड़के इस अधिकार का दुरुपयोग नहीं करते? अधिकार से ही उत्तरदायित्व का विकास होगा। इंग्लैण्ड में देखा, वहाँ लड़कियाँ, औरतें, कितना अधिक काम करती हैं? अपने यहाँ स्त्रियों का कार्यक्षेत्र कितना सीमित है? नतीजा यह हो रहा है कि देश की सम्पत्ति के उत्पादन में उनका कोई हाथ नहीं। यूँ देश की दरिद्रता का एक यह भी कारण है।”⁷⁶ अतः स्पष्ट है कि नारी जीवन की प्रत्येक समस्याओं को लेकर वह अत्यन्त चिंतित रहते थे और नारी को जीवन में आगे बढ़ने की प्रेरणा देते थे क्योंकि नारी की उन्नति से देश की उन्नति पूर्णतः संभव है।

बेनीपुरी केवल साहित्यकार और पत्रकार ही नहीं समाज को परिवर्तित करने की आकांक्षा रखने वाले सामाजिक सुधारकर्ता भी थे। सामाजिक विषमता को दूर करना चाहते थे। वे भारतवर्ष में प्रचलित वर्ण-व्यवस्था तथा वर्णाश्रित सामंती समाज के स्थान पर समता-मूलक समाज की कल्पना करते हैं। परंपरा से चली आ रही सामाजिक-व्यवस्था में उनका विश्वास नहीं था। वे व्यक्ति और समाज के रिश्तों को समझते हैं और धर्मध्वजियों के पाखंडपूर्ण हस्तक्षेप का खुलकर विरोध करते हैं। इस प्रकार बेनीपुरी सामाजिक रूप से क्रांतदर्शी, विवेकशील और संपन्न जागरूक विचारवान हैं, जिनके पास ज्ञानात्मक संवेदना और संवेदनात्मक ज्ञान है।

पत्रकारिता के इतिहास में बेनीपुरी का नाम सदैव ही अविस्मरणीय रहेगा। यह कार्य उन्होंने अत्यन्त ईमानदारी और पूर्ण लगन एवं निष्ठा के साथ किया था। अपनी पत्रकारिता पर उन्हें गर्व था—“पैंतीस वर्षों का यह मेरा पत्रकार जीवन! कितना संघर्षपूर्ण, कितना उलझन भरा, कितना संघर्ष, कितना आनन्दप्रद, कितना गौरवमय! हाँ, मैं अपने पत्रकार जीवन को भी अपने लिए गौरव समझता हूँ। मैं मानता हूँ मैं गौरव के उस शिखर तक नहीं पहुँच सका, जहाँ पहुँचने के लिए मैं सदा प्रयत्नशील रहा, आज भी छटपटाता हूँ किन्तु मुझे अशिक्षित अकिंचन से जो कुछ भी बन पड़ा, उस पर मुझे गर्व अवश्य है।”⁷⁷

बेनीपुरी ‘नई धारा’ एवं ‘चुन्नु-मन्नु’ के विषय में 28-29 मार्च, 1950 की डायरी में लिखते हैं—“जिन्दगी में जो चन्द दिन मेरे लिए बड़े ही महत्व के और आनन्द के रहे हैं, उनमें ये दो तारीखें हैं। सत्ताईस मार्च को “नई धारा” का प्रकाशन हुआ है और अट्ठाईस मार्च को “चुन्नु-मुन्नु” का।...मैंने भी कोशिश की है कि अपने लगभग तीस साल के पत्रकार-जीवन के अनुभवों के आधार पर इन्हें सुन्दर और सुसंपादित रूप में निकालूँ !”⁷⁸

पत्रकारिता के क्षेत्र में बेनीपुरी का योगदान अतुलनीय रहा है। रामधारी सिंह दिनकर लिखते हैं—“‘बालक’ को छोड़कर और सभी पत्र किसान-आंदोलन और युवक-आंदोलन को प्रश्रय देने वाले थे। इससे समाज में बेनीपुरी जी का व्यक्तित्व क्रांतिकारी माना जाने लगा।”⁷⁹ उन्होंने पत्रकारिता को किसी लाचारीवश नहीं अपनाया था बल्कि उनमें देश-भक्ति की सच्ची लगन थी। बेनीपुरी लिखते

हैं—“मन में देश-भक्ति तरंगें लेने लगी थीं, उसके लिए मैं किसी सशक्त माध्यम की तलाश में था। उन दिनों मुझे लगा पत्रकारिता ही वह तलवार है, जिसे लेकर मैं देशमाता की मुक्ति के लिए अधिक सजकता से लड़ सकता हूँ।”⁸⁰ अतः देशमाता की मुक्ति के अभिलाषी बेनीपुरी सर पर कफन बाँधकर घर से बाहर निकल पड़े। “एक दिन बेनीपुरी जी देहातों की खाक छानते-छानते मुज़फ्फरपुर आ गये। वहाँ अपने श्रद्धेय गुरुवर पंडित माथुर प्रसाद दीक्षित जी से भेंट हुई। दीक्षित जी बेनीपुरी जी के विद्यार्थी जीवन से ही उनकी प्रतिभा पर मुग्ध थे। इसलिए...उन्होंने बेनीपुरी जी को ‘तरुण भारत’ में अपना सहकारी संपादन बना लिया। इस तरह उन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में श्रीगणेश किया।”⁸¹ अपनी जीविका चलाने के लिए उन्हें पत्रकारिता का पल्ला थामे रहना पड़ा और कड़ा संघर्ष पड़ा। ‘जनता’ ऐसी पत्रिका थी, जिससे सरकार नाराज़ थी। 14 सितम्बर, 1951 की डायरी में जनता के विषय में बताते हुए लिखते हैं—“‘जनता’ में बड़ी मेहनत करनी पड़ी। दैनिक का अनुभव नहीं था, अभ्यास भी नहीं। इसलिये और भी परेशानी। खैर, दैनिक “जनता” का अच्छा स्वागत हुआ, इससे थोड़ी शान्ति मिली, किन्तु चिन्ता और परिश्रम के कारण इधर बीच में दो बार बेहोशी आ गई।”⁸² इस प्रकार उन्होंने अपने पत्रकारिता जीवन में कठिनाईयाँ झेली। पत्रकारिता के क्षेत्र में भी उन्होंने षड़यन्त्रों का सामना किया। पत्रकारिता में हुए षड़यन्त्र के बारे में 14 सितम्बर, 1951 की डायरी में ‘चुन्नू-मुन्नू’ के विषय में लिखते हैं—“सबसे बड़ी दगाबाजी की इस जयनाथ मिश्र ने। पुस्तक भंडार से जब यह भलमानस हटा, मैंने ही अवधेश्वर से इसका सम्बन्ध जोड़ा। जब कोई पुस्तक नहीं थी, मैंने ही लिखकर पुस्तकें दी। धीरे-धीरे अजन्ता-प्रेस का नाम हुआ। “चुन्नू-मुन्नू” निकला। प्रेस की शोहरत और बढ़ी। किन्तु, यह क्या ज्यों ही मैं विलायत गया, इस भले मानस ने “चुन्नू-मुन्नू” के सम्पादक से मेरा नाम हटा दिया। यही नहीं, मुझे बदनाम करने और मेरी हानि पहुँचाने के लिये इसने कुछ भी उठा नहीं रखा ! क्या यही मनुष्यता है ? मुँह पर मित्र बने रहो और ज्यों ही पीठ पीछे हो कि उलट कर डँस लो !”⁸³ इस प्रकार बेनीपुरी पत्रकारिता के क्षेत्र में भी परेशानियों से जुड़े। स्पष्ट है कि कोई भी क्षेत्र में ईमानदारी की पूछ नहीं है बेईमानी हावी है चारों ओर।

इस प्रकार स्पष्ट है कि पत्रकारिता के क्षेत्र में बेनीपुरी का आगमन एक महान् एवं क्रांतिकारी घटना मानी जा सकती है। उन्होंने पत्रकारिता के माध्यम से देश की आजादी की लड़ाई लड़ी। सच्ची लगन और पक्की निष्ठा के साथ समाजवादी दल के सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार किया।

ब्रिटिश शासनकाल में भारतीय जनता को अनेकानेक आर्थिक कठिनाईयों से गुजरना पड़ा। जिसकी झलक हमें उनके संपूर्ण डायरी साहित्य में देखने को मिलती है। आर्थिक सुधार के लिए बेनीपुरी परिश्रम पर जोर देते हैं। बेनीपुरी केवल साहित्यकार नहीं थे। उनके समान नवीन सांस्कृतिक भारत के निर्माण की चिंता करने वाला शायद ही कोई दूसरा लेखक होगा। समाज की अर्थनीति की नींव पर बेनीपुरी सोचा करते थे। साम्राज्यवादी अर्थनीति के दुष्परिणामों का दुखद अनुभव उन्होंने अपने व्यक्तिगत जीवन में पाया था और उसे पराधीन भारत में देखा था। साथ ही एक सच यह भी है कि वे स्वयं भी आर्थिक तंगी के शिकार थे। अपनी आर्थिक कठिनाईयों का बयान करते हुए उन्होंने लिखा है—“बालक’ के बाद ही मेरी आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो गई थी। जब मैं बीमार था, दवा के लिए पैसे नहीं थे तो रानी ने अपने गहने दिए थे, जिन्हें भाई रामधारी ने घर लौटवा दिया था। पीछे वे गहने जुमाने देने में बिके। मेरे पास एक अँगूठी और एक सेट सोने के बटनों के थे, दोनों को बेच चुका था।”⁸⁴ बेनीपुरी अपनी आर्थिक तंगी से बाहर निकलने का उपाय सोचते रहते थे। 30 अप्रैल, 1950 की डायरी में एक स्थान पर वे अपनी लेखनी के माध्यम से जीविकोपार्जन की बात करते हैं—“लेकिन, गरीब किसान का बेटा! मुझे जीने के लिए भी लिखना पड़ा। लेकिन मैंने कोशिश की है, लिखूँ तो ऐसी ही चीज़ जो पैसे भी दे और युग की मांगों को भी अंशतः पूरा करे। इसलिए आज तक ऐसा कुछ नहीं लिखा जिसके लिए मैं लज्जा अनुभव कर सकूँ। अपनी लेखनी को अपने हृदय से ज़्यादा दूर कभी नहीं जाने दिया। शायद यही कारण है कि उन चीज़ों को भी लोगों ने युग की माँग की पूर्ति के रूप में ही ग्रहण किया। किन्तु मैं जानता हूँ, उसमें मेरी आर्थिक लाचारी कहाँ तक काम कर रही है।”⁸⁵ बेनीपुरी अपनी लेखन कला को जीवन निर्वाह का बड़ा आसरा मानते थे।

इस प्रकार बेनीपुरी के डायरी साहित्य से हमें यह पता चलता है कि बेनीपुरी की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। उन्हें पग-पग पर आर्थिक कठिनाईयों का सामना करना पड़ा उसी प्रकार देश की गरीबी के संकेत भी उनके डायरी साहित्य में जगह-जगह मिलते हैं।

उनके डायरी साहित्य में उस समय की सामाजिक जीवन और स्वाधीनता आंदोलन की असंगतियाँ भी साफ-तौर पर दिखती हैं। बेनीपुरी ने अपने जीवन में अपने चारों ओर के सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन में कष्ट और पीड़ा का अनुभव किया है।

बेनीपुरी की डायरी से पता चलता है कि बेनीपुरी के जीवन में परिवार का अत्यधिक महत्त्व था। बेनीपुरी अपने परिवार से आत्मीय प्रेम रखते थे। बच्चों से उन्हें विशेष लगाव था। उनको सभी देश के बच्चे एक समान ही लगते थे, फिर वे यूरोप के ही क्यों न हों। जब वे यूरोपीय यात्रा करने गये, तब वहाँ के बच्चों को देखते हुये इतने खुश हुये कि एक बच्चे को गोद में उठाकर फोटो खिंचवाया। इस प्रसंग का वर्णन वे अपनी डायरी में करते हैं—“उन बच्चों को देखते हुए मैं अघाता नहीं था! गोरे-गोरे, तन्दुरुस्त, प्रसन्न बच्चे, किलक रहे, उछल रहे।... मैंने आगे बढ़कर उसे ज़रा दुलार दिया, बच्चे ने अपने दूध-धोए दाँतों को चमकाते हुए मेरी ओर हाथ बढ़ा दिया।...मैं तो ऐसा भाव-मुग्ध था कि आँखों से आँसू छलक आए। अरे, सब देश के बच्चे एक-से होते हैं—सँलिया भाव के भूखे!”⁸⁶

व्यक्ति को जो आत्मीयता और प्रेम अपने परिवार से प्राप्त होता है। वह अन्यत्र नहीं मिल सकता। बेनीपुरी अपने परिवार के सदस्यों के बीच अत्यधिक सुख का अनुभव करते थे। वह ज़्यादा से ज़्यादा वक्त अपने परिवार के साथ गुज़ारना चाहते थे। वे अपने परिवार में आकर अपने समस्त दुःख-दर्द भूल जाते थे। डायरी में वे लिखते हैं कि—“बेनीपुरी तुम्हारे कई रूप हैं; देशभक्त बेनीपुरी, समाजवादी बेनीपुरी, क्रान्तिकारी बेनीपुरी, पत्रकार बेनीपुरी, कलाकार बेनीपुरी; किन्तु उन सबमें पारिवारिक बेनीपुरी कितना कोमल और मधुर है! तुम ज्यों ही परिवार की परिधि में आते हो, सब कुछ भूल जाते हो! तन्मय हो उठते हो, मस्त हो जाते हो।

दीन—दुखिया की सुधबुध खो देते हो! लेकिन, हाय री दुनिया! हाय रे दीन! तुमने कभी इस बेचारे को पूरा सुख लूटने दिया?"⁸⁷

इस प्रकार स्पष्ट है कि बेनीपुरी एक पारिवारिक व्यक्ति भी थे।

बेनीपुरी की यात्राएँ अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं। यह अनेक विशेषताओं से युक्त हैं। 'पैरों में पंख बाँधकर' तथा 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' विदेश-भ्रमण से संबंधित डायरियाँ हैं। इसमें भारतीय एवं विदेशी दोनों स्थानों का उल्लेख है। इन कृतियों में लेखक ने देश-परदेश की यात्रा संबंधी अनुभूतियों का सुंदर चित्रण किया है। डॉ० गजानन चव्हाण 'डायरी के पन्ने' की भूमिका में लिखते हैं—“बेनीपुरी ने देश-विदेश की यात्राओं में कई दर्शनीय स्थलों को देखा था। वहाँ के प्राकृतिक सौंदर्य का आनंद लूटा था। वहाँ की सांस्कृतिक, धार्मिक, साहित्यिक तथा अन्य प्रकार की विशेषताओं को जाना-समझा था। परिणामतः इन यात्राओं से उनका साहित्य दूर तक प्रभावित हुआ है।”⁸⁸ देश-विदेश के विविध शहरों की जो यात्राएँ की उनके सभी अनुभव उन्होंने अपनी डायरी में कैद कर लिये। इस प्रकार ये दोनों कृतियाँ यूरोप-यात्राओं के अनुभवों पर आधारित हैं।

उनकी डायरी में साहित्यिक घटनाओं का उल्लेख होता है, तथा साहित्यिक सम्बन्धी नई-नई जानकारियाँ भी मिलती हैं। डॉ० गजानन चव्हाण इस डायरी के साहित्य सम्बन्धी विषय के बारे में लिखते हैं—“प्रस्तुत डायरी में साहित्य-संसार में संबंधित विविध गतिविधियों की सूचनाएँ मिलती हैं। नूतन कलाकृतियों, नूतन प्रवाहों, साहित्यिक संस्थाओं, उन संस्थाओं में गतिशील विविध उपक्रमों, वहाँ की बैठकों, अच्छी-बुरी प्रवृत्तियों—सबका विवरण किसी-न-किसी प्रसंग से इस डायरी में स्थान पा चुका है।”⁸⁹

बेनीपुरी साहित्य संबंधी विभिन्न पहलुओं को अपनी डायरी में उल्लेख करते हैं और साहित्य के भविष्य के लिए उपयुक्त सुझाव भी देते हैं। 'डायरी के पन्नों' में कहीं-कहीं साहित्यकार का परिचय भी देते हैं व लेखकों के योगदान की चर्चा भी करते हैं। डायरी में वे अपने जीवन में पढ़ी हुई साहित्यिक कृतियों का परिचय एवं उनकी विशेषताएँ भी दर्ज करते हैं, साथ ही अपनी प्रतिक्रियाएँ भी व्यक्त करते हैं। उदाहरण के लिए, विदेशी साहित्यिक कृति सिलोने के उपन्यास 'ब्रेड ऐंड वाइन' के

विषय में बेनीपुरी लिखते हैं—“मैं यह कह सकता हूँ गोर्की की ‘मदर’ के बाद मैंने ऐसा उच्चकोटि का राजनीतिक उपन्यास नहीं पढ़ा था। कई बातों में तो यह ‘मद’ से भी ऊँचा स्थान रखता है। मदर में स्पष्ट ही लगता है, यह एक प्रचार साहित्य है, लेखक अपने पाठकों को प्रारंभ से ही एक खास दिशा में ले जाना चाह रहा है। किन्तु ‘ब्रेड ऐंड वाइन’ में ऐसी कोई चीज नहीं। अंत तक यह पता नहीं चलता कि लेखक की अपनी मान्यता क्या है? वह उसके अंत तक सवाल ही रखता जा रहा है और वे सवाल ऐसे गहरे हैं कि हर पाठक अनुभव करेगा, ऐसे सवालों से प्रायः उसका भी सामना हुआ है। उपन्यास समाप्त करते-करते हृदय में कैसी टीस उठती है।... यही तो कलाकर की सार्थकता है! निस्सन्देह सिलोने एक सफल, सबल कलाकार हैं!”⁹⁰

उनकी डायरी से ज्ञात होता है बेनीपुरी यात्रा के दिनों में भी यूरोपीय देशों की साहित्यिक गति-विधियों में निरन्तर व्यस्त रहे। स्विटजरलैंड, इंग्लैंड, स्पेन, रूस, फ्रांस, जापान, इटली आदि देशों के साहित्यकारों से वे मिले। उन्होंने साहित्यकारों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व को भी उद्घाटित किया। उदाहरण के लिए—इटली के सुप्रसिद्ध लेखक हगनात्सियों का परिचय। उन्होंने प्रसिद्ध साहित्यकारों की कला, जीवनी का भी उल्लेख किया है। जैसे—“बेनेदित्तों क्रोचे”,⁹¹ “रूसो, वाल्टेयर”,⁹² “मौलियर”⁹³ आदि के साहित्यिक कृतित्व पर प्रकाश डाला है। इस प्रकार बेनीपुरी ने अपनी डायरी में अपने समय के हिंदी साहित्य को ही नहीं बल्कि एक सीमा तक विश्व साहित्य के परिदृश्य को उद्घाटित किया है।

उनकी डायरी से पता चलता है कि फिल्म-जगत् के महान् कलाकार पृथ्वीराज कपूर के साथ बेनीपुरी का घनिष्ठ संबंध था। 9 मई, 1952 की डायरी में वे लिखते हैं—“यह मेरे जीवन का सौभाग्य है कि पृथ्वीराज ऐसे उच्च कोटि के कलाकार का मैं स्नेह और सम्मान पा सका हूँ।”⁹⁴ इस प्रकार बेनीपुरी फिल्म-जगत् के कलाकारों से भी जुड़े थे। उनकी डायरी में पृथ्वीराज कपूर, राज कपूर, अशोक कुमार आदि प्रसिद्ध कलाकारों से हुई मुलाकातों के प्रसंग डायरी में उल्लेखित हैं। उनकी डायरी से पता चलता है कि बेनीपुरी कला संबंधी पुस्तक पढ़ने में रुचि रखते थे। “फेमस आर्टिस्ट्स एंड देयर मॉडल्स”, “द पॉकेट बुक ऑफ गोल्ड

मास्टर्स'⁹⁵ ये दोनों पुस्तकें पाश्चात्य कला पर ही हैं। 'फेमस आर्टिस्ट्स एंड देयर मॉडल्स' में 'लियोनार्दो द विंची से लेकर मार्श तक लगभग तेइस यूरोपियन अमेरिकन कलाकारों व उनकी कृतियों का उल्लेख दिया गया है और दूसरी पुस्तक 'द पॉकेट बुक ऑफ गोल्ड मास्टर्स' में लियोनार्दो से बर्नियर तक दस प्रसिद्ध पाश्चात्य आचार्यों एवं उनकी कलाकृतियों का विस्तृत रूप से चित्रण किया गया है।

4 अगस्त, 1950 की डायरी में बेनीपुरी पाश्चात्य यूरोपियन कलाकार लियोनार्दो द विंची की कला के विषय में लिखते हैं—“बचपन से ही गाने—बजाने और चित्रकारी में रुचि उम्र के साथ प्रतिभा का भी विकास होता गया और अन्ततः तो यह 'जादूगर' कहा जाने लगा। पृथ्वी और आकाश का कोई रहस्य नहीं, जिसके भेदन के लिए उसने चेष्टा नहीं की। वायुयान, टैंक, जल—कल सबके बारे में अन्वेषण करता रहा। वास्तुकला और चित्रकला तो उसकी जीवन—सहचरी रही।... इस कलाचार्य की कूची ने जिसे स्पर्श किया, वह अमर हुआ। ईसा के 'अन्तिम भोजन' पर जो चित्र बनाया, उस पर तो एक बड़े साहित्य का सृजन हो गया है। और, 'मोनालिसा'—उसे तो कुछ लोग यूरोप की सर्वोत्कृष्ट कलाकृति मानते हैं। इस चित्र पर वह तीन वर्षों तक काम करता रहा और मरते समय कहता गया कि अफसोस मैं इसे पूरा नहीं कर सका।”⁹⁶ इस प्रकार बेनीपुरी ने डायरी में भारतीय एवं पाश्चात्य महानतम् कलाकारों व उनकी कलाओं का परिचय दिया है। बेनीपुरी ने अपनी डायरी में कला के विविध रूप और रंग को उद्घाटित किया है। वे जीवन में कला के महत्त्व को स्वीकार करते हैं। बेनीपुरी ने संगीत कला एवं नाट्यकला की विविध अनुभूतियाँ अपनी डायरी में व्यक्त की हैं। इससे पता चलता है बेनीपुरी का नाटक और रंगमंच से विशेष लगाव था। वे संगीतकला में रुचि भी रखते थे। इस प्रकार बेनीपुरी कलाओं में विशेष रुचि रखते थे। उन्हें कलाओं से गहरा लगाव भी था।

बेनीपुरी के डायरी साहित्य से संभवतः यह पूर्णतः ज्ञात हो जाता है कि बेनीपुरी सदैव प्रकृति के प्रेमी रहे हैं, प्राकृतिक दृश्यों को देखकर वह अनायास ही उसकी ओर खिंचे चले जाते थे। वे एक भावुक हृदय साहित्यकार थे। उनका प्रकृति से प्रेम होना स्वाभाविक था। बेनीपुरी प्रकृति को मनोरंजन की दृष्टि से देखते हैं।

रोम से लंदन जाते हुए बेनीपुरी ने हवाई जहाज से क्रीट पहाड़ी का जो दृश्य देखा उसका वर्णन 23 अप्रैल, 1951 की डायरी में करते हैं। प्राकृतिक वर्णन के संबंध में बेनीपुरी की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वे अपनी लेखनी के माध्यम से प्राकृतिक दृश्यों को ज्यों-का-त्यों उतार देते हैं। यूरोप यात्रा के दौरान उन्होंने झुरमुटें, फूल, उछलते नाले, लंबे-लंबे पेड़, गगनचुंबी चोटियाँ आदि का डायरी में वास्तविक चित्रण प्रस्तुत किया है। वास्तविक चित्रण को प्रस्तुत करने के लिए उन्होंने प्राकृतिक विविधताओं का सूक्ष्म निरीक्षण किया है और फिर उसका पूरा-पूरा ख्याल भी रखा है। उन्होंने ध्वनि, गति और रंगों का भी ध्यान रखा है। इसी प्रकार वे बालू का चित्रण करते हुए कहते हैं—“नीचे जहाँ तक देखता हूँ, गेरुए रंग के बालू-ही-बालू हैं। बालू को जैसे किसी ने भून दिया हो। कहीं-कहीं काले धब्बे से दीखते हैं। शायद वहाँ का बालू ज्यादा भून दिया हो! जहाँ-तहाँ बादल के टुकड़े भी दिखाई पड़ते हैं—पीले, सूखे, उदास।”⁹⁷ डायरी में बेनीपुरी का भावुक हृदय प्राकृतिक सौंदर्य को देखकर अत्यधिक आनन्दित होता है। उनके प्रकृति-प्रेमी होने के संकेत उनके डायरी साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं।

बेनीपुरी का डायरी लेखन एक सक्रिय राजनीति-कर्मी, एक संघर्षशील, समाजवादी, एक संवेदनशील स्रष्टा के अनुभवों की अभिव्यक्ति है। उनकी डायरी में कोई ऐसा विषय नहीं है जिसकी अभिव्यक्ति उन्होंने न की हो, अर्थात् उनकी लेखनी से कोई भी विषय अछूता नहीं रहा है।

संदर्भ

1. प्रेमचंद, कुछ विचार, पृ० 95
2. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 11
3. प्रेमचंद, कुछ विचार, पृ० 84
4. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 117
5. आजकल (पत्रिका), अगस्त, 1999, पृ० 16
6. वही, पृ० 17
7. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 119
8. रामवचन राय, भारतीय साहित्य के निर्माता: रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० 19
9. रामधारी सिंह दिनकर, संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, पृ० 111
10. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), पृथ्वी पर विजय (बाल साहित्य), पृ० 11
11. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), प्रकृति पर विजय (बाल साहित्य), पृ० 16
12. वही, पृ० 62—63
13. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), बेटे हों तो ऐसे (बाल साहित्य), पृ० 13
14. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), अमर कथाएँ (बाल साहित्य), पृ० 3
15. वही, पृ० 15
16. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), हम इनकी संतान हैं (बाल साहित्य), पृ० 35

17. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), साहस के पुतले (बाल साहित्य), पृ० 53
18. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), झोपड़ी के महल (बाल साहित्य), पृ० 38
19. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), अनोखा संसार (बाल साहित्य), पृ० 55
20. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), रंग बिरंग, भाग—2 (बाल साहित्य), पृ० 37—38
21. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—सात), रंग बिरंग, भाग—5 (बाल साहित्य), पृ० 31
22. वही, पृ० 66
23. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—एक), लाल तारा (शब्द—चित्र), पृ० 88
24. वही, पृ० 88
25. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—एक), माटी की मूरतें (शब्द—चित्र), पृ० 130
26. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—एक), गेहूँ और गुलाब (शब्द—चित्र), पृ० 194
27. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—दो), नेत्रदान (नाटक) भूमिका
28. वही, (भूमिका)
29. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—दो), तथागत (नाटक) भूमिका
30. डॉ० रामगोपाल सिंह चौहान, आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ० 316
31. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—तीन), नई नारी (निबंध) पृ० 57
32. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—तीन), मशाल (निबंध) पृ० 32

33. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-तीन), वन्दे वाणी विनायकौ (निबंध) पृ० 100
34. वही, पृ० 100
35. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-एक), पतितों के देश में (उपन्यास) पृ० 242
36. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-एक), कैदी की पत्नी (उपन्यास) पृ० 296
37. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-एक), चिता के फूल (कहानी संग्रह) पृ० 24
38. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-एक), सिंहगढ़ (कविता) पृ० 428
39. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), (भूमिका)
40. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-तीन), अत्र-तत्र (निबंध) पृ० 178
41. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 7
42. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 23
43. डॉ० हरवंशलाल शर्मा, हिन्दी-रेखाचित्र, पृ० 112
44. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-पाँच), जयप्रकाश, (जीवनी) (भूमिका)
45. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-तीन), विद्यापति पदावली (टीका) पृ० 477
46. रामवचन राय, भारतीय साहित्य के निर्माता : रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० 57-58
47. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 121

48. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-पाँच), पृ० 5
49. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ०, 78-79
50. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 9
51. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ०, 16
52. वही, पृ० 16
53. डॉ० पदमसिंह शर्मा, 'कमलेश', हिन्दी गद्य विकास और परम्परा, पृ० 116
54. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 209
55. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 16
56. वही, पृ० 16
57. वही, पृ० 20
58. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो, पृ० 451
59. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 334
60. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 506
61. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 223
62. रामवचन राय, भारतीय साहित्य के निर्माता : रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० 38-39
63. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 17
64. वही, पृ० 171

65. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख), पृ० 61
66. वही, पृ० 75
67. वही, पृ० 59
68. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), जंजीरें और दीवारें (आत्मकथात्मक लेख), पृ० 124
69. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 95
70. वही, पृ० 113
71. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 235
72. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख), पृ० 73
73. वही, पृ० 59
74. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), जंजीरें और दीवारें (आत्मकथात्मक लेख), पृ० 110
75. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख), पृ० 59
76. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 24-25
77. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 51
78. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 27
79. रामधारी सिंह दिनकर, संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, पृ० 98
80. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व . एवं कृतित्व, पृ० 43
81. वही, पृ० 43

82. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 78
83. वही, पृ० 77
84. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख), पृ० 77
85. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 34
86. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो, पृ० 217
87. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 14
88. वही, पृ० 22
89. वही, पृ० 20
90. वही, पृ० 154-157
91. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो, पृ० 429
92. वही, पृ० 474
93. वही, पृ० 474
94. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 21
95. वही, पृ० 57
96. वही, पृ० 58
97. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 299

चतुर्थ अध्याय

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का
विश्लेषणात्मक अध्ययन

चतुर्थ अध्याय

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का विश्लेषणात्मक अध्ययन

प्रत्येक साहित्यकार की जीवन-दृष्टि उसके संस्कार, परिवेश, सम्पर्क और अनुभवों की पृष्ठभूमि से जुड़ी होती है। प्रत्येक साहित्यकार जाने-अनजाने जीवन की कुछ समस्याओं का विवेचन तथा रहस्योद्घाटन अपनी रचनाओं के माध्यम से करता है और इसी संदर्भ में जीवन के प्रति उसका एक निश्चित दृष्टिकोण भी उभरकर सामने आता है। किसी कलाकार का अपने जीवन के अनुभवों एवं जीवन की परिस्थितियों पर आधारित जो अनुभव सत्य होता है वही उसका जीवन-दर्शन बन जाता है। श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने अपनी डायरी के माध्यम से नैतिक मूल्यों की परछाई, जीवन के प्रति निश्चित दृष्टिकोण तथा जीवन-आदर्श संबंधी विचारों की झलक स्पष्ट कर दी है; जिसमें उनका जीवन-दर्शन भी प्रकट हो गया है। अतः उनकी डायरी में हमें उनका जीवन-दर्शन एवं उनकी विचारधारा देखने को मिलती है; जो उनकी सामयिक परिस्थितियों और जीवन-अनुभवों के आधार पर बनी है। उन्होंने जीवन-भर संघर्ष किया और संसार के विविध अनुभवों द्वारा जो कुछ भी जीवन में प्राप्त किया है उसे ईमानदारी से अपनी डायरी में व्यक्त किया। उनकी डायरी में उनका निजी जीवन, आंतरिक व्यक्तित्व एवं उनके समय का परिचय मिलता है। डायरी में उन्होंने मौलिक विचार भी दिए उन विचारों में गांधीवादी विचारधारा के दर्शन मिलते हैं।

उनकी डायरी में कहीं-कहीं दार्शनिक विचारधारा प्रकट होती है, तो कहीं प्रगतिवादी एवं समाजवादी अर्थात् कहीं राजनीतिक विचारधारा दिखती है। जब-जब बेनीपुरी ने कलम उठायी है तब-तब उनका मानवतावादी दृष्टिकोण उनके साहित्य में दिखा है, क्योंकि वे मानवतावादी विचारधारा के समर्थक थे। डायरी में बेनीपुरी कहीं-कहीं विचारक भी बन गए हैं। कहीं उनका चिंतित स्वरूप है, तो कहीं विवेचक रूप दिखाई देता है। उनकी डायरी में उनकी मान्यताएँ उनके जीवन-विषयक अनेक विचार, उनकी अभिरुचियाँ स्पष्ट रूप में अंकित हैं। 'बेनीपुरी ग्रंथावली' के संपादक सुरेश शर्मा बेनीपुरी की डायरी के विषय में लिखते

हैं—“डायरियों में बेनीपुरी ने अपने जीवन और तत्कालीन सामाजिक राजनैतिक परिदृश्य के बारे में बेबाक टिप्पणियाँ की हैं।...साहित्य, पत्रकारिता और राजनैतिक कर्म करते हुए समाज में सक्रिय बेनीपुरी को तो हम बहुत अधिक जानते हैं लेकिन डायरियों में अपनी व्यथा-कथा लिखते बेनीपुरी से हमारा परिचय ज्यादा नहीं है। उनकी ये डायरियाँ उनसे हमारा नया परिचय कराती हैं। डायरी में बेनीपुरी की जिंदगी के अनेक पड़ाव हैं—अपने साहित्य के प्रकाशन के लिए चिंतित बेनीपुरी, रचनाओं के फिल्मीकरण के लिए पृथ्वीराज कपूर और राजकपूर के साथ योजना बनाते बेनीपुरी, परिवार की मुश्किलों से परेशान बेनीपुरी, बेटी की शादी, बेटों की पढ़ाई, पत्नी को अधिक समय न देने के लिए चिंतित बेनीपुरी, अंततः अपने गाँव बेनीपुर में अधिक समय न गुजार पाने से निराश बेनीपुरी, परिवार के बच्चों के बीच बेहद खुश बेनीपुरी, बैलगाड़ी और साइकिल से अपना चुनाव प्रचार करते बेनीपुरी, गाँव में सरसों फूलने और उत्सव त्यौहार के मौकों पर प्रसन्न बेनीपुरी। डायरी में बेनीपुरी के ऐसे अनेक चेहरे हैं जो उनके संवेदनशील और आकर्षक व्यक्तित्व का परिचय देते हैं।”¹

बेनीपुरी की डायरी संघर्ष और यातना के दौर से गुजरते हुए आदमी का अनुभव विस्तार है। स्वतंत्रता आंदोलन में एक राजनैतिक कार्यकर्ता के रूप में भागीदारी, सामंतवादी शोषण, अन्याय, विषमता, दलितों, निर्धनों के प्रति सहानुभूति, उत्पीड़कों के प्रति आक्रोश ही नहीं, बल्कि विरोध का जुझारूपन, उनकी डायरी में देखने को मिलता है। सर्जक साहित्यकार के रूप में जीवन के उन सभी अच्छे-बुरे अनुभवों की अभिव्यक्ति डायरी में अभिव्यक्त हुई है। अपने समय की राजनीतिक धारा और साहित्यिक धारा से वे गहराई से जुड़े हुए थे। उनका साहित्य और जीवन दोनों एक दूसरे के पूरक और प्रतिबिंब हैं। इस प्रकार उनका डायरी लेखन “एक सक्रिय राजनीति-कर्मी, एक संघर्षशील समाजवादी और एक संवेदनशील स्वर के अनुभव-संसार की अभिव्यक्ति है।”² उनकी डायरी से यह बात पूर्णतः स्पष्ट होती है कि बेनीपुरी स्वयं इतने बड़े पत्रकार, साहित्यकार एवं समाजवादी नेता होते हुए भी अपने आपको साधारण मनुष्य ही मानते थे। उनकी ये विशेषताएँ उनके व्यक्तित्व, पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन में भी उसी तरह देखी जा सकती थीं,

जिस तरह उनके डायरी लेखन में। उनकी यात्रा-डायरियाँ 'पैरों में पंख बाँधकर' एवं 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' के संबंध में डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग' लिखते हैं कि—“दोनों ग्रन्थों में केवल यात्रा-वृत्तांत ही नहीं है, लेकिन विश्व के अनेक देशों के सम्बन्ध में अनेक सही बातें, सही तरीके से जानने के लिए एक ईमानदार 'इनसाइक्लोपीडिया' है। लेखक जहाँ-जहाँ भी जाते हैं, वहाँ-वहाँ जो कुछ भी देखते हैं, अनुभव करते हैं उसे देश का और उस स्थान का इतिहास इनकी नजर में समा जाता है, जो उनकी दृष्टि के सामने ही रहता है। वे उस स्थान के वर्तमान को भी देखने लगते हैं, फिर पूरे ब्योंरो के साथ उसका चित्रण करने लगते हैं। उसे पढ़ने के साथ ही लेखक की भीतरी शक्ति पर हमें कभी आश्चर्य होता है तो कभी गौरव !”³ इन यात्रा-डायरियों में केवल भौगोलिक वर्णन नहीं, बल्कि इतिहास, दर्शन, साहित्य, राजनीति एवं संस्कृति के विविध रूप अंकित हैं।

साहित्यकार जब अपने साहित्य की रचना करता है तो वह अपने युग की परिस्थितियों से प्रभावित हुए बिना नहीं रह पाता। किसी भी विषय के अध्ययन के लिए उसके युग की परिस्थितियों का आकलन अपेक्षित है। किसी युग-विशेष का साहित्य उस युग की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों की उपज होता है। सुभाष चंदर ने लिखा है—“किसी भी कालखंड की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक परिस्थितियाँ उस समय के साहित्य पर अपनी अमिट छाप छोड़ती हैं।”⁴ अतः किसी भी साहित्यकार का साहित्य अपने युग की घटनाओं, विचारों, आदर्शों एवं आंदोलनों से प्रभावित हुए बिना नहीं रहता।

स्पष्ट है कि युगीन परिवेश को छोड़कर किसी भी साहित्यकार के साहित्य का समुचित मूल्यांकन नहीं हो सकता है। बेनीपुरी के डायरी साहित्य में स्पष्ट रूप से समसामायिक प्रवृत्तियाँ झलकती हैं। बेनीपुरी की डायरी में हमें साहित्यिक, भाषा एवं कला दृष्टि, पारिवारिक स्थिति, राजनीतिक दृष्टि, आर्थिक दृष्टि, सामाजिक दृष्टि, प्राकृतिक दृष्टि और यात्राओं की नूतन परिवर्तनों की सजीव तस्वीर दिखाई देती है।

उनकी विचारधारा और उनका डायरी साहित्य युगीन परिस्थितियों से प्रेरित और प्रभावित है जो कि साहित्यिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसलिए उनके डायरी साहित्य के विश्लेषणात्मक अध्ययन के लिए हमें समकालीन संदर्भ से अर्थात् तत्कालीन परिवेश व परिस्थितियों से परिचित होना आवश्यक है।

(क) राजनीतिक दृष्टि

यद्यपि बेनीपुरी जी एक साहित्यकार के साथ-साथ राजनीतिक व्यक्ति थे तथा उनकी दृष्टि राजनैतिक हितों की ओर थी, फिर भी वह ऐसी राजनीति के कटु आलोचक थे जो जनता के अहित में की जाए। उनका मानना था कि तद्युगीन राजनीति चोरी करने वाली, हँसने वाली तथा अपशब्दों का प्रयोग करने वाली है और इन सभी चीज़ों के मध्य आज की जनता पिसती है। शायद यही कारण था कि बेनीपुरी एक राजनीतिक व्यक्ति होते हुए भी ऐसी राजनीति को पसन्द नहीं करते थे। स्वतंत्रता के बाद की राजनीति निरंतर भ्रष्ट होती गई, सिद्धांत और नारे अर्थहीन होते चले गए। पवित्र शब्दों का अवमूल्यन होने से कथनी और करनी में निरंतर खाई गहरी हुई। आज सभी क्षेत्रों में राजनीति की दखलंदाजी हो गई है। उसने अपने-आप को इतना शाक्तिशाली बना लिया है कि सब उसकी ओर खिंचे चले आ रहे हैं। इस राजनीतिक मोह ने सच्चे और ईमानदार राजनेताओं का अपयश किया है। राजनीति से गंदी क्या चीज़ हो सकती है, अब यह इतनी धूर्त हो गई है, कि कोई सज्जन व्यक्ति राजनीति में टिक नहीं सकता। ऐसी राजनीति में आत्मबल, ईमानदारी और जनसेवा का भाव महत्त्वपूर्ण नहीं रहा। अब तो जो जितनी अधिक राजनीति में नौटंकी कर लेता है वह उतना ही बड़ा राजनेता समझा जाता है। बेनीपुरी लिखते हैं—“आदमी जितना रंग बदलता है बेचारा गिरगिट क्या खाकर उतना रंग बदलेगा।”⁵

उनकी डायरी में राजनीतिक पक्ष अत्यधिक उभरकर सामने आया है, क्योंकि राजनीति बेनीपुरी की जिंदगी में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बेनीपुरी के डायरी लेखन में राजनीति एक केंद्रीय तत्त्व के रूप में है। बेनीपुरी मनुष्य और समाज की नियति को निर्धारित करने वाली इस राजनीति के प्रति सजग दिखाई देते हैं। वह जानते हैं कि इसके प्रति बेखबरी से ही अनेक प्रकार के छल, फरेब पैदा होते हैं।

उनकी डायरी राजनीतिक विचाराधारा से प्रेरित है। उन्होंने अपने डायरी साहित्य में व्यक्त किया है और जिसके प्रमाण हम वर्तमान समय में भी देख सकते हैं कि बेनीपुरी की बातें राजनीतिक दृष्टि से आज के समय में कितनी प्रासंगिक हैं यह अपने आप में अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है जिसे नकारा नहीं जा सकता है।

ओंकार शरद बेनीपुरी की साहित्यिक एवं राजनीति दृष्टि के सम्बन्ध में लिखते हैं—“बेनीपुरीजी राजनीति और साहित्य को एक-दूसरे का अन्तर्विरोधी न मानकर दोनों को एक-दूसरे का पूरक ही मानते थे।”⁶ अतः यह कहना कठिन है कि उनके व्यक्तित्व के निर्माण में राजनीति की प्रमुखता है या फिर साहित्य की प्रमुखता। क्योंकि बेनीपुरी राजनीति व साहित्य को एक-दूसरे का पूरक मानते हैं। बेनीपुरी का उदय उन्नीसवीं सदी के अंतिम समय में हुआ था। वास्तव में बीसवीं सदी का प्रारंभ भारत में नवीन धार्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक चेतना को लेकर आया।

रजनी कोठारी ‘भारत में राजनीति कल और आज’ में लिखते हैं—“बीसवीं सदी के पहले दो दशकों में भारत के राजनीतिक माहौल में सबसे बड़ा परिवर्तन यह हुआ कि सामाजिक राजनीतिक परिवर्तनों की आकांक्षा आज़ादी की तमन्ना में बदल गयी।”⁷ हमारे देश ने बहुत लंबे समय तक अंग्रेज़ों की दासता भोगी है। पहला स्वातंत्र्य संग्राम (1857) राजनीतिक स्थिति से उत्पन्न विसंगतियाँ जीवन स्तर के परिवर्तनों को प्रभावित करती हैं। अंग्रेज़ी शासन के अनेक अत्याचारों की प्रतिक्रिया स्वरूप भारतीय जन-मानस में अंग्रेज़ों के खिलाफ विद्रोह की चेतना जागृत हुई थी। इस क्रांति को हमारे देश की आज़ादी के आंदोलन के इतिहास में प्रथम सीमा चिह्न किया गया।

सन् 1857 की क्रांति के पश्चात् स्वातंत्र्य आंदोलन के बाद हमारे देश में ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज और आर्य समाज के माध्यम से देश की राष्ट्रीय भावना धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में क्रियाशील बनी रही, जिसके कारण से हमारे देश में आज़ादी के आंदोलन के लिए उचित आधार भूमि तैयार हो सकी।

सन् 1885 से सन् 1947 ई० तक का काल भारत के इतिहास में स्वातंत्र्य प्राप्ति के यत्नों की दृष्टि से महत्वपूर्ण है क्योंकि इस काल में भारतीय राजनीतिक

जीवन का रूप ही बदल गया। ह्यूम के प्रयासों से 24 दिसम्बर सन् 1885 ई० में कांग्रेस की स्थापना हुई, जिससे भारतीय जनता और शासन के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंध स्थापित किये जा सके।

कांग्रेस के स्वरूप के संबंध में डॉ० रामखिलावन तिवारी ने कहा है—“उसने भारतीय राष्ट्रीयता को सांस्कृतिक क्षेत्र से निकाल कर राजनैतिक स्वरूप प्रदान किया।”⁸ जिस समय कांग्रेस की स्थापना हुई उस समय भारत गुलामी की सबसे अधिक भयानक अवस्था से गुजर रहा था। उस समय देश के लिए आज़ादी की बात सोचना या उसका सपना देखना भी आसान नहीं था।

कांग्रेस की स्थापना के बाद राष्ट्रीय एकता के साथ हमारे देश को बौद्धिक, नैतिक, आर्थिक व्यावसायिक संगठन एवं विकास का सुयोग प्राप्त हुआ था और राष्ट्रवादियों के लिए विविधता में एकता ही एक मूलमंत्र हो गया था। डॉ० गुरुमुख निहाल सिंह ने लिखा है—“किन्तु यह बात ध्यान रखने योग्य है कि यद्यपि 1885-1907 के युग में इण्डियन नेशनल कांग्रेस राजभक्ति प्रदर्शित करती थी। उसकी सुनिश्चित नीति नरम दली थी निवेदनात्मक नहीं याचनापूर्ण थी तथापि उसने युग में, भारतवासियों में राष्ट्रीय चेतना उत्पन्न करने, उन्हें एक सूत्र में बाँधने और राष्ट्रीय एवं राजनीतिक जागृति फैलाने के लिए महत्वपूर्ण मौलिक काम किया था।”⁹ इन्हीं दिनों में अर्थात् सन् 1899 ई० में बेनीपुरी का जन्म हुआ था।

कांग्रेसियों की प्रारंभिक रुचि राजभक्ति में ही थी लेकिन सन् 1905 ई० में बंग-भंग की घटना ने इस भावना को समाप्त कर दिया। बंग-भंग के विरुद्ध में व्यापक जन असंतोष, जन आंदोलन और विद्रोह पैदा हो गया था। सन् 1905 ई० के कुछ साल पहले लार्ड कर्जन ने देश में दमनपूर्ण शासन किया और पूर्वी देशों के चरित्र को उसने झूठा कहा था और शासकीय सुविधा के बहाने अंग्रेजों ने बंगाल का विभाजन कर दिया। असल में इसके पीछे हिंदू-मुसलमानों में फूट डालने का और राज करने का उनका इरादा था।

बंग-भंग से सारे देश में विद्रोह की प्रचंड लहर फैल गई। बंगाल का आंदोलन सर्वत्र देश में फैल गया और संपूर्ण भारत ने बंगाल के बँटवारे के सवाल को अपना ही सवाल बना लिया। “हरेक प्रान्त एवं राज्य के लोगों ने बंगाल के प्रश्न

के साथ अपनी-अपनी समस्याओं को जोड़कर उस आन्दोलन को और ज्यादा गहरा रंग दे दिया।¹⁰

सन् 1906 ई० में मुस्लिम-लीग की स्थापना हुई। सन् 1906 ई० से सन् 1909 ई० के मध्य तक सिर्फ बंगाल की अदालतों में ही 550 राजनीतिक मुकदमे चल रहे थे। तब भारतीय जनता हिंसा की ओर उन्मुख हो रही थी। उससे बचने के लिए मिण्टो-मार्ले की सुधार योजना भी अंग्रेजी शासन की कूटनीति का ही दूसरा रूप थी। सन् 1910 ई० से लेकर सन् 1917 ई० तक का समय महत्वपूर्ण घटनाओं का युग था।

जब बंग-भंग के खिलाफ सारे देश में असंतोष की ज्वाला फैल रही थी तब बिहार की स्थिति कुछ और ही थी। डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा है—“बिहार एक पिछड़ा हुआ सूबा था। वह बरसों बंगाल का हिस्सा बना रहा। यहाँ तक कि बिहार का अलग नाम तक लोग भूल गए थे। बंगाल उन्नत सूबा था, पर उस उन्नति का प्रभाव बिहार तक नहीं पहुँच पाया था। अंग्रेजी शिक्षा में भी बिहार इतना पिछड़ा था कि बिहारी लोग सरकारी दफ्तरों तक नहीं पहुँच पाते थे, ऊँचे औहदों की कौन कहे।”¹¹ ऐसी स्थिति में बंगाल से अलग होने की बात बिहारी-जनता के मन में घर करती गई और बिहार को अलग करने के लिए आंदोलन हुआ, जिसमें बिहार के तद्युगीन नेता महेश नारायण, सच्चिदानंद सिन्हा और नंद किशोर लाल आदि ने हिस्सा लिया। बाद में डॉ० राजेन्द्र प्रसाद के प्रयासों से ‘बिहारी छात्र-सम्मेलन’ की स्थापना की गई। परिणामस्वरूप दिसम्बर सन् 1911 ई० को दिल्ली के शाही दरबार में बिहार और उड़ीसा को मिलाकर ‘बिहार’ नामक एक नये प्रांत की घोषणा की गई। बाद में पहली अप्रैल सन् 1912 ई० को बिहार प्रान्त का विधिवत् उद्घाटन किया गया।

सन् 1916 ई० में राजनीति-क्षेत्र में महात्मा गांधी का आगमन हुआ। उससे राष्ट्रीय जीवन में भी एक स्फूर्ति और सजीवता आ गयी। “महात्मा गाँधी के व्यक्तित्व में योद्धा की निर्भयता, विद्वान की प्रखरता, साधक की निष्ठा, तपस्वी की तेजस्विता, राजनीतिज्ञ की कुशलता और भक्त की विह्वलता का बड़ा ही सुन्दर समन्वय हुआ।”¹² गांधी ने भारत के चंपारन में पहली बार सत्याग्रह का प्रयोग

किया। चंपारन जिले के किसानों पर नीले गोरे के अत्याचार बढ़ गए थे। उसे दूर करने के लिए ही सत्याग्रह द्वारा जोरदार आंदोलन किया गया था। बिहार के किसानों को अपने खेत में प्रति बीघे पाँच था, तीन कट्ठे नील बोन के लिए ज़बरदस्ती की जाती थी। गांधी ने उन किसानों का प्रतिनिधि बनकर इस अत्याचार का अंत किया था। चंपारन के आंदोलन से देश के राजनीतिक जीवन में नई जाग्रति की लहर आ गई।

रजनी कोठारी गांधी के विषय में लिखते हैं—“गाँधी स्वयं असाधारण ऊर्जा के धनी थे। उन्होंने लीक से हटकर तौर-तरीकों का इस्तेमाल करते हुए जनता से त्याग और नैतिकता के नाम पर अपील की।”¹³ गांधी ने पूरे देश में सत्याग्रह के लिए आह्वान किया। उस समय देश की राजनीति में दो विरोधी विचारधाराएँ काम कर रही थीं— एक विचारधारा हिंसा से प्रेरित थी और दूसरी गांधी से। सन् 1919 ई० में जलियाँवाला बाग में भीषण हत्याकांड की घटना हो गई। 2 जून सन् 1920 ई० को सर्वदलीय सम्मेलन ने असहयोग आंदोलन का कार्यक्रम निश्चित किया और सन् 1920-21 में असहयोग आंदोलन का उत्साह सारे देश भर में फैल गया था। यदि हम बेनीपुरी के जीवन की घटनाओं पर दृष्टि डालें तो स्पष्ट होता है कि असहयोग आंदोलन से उनका अभ्यास छूट गया था। सन् 1919 ई० में ‘बिहार प्रादेशिक हिंदी साहित्य सम्मेलन’ संस्था की स्थापना में उनका सहयोग प्राप्त हुआ था। इस संस्था के वे सहकारी संयुक्त मंत्री भी चुने गए थे। असहयोग आंदोलन द्वारा उन्होंने सक्रिय राजनीति में श्रीगणेश किया।

असहयोग का आंदोलन समाप्त होते ही बेनीपुरी साहित्य-क्षेत्र में चले आए। कविता की और उनकी प्रारंभिक प्रवृत्ति थी। सन् 1922 ई० में, ‘किसान-मित्र’ के यह सहकारी संपादक बने।

बेनीपुरी के जीवन में इन राजनीतिक घटनाओं का असर हुआ। सन् 1929 ई० में उन्होंने ‘पाटलीपुत्र युवक संघ’ की स्थापना की। सन् 1929 ई० में बिहार राजनीतिक सम्मेलन, मुंगेर में ‘सरदार बल्लभ भाई पटेल’ की मौजूदगी में उन्होंने पूर्ण स्वाधीनता का प्रस्ताव रखा था, जो नेताओं के विरोध के बाद भी पास हो गया।

सन् 1930 ई० का वर्ष भारतीय राष्ट्रीय-आंदोलन के इतिहास में कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। सन् 1930 ई० को घोषित किया गया कि कांग्रेस का लक्ष्य 'पूर्ण स्वराज्य' की प्राप्ति है। इसी वर्ष सविनय अवज्ञा आंदोलन भी मनाया गया। इसका क्रियान्वयन नमक सत्याग्रह से हुआ। सन् 1923 ई० में अंग्रेज़ सरकार ने नमक कर दोगुना कर दिया था। इसके खिलाफ गांधी ने नमक कानून तोड़ने के लिए सत्याग्रह करने का दृढ़ निश्चय किया। 12 मार्च सन् 1930 ई० को गांधी ने आश्रम के प्रमुख स्वयं सेवकों को लेकर साबरमती आश्रम, अहमदाबाद से लगभग 200 मील की दूरी पर समुद्र तट पर अवस्थित दांडी गाँव की ओर प्रस्थान किया। बाद में गांधी को अंग्रेज़ सरकार ने बंदी बनाकर जेल भेज दिया। जिसकी प्रतिक्रिया स्वरूप देश में सभाएँ और हड़तालें हुईं। आखिर में जनवरी सन् 1931 ई० में गांधी को जेल से मुक्ति दे दी गई। पाँच मार्च को गांधी और वाइसराय इरविन के बीच समझौता हुआ, जिससे यह आंदोलन स्थगित कर दिया गया। इस समझौते के अनुसार कांग्रेस ने गांधी को अपना प्रतिनिधि बनाकर द्वितीय गोलमेज परिषद में हिस्सा लेने के लिए लंदन भेजने का निश्चय कर दिया। 29 अगस्त, सन् 1931 ई० को गांधी ने इंग्लैंड के लिए प्रस्थान किया, लेकिन गोलमेज परिषद असफल रही और गांधी वहाँ से निराश होकर स्वदेश लौटे। गांधी 28 दिसम्बर को भारत पहुँचे, फिर 4 जनवरी सन् 1932 ई० को उन्हें पूना जेल में बंदी बना दिया। फरवरी सन् 1934 ई० में कांग्रेस समाजवादी पार्टी की स्थापना हुई। उसका पहला अधिवेशन पटना में आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में मई में संपन्न हुआ। सन् 1935 ई० में हमारे देश में प्रांतीय स्वायत्त-शासन की प्रगति के लिए ब्रिटिश संसद ने गवर्मेन्ट ऑफ इण्डिया ऐक्ट पास किया। जिससे देश के कई प्रांतों में कांग्रेस की विजय हुई। सन् 1936-37 के लिए जवाहर लाल नेहरू कांग्रेस के अध्यक्ष बनाये गए। 1 सितम्बर सन् 1939 ई० को द्वितीय विश्व युद्ध आरंभ हो गया और भारत को भी अंग्रेज़ों ने द्वितीय विश्व युद्ध में ज़बरदस्ती सम्मिलित कर लिया। अंग्रेज़ों की प्रत्येक कूटनीति और दमन चक्र को सहते हुए देश का प्रत्येक व्यक्ति स्वराज्य प्राप्ति के लिए मनोकामना करने लगा।

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् अंग्रेज़ों ने भारतीय लोगों को अपने अधिकार देने के लिए कई वादे किए थे लेकिन उन्हें पूरा करने के बजाय उन्हें टाल दिया

गया। असल में उनकी कूटनीति हिंदू-मुसलमानों में फूट डालने की थी और वे सफल भी हुए।

सन् 1942 ई० की 'भारत छोड़ो' (क्वीट इण्डिया) सिर्फ आंदोलन नहीं था, ब्रिटिश हुकूमत के सामने विराट प्रश्न था ? सन् 1857 के स्वाधीनता संग्राम से भी यह ज्यादा व्यापक आंदोलन था। जिसने ब्रिटिश सरकार को विषम स्थिति में रख दिया था। इस क्रांति के कारण ब्रिटिश सरकार ने शासन छोड़ने का निश्चय किया। सन् 1942 की 'भारत छोड़ो' की क्रांति आज़ादी के लिए लंबे संघर्ष का एक मार्गदर्शक स्तंभ है। इस आंदोलन ने ब्रिटिश राज के मूल को नष्ट कर दिया था।

सन् 1943 ई० से सन् 1945 ई० के समय में 'भारत छोड़ो' क्रांति के दूसरे भाग का प्रारंभ भी आश्चर्यजनक रहा। सन् 1945 ई० में 'बेवेल योजना' बनाई गई, फिर आम चुनावों में कांग्रेस पक्ष विजयी होने से प्रान्तों में उसके मंत्री मंडल भी बनाये गए। केबिनेट मिशन ने सन् 1946 ई० में अपना एवोर्ड घोषित किया। इस प्रकार सन् 1946 ई० तक विभिन्न भागों में बँटी हुई 'भारत छोड़ो' की लड़ाई ने ब्रिटिश सरकार की नींव को हिला दिया। वास्तव में सन् 1942 ई० से सन् 1947 ई० तक के विभिन्न क्रांतिकारी आंदोलनों ने देश में आज़ादी के लिए एक नये माहौल की सर्जना की थी। 'मुस्लिम लीग' पाकिस्तान को पृथक रूप में प्राप्त करना चाहता था, और इसके फलस्वरूप हिंदू-मुसलमानों के बीच झगड़े हुए। फिर भारत का विभाजन हो गया। इस प्रकार 15 अगस्त, 1947 ई० को भारत और पाकिस्तान पूर्णतः आज़ाद हो गये। लेकिन देश-विभाजन के कारण हिंदू-मुस्लिम विद्वेष हत्याकांड के रूप में दोनों देशों पर छा गया।

बेनीपुरी और उनका परिवार भी इन परिवर्तित घटनाओं से अछूता नहीं रह सका। जब तक स्वराज्य का आंदोलन चलता रहा, बेनीपुरी ने अपने घर की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। सन् 1930 ई० में पटना नमक सत्याग्रह में उन्होंने युवकों का नेतृत्व किया था। अप्रैल सन् 1930 ई० से उनकी पहली जेल-यात्रा शुरू हुई। छः महीने की उनको सजा हुई। फिर बागमती के किनारे पर सत्याग्रह आश्रम की स्थापना की। सन् 1931 ई० में बिहार सोशलिस्ट पार्टी के संस्थापकों में वे सम्मिलित थे। बेनीपुरी ने सन् 1930 ई० से 1945 ई० तक 14 बार जेल-यात्रा की थी।

स्वाधीन भारत में समाजवादी समाज रचना के लिए बेचैन बेनीपुरी ने स्वातंत्र्योत्तर काल में भी राजनीति में सक्रिय हिस्सा लेते रहे। बेनीपुरी ब्रिटिश सरकार के अमानुषी अत्याचारों से परिचित थे इसलिए आज़ादी का संग्राम उनके जीवन में ज़बर्दस्त प्रेरणादायी था। इस प्रेरणा-बिंदु को उन्होंने अपने विद्यार्थी जीवन से ही अपना लिया था। युगीन वातावरण से इनकी लेखनी प्रेरणा एवं बल पाती रही और अपने युग देश और अंचल की आशा आकांक्षाओं को प्रतिबिंबित करती रही।

जब हम बेनीपुरी के डायरी साहित्य का अध्ययन करते हैं तो हम यह पाते हैं कि बेनीपुरी राजनीति में गांधी की प्रेरणा से आये थे और लगभग चालीस साल तक वे देश की राजनीति में सक्रिय रहे। उन्होंने गांधी द्वारा बताये हुए मार्ग सत्याग्रह को अपनाया और अत्याचारी शासन को दूर करने का प्रयास किया। बेनीपुरी जहाँ भी रहे अपनी कलम चलाते रहे और युवकों में राष्ट्रीयता की भावना जागृत करते रहे। बेनीपुरी की डायरी तो यथास्थान है ही, इसके अतिरिक्त साहित्य की प्रत्येक विधा के साथ ही साथ राजनीति पर भी पांडित्यपूर्ण लेखन एवं चिंतन के कारण उनकी प्रतिभा बहुमुखी होकर विकसित हुई है। अपनी बहुमुखी प्रतिभा के बल पर बेनीपुरी ने अपनी डायरी में साहित्य और राजनीति में अनुपम समन्वय किया। बेनीपुरी राजनीति के विषय में लिखते हैं—“राजनीति समाज की सबसे बड़ी चहल-पहल है, उससे साहित्य अलग कैसे रह सकता है?”¹⁴ बेनीपुरी ने संघर्ष का स्रोत राजनीति को ही कहा है। वैसे यह कहना अतियोक्ति न होगा कि साहित्य और राजनीति का परस्पर घनिष्ठ संबंध है। इसलिए साहित्य में राजनीति की चर्चा का समावेश स्वाभाविक है। यदि बेनीपुरी की बात की जाए तो वे स्वयं एक सफल राजनीतिज्ञ थे एवं एक प्रसिद्ध राजनीतिक रचनाकार भी। उन्होंने डायरी में राजनीति संबंधी पहलुओं पर बड़ी सतर्कता एवं सजीवता से विचार किया है।

डायरी में बेनीपुरी का राजनीतिक दुनिया में अकेले पड़ते चले जाने का सन्नाटा है। समाजवादी पार्टी के इतिहास-लेखन की दृष्टि से बेनीपुरी की डायरी के पन्ने ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। बेनीपुरी समाजवादी पार्टी की ओर से सन् 1951 ई० में चुनाव लड़े थे लेकिन जीते नहीं। डायरी में उस अनुभव का वृत्तान्त वर्णित है। 13 नवम्बर 1951 की डायरी में बेनीपुरी लिखते हैं—

“राजनीति—राजनीति ने मुझे फिर अपनी ओर जोर से खींच लिया है। चुनाव की धूम है। मैं भी अपने थाने से खड़ा हूँ।... कांग्रेस वाले वे नहीं चाहते कि जनता की दिलचस्पी चुनाव में हो, वे चाहते हैं कि जनता चुप—चाप बैठी रहे और हर गाँव में उनके जो दो—चार एजेंट हैं, उन्हीं को लेकर वे चुनाव जीत लें। गाँधी जी की मृत्यु के बाद जनता में जो अकर्मण्यता आई, जड़ता आई, वे नहीं चाहते कि वह दूर हो। उनका फायदा इसी में है कि जनता बैठी रहे, और वे राज करते रहें।”¹⁵ इस प्रकार उनकी डायरी में ऐसी अनेक राजनीतिक टिप्पणियाँ हैं जिनसे छठे दशक की राजनीतिक स्थिति का पता चलता है।

बेनीपुरी देश की सेवा करना चाहते थे। अपने आत्मकथा लेख ‘जंजीरें और दीवारें’ में लिखते हैं—“देश की आजादी के लिए लड़ना—जीवन की सार्थकता इससे बड़ी क्या होगी? यदि देश के लिए बलि भी चढ़ जाऊँ, तो क्या यह कम सौभाग्य की बात होगी?”¹⁶ बेनीपुरी की राजनीति समाज सेवा की राजनीति थी। गांधीवाद और समाजवाद में आस्था रखने वाले बेनीपुरी ने अपने जीवन के चौदह वर्ष जेल में काटे और सिद्धांत के प्रति इतने समर्पित रहे कि कभी पद व शक्ति के लिए लालायित नहीं रहे। राजनीति में वे तूफान के प्रतीक थे।

उनका उद्देश्य राजनीति का हिस्सा बनना नहीं था बल्कि वे राजनीति के द्वारा समाज की सेवा के इच्छुक थे। उन्हें देश में किसी भी प्रकार का अन्याय एवं अत्याचार बर्दाश्त नहीं था। इसलिए उन्होंने इसके खिलाफ आवाज़ बुलन्द की। इस सिलसिले में उन्हें कई बार जेल भी जाना पड़ा लेकिन वे हिम्मत नहीं हारे। अनेक कष्टों को झेलते हुए आगे बढ़ते रहे। बेनीपुरी के संबंध में डॉ० गजानन चव्हाण लिखते हैं कि—“भारत माता के चरणों की पराधीनता की श्रृंखलाएँ तोड़ने के लिए अपने पैरों में बेड़ियाँ पहनीं, अपनी पत्नी के गहने गिरवी रखकर जमानत की रकम इकट्ठी की। भारत के उन सपूतों में बेनीपुरी जी का नाम सगौरव लिया जायेगा। जिन्होंने अपने जीवन को स्वाधीनता की लड़ाई के यज्ञकुंड का हव्य बनाया था।”¹⁷

बेनीपुरी भारतीय जनता के कल्याण के लिए सदैव चिंतित रहते थे। वे देश की गरीबी को दूर करना चाहते थे, धर्म और जात—पाँत के भेदभाव को मिटाना

चाहते थे, उन्हें किसी भी प्रकार की अमानुषिकता पसंद नहीं थी या फिर हम यूँ कहें कि मनुष्यता ही उनकी राजनीति थी। देश की दुर्दशा को देखकर उनका कोमल एवं भावुक हृदय द्रवित हो उठता था। वे ऐसे समाज की स्थापना करना चाहते थे, जहाँ कोई भी दीन-दुःखी, दलित अथवा पीड़ित न हो सभी सुखी हों, सभी खुश हों, सभी निर्भय होकर अपना जीवन यापन करें। संक्षेप में कहा जा सकता है कि वे 'रामराज्य' की स्थापना करना चाहते थे। देश में रामराज्य की स्थापना होगी ऐसी आशा व्यक्त करते हुए इसी उद्देश्य से उन्होंने राजनीति में अपना कदम रखा था। दीन, दलितों एवं पीड़ितों के प्रति सहानुभूति का भाव पोषण करने के कारण ही वे राजनीति के क्षेत्र में आए थे यद्यपि मन प्राण से वे पूर्ण साहित्यिक थे।

बेनीपुरी जब तक राजनीति के क्षेत्र में रहे, तब तक समस्त संकटों का सामना करते हुए वे अगली कतार में खड़े रहे। बेनीपुरी का धैर्य एवं साहस इतना अटूट था कि वे कभी-भी बाधाओं से विचलित नहीं हुए। सदैव आगे बढ़ते रहे। "स्वाधीनता संग्राम में योद्धा बेनीपुरी, बिहार प्रांतीय कांग्रेस के नेता बेनीपुरी, कांग्रेस अन्तर्गत समाजवादी फोरम के प्रवर्तक बेनीपुरी, स्वतंत्र समाजवादी दल के संस्थापक बेनीपुरी, प्रजा सोशलिस्ट के प्रमुख नेता बेनीपुरी, बिहार विधानसभा के अन्तर्गत प्रमुख विरोधी नेता बेनीपुरी इन सभी रूपों में बेनीपुरी का राजनीति कार्य अविस्मरणीय रहेगा।"¹⁸ बेनीपुरी समाजवादी दल के संस्थापक होने के नाते उन्होंने इस पद को बड़े ही ईमानदारी से निभाया। वे आम जनता की समस्याओं को सुनते थे और उसका हल निकालने के लिए सदैव तत्पर रहते थे। "एक समाजवादी चिन्तक तथा राजनीतिक नेता के रूप में बेनीपुरी जनता की समस्याओं पर ध्यान देते थे। अपने इलाके के किसानों की समस्याओं को समझ लेते थे। बाढ़ की समस्या उनके अपने इलाके की गंभीर समस्या थी। हजारों किसान बरसों से बाढ़ से पीड़ित हो रहे थे। इस पर बेनीपुरी हमेशा के लिए हल निकालना चाहते थे।"¹⁹

बेनीपुरी जी अपने कार्य के प्रति ईमानदार थे और वे यह भी चाहते थे कि अन्य लोगों को भी अपना काम पूरी ईमानदारी के साथ करना चाहिए। वे इस बात से पूर्णतः परिचित थे कि देश के विकास के लिए देश के नेता का अपने कार्य के

प्रति ईमानदार होना अति आवश्यक है। वे 9 फरवरी, 1952 की डायरी में लिखते हैं कि—“यदि ऐसी हालत रही, तो जनतंत्र कैसे चलेगा? जहाँ के अफसर बेईमान हों; जिनके हाथ में चुनाव का संचालन है, वे ही बेईमानियाँ करने पर तुले हों, तो फिर जनतंत्र का सफल संचालन कैसे सम्भव है।”²⁰

उनकी डायरी पढ़ने से ज्ञात होता है कि बेनीपुरी जी को देश की जनता की चिंता सदैव बनी रहती थी। उनका लेखन भी जन-जीवन से जुड़ा हुआ था। जब भी वे विदेश यात्रा जाते थे उस समय उन्हें अपने देश की समस्याओं का ख्याल अपने-आप आ जाता था। वे अपने देश की समस्त समस्याओं को दूर करना चाहते थे। उनके हृदय में मानव कल्याण और लोकमंगल की भावना कूट-कूट कर भरी हुई थी। वे न केवल अपने देश को बल्कि सारे संसार को पीड़ामुक्त कर देना चाहते थे। इस कार्य की पूर्ति के लिए ही उन्होंने राजनीति को चुना। डायरी के पन्ने के संपादक डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह लिखते हैं—“वे सदैव यह मानकर चले कि जनतंत्रात्मक सत्ता द्वारा समाज की सेवा की जानी चाहिए। अर्थात् सत्ता को भी वे जन सेवा का माध्यम ही मानते थे और राजनीति से समाज की भलाई की अपेक्षा करते थे।”²¹ राजनीतिक कार्यकलाप के कारण कई बार वे जेल की यातनाएँ भी भोग चुके थे, फिर भी वे राजनीति से अलग नहीं हुए क्योंकि वे जिस उद्देश्य से राजनीति के क्षेत्र में आए थे, उसे पूरा करना अपना धर्म समझते थे। “बेनीपुरी जी के साहित्यिक मित्र उनकी राजनीतिक अटक-भटक पर असंतुष्ट भी हो जाते थे। पर बेनीपुरी चाहकर भी अपने को राजनीति से अलग नहीं कर सकते थे। जिस देश को स्वाधीन बनाने के लिए दसियों बार वे जेल की यातनाएँ भोग चुके थे, उस देश में स्वतंत्रता के बाद अंधेर खाता देखकर वे चुंप्पी लगाकर नहीं बैठ सकते थे।”²² अतः बेनीपुरी ने समाज सेवा के लिए न केवल राजनीति के क्षेत्र को अपनाया बल्कि उसे पूर्ण निष्ठा, लगन एवं ईमानदारी के साथ निभाया भी। उन्होंने कभी भी पीछे मुड़कर नहीं देखा। तमाम तकलीफों को झेलते हुए आगे बढ़ते रहे। वैसे राजनीति से बेनीपुरी को सदैव परेशानी ही मिली है। इस बात को उन्होंने स्वयं स्पष्ट भी किया है। बेनीपुरी जी कहते हैं—“मैंने राजनीति को दिया ही है, उससे लिया है तो सिर्फ कष्ट-सहन-अपने लिए ही नहीं, अपने पूरे परिवार

के लिए भी।²³ किंतु कभी भी उन्होंने इस बात का एहसास लोगों को नहीं होने दिया। वे स्वयं इन परेशानियों से अकेले ही जूझते रहे और लोगों से सदैव विनोदप्रियता के साथ मिले।

उनकी डायरी से ज्ञात होता है बेनीपुरी का समय राजनीतिक हलचलों से परिपूर्ण था। बेनीपुरी अपने स्वभाव के कारण राजनीति में सदा उग्रपंथी रहे हैं। राजनीति के सरल रास्ते को छोड़कर वे हमेशा अपनी जान हथेली पर लिये घूमा करते थे। बेनीपुरी जब तक राजनीति में रहे, तब तक सदैव अगली पंक्ति में ही रहे। लड़ने में उन्होंने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। अर्जुन की तरह 'न दैन्यम्, न पलायनम्' की टेक उन्होंने सदा निभाने का प्रयास किया, लेकिन उससे उनको अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। बेनीपुरी ने इसके विषय में बताया—“किन्तु सारे कष्टों को मैं अपने उन्मुक्त अट्टहास में इस तरह उड़ाता रहा कि निकट के लोग भी नहीं जान पाए कि मैंने भी कभी किसी कष्ट का मुँह भी देखा हो।”²⁴

बेनीपुरी समाजवादी दल में थे। सन् 1952 ई० में चुनाव में खड़े हुए और सफल हुए। इस प्रकार बेनीपुरी ने बिहार विधान सभा में सदस्य के रूप में कार्यभार संभालकर अपने राजनीतिक कर्म को निभाया था। दूसरी बार के चुनाव में सिर्फ समाजवादी पार्टी के नाम से उन्हें विजय नहीं मिली, किंतु उस सफलता में उनका राजनीतिक एवं साहित्यिक मिला-जुला व्यक्तित्व ही विशेष जिम्मेदार था। उसने ही उनको विधायक बनने में सहायता की थी। इस प्रकार सन् 1952 ई० और 1957 ई० के आम चुनावों में विजय प्राप्त करके बेनीपुरी ने विधानसभा में समाजवादी दल का अच्छा प्रतिनिधित्व किया था। आज़ादी के पश्चात् बेनीपुरी ने राजनीति की पार्टियों के संबंध में अपने एक दोस्त से कहा—“अब राजनीति में तीन ही पार्टियाँ होंगी—एक चोरी करनेवालों की, दूसरी गाली देनेवालों की और तीसरी सबसे बड़ी पार्टी होगी उनकी, जो चोरी भी करेंगे और गालियाँ भी देंगे। शरीफों के लिए, ईमानदारों के लिए कहीं कोई जगह नहीं रहेगी।”²⁵

राजेन्द्र बाबू, जय प्रकाश नारायण और आचार्य नरेन्द्र देव जैसे महापुरुषों के साथ उन्होंने स्वाधीनता की लड़ाई में भरपूर योग दिया। वे केवल राजनीतिक स्वतंत्रता नहीं चाहते थे। उनकी स्वतंत्रता की परिकल्पना व्यापक एवं प्रवाहमयी थी।

दीन-दलितों एवं पीड़ितों के प्रति सहानुभूति का भाव पोषण करने के कारण ही वे राजनीति के क्षेत्र में आए थे, अन्यथा मन-प्राण से वे साहित्यिक थे और साहित्य सर्जना में उनकी प्रतिभा जितनी रमती थी उतनी अन्य किसी क्षेत्र में नहीं।

बेनीपुरी ने राजनीति में रहकर भी साहित्य के साथ कभी अन्याय नहीं किया, वरन् दोनों को साथ-साथ अच्छी तरह से निभाया भी। इनकी जागरूक चेतना स्वाधीन भारत में भी किसी प्रकार का अन्याय और दमन सहन न कर सकती थी। ऐसी स्थिति में भी वे अपने आप को राजनीति से अलग नहीं कर सकते थे। उन्होंने लिखा है—“साहित्यिक सदा भावना-प्रवण होता है। क्या वह साहित्यिक का हृदय है, जो देश की दुर्दशा पर पिघल नहीं उठे ? जब देशवासी जीवन-मरण के युद्ध में पिले हों तो एकान्त कुंज में बैठकर बंशी बजाए—क्या साहित्यिक का यही कर्तव्य है ? मुझे अपने राजनीतिक जीवन पर कभी अफसोस नहीं हुआ।”²⁶

बेनीपुरी की राजनीति अमानुषिकता के विरुद्ध थी। सही अर्थ में मनुष्यता ही उनकी राजनीति थी। बेनीपुरी 9 फरवरी, 1952 की डायरी में लिखते हैं—“मैं हार जाऊँगा, इसकी कल्पना भी नहीं थी। उस दिन अवधेश्वर ने भी कहा था, तुम तीन हजार वोटों से जीत रहे हो। खुद भी हिसाब जोड़कर देखता था, कहीं कोई ऐसी बात नहीं थी कि समझूँ, मैं हार जाऊँगा। किन्तु कैसा तमाशा, जब मैं पटना से मुज़फ्फरपुर आया, मतगणना के लिए, उसके पहले ही शहर में शोर था कि मैं चार हजार वोटों से हार रहा हूँ और वही हुआ।”²⁷ अपनी डायरी में उन्होंने पड़ोसी देश नेपाल की राजनीतिक परिस्थिति के संबंध में बताया है। सन् 1955 ई० में लेखक 3 जनवरी से 25 जनवरी तक नेपाल की यात्रा की। इसी पृष्ठभूमि पर उन्होंने नेपाल की राजनीति का अवलोकन किया था। उन्होंने ‘काठमांडू में तीन सप्ताह’ शीर्षक से ‘नई धारा’ में नवम्बर-दिसम्बर 1957 ई० और जनवरी 1958 ई० के अंकों में प्रकाशित किया था। नेपाल की राजाशाही के विरुद्ध लेखक ने ‘जनता’ पत्रिका द्वारा आंदोलन चलाया था। उनकी प्रेरणा से नेपाल में प्रजा परिषद् की स्थापना भी हुई। कहा जाता है कि कुछ लोग लेखक की प्रेरणा से ही नेपाल की राजनीति में आ गये थे। काठमांडू की यात्रा के समय बेनीपुरी ने जब नेपाल के राजनीतिक परिवेश को बड़ी निकटता से देखा तब उन्हें वहाँ की राजनीति में अविश्वास—ही—अविश्वास

नज़र आया, बेनीपुरी को वहाँ का राजनीतिक परिवेश बहुत ही अस्थिर लगा। इतना ही नहीं नेपाल की राजनीति में विदेशी प्रभाव भी दिखाई दिया। वहाँ हर वर्ष मंत्रिमंडल बनते रहते हैं। इस प्रकार वहाँ का प्रजातंत्र सुदृढ़ नहीं था। उन्होंने स्वागत समारोह के प्रवचन में कहा था—“नेपाल को बनाओ, मेरा सच्चा स्वागत यही है।”²⁸

यूरोपीय देशों की यात्रा में बेनीपुरी का ध्यान कला और संस्कृति पर अधिक रहा, इसलिए कला-क्षेत्र और सांस्कृतिक जगत की तुलना में वहाँ की राजनीतिक परिस्थितियों का अंकन उन्होंने छिटपुट रूप में ही किया है, लेकिन अपने पड़ोसी देश नेपाल की राजनीतिक परिस्थिति का बहुत ही व्यापक विवेचन उन्होंने अपनी डायरी में किया है। इंग्लैंड की यात्रा में बेनीपुरी ने ‘हाऊस ऑफ लार्ड्स’ और ‘हाऊस ऑफ कामन्स’ की कार्यवाही को निकट से देखा। वहाँ पार्लियामेंट भवन में नियमों का कठोरता से पालन किया जाता है। “राजकुल का कोई पुरुष हाउस ऑफ कॉमन्स में नहीं आ सकता। एक बार विक्टोरिया के जमाने में उनके पोते चले आए थे, तुरत उन्हें निकाल बाहर किया गया।”²⁹ इंग्लैंड में संसद बहस या व्याख्यान की जगह नहीं होती, सलाह मशवरे की जगह होती है। वहाँ अलग-अलग दलों के प्रतिनिधि अपनी बातों पर दृढ़ रहते हुए भी यों बातें करते हैं कि एक ही घर के हों। इस प्रकार प्रजातंत्र को इंग्लैंड वालों ने अच्छी तरह से पचा लिया है, परंतु फिर भी राजघराने से अंग्रेजों को बड़ा प्रेम है। अतः फ्रांस, इटली और स्विट्ज़रलैंड की राजनीति गतिविधियों पर बेनीपुरी ने कुछ भी नहीं लिखा। इन देशों की कला संस्कृति और सौंदर्य पर ही दृष्टि डाली।

बेनीपुरी की डायरी के राजनीतिक अध्ययन के पश्चात् कह सकते हैं कि बेनीपुरी का राजनीतिक जीवन काँटों से भरा हुआ था फिर भी उन्होंने इसे हँसकर फूलों की तरह अपने गले से लगाया और मुस्कुराते हुए आगे बढ़ते रहे। अन्याय, अत्याचार और उत्पीड़न के खिलाफ लड़ते रहे। कभी भी विचलित नहीं हुए। आज की भ्रष्ट और खोखली राजनीति के संदर्भ में बेनीपुरी का डायरी साहित्य जीवंत, शाश्वत् और कारगर प्रतीत होता है।

(ख) आर्थिक दृष्टि

किसी भी जाति और समाज की सुख-समृद्धि का बहुत कुछ आधार उसकी आर्थिक परिस्थिति होती है। किसी भी देश पर शासन करने के लिए वहाँ की अर्थव्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर देना आवश्यक होता है और अंग्रेजों ने ऐसा ही किया। सन् 1857 ई० में स्वाधीनता संग्राम की विफलता से ब्रिटिश साम्राज्य अधिक दृढ़ हुआ, और यहाँ के उद्योग-धंधे नष्ट होते गये। भारत का कच्चा माल कौड़ियों के भाव खरीदा जाने लगा और उसी से तैयार माल यहाँ सोने के भाव बिकने लगा। जिस समय बेनीपुरी का जन्म हुआ देश की हालत अच्छी नहीं थी। सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक आदि सभी क्षेत्रों में उथल-पुथल मची हुई थी। आज़ाद भारत की तस्वीर दूर तक नहीं दिखाई दे रही थी। भारत विदेशी शासन के गिरफ्त में था। फलतः भारतीयों के आर्थिक हित भी सुरक्षित नहीं थे। भारत की अर्थव्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई थी जिसका एकमात्र कारण था अंग्रेजों की अन्यायी व्यापार नीति। उनकी इस अन्यायी नीति से किसान-वर्ग अत्याधिक प्रभावित हुआ। उनका जीवन दुःखदायी हो गया। किसानों का शोषण खुलेआम होता था। ज़मींदारी प्रथा की शुरुआत हुई जिसके अंतर्गत ज़मींदारों द्वारा लगान वसूलने की प्रथा का प्रचलन था। वे बड़ी ही बेरहमी से किसानों से लगान वसूल करते थे, लगान देने में असमर्थ किसानों को मारते-पीटते भी थे। ऐसी स्थिति में उनका जीवन नारकीय हो गया था। सन् 1857 ई० के बाद कृषकों की स्थिति भी दयनीय हो गई। उस समय के कृषकों की स्थिति पर डॉ० डी० आर० गाडगिल ने लिखा है—“1870-80 दशक के दौरान सम्पूर्ण भारत में कृषकों ने बहुत मात्रा में प्रगति खो दी जो कि इससे पहले प्राप्त की गई थी... केवल एक बात निश्चित है कि वित्त-समिति और अकाल आयोग के पहले के साक्षों से ये पता लगता है कि इस काल के दौरान कृषकों की दशा में ज़्यादा, ग़रीबी फैल चुकी थी।”³⁰

घरेलू उद्योगों के बंद होने से और ज़मींदारों के शोषण से यहाँ की जनता आर्थिक संकटों से ग्रस्त हो गई थी। फिर भी लोगों की आर्थिक स्थिति में आशाजनक परिवर्तन नहीं हुआ क्योंकि उच्च पदों पर भारतीयों की नियुक्तियाँ होती

ही नहीं थीं। जिन छोटे-छोटे पदों पर उन्हें नियुक्त किया जाता था उन नौकरों के प्रति भेद-भाव मानकर, उन्हें हीन समझ कर कम वेतन दिया जाता था।

पुनः अंग्रेजों ने इंग्लैंड में प्रचलित कृषि-पद्धति का प्रयोग किया जिससे ज़मीन पर से किसानों के अधिकार भी चले गए और वे ज़मींदारों के अधीन लगान देने वाले दास बन गए। बाढ़, ओले आदि दैवीय विपत्तियों में भी मालगुज़ारी और लगान की दर वही रहती। यदि छूट दी जाती तो अलगे वर्ष वसूल की जाती थी। अगर कोई किसान लगान देने में असमर्थ होते तो उनकी भूमि छीन ली जाती। ज़मींदारों द्वारा नियुक्त कारिन्दे लगान वसूल करते थे। इस प्रकार ब्रिटिश सरकार ने किसानों के शोषण का द्वार खोल दिया था। ऐसी स्थिति में उनका जीना मुश्किल हो गया। गाँव की स्वायत्त संस्था के अधिकार भी समाप्त हो गए, जिससे ब्रिटिश शासन के अधीन सभी काम होने लगे। इस तरह ब्रिटिश सरकार की शोषण नीति से भारतीय समाज का पुराना आधार स्तंभ ग्राम व्यवस्था और साथ-साथ सामंती सभ्यता का भी अंत हो गया। जवाहर लाल नेहरू ने इस स्थिति के विषय में बताया—“जिससे देश में पूँजीवाद तेजी से पनपने लगा। सामन्ती जमींदार के स्थान पर अब पूँजीपति जमींदार होने लगे। फिर पूँजीवाद वर्ग का भी शोषण बढ़ता गया। जो किसान कर्ज और लगान तक न दे सकते तो उनका सब कुछ छीन लिया जाता।”³¹ अंग्रेजों की शासन नीति के कारण से समाज में वर्ग-भावना का प्रारुभाव हुआ। देश में मध्यम-वर्ग पैदा हुआ जो अपनी महत्वाकांक्षाओं के कारण से अंग्रेजों की नीति-रीति को जाने-अनजाने मौन होकर साथ देता रहा। इस प्रकार ब्रिटिश शासन काल में नवाबी, सामन्ती, सरकारी और ज़मींदार वर्ग के ऐश्वर्य, विलास और जनता पर उनके शोषण का बोलबाला था।

वस्तुतः ब्रिटिश-साम्राज्य भारत के शोषण के लिए और विशेषतः ग्रामीण जनता के शोषण के लिए अधिक ज़िम्मेदार था। फलतः हमारी अर्थ-व्यवस्था अस्त-व्यस्त हो गई। इन सब का कुप्रभाव भारतीय सांस्कृतिक जीवन पर पड़े बिना न रह सका।

बीसवीं सदी के आरंभ से ही औद्योगिक युग का सूत्रपात हो गया, अतः सन् 1900 ई० से 1950 ई० के मध्य देश के बड़े-बड़े नगरों में विविध उद्योगों की नींव डाली गई, उन्हें देश के व्यापारियों द्वारा प्रोत्साहन भी दिया गया।

सन् 1911 ई० में जमशेदपुर में टाटा द्वारा लोहे का कारखाना खोला गया। पहले विश्व युद्ध के दौरान इस कारखाने को लाभ तो हुआ किंतु मजदूरों की स्थिति दयनीय हो गई थी। सन् 1905 ई० में पूंजीवादी अर्थव्यवस्था को प्रथम बड़े आर्थिक संकट का सामना करना पड़ा था जो आगे चलकर सन् 1914 ई० के विश्व युद्ध में परिणत हुआ था। जिससे गाँवों के कृषक मजदूर बनकर शहरों में जाने लगे। शोषक वर्ग में भी आर्थिक असमानता और अशांति के चिह्न दिखाई देने लगे। किसानों में भी उस समय बहुत अशान्ति थी इसलिए कांग्रेस ने खेतिहार कार्यक्रम अपनाया।

बिहार में किसान संगठनों के माध्यम से उनकी मांगें सरकार के सामने प्रस्तुत की गईं। सन् 1933 ई० में बेनीपुरी ने बिहार प्रांतीय सभा में ज़मींदार उन्मूलन का प्रस्ताव रखा था, जो कई नेताओं के विरोध होते हुए भी पास किया गया था। ज़मींदारी के खिलाफ उन्होंने लिखना आरंभ किया। इसके संबंध में उनके लेख 'प्रताप', 'विश्वमित्र' और 'विशाल भारत' में छपे थे। सन् 1940 ई० में बेनीपुरी 'प्रांतीय किसान सभा' के अध्यक्ष चुने गए थे।

सन् 1942 ई० में किसान-आंदोलन के कारण से उन्हें डेढ़ साल की सीतामढ़ी जेल में सजा हुई थी। इस प्रकार बेनीपुरी ने किसान आंदोलन में भी सक्रिय रूप से हिस्सा लिया और उसके संबंध में साहित्य-सृजन भी किया।

गजानन चव्हाण लिखते हैं—“ललित कला का उपासक प्रायः आर्थिक विचारों पर माथापच्ची करने से कतराता है, परन्तु बेनीपुरी केवल साहित्यकार नहीं थे। उनके समान, नवीन सांस्कृतिक भारत के निर्माण की चिंता करने वाला शायद ही कोई दूसरा लेखक मिले। यही कारण है कि समाज की अर्थनीति की नींव पर भी उन्हें यदा-कदा सोचना पड़ा।”³² बेनीपुरी के आर्थिक विचार का आधार मानवता ही हैं। साहित्य, समाज और जीवन संबंधी विविध समस्याओं के साथ-साथ अर्थनीति के विषय में भी सोचा।

डॉ० रश्मि चतुर्वेदी लिखती हैं—“प्रायः साहित्यकार आर्थिक नीति जैसे शुष्क विषय पर विचार नहीं करते हैं। किन्तु साम्राज्यवादी अर्थनीति के दुष्परिणामों का दुखद अनुभव बेनीपुरी जी ने अपने जीवन में प्राप्त किया था और उसे पराधीन भारत में भी सर्वत्र देखा था। इसी कारण आर्थिक प्रश्नों पर भी उन्होंने अपने साहित्य में विचार किया है। जिसमें व्यक्तिगत अनुभव की ही परिणति उनकी समाजवादी अर्थनीति में देखी जा सकती है।”³³ उनका मनना है कि समाजरूपी वृक्ष का मूल अर्थनीति ही है समाज अर्थनीति से ही शक्ति ग्रहण करता है।

द्वितीय महायुद्ध के समय अंग्रेजों द्वारा युद्ध का खर्च हमारे देश पर जबरन से लादा गया। फलतः यहाँ के लोगों की आर्थिक दशा और भी बिगड़ गई। सन् 1943 ई० में बंगाल में भयंकर अकाल पड़ा। असल में यह मानव सर्जित अकाल था। बंगाल की मुस्लिम लीग की मिनिस्ट्री ओर ब्रिटिश सरकार ने मिलकर इस षड़यंत्र की रचना की थी जिससे आगे चलकर वह पूर्ण पराकाष्ठा पर पहुँच गया। बंगाल के पूँजीपतियों ने भी अपनी धन-लिप्सा की तृप्ति के लिए इस षड़यंत्र में भाग लिया। इस तरह भारत में धीरे-धीरे स्वतंत्रता-संघर्ष के साथ-साथ सरकारी षड़यंत्र और भ्रष्टाचार का बोलबाला भी बढ़ने लगा।

सन् 1947 ई० में भारत-पाकिस्तान ऐसे विभाजन से आर्थिक अव्यवस्था भी देश में फैली और परिस्थितियों वश कई बार रुपये का अवमूल्यन भी किया गया। आज़ादी के बाद भारत सरकार ने देश के लोगों की दयनीय आर्थिक व्यवस्था को दूर करने के लिए व उसमें परिवर्तन करने के उद्देश्य से पंचवर्षीय योजनाओं और अनेक वैज्ञानिक साधनों द्वारा अनेक प्रयत्न किये गए, आर्थिक दृष्टि से बहुत व्यय भी किया गया, लेकिन ज़मींदारी पद्धति का पूर्ण रूप से निर्मूलन नहीं हो सका। सरकार ने योजनाओं द्वारा जो कुछ भी व्यय किया उससे लाभ तो एक विशेष वर्ग को ही हुआ। अमीर-ग़रीब के बीच की खाई ज्यों की त्यों बनी रही।

समाजवादी नेता बेनीपुरी पराधीन भारत में तो राजनीतिक और आर्थिक उपलब्धियों के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे, लेकिन स्वतंत्र भारत के मजदूरों और किसानों के आर्थिक हितों के लिए वे राजनीति में सक्रिय बने रहे। देश की युगीन परिस्थितियों और जीवन संघर्ष से गुजरते हुए उन्होंने स्वयं अनुभूति के माध्यम से

साहित्यिक प्रेरणाएँ प्राप्त की; इसीलिए बेनीपुरी साहित्य में हम एक साथ युग का प्रतिबिंब और जीवन की आशा-आकांक्षाएँ दिखाई देती हैं।

बेनीपुरी ने अपनी डायरी में कहीं-कहीं रुपये-पैसे की कठिनाइयों का भी जिक्र किया है। 9 जनवरी सन् 1952 में उन्होंने लिखा है—“मुज़फ्फरपुर में आते ही अपने प्रकाशन की ओर ध्यान जाता है इस प्रकाशन के लिए मैं क्या करूँ जरूरत है कि रुपये लगाये जायें। ये रुपये कहाँ से आयें। कहीं कोई उपाय नहीं सूझता।”³⁴

बेनीपुरी ने 19 जनवरी सन् 1962 ई० को अपनी डायरी के व्यथा भरे पन्ने में इस बात को बताया है। पैसे के अभाव में उन्हें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। जेल से मुक्ति पाने के लिए, जर्मनी में अपनी धर्मपत्नी के गहने बेचने पड़े। बेनीपुरी जब जेल में थे तब पारिवारिक दायित्व उनकी पत्नी उमाराणी के सिर पर था। इस प्रकार बेनीपुरी के होते हुए उनके परिवार में भी कई संकटों का सामना करना पड़ा। 19 जनवरी सन् 1962 की डायरी में लिखते हैं—“रुपए का प्रबंध इधर देख रहा हूँ, लगभग दस हजार रुपए मुझे देने हैं। इन रुपयों का क्या मैं कर्ज लेकर ही मरूँगा? आजकल इसी की चिंता रहती है। कुछ सोचता हूँ, किन्तु कोई उपाय नजर नहीं आता। बड़ी ग्लानि होती है।”³⁵ बिहार में जब सन् 1934 ई० में भूकम्प आया। तब से उनकी घर की आर्थिक स्थिति कमजोर होती गयी। पुस्तकों से जो पैसा बेनीपुरी के पास आता था उसी पर उनके घर का खर्च निर्भर करता था। इसलिए पुस्तकों के प्रकाशन में देर होने या किसी कारणवश व्यवस्था न हो पाने की स्थिति में वे परेशान हो उठते हैं।

19 जून, सन् 1950 की डायरी में बेनीपुरी लिखते हैं—“इधर आर्थिक झंझटे भी बहुत आ गयी हैं। इस साल मेरी पुस्तकें बच्चों की सहायक पुस्तकों में नहीं जा सकीं। (हर साल जहाँ लगभग दस हजार रुपए मिले थे, इस साल पाँच हजार भी पूरे नहीं हो सके! ‘चुन्नू-मुन्नू’ और ‘नई धारा’ से जो आठ सौ रुपये महीने (300 + 500) आ जाते हैं। पटना में मेरे निर्वाह का वही सबसे बड़ा आसरा है।) जित्तिन का जोर है; मैं मोटर खरीदूँ। मोटर रखने में आराम रहेगा; प्रतिदिन रिक्शे में जो तीन चार रुपये खर्च होते हैं, उससे भी पिंड छूटेगा प्रतिष्ठा भी है। किन्तु हो

कैसे? जनवाणी प्रकाशन (कलकत्ता) से कहा है, वे कोई प्रबन्ध करे। कुछ आश्वासन भी मिला है। देखना है, क्या होता है?"³⁶

बेनीपुरी अपनी पुस्तकों से आयी हुई रकम से अपनी गृहस्थी की गाड़ी खींचते थे। कभी-कभी उन्हें कर्ज भी लेना पड़ जाता था। बेनीपुरी जी 14 सितम्बर, 1951 की डायरी में लिखते हैं—“रुपए-पैसे की भी बड़ी दिक्कत रही उन दिनों। कई आदमियों के पुराने कर्ज—फिर सारा परिवार यहीं। एक हजार मासिक मिलते हैं, तो भी परेशानी ही परेशानी रहती है। एक अजीब आदत हो गयी है। हमेशा लोगों को अपने पास इकट्ठा किए रहता हूँ, जिसका खर्च मुझे ही ढोना होता है।”³⁷

जब उनकी आर्थिक तंगी अधिक बढ़ जाया करती थी, उस समय वे कर्ज लेने से भी घबराया करते थे। उन्हें यह चिंता सताने लगती थी कि पैसे उधार ले तो लूँ किन्तु न लौटा पाया तो क्या होगा? पहले की बात और थी किन्तु बुढ़ापे में कर्ज लेना ठीक नहीं लगता। वे असमंजस में पड़ जाते हैं और 7 फरवरी, 1953 की डायरी में लिखते हैं—“सोचता था, कहीं से पाँच-छह हजार रुपये उधार ले लूँ और काम चलाऊँ। किन्तु, डर लगता है... तो जवान था, किसी तरह सधा दिए। अब बुढ़ापे में यह जोखिम लेना क्या ठीक होगा?”³⁸

आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण एक ओर बेनीपुरी स्वयं कर्ज लेने के सिलसिले में असमंजस में दिखाई पड़ते हैं। बेनीपुरी 7 फरवरी, 1953 की डायरी में लिखते हैं—“रुपए इकट्ठा करने में कठिनाई हो रही है। वादा तो लोग कर देते हैं, किन्तु देने के समय ढील देते हैं। लोग कहते हैं, आजकल रुपए की कमी हो गई है, बाज़ार में मंदी आ रही है, चारों ओर रुपए के लिए हाय-हाय है। मैं भी अनुभव कर रहा हूँ। पहले हजार-दो-हजार रुपये बात-बात में इकट्ठे कर लेता था। किन्तु इस समय सौ-दो-सौ रुपये में भी दिक्कत आती है।”³⁹

प्रत्येक व्यक्ति की प्राथमिक आवश्यकता रोटी, कपड़ा और मकान होता है। जिसके लिए वह दिन-रात मेहनत करता है, क्योंकि इन आवश्यक आवश्यकताओं के बिना जीवन निर्वाह कर पाना कठिन है। बेनीपुरी भी इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए चिंतित दिखाई पड़े हैं। रोटी, कपड़ा जैसी आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ

अच्छे मकान का स्वप्न भी वे देख रहे थे। यद्यपि उनके पास पैसों की कमी थी फिर भी उन्होंने मकान बनाने की तैयारी शुरू कर दी। 17 नवम्बर, 1952 की डायरी में लिखते हैं—“कैसी विचित्र स्थिति है? घर पर मकान बनाने का काम शुरू कर दिया है। जो पैसे थे, सबका सामान खरीदकर वहाँ रख दिया। अब यहाँ यह हाल है कि कभी-कभी कुछ पैसे के लिए भी मोहताजी महसूस करता हूँ।”⁴⁰

कहते हैं कि ‘जहाँ चाह है वहीं राह है’। अर्थात् यदि कोई व्यक्ति किसी काम को पूरा करने के लिए यदि दृढ़ निश्चय कर ले तो कोई-न-कोई रास्ता अवश्य ही निकल आता है। जब बेनीपुरी का मकान तैयार हो जाता है तब बेनीपुरी जी भी कुछ ऐसा ही अनुभव करते हैं। इस अनुभव को 8 दिसम्बर, 1952 की डायरी में लिखते हैं कि—“इस मकान ने मुझमें आत्मविश्वास भर दिया है। मुश्किल से मुश्किल काम में भी आदमी जुट पड़े, तो फिर कौन-सी रुकावट, जो उसके आड़े आए! वह कर ही लेगा, कर ही लेगा।”⁴¹

25 दिसम्बर 1951 में ‘ऊतरार’ यात्रा के दौरान देश की गरीबी और राजनीतिक लूट-खसोट का जो दृश्य बेनीपुरी ने देखा, उसका बचाव करते हुए लिखते हैं—“इस यात्रा में यह भी देखा कि लोगों में कितनी गरीबी है। जब औरतों के बदन पर चिथड़े देखता हूँ—गन्दे, काले, मुश्किल से लाज ढकने वाले; क्या इन्हें कपड़ा भी कह सकते हैं? फिर बच्चे चेहरे पर मुर्दनी, बदन पर वस्त्र नहीं, शरीर में लहू और मांस नहीं; और बेचारे बूढ़े उफ! कितनी गरीबी।... किन्तु हमारे पंडित नेहरू और उनके चेले। बस, नेहरू के दिमाग में दामोदर और कोसी की योजना ही समाती है। तो उनके चेलों को लूट-खसोट से ही मुक्ति नहीं मिलती। सिंचाई नाम से लाखों रुपए खर्च किए जाते हैं, तो वे ज्यादातर कांग्रेस कमेटी के मंत्रियों और उनके दलालों की जेब में ही जाते हैं।”⁴² बेनीपुरी के समय में गाँव और शहर दोनों का हाल अच्छा नहीं था। सामान्य जनता और शिक्षित समाज के बीच असमानता बढ़ गई थी। श्रमिक-वर्ग की दशा अति शोचनीय थी। उन्हें न तो अपने श्रम का पूरा पैसा मिलता था और ना ही उनके लिए न्याय की व्यवस्था थी। कृषि योग्य ज़मीनों पर ज़मींदार का अधिकार हुआ करता था। जिसके कारण धीरे-धीरे सामाजिक सन्तुलन नष्ट हो गया। भारतीय समाज की आर्थिक व्यवस्था का चित्रण

करते हुए डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान लिखते हैं—“उस समय ग्रामीण जीवन में पूँजीवादी व्यवस्था पनपती चली गयी थी। भूमि कर की समाप्ति से कृषि योग्य ज़मीन ज़मींदारों की निजी सम्पत्ति हो गई थी। न्याय का शासन सूत्र भी बदल गया। अब तक वह पंचायत के हाथों में था लेकिन बाद में ज़मींदारों और न्यायालयों के हाथों में चला गया था।...साथ-साथ अर्थाभाव, अशिक्षा, अन्धविश्वास, भाग्यवादिता, अज्ञान और नवीन साधनों के अभाव में गरीबी का शिकार बना हुआ किसान समय के साथ लड़ता रहा और प्रवर्तमान समय भी उससे बराबर अड़ता रहा। जिससे भारतीय समाज का भाग्य आहिस्ते-आहिस्ते बिगड़ता ही रहा।”⁴³

श्रमिक-वर्ग जो दिन-रात मेहनत करता था, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में भी असमर्थ था। वह अपनी दयनीय स्थिति के संबंध में न तो स्वयं कुछ कर सकता था और न ही उसकी कोई सुनने वाला था। समाजवादी नेता बेनीपुरी मजदूरों और किसानों के आर्थिक हितों के लिए राजनीति में बने रहे। डॉ० कन्हैयालाल बी. चौहान इस संबंध में लिखते हैं—“किसानों का जीवन भी उन्होंने नज़दीक से देखा था, फलतः उनके साहित्य में किसानों के प्रति बड़ी हमदर्दी दिखाई देती है। इतना ही नहीं बाद में उनका राजनैतिक जीवन भी किसानों के लिए बीता था।”⁴⁴ वे किसानों की समस्याओं को अच्छे से समझते थे। बाढ़ की समस्या उनके अपने इलाके की गंभीर समस्या थी। हजारों किसान काफी लंबे समय से बाढ़ से पीड़ित हो रहे थे। बेनीपुरी इस समस्या को सुलझाना चाहते थे। उन्होंने इस समस्या के बारे में जयप्रकाश जी से बात की। 2 अक्टूबर, 1953 की डायरी में लिखते हैं—“कोसी योजना, दूसरी तरफ है गंडक योजना। बस इन्हीं की चर्चा है, जिनके लिए एक अरब रुपए चाहिए। न नौ मन तेल होगा, न राधा नाचेगी। इन दोनों योजनाओं के अतिरिक्त यदि बूढ़ी गंडक बागमती, लखनदेई, जीवछ, कमला आदि छोटी-छोटी नदियों को काबू में करने की कोशिश की जाए, तो कम-से-कम चार जिलों—चम्पारण, मुजफ्फरपुर, दरभंगा के बहुत बड़े हिस्से और मुँगेर के बहुत हिस्से का कल्याण हो जाए।”⁴⁵ सरकार का ध्यान किसान मजदूरों की समस्या की ओर आकृष्ट कराया। किसान-आंदोलन के सिलसिले में उन्हें कई बार जेल भी जाना पड़ा।

बेनीपुरी ने विदेश-भ्रमण करते समय एक बार भोजन करते-करते बातों-बातों में प्रजातंत्र एवं पूँजीवाद के संबंध में बताया है—“आज भारत में जनतन्त्र का अर्थ हो गया है पूँजीवाद का समर्थन। जब सिर्फ जनतन्त्र की रक्षा की बात कीजिए, तो लोग समझते हैं, यह परोक्ष रूप में पूँजीवाद की हिमायत कर रहा है। और चूँकि यूरोप में पूँजीवाद आखिरी साँस ले रहा है, इसलिए पूँजीवाद का अर्थ हो गया है अमेरिकन पूँजीवाद। इसलिए जब हमारी काँग्रेस सांस्कृतिक स्वतन्त्रता के लिए जनतन्त्र की अनिवार्य आवश्यकता बताती है, तो लोगों को शक होने लगता है, कहीं हम अमेरिकन पूँजीवाद का समर्थन तो नहीं कर रहे हैं। लोगों के इस शक को कम्युनिस्ट और बढ़ाते हैं।”⁴⁶

हमारे देश में भी जनतांत्रिक समाजवाद पर जोर देते हुए बेनीपुरी जी ने लिखा है—“कहीं हम तानाशाही का मुकाबला तानाशाही से नहीं करने लगे या कहीं हम तब से उछलकर चुल्हे में न गिर पड़ें। जनतान्त्रिक समाजवाद ही एकमात्र राह है, यदि इसे भारतीय अर्थों में लिया जाए, तभी विश्व का कल्याण दिखाई पड़ता है।”⁴⁷ इंग्लैंड में छोटी-बड़ी औद्योगिक कंपनियाँ बनायी जाती हैं। सरकार उनके विकास के लिए सहायता देती है। सरकार स्वयं फैक्टरियाँ बना देती है। फैक्टरियों में कार्य कुशलता का बहुत ही ध्यान रखा जाता है। इसके संबंध में बेनीपुरी ने टीम-वैली की एक फैक्टरी का मनोरंजक किस्सा लिखा है—“काम कितनी शीघ्रता से होता है, इसका एक किस्सा बताया गया। मशीन बनाने के लिए एक कारखाने को ठेका मिला। खरीददार ने कहा कि तेरह महीने के अन्दर मुझे यह मशीन चाहिए, आप कितने दिनों के अन्दर दे सकेंगे। मैनेजर ने कहा, तेरह सप्ताह में। उसे आश्चर्य हुआ, किन्तु सबसे बड़ा आश्चर्य उसे तब हुआ, जब सात सप्ताह में ही उसे मशीन तैयार मिल गई।”⁴⁸ फ्रांस की आर्थिक परिस्थितियों की विवेचना करते हुए उन्होंने लिखा है “फ्रांस आर्थिक दृष्टि से यूरोप में जहाँ की स्थिति सबसे खराब है, वहाँ की स्थिति भी बेनीपुरी जी की कहानी से कम नहीं है।”

फसलों, कृषि-कर्मों का वर्णन कर वहाँ की आर्थिक परिस्थितियों का चित्र भी बेनीपुरी ने खींचा है—“किसान मेहनती तो लगते थे, किन्तु वे संपन्न नहीं मालूम होते। बदन पर न वैसा गोश्त, न चेहरे पर वैसा रंग। पोशाक भी अधिक नहीं, जो है, वह भी अच्छी नहीं। लड़कियों की पोशाक भी चमकीली-भड़कीली नहीं। स्विट्ज़रलैंड की तरह गुलथुल बच्चों का भी अभाव!”⁵⁰

स्विट्ज़रलैंड अपने गृह उद्योग के लिए प्रसिद्ध है। वहाँ के कारीगर अपने हाथ के बल और कौशल से अपने देश को सुखी-संपन्न बनाए हुए हैं। जब बेनीपुरी नेपाल पहुँचे तो किसानों की उद्योगपरता देखकर दंग रह गए। नीचे की घाटी से ऊपर की चोटी तक जहाँ भी थोड़ी ज़मीन मिली कि घेरकर खेत बना लिया। नीचे से ऊपर तक खेतों की सीढ़ियाँ सी लगी हुई है। वहाँ पर कल-कारखाने नहीं पहुँच पाए हैं। कपड़े की कोई मिल नहीं है। गाँव में कहीं-कहीं गृह उद्योग चल रहा है। और उन्हें संगठित करना नेपाल की एक बहुत बड़ी सेवा है।

बेनीपुरी के डायरी साहित्य से हमें पता चलता है कि कई बार उन्हें कर्ज भी लेना पड़ता था और कई बार ऐसा भी होता था कि भविष्य में कमाई का कोई ज़रिया उन्हें नज़र न आने पर वे कर्ज लेने से भी डरते थे। किसानों एवं मज़दूरों का जीवन कैसा होता है। इसे उन्होंने अत्यधिक करीब से देखा था। इस प्रकार बेनीपुरी के डायरी साहित्य से हमें यह पता चलता है कि बेनीपुरी की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। देश की ग़रीबी के संकेत भी उनके डायरी साहित्य में जगह-जगह मिलते हैं। इस प्रकार बेनीपुरी ने अपने जीवन में भी आर्थिक कठिनाई को झेला और बिना चिंता किये आगे बढ़ते रहे।

(ग) सामाजिक दृष्टि

भारत में ब्रिटिश शासन के दृढ़मूल होने के समय पर भारत की सामाजिक परिस्थितियाँ अत्यंत शोचनीय थीं। सन् 1857 ई० के स्वातंत्र्य युद्ध के बाद भारत में बदली हुई राजनीतिक परिस्थितियों के परिणामस्वरूप तत्कालीन सामाजिक जीवन-संदर्भों में भी परिवर्तन आ गया था। समाज में नवीन चेतना और नव जागृति का बीज बोने वाले ऐसे समाज सुधारकों एवं लोक-नायकों का आविर्भाव

हुआ राजाराम मोहन राय ने 'ब्रह्म समाज' के माध्यम से सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन का प्रयास किया। स्वामी दयानंद सरस्वती के 'आर्य समाज' ने भी पुरानी जर्जर सामाजिक रूढ़ियों पर प्रहार किया। महादेव गोविन्द रानडे के नेतृत्व में 'प्रार्थना समाज' ने और एनी बेसेंट के नेतृत्व में 'थियोसोफिकल समाज' ने सामाजिक सुधार के कार्य किये। इन सामाजिक आंदोलनों के प्रभाव के संबंध में रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है—“.... इतना अवश्य हुआ कि आधि भौतिकता की टकराहट से भारत की ऊँघती हुई बूढ़ी सभ्यता की नींद खुल गई, और वह इस भाव से अपने घर के सामानों पर नज़र दौड़ने लगी कि जो चीज़ें लेकर यूरोप भारत आया है, वे हमारे घर में हैं या नहीं ? भारतीय—सभ्यता का यही जागरण भारत का नवोत्थान था।”⁵¹

सन् 1885 ई० में कांग्रेस की स्थापना हो जाने पर सामाजिक सुधार के कार्यों में अधिक गति आई। गोपाल कृष्ण गोखले, दादाभाई नौरोजी और लोकमान्य तिलक आदि नेताओं ने सामाजिक सुधार के क्षेत्र में भी भाग लिया। राजनीतिक क्षेत्र में पदार्पण करने पर महात्मा गांधी ने स्त्री—शिक्षा, अछूतोद्धार, अस्पृश्यता निवारण, दहेज निर्मूलन, खान—पान और वस्त्र परिधान की सादगी तथा स्वावलंबन की आवश्यकता पर जोर दिया। इस प्रकार गांधी की रचनात्मक राजनीति में सामाजिक सुधारों को यथोचित स्थान दिया गया। फिर भी विविध प्रयत्नों के बाद भी भारत के सामाजिक जीवन में कुछ ऐसी कुप्रथाएँ विद्यमान थीं, जिन्हें समाप्त किए बिना राजनीतिक स्वाधीनता को सार्थक नहीं बनाया जा सकता था। बेनीपुरी ने सामाजिक परिवर्तन एवं सामाजिक विकास की दिशा में यह महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

बेनीपुरी का जीवन एक ओर अनेक साहित्यकारों से तो दूसरी ओर कुछ विशिष्ट राजनीतिक और सामाजिक व्यक्तियों से संबंध रहा था क्योंकि समाज के प्रायः हर वर्ग के लोग बेनीपुरी की मित्र—मंडली में शामिल थे।

बेनीपुरी सदैव जातिगत भेदभावों से दूर रहे। उन्होंने जैसे ही राजनीति में प्रवेश किया वैसे ही सबसे पहले अपने—आप को धर्म और जात—पाँत के भेदभाव से दूर कर लेने का निश्चय कर लिया था। आंतरिक भेदभाव, अलग—अलग धर्मों में

प्रवर्तित आचरण में भेदभाव भाषा और जाति के भेदभाव, इन सब भेदभावों से बेनीपुरी ने दूर रहने के लिए प्रयास किया। धर्म और जाति-पाँति के भेदभाव मुख्यतः सरकारी पदों के लिए और बोर्डों की सीटों के लिए ही किया जाता है। जब बिहार सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना की गई तब सदस्यों के लिए मुख्य शर्तें रखी गईं। जिसमें सदस्य को सदा खादी का व्यवहार करना और अपने-आपको जात-पाँत के भेदभाव से बिल्कुल अलग रखना, यह अनिवार्य शर्त थी। इस प्रकार बेनीपुरी छोटे-बड़े, गरीब-अमीर, जात-पाँत और भाषा के भेदभावों को नहीं मानते थे। किसी भी जाति के प्रति उनके मन में संकीर्ण भाव नहीं थे।

बेनीपुरी के व्यक्तित्व में संकल्पों का एक बड़ा खज़ाना था। वे हमेशा नये-नये सपने देखा करते थे। नये समाज के, आदर्श समाज के और नई इन्सानियत को अपने स्वप्नों के अनुरूप ही नये नये संकल्प भी करते रहते थे और उन संकल्पों को पूरा करते थे। “मेरा जीवन तो यही रहा है या तो कलाक्षेत्र में विचरण करते रहे या क्रान्ति के मैदान में जूझते रहे!”⁵² बेनीपुरी का विद्रोही व्यक्तित्व था। एक क्रांतिकारी योद्धा ती तरह उन्होंने तत्कालीन शासन व्यवस्था एवं महाजनी उत्पीड़न का भी विरोध किया। बेनीपुरी के इस रूप को देखकर दिनकर ने लिखा है—“समाज जब बदलने लगता है, वह अपनी प्रक्रिया को तेज़ करने के लिए कुछ बेचैन मुनष्यों को जन्म देता है। बेनीपुरी जी के भीतर बेचैन कवि, बेचैन चिन्तक, बेचैन क्रान्तिकारी और निर्भीक योद्धा सभी एक साथ निवास करते थे।”⁵³ बेनीपुरी एक विद्रोही, क्रांतिकारी होने के साथ-साथ विनोद प्रिय व ज़िन्दादिल भी थे। उनका दावा था कि उनके पास कोई व्यक्ति कितना ही दुखी क्यों न आए पर वह बिना ठहाका लगाये नहीं रह सकता है। हास्य-विनोद प्रियता के साथ ही वैचारिक गंभीरता भी उनका एक विशेष गुण था।

वे समाजवादी व्यक्ति होने के साथ-साथ समाजवादी चिंतक थे। वे एक नया देश, सभ्य समाज बनाने की कल्पना करते थे। बेनीपुरी लिखते हैं—“समाजहीन देश मिट्टी का ढेर है। हम कोरी मिट्टी की पूजा नहीं करेंगे। क्यों करेंगे? मिट्टी सोना तब बन जाती है वह अर्जनीया, अर्चनीया, बन्दनीया तब बन जाती है—जब उस पर समाज बसता है। और समाज तब तक मानवों का समूह—मात्र है, जब तक उसी

नींव में कोई सपना नहीं हो!... वह पुराना समाज जाए—जहाँ मानव मानव में विभेद है। विभेद—वर्ण का, वित्त का; आवास का, अवकाश का; विकास का, प्रकाश का! यह रोगी समाज, कोढ़ी समाज! यह जीर्ण समाज, यह शीर्ण समाज। जहाँ शरीर बँधा है, जहाँ आत्मा बँधी है! जहाँ पुरुष बँधा है, जहाँ प्रकृति बँधी है!”⁵⁴ बेनीपुरी ने जिस नए समाज की कल्पना की है, वह नया समाज जनता का समाज है उसमें किसी एक समूह विशेष का ही अधिकार नहीं है बल्कि उसमें सभी की इच्छा—आकांक्षा एवं हितों का ध्यान रखा जाता है। उनके नए समाज में वर्ग—भेद एवं जाति—भेद जैसी संकुचित अवधारणाएँ नहीं हैं। बल्कि मानव ही परम सत्य है। उनके मानवतावादी स्वर की गूँजे हमें उनके डायरी साहित्य में मिलती है। “बेनीपुरी एक तूफान थे जिसके वेग से बरसाती खर—पतवार की तरह फैली सामाजिक कुरीतियाँ एवं रूढ़ियाँ छिन्न—भिन्न हो जाती थीं, और जिन्दगी के अंग—अंग में थिरकन उत्पन्न होने लगती थी, नयी नयी कोपलें फूट पड़ती थीं।”⁵⁵

बेनीपुरी ने जहाँ समाज की प्रत्येक कुरीति का खंडन किया है, वहीं दूसरी ओर उनकी दृष्टि नारी—समाज की जंजीरों में जकड़ी करुण स्थिति की ओर भी गई है। नारी—जीवन की विविध समस्याओं को लेकर बेनीपुरी की चिंता हमें उनकी डायरी में जगह—जगह देखने को मिलती है। भारत में नारियों की दुर्दशा को देखकर उनका खून प्रायः खौलता रहता था। हमारे देश में दहेज—समस्या नारी संबंधी समस्याओं में से एक प्रमुख समस्या बनी हुई है। बेनीपुरी दहेज—प्रथा को लेकर काफी चिंतित थे, क्योंकि वे एक समाजवादी विचारक थे। डायरी में बेनीपुरी अपने मित्र गंगाशरण सिंह की बेटी का विवाह तय करने में आई परेशानियों को बताते हुये 20 मई, 1952 की डायरी में लिखते हैं—“शादी—ब्याह की चर्चा जब—जब होती है, मुझमें हालतों को देखकर अजीब ग्लानि और खेद का अहसास होता है। यहाँ बेटी पैदा करना जैसे पाप हो गया है पहले एक बात भी थी कि पास में पैसे हों, तो जहाँ कहीं इच्छा हो, बेटी ब्याह लो। किन्तु अब बाप पैसे माँगता है, बेटा सौंदर्य खोजता है। बेटा सौंदर्य खोजे यह कोई बुरा नहीं, बशर्ते कि वह अपना चेहरा भी आईने में देख ले। किन्तु वह तो सिर्फ सौंदर्य ही नहीं खोजता, उसके बाद बाप के जिव्हाखाने में भी भेज देता है— वहाँ गाँठ और गर्दन कटवाओ! बेचारे

बेटी के बाप की अजीब परेशानी!"⁵⁶ इस प्रकार बेनीपुरी इस समस्या को लेकर चिंतित दिखाई देते हैं। उनकी चिंताएँ सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्रों में जाति-पाँति की वर्ग-भेद भावना को भी लेकर थी। जाति-पाँति की इस भावना को दूर करने के लिए उन्होंने अंतर्जातीय विवाह को उचित समझा। 20 मई, 1952 की डायरी में वे अंतर्जातीय विवाद की बात अपने बेटे के समझ रखते हैं, वे लिखते हैं—“मेरे ख्याल से समस्या का निदान सिर्फ यही नहीं है कि युवक आगे बढ़कर बिना तिलक, दहेज के ही मनचाही लड़कियों से विवाह करें। बल्कि यह भी हो कि वे जाति को छोड़कर विवाह करें। मैंने जित्तिन से कह दिया है, बेटा, तुम भूमिहार की लड़की को छोड़कर ही किसी से शादी करना। जब इस तरह के विवाह होने लगेंगे, तभी राजनीति से भी जाँत-पाँत दूर हो सकेगी। आज की राजनीति में जो गंदगी है, वह भी तभी दूर हो सकेगी।”⁵⁷ यह अनर्थ और अनाचार कैसे दूर हो। वह इस समस्या पर सोचते भी हैं। वह चाहते हैं कि युवक आगे बढ़कर बिना दहेज के ही मनचाही लड़कियों से विवाह करें बल्कि यह भी हो कि वे जाति को छोड़कर विवाह करें। वह यह भी कहते हैं कि स्त्रियों का सम्पत्ति पर अधिकार न होना भी उनकी मर्यादा को समाज में निम्न स्तर पर लाता है। वे चाहते हैं कि लड़कों की तरह लड़कियों को भी समान अधिकार हों।

बेनीपुरी के सामने सारे संसार की पीड़ा व उनकी कल्याणकारी दृष्टि ही घूमा करती थी। जब वे विदेश-यात्रा कर रहे थे तब भी अपने देश की स्थिति को उसकी समस्याओं का ध्यान उनके मस्तिष्क को हमेशा सताये रहता था। इस प्रकार उनके दिल में सदैव मानव कल्याण की ओर लोक मंगल की भावना रहती थी। वे एक सुखी समाज की कल्पना शांति के नीड़ में करते थे। उनमें अपने देश के साथ-साथ विश्व जन-जीवन को भी सुखी बनाने की उत्कट जिज्ञासा संचित थी। वास्तव में सबसे पहले वे इंसान थे, बाद में साहित्यकार, पत्रकार या राजनीतिज्ञ।

अपने देश के प्रति लेखक ने जो सद्भावना व्यक्त की है, वह उन्हीं के शब्दों में— “उफ, हमें अपने देश को बनाना है, एक नया देश बनाना है, उसमें एक नया समाज बनाना है। एक ऐसा समाज, जिसका हर पहलू सुखी हो, सम्पन्न हो, सबल

हो, सुसभ्य ?... वह नया समाज बनकर रहेगा, बन कर रहेगा!"⁵⁸ जब हवाई जहाज से ऊपर उड़ते हैं तब उनके मन में विचारों की प्रक्रिया भी साथ-साथ चलती है— "ज्यों-ज्यों ऊँचे चढ़िए, भेदभाव मिटते जाते हैं। सीमाएँ नष्ट होती जाती हैं। एकरूपता बढ़ती जाती है। किन्तु मैं दर्शन की ओर कहाँ वहका जा रहा हूँ ? चेतना झटका देती है, स्मृतियाँ पीछे पटक देती हैं!"⁵⁹

आज संसार में ऐसी प्रवृत्तियाँ फैल रही हैं जो कला के लिए, संस्कृति के लिए, सभ्यता के लिए और मानवता के लिए खतरनाक हैं। ऐसी प्रवृत्तियों के विरुद्ध आवाज़ उठाना और साथ ही एक स्वतंत्र, सम्पन्न, सुखी आनंदी समाज की सृष्टि के लिए प्रयास करना है।

जब बेनीपुरी विदेश-यात्रा पर गए तो उन्होंने वहाँ कार्य करने के ढंग को देखा और अपनी डायरी में कैद कर किया— "यूरोप के लोगों में संगठन की शक्ति कुछ अद्भुत ढंग से विकसित हो गई है। इतना बड़ा जलसा किया जा रहा है; किन्तु कहीं भी हल्ला-हंगामा नहीं—ऑफिस में, सभा भवन में, सब जगह सुचारु, व्यवस्था। अपने यहाँ ऐसी चीज़ की जाती, तो तूफान बरपा हुआ रहता। कार्यकर्ता परेशान रहते; अतिथि परेशान रहते; हर जगह कयामत का शोर होता। लेकिन यहाँ सब कुछ पहले से तय है, उसी के अनुसार सारे काम घड़ी की सुई की तरह निश्चित गति से हुए जा रहे हैं! न ऑफिस में दौड़धूप, न सभा में धक्कम-घुक्का!"⁶⁰ अंग्रेजों की सच्चाई का बड़ा ही मार्मिक वर्णन एक और स्थान पर बेनीपुरी ने किया है— "...इनके जीवन में कितनी सच्चाई है! ट्रेन पर चढ़ लीजिए, स्टेशन पर जहाँ से आना बताइएगा, उतने ही पैसे लेंगे। किन्तु कोई झूठ बताता ही नहीं है। मोड़ पर अखबार पड़े हैं, पैसे रख दीजिए, अखबार ले जाइए, शाम को अखबारवाला आएगा और अपने पैसे ले जाएगा। न पैसे कोई छूता है, न बिना पैसे का कोई अखबार लेता है।"⁶¹

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि बेनीपुरी एक प्रखर समाजवादी नेता और अच्छे चिंतक थे। साथ ही साथ वे महात्मा गांधी के विचारों से प्रभावित थे। अतः उनके विचारों में गांधीवादी दर्शन दिखाई देता है। इस प्रकार दलितों, पतितों, निर्धनों के प्रति सहानुभूति और शोषकों, उत्पीड़कों के प्रति आक्रोश ही नहीं बल्कि

विरोध का जुझारूपन और संघर्ष भी उनकी डायरी में मिलता है। बेनीपुरी वह साहित्यकार हैं जो उत्तम सामाजिक संरचना के लिए सदैव जूझते हुए प्रयासरत रहे। उहराव उनकी प्रकृति में नहीं था। एक चेतना संपन्न और जागरूक लेखक होने के नाते बेनीपुरी ने अपने चारों ओर फैले अन्याय, पाखंड, भ्रष्टाचार, धूर्तता, विसंगति एवं विद्रुपताओं को बहुत नज़दीक देखा और अनुभव किया। सरकारी व्यवस्था के भ्रष्टाचार से समाज में ज़हर घुल चुका है। यदि सामान्य व्यक्ति सच्चाई से रहना भी चाहे तो नहीं रह सकता क्योंकि सरकारी व्यवस्था उसे अन्याय और झूठ के लिए मजबूर कर देगी। बेनीपुरी ने नए समाज के निर्माण के लिए व्यक्ति से लेकर समस्त समाज की स्थितियाँ एवं समस्याओं का चित्रण किया है। उनकी डायरी से उनकी सामाजिक विचारधारा पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है।

(घ) साहित्यिक, भाषा एवं कला दृष्टि

बेनीपुरी के साहित्य संबंधी विचार उनकी डायरी में देखने को मिलते हैं। उनका दृष्टिकोण पूर्ण मानवतावादी है इसलिए उनके साहित्य की प्रेरणा का स्वर मानवतावादी है। बेनीपुरी ने अपनी डायरी में साहित्य और कला के विषय में भी विचार किया है। वे जीवन में कला के महत्त्व को स्वीकार करते हैं।

बेनीपुरी अपनी आत्मकथा लेख 'मुझे याद है' में लिखते हैं—“पच्चीस वर्षों तक संघर्ष में रहने, चौदह बार जेलों की हवा खाने और जिन्दगी के साढ़े सात साल जेलों में बिताने, सदा अपने को ज्वालामुखी के मुँह में फँकते रहने और उसकी झुलस और अंगार लिये बाहर निकलने से मेरी प्रतिभा में पंख ही लगे हैं। मेरी रचनाओं में, भाषा में, शैली में जो कुछ जिन्दगी है, जिन्दादिली है, रवानी है, सब कुछ अग्नि स्थान का ही फल है।... और जेल से बढ़कर कौन सी जगह है जहाँ एकाग्रचित हो, साहित्य सेवा की जाए?”⁶²

बेनीपुरी का साहित्यिक जीवन जेल में भी जारी रहा है। इतना ही नहीं उनका अध्ययन का क्रम भी चलता रहा। इस सम्बन्ध में स्वयं बेनीपुरी लिखते हैं—“इस लम्बी जेल यात्रा ने मेरी साहित्यिक प्रवृत्ति को नीचे से उभारकर फिर ऊपर ला दिया।”⁶³ रामधारी सिंह दिनकर बेनीपुरी के संबंध में लिखते हैं—“नाम से दिनकर मैं था, किन्तु, काम से असली सूर्य बेनीपुरी जी थे।”⁶⁴ बेनीपुरी ने जो कुछ

भी लिखा है, अपने जीवन के प्रति आस्थावान एवं अपने प्रति ईमानदार होकर लिखा है। बेनीपुरी के शब्दों में—“मेरी चीजे प्रायः हृदय से निकली हैं और हृदय को अपील करती रही हैं, जो कविता का स्रोत हैं।”⁶⁵ अपने साहित्यिक जीवन के विषय में 18 मार्च, 1952 की डायरी में लिखते हैं—“अपने साहित्यिक जीवन पर ही क्यों न एक दृष्टि डाल लूँ? किन्तु यह कहानी भी क्या छोटी है? कितने खट्टे-मीठे ही नहीं, तीते-तीते अनुभव? नहीं, रचनाओं के नाम-निर्देश मात्र पर ही सन्तोष करूँ।”⁶⁶

बेनीपुरी का साहित्यिक जीवन पत्रकारिता से आरंभ हुआ था लेकिन उनका मन साहित्य रचना में अधिक लगता था। इस बात का जिक्र 23 मार्च 1952 की डायरी में करते हैं—“यों कुल मिलाकर 16 पत्रों से सम्बन्ध सम्पादन कला में भी कई नवीनताएँ जोड़ी। किन्तु यह सच है कि अब सम्पादन की अपेक्षा मेरा मन साहित्य-रचना में अधिक रमता है।”⁶⁷ बेनीपुरी की डायरी में साहित्यिक विषयक संबंधी अलग-अलग प्रसंग, मान्यताएँ और उनके साहित्यिक योगदान संबंध विवेचन प्राप्त होता है। उदाहरण के लिए, 25 अप्रैल, 1950 की डायरी में लिखते हैं—“साहित्य के साथ साधुता संबद्ध हैं। हृदय में आर्द्रता प्रहार पर भी मुस्कराने की क्षमता; इसका अभाव रहा, तो साहित्यिकता कहाँ?”⁶⁸

बेनीपुरी का यह स्पष्ट मानना है कि किसी भी क्षेत्र में ईमानदारी नहीं है, चारों ओर बेईमानी है। चाहे वो साहित्य का क्षेत्र ही क्यों न हो। ईमानदारी एवं बेईमानी के संदर्भ में हरिशंकर परसाई अपने निबंध ‘पगडंडियों का ज़माना’ संग्रह में सटीक टिप्पणी करते हुए लिखते हैं—“हर सत्य के हाथ में झूठ का प्रमाणपत्र है। ईमान के पास बेईमानी की सिफारिशी चिट्ठी न हो, तो कोई उसे दो कौड़ी का न पूछे।”⁶⁹ ईमानदारी की स्वतंत्र भारत में धज्जियाँ उड़ाई जा रही हैं। अगर कोई आदमी ईमानदार है तो उसका सब मखौल उड़ाते हैं। ईमानदारी अब प्रतिष्ठा की नहीं अब बेवकूफी की प्रतीक बन गई है। देखकर लगता है समाज में ईमानदारी और नैतिकता बिल्कुल खत्म हो गई है।

ईमानदारी से जीने की आशा रखने वाले की मौत होती है। 26 अगस्त, 1959 की डायरी में लिखते हैं—“मुझसे मेरे मित्र कहा करते हैं कि यदि तुम राजनीति में नहीं होते, तो साहित्य में और बहुत-कुछ किए होते। मैंने कई बार

इसका उत्तर दिया है। किन्तु क्या अब साहित्य भी राजनीतिक गन्दगियों, उलझनों और षड्यन्त्रों से परे है?"⁷⁰ बेनीपुरी ने अपने साहित्य में राजनीति और साहित्य के रिश्ते को स्पष्ट करने की कोशिश की है। 'बेनीपुरी ग्रंथावली' के संपादक 'सुरेश शर्मा' लिखते हैं—“वे साहित्य को राजनीति का पिछलग्गू नहीं बल्कि उसको बराबरी का सहयोगी मानते हैं। इसलिए वे कहते हैं कि साहित्य की दिशा स्वयं साहित्यकार तय करेंगे, राजनीतिज्ञ नहीं।”⁷¹

बेनीपुरी ने अपनी डायरी में साहित्य जगत में होने वाले विवादों की भी चर्चा की है। 2 दिसम्बर, 1950 की डायरी में लिखते हैं—“जिस समय से साहित्य-क्षेत्र में प्रवेश किया, साहित्यिकों की पारस्परिक नोक-झोंक देखता आ रहा हूँ। द्विवेदी जी और चतुर्वेदी जी की छेड़खानियाँ देखीं। चतुर्वेदी जी (स्वर्गीय-जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी) जब कभी मौका मिलता, द्विवेदी जी (महावीर प्रसाद द्विवेदी) से चुटकियाँ लेने में कभी नहीं चूकते! देव और बिहारी को लेकर पं० पद्मसिंह शर्मा और मिश्र बन्धुओं की नोक-झोंक भी देखी! लाला भगवान दीन जी ने दास-कवि को लेकर भी एक साहित्यिक विवाद खड़ा किया। यों साहित्यिकों में भी झगड़े देखे हैं। उन्हें भी लड़ते देखा है। किन्तु, यह झगड़ा ! छीः। क्या हम सचमुच साहित्यिक हैं ? इतने पतन की आशा हमने तो नहीं ही की थी !”⁷² डायरी में बेनीपुरी अपनी साहित्यिक गतिविधियों और उनकी योजनाओं को भी दर्ज कर लेते थे। डायरी में बेनीपुरी अपनी साहित्यिक योजनाओं के बारे में उल्लेख करते हैं। 13 नवम्बर, 1951 की डायरी में लिखते हैं—“सोचता हूँ, प्रायः तय कर चुका हूँ कि अगले साल से अपना प्रकाशन शुरू करूँगा। सबसे पहले अपनी पुस्तकों का सस्ता संस्करण “ग्रंथावली” के रूप में निकालूँगा। किसी धनी मित्र को इसमें शामिल करूँगा। फिर देखा जाएगा।”⁷³ उनकी डायरी में अनेक जगहों पर ग्रंथावली प्रकाशित करने के लिए निरंतर भाग-दौड़ का उल्लेख मिलता है। इस प्रकार बेनीपुरी अपनी आगामी साहित्यिक योजनाओं के बारे में भी अपनी डायरी में लिखते हैं। एक बात (आर्थिक दृष्टि से) ध्यान देने योग्य है कि बेनीपुरी ने अपनी ‘ग्रंथावली’ प्रकाशन के लिए धनी मित्र को शामिल करने के लिए कहा है, यह उनकी बात इस बात को सिद्ध करती है कि उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी।

अपनी रचनाओं को प्रकाशित कराने के लिए बेनीपुरी सदा चिंतित रहे। रचनाओं के प्रकाशन हेतु 10 फरवरी, 1952 की डायरी में लिखते हैं—“जो अधूरी पुस्तकें हैं, उन्हें पटना पहुँचकर ही समाप्त कर लूँगा। ‘जोश’ और ‘इकबाल’ के संग्रहों की प्रेस कापियाँ तैयार करना और भूमिका लिख लेना। ‘रवीन्द्र-भारती’ को भी छपवा लेना और ‘ट्यूलिप्स’ की भूमिकाएँ भी लिखकर इन्हें छपवाने का प्रबन्ध करना है। ‘पैरों में पंख बाँधकर’, ‘अमर ज्योति’ और ‘कुछ वे, कुछ मैं’ की पूरी कापियाँ लोक सेवक प्रकाशन के पास भेज देना है, अतिशीघ्र। ‘दीवारें और जंजीरे’ तो पूरी कर ही लेनी है और उसे चेतना प्रकाशन, हैदराबाद को दे देना।”⁷⁴ उनकी डायरी से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि बेनीपुरी अपने साहित्य के प्रकाशन हेतु सदैव परेशान रहे।

बेनीपुरी का साहित्य के प्रति क्रांतिकारी दृष्टिकोण था, ये क्रांतिकारी दृष्टि उनकी 30 अप्रैल, 1950 की डायरी में दिखती है—“स्वभाव से मैं क्रान्तिवादी हूँ—सिर्फ युग के अनुसार चलने की ही इच्छा नहीं रही, युग को बदलने की भी चेष्टा रही। युग ने मेरी लेखनी को अपना माध्यम बनाया है, यह हमेशा महसूस किया है मैंने। अपनी रचनाओं में मैं ही नहीं बोलता, युग भी बोलता है। हमारी पुस्तक का युग, क्रान्ति का युग रहा है। इसलिए, मेरी लेखनी से क्रान्ति भी प्रायः बोली है।”⁷⁵

बेनीपुरी जी ने अपनी डायरी में साहित्यिक कृतियों (विदेशी) का भी परिचय अपनी प्रतिक्रियाओं के साथ उल्लेखित किया है। उदाहरण के लिए— ‘रोमाँ रोलाँ’ की ‘जीन क्रिस्तोफे’, सिलोने का उपन्यास ‘बेड ऐंड वाइन’, इमर्सन की रचनाएँ, चर्चिल की जीवनी, चेखव और शेली की जीवनियाँ, गोर्की की ‘मदर’ और आत्मकथा आदि पुस्तकों का परिचय एवं लेखकों का योगदान की चर्चा साथ ही साथ अपनी प्रतिक्रियाएँ भी व्यक्त की हैं।

बेनीपुरी ने अपनी डायरी में व्यक्ति के रूप में ही नहीं, बल्कि साहित्यकार, राजनीतिक नेता तथा समाज सुधारक के रूप में अपने अनेकों अनुभवों को शब्दबद्ध किया है। “बेनीपुरी का साहित्यकार वाला रूप उनके अन्य रूपों की तुलना में अधिक विख्यात है। उनकी बहुमुखी प्रतिभा ने हिन्दी साहित्य का गौरव बढ़ाया है।”⁷⁶ बेनीपुरी की दीर्घकालीन साहित्य साधना में अनेक छोटे-बड़े साहित्यकार

उनके घनिष्ठ संपर्क में आए। बेनीपुरी का कार्यक्षेत्र प्रायः बिहार ही रहा, लेकिन जब 'बालक' (पत्रिका) की छपाई काशी में शुरू हुई, बाहर के साहित्यिकों से उनका संपर्क धीरे-धीरे बढ़ा। इस बात को स्पष्ट करते हुए अपनी आत्मकथा लेख 'मुझे याद है' में लिखते हैं—“श्री जगन्नाथदासजी 'रत्नाकर', पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', लाला भगवानदीनजी 'दीन', पं. किशोरीलाल गोस्वामी, कवि चक्रवर्ती देवीप्रसाद, बाबू श्यामसुंदर दास, श्री बाबूराव विष्णु पराङ्कर, प्रेमचन्दजी, प्रसादजी, रायकृष्ण दास, श्री रामचन्द्र वर्मा, पं. रामचन्द्र शुक्ल एक-से-एक अगङ्गदत्त विद्वान, साहित्यस्रष्टा! अपनी-अपनी जगह पर सब अनुपम! हम लोगों के साहित्याचार्य पं. चन्द्रशेखर शास्त्रीजी भी वहीं रहे हुए थे उन दिनों। विनोद, बेढब, उग्र, सुमन, लक्ष्मीनारायण मिश्र, वाचस्पति पाठक, फिर हमारे बिहार के मनोरंजन, सुधांशु, द्विज, ठाकुर मंगल प्रसाद सिंह आदि वहीं अपनी प्रतिभा की प्रातकिरणें छिटका रहे थे।”⁷⁷ उनकी डायरी में साहित्य-संसार के बड़े-बड़े साहित्यकार—‘शिवपूजन सहाय’, ‘माखनलाल चतुर्वेदी, सुमित्रानंदन पंत, महादेवी वर्मा, रामधारी सिंह दिनकर, हरिवंशराय बच्चन, उपेन्द्रनाथ अशक, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', राजा राधिकारमण सिंह आदि साहित्यकारों के प्रसंग उल्लेखित हैं। वे 24 जुलाई, 1950 की डायरी में वे महादेवी वर्मा और सुमित्रानंदन पंत से हुई भेंट का वर्णन करते हैं। पंतजी के विषय में लिखते हैं—“जब तक रहा, पंतजी ही बोलते रहे— इस प्रकार लगातार बोलते हुए उन्हें नहीं देखा था। सांस्कृतिक अभ्युत्थान पर कहने लगे। जैसी देश की दशा है, कला भी तो वैसी ही बनेगी। जिस देश में दरिद्रता है, उससे उत्पन्न कुरूपता है, जिन्दगी में ठहराव है, सङ्गठन है—भला वहाँ प्रवाहमय, तरल, सुन्दर और पुष्ट रचनाएँ कहाँ से होंगी? हिन्दी-साहित्य हिन्दी-क्षेत्र की जड़ता से आच्छन्न है। जब तक यह जड़ता दूर नहीं होती, उच्च कोटि का साहित्य के सृजन हम कैसे कर सकेंगे?”⁷⁸ इस प्रकार कुछ लोगों ने साहित्यिक परामर्श भी किया; जिनमें आचार्य नरेन्द्र देव, आचार्य शिवपूजन सहाय, प्रेमचन्द, जयशंकर प्रसाद, निराला, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत, डॉ० हरिवंशराय बच्चन, गंगाशरण सिंह और रामधारी सिंह 'दिनकर' आदि मित्र थे। अपने साहित्यिक मित्रों के साथ छोटी-छोटी साहित्यिक गोष्ठियों में बेनीपुरी अवश्य शामिल होते थे। नये साहित्यकारों को प्रेरणा देने का कार्य भी बेनीपुरी अपने भाषण

के माध्यम से करते थे। डायरी में वे हिंदी साहित्य और उसकी समस्याओं का जिक्र करते हैं। उन्होंने कलकत्ता में शिशिर, भादुड़ी द्वारा खेला गया नाटक 'माइकेल मधुसूदन' देखा तथा 7 जुलाई 1950 की डायरी में लिखा—“क्या हिन्दी का रंगमंच ऐसा हो सकेगा? क्या हमारे यहाँ भी कोई शिशिर पैदा हो सकेगा? और, इस रंगमंच ओर शिशिर को पोषण करने वाली बँगभाषी जनता की तरह हमारी जनता कब सुरुचि सम्पन्न होगी? मधुसूदन की तरह भारतेन्दु के जीवन पर क्या एक उत्तम नाटक नहीं लिखा जा सकता?... बेनीपुरी तुम्हें इस दिशा में प्रयत्न करते ही रहना है—करते ही रहना है।”⁷⁹ अतः बेनीपुरी हिंदी साहित्य के क्षेत्र को हर दृष्टि से सुरुचिसम्पन्न बनाना चाहते थे। उन्होंने कहा हमें इस दिशा में प्रयत्न करते ही रहना है। भाषा के संबंध में बेनीपुरी लिखते हैं—“किसी भी भाषा की मूलभूति जनता की जिह्व है। यदि वह भाषा जनता की जवान पर नहीं चढ़ी, तो फिर उसमें पोथे लिखते जाइए, न उसमें ताकत आएगी और न वह फल और फूल सकेगी।”⁸⁰

बेनीपुरी ने हिंदी के भाषा प्रचार एवं प्रसार के लिए भी कुछ कम योगदान नहीं दिया। बिहार में हिंदी साहित्य सम्मेलन के अधूरे भवन को पूरा कराने में उन्होंने प्रशंसनीय प्रयत्न किया था। इसके अलावा बिहार के अहिंदी भाषी क्षेत्रों में उन्होंने हिंदी भाषा के प्रचार के लिए व्यापक प्रबंध किया था। इस प्रकार बिहार में हिंदी भाषा के लिए एक नई जागृति उत्पन्न हुई। उन्होंने अपने जीवन पर्यन्त हिंदी भाषा की सेवा की है। जब वे विदेश—यात्रा में गए थे तब ब्रिटिश म्यूजियम को देखा था। वहाँ कला के उपादानों के साथ—साथ पुस्तकों और पाण्डुलिपियों का विशाल संग्रह भी है। उनकी तीन किताबें वहाँ थीं। 'लाल रूस', 'बिहारी सत्सई' और 'विधापति की पदावली'। वहाँ के हिंदी विभागध्यक्ष ने हमारे देश की हिंदी की अच्छी पुस्तकों की सूची भेजने के लिए कहा तब बेनीपुरी ने पहले उद्धरण का जिक्र किया था।

लंदन में 21 मई 1951 ई० को हिंदी केंद्र की स्थापना की गई थी और उसका उद्घाटन भी बेनीपुरी के कर कमलों से किया गया था। छोटा सा भाषण देते हुए उन्होंने कहा था—“इस केन्द्र के उद्घाटन करने के सौभाग्य को मैंने अपनी

हिन्दी सेवा में एक उल्लेख योग्य प्रमुख कार्य बतलाया और लोगों को उत्साहित किया कि भारत से आप लोगों को सम्यक् सहायता मिलती रहेगी।”⁸¹

हिंदी केंद्र की भावी-योजना के संबंध में और हिंदी के विकास का सपना बताते हुए फिर उन्होंने आगे बताया था कि—“इस केन्द्र की लन्दन में अपनी एक जगह होगी, अपना भवन होगा, एक सुन्दर पुस्तकालय इसके साथ संलग्न होगा, जहाँ हिन्दी का पूरा साहित्य भी संग्रहीत होगा, यहाँ हिन्दी के विद्वान आकर बसेरा लेंगे और हिन्दी का सन्देश अन्य भाषा-भाषियों में प्रसारित करेंगे।”⁸² बेनीपुरी हिंदी के लिए देश-विदेश में जितनी अधिक सेवा हो सके उतनी करना चाहते थे। वास्तव में हिंदी की हालत देखकर उनके मन में बहुत दुख होता था इसके संबंध में उन्होंने बताया कि—“निस्सन्देह इस केन्द्र की स्थापना के लिए प्रेरणा देकर मैंने अपने ऊपर एक बड़ी जिम्मेवारी ली है। बेचारी हिन्दी की बड़ी बुरी हालत है।”⁸³ ब्रिटिश फेस्टीवल में हिस्सा लेने के लिए अंग्रेजी सरकार ने हमारे देश के छः पत्रकारों को 1951 ई० में मेहमान बनाकर निमंत्रित किया था, जिसमें बेनीपुरी भी शामिल थे। जब वे लंदन में थे तब ‘डेली हेंरल्ड’ पत्रिका के सम्पर्क में आये थे। इसके संबंध में वे लिखते हैं—“बार-बार सोचता था, हिन्दी पत्रों को ऐसा सौभाग्य कब प्राप्त होगा। जो तैंतीस करोड़ आदमियों की राष्ट्रभाषा हो चुकी है, उसका भविष्य अति महान तो है ही; किन्तु हिन्दी के पत्र संचालकों और पत्रकारों को अभी कितनी मेहनत करनी है।”⁸⁴

विदेश-यात्रा के दौरान एक बार बेनीपुरी शेक्सपियर के गाँव में चले गए। महान् अंग्रेजी नाटककार के मकान को देखकर लिखते हैं—“प्रणाम करो इस स्थान को ओ संसार के मानवो ! इसी स्थान पर शेक्सपीअर जन्मा था, जिसने मानवता को गौरव दिया। शेक्सपीअर या कालिदास किसी खास देश के नहीं होते! वे सारी मानवता के हैं—सारी मानवता के आभूषण हैं, श्रृंगार हैं। सारे मानव उसके निकट सर झुकाएँ—सादर, सविनय!”⁸⁵

मराठी भाषा के संबंध में भी बेनीपुरी ने लिखा है। दो मित्र जब मराठी में बातें करते हैं तो बेनीपुरी लिखते हैं कि—“दोनों ने खूब मराठी के चने फोड़े। हाँ, जब

लोग मराठी में बोलते हैं, तो मुझे लगता है, भाँड़ में एक ही साथ कई सेर चने भड़-भड़ फूट रहे हों! कैसी मर्दानी भाषा है यह।”⁸⁶

साहित्य और राजनीति के प्रभुत्व के संबंध में लिखते हैं—“हमारे देश में सदा सरस्वती के सपूतों की महत्ता राजनीतिज्ञों के ऊपर रही है। अकबर की अपेक्षा तुलसीदास का प्रभाव भारतीय जीवन पर अधिक है। इस युग में भी रवीन्द्रनाथ का जैसा प्रभाव हम पर है, महान नेहरू का वैसा नहीं है।”⁸⁷

बेनीपुरी नागरी लिपि के समर्थक थे। राष्ट्रभाषा हिंदी के विकास के सम्बन्ध में उनके विचार सुदृढ़ और सुलझे हुए थे। बेनीपुरी के सुझाव साहित्य की उन्नति के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण हैं।

साहित्यकारों के कर्तव्यों पर प्रकाश डालते हुए बेनीपुरी जी ने लिखा है—“एक साहित्यिक की लेखनी सिर्फ लेखनी नहीं है—वह तलवार भी है, नशत्र भी; कुदाल भी है, और झाड़ू भी। गन्दगियों को हमें साफ करना है, बंजर भूमि को कोड़ना है। सड़े धावों को चीरकर पीव निकाल देना है।... तभी उस समाज में हम सुन्दर साहित्य का निर्माण करेंगे।”⁸⁸ उन्होंने जीवन पर्यन्त हिंदी भाषा की सेवा की; किन्तु उनका विचार था कि—“भाषा का प्रचार जोर-जबरदस्ती से, संख्या के वल पर, शासन के डण्डे से नहीं किया जा सकता।”⁸⁹ बेनीपुरी का साहित्य जहाँ गुणों की दृष्टि से उत्कृष्ट है, वहाँ परिमाण की दृष्टि से भी वजन वाला है।

बेनीपुरी की विदेश यात्रा डायरी केवल मनोरंजन या जिज्ञासा वृत्ति के लिए नहीं थी, उसमें सिर्फ वर्णन ही नहीं है किन्तु एक कलाकार, साहित्यकार की लेखनी से किया गया विदेश-यात्रा के विविध अनुभवों का रोचक चित्रण है। इसके साथ ही साथ अपनी विदेश-यात्रा में लेखक ने वहाँ के राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक इतिहास को भी प्रस्तुत कर दिया है। इसमें आत्मगीता अथवा मेमोयर्स के

स्थान दिया है। इटली के प्रसिद्ध लेखक हगनात्सियों सिलोने का भी परिचय बेनीपुरी ने लिखा है—“सिलोने मध्यम कद के बड़े भव्य पुरुष दीखे। ललाट काफी बड़ा, आँखें बड़ी सलोनी। स्वभाव शान्त। दिक्कत यह कि वह भी अंग्रेजी नहीं जानते; लेकिन उनकी पत्नी काफी होशियार, अंग्रेजी जाननेवाली। उन्हीं के माध्यम से उनसे बातें हुई।”⁹⁰ बेनीपुरी की डायरी से पता चलता है कि यूरोपीय देश के सम्मान में कोई कसर नहीं छोड़ते थे। साहित्यकारों के सम्मान के विषय में एक स्थान पर बेनीपुरी ने लिखा है—“विक्टर ह्यूगो की एक सौ पचासवीं जयन्ती 26 मई से 6 जून तक मनाई जाएगी। फ्रांस के राष्ट्रपति और प्रधान मंत्री पैंथियन में जाकर ह्यूगो की कब्र पर फूल चढ़ाएँगे और उस विशाल इमारत पर राज्य की ओर से दीपावली की जाएगी।... काश पंडित नेहरू हमारे तुलसीदास के स्मारक पर फूल चढ़ा आते ?”⁹¹

बेनीपुरी का मानना है कि साहित्यिक व्यक्ति जहाँ भी रहता है वह साहित्यिक बना रहता है। उनकी राजनीति का माध्यम प्रमुख रूप से साहित्य ही रहा है। वे इसके संबंध में कहते हैं—“मेरे बहुत से मित्र तो राजनीति से दूर रहे—उन्होंने क्या मुझसे साहित्य में कुछ अधिक कर लिया है ?”⁹²

बेनीपुरी में देशभक्ति, समाजवाद, पत्रकारिता और उच्चकोटि के साहित्य-सृजन जैसी प्रवृत्तियों का अद्भुत मेल है। साहित्य और राजनीति के दोनों तराजू में वे सदैव कर्तव्यनिष्ठ रहे और अन्य प्रवृत्तियों में भी वे सदैव कार्यशील रहे। इस तरह उनके जीवन में साहित्यकारिता, पत्रकारिता और राजनेता की त्रिवेणी प्रवाहित हुई थी। बेनीपुरी की लेखनी निरंतर चालीस साल तक साहित्य-साधना में चलती रही और विभिन्न साहित्य-विधा के फूलों से हिंदी-साहित्य के बगीचे को सजाती रही। “वस्तुतः उनका जीवन और उनका साहित्य उनके संकल्पों का ही परिणाम है। बेनीपुरी ग्रंथावली के दसों खंड अपनी आलमारी में सजे रूप में देखने को उनकी बड़ी तमन्ना थी। इसलिए अपने जीवन-काल में ही उन्होंने दसों खंडों के प्रकाशन का संकल्प किया था।”⁹³ जिसके परिणामस्वरूप दो खंडों का सफल प्रकाशन हो सका था।

बेनीपुरी साहित्य से विशेष लगाव रखते थे। अपनी यात्रा डायरी 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' में लिखते हैं—“यों मेरी आदत है कि जहाँ जाता हूँ, उस सम्बन्ध का साहित्य अवश्य खरीद लेता हूँ...”⁹⁴ बेनीपुरी केवल अपना और अपने पाठकों का मनोरंजन ही करना नहीं चाहते किन्तु हमारे देश के साहित्यकारों, पत्रकारों, राजनीतिकों, कलाकारों और संस्कृति के ठेकेदारों को अपने कर्तव्य की उत्तरदायित्व की याद भी दिलाना चाहते हैं।

उनकी डायरी से ज्ञात होता है कि बेनीपुरी साहित्य के साथ-साथ कला में भी विशेष रुचि रखते थे। बेनीपुरी को कलाओं से विशेष लगाव था। विविध कला क्षेत्रों से अनुभव इकट्ठा करने की रुचि वे रखते थे। उनका मानना था—“कला संबंधी पुस्तकें पढ़कर कला का ज्ञान ग्रहण करना जितना जरूरी है उससे कई गुणा जरूरी है कला को प्रत्यक्ष देखना।”⁹⁵ क्योंकि कला को प्रत्यक्ष देखने का आनन्द ही कुछ अलग होता है। बेनीपुरी कलाकारों से मिलकर बहुत खुश होते थे, इसलिए वे कलाकारों से मिलने का मौका कभी नहीं छोड़ते। चाहें वे कलाकार किसी भी जगत से संबंधित हों। जैसे—लोक कला, चित्रकला, शिल्प तथा मूर्तिकला क्षेत्र, संगीतकला, नाट्यकला, साहित्य जगत् आदि।

कला के संबंध में बेनीपुरी 20 जनवरी, 1955 की डायरी में लिखते हैं—“कला यदि सच्ची कला हो और उसकी आराधना श्रद्धा से की जाए तो वह फल देती है। जीवन में नहीं तो मरण के बाद तो अमरों में गिनती होती है।”⁹⁶ उन्होंने यूरोपीय देशों में संगीतकला के संबंध में जो देखा और सुना उनकी अभिव्यक्ति यात्रा के समय जो डायरियाँ लिखीं उसमें की है। यूरोपीय देशों में “सेवेल—थियेटर में एक संगीत रूप का”⁹⁷, “पेरिस में ओपेरा हाउस के संगीत के जल्से का”⁹⁸ वर्णन किया है। विशेषकर फ्रांस की नूतन संगीत कला का वर्णन उन्होंने यात्रा डायरी 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' में बड़े ही प्रभावात्मक रूप से किया है।

यूरोपीय संगीत—स्वोयनवर्ग के बारह सुरों वाले संगीत का वर्णन बेनीपुरी डायरी में इस प्रकार करते हैं—“...यह तो यूरोपीय संगीत का आधुनिकतम रूप स्वोयनवर्ग का संगीत था—सात सुरोंवाला नहीं, बारह सुरोंवाला! जब वह ऊपर की

और बढ़ता, लगता, क्रुद्ध समुद्र में हिलोरे-पर-हिलोरे उठ रहे हैं, ऐसा लगता, हम भी उसमें फँस गए हैं और कभी तरंगे हमें सात ताड़ ऊँचे और कभी सात ताड़ नीचे फेंक रही हैं! बीच-बीच में जैसे बिजली कड़क पड़ी! और जब वह नीचे उतरता तो लगता; अब हम हिमालय की शान्त हिमानी में आ गए हैं, जहाँ सुरों के स्थान में जरा स्पन्दन है; कम्पन है, अरे, अब तो वह भी नहीं, बिल्कुल शान्ति। किन्तु यह न समझिए कि साज बन्द हो गए, देखिए सबके हाथ चल ही रहे हैं—बाजे बज रहे हैं, किन्तु ऐसे धीमे कि स्वर मूर्तिमान नहीं हो पाता। उफ कैसा चमत्कार!”⁹⁹

इस प्रकार बेनीपुरी ने अपनी डायरी में संगीतकला का भी समावेश कर दिया है और उस संगीत-कला के वर्णन में साहित्यिकता स्पष्ट देखी जा सकती है। संगीतकला के साथ-साथ उन्होंने यात्रा के समय लिखी डायरी में लंदन और पेरिस के रंगमंच और नाट्यकला का भी अंतरंग परिचय दिया है। नाट्यकला के प्रमुख अंगों जैसे—रंगमंच, अभिनय, अभिनेता के साथ ही दर्शकों द्वारा अभिनेताओं के मूल्यांकन करने की पद्धति को भी बेनीपुरी ने अपनी डायरी में लिखा है—“नाटक के पात्र-पात्रियों के सम्मान का क्या कहना! नाटक समाप्त होने पर लोग, अपने देश की तरह झटपट भागते नहीं हैं। तालियाँ पीटते रहते हैं, जब तक कि एक-एक कर सभी पात्र-पात्रियाँ आकर स्टेज पर खड़े नहीं हो जाएँ। तब परदा गिरता है, तालियाँ गड़गड़ाती हैं, फिर परदा उठता है, फिर तालियाँ गड़गड़ाती हैं। तीन बार यह क्रम। यदि इसके बाद भी तालियाँ गड़गड़ाती रहीं, तो मुख्य पात्र और पात्री परदे के बाहर आकर सिर झुकाते और यदि जरूरत समझते, तो कुछ कहते हैं!”¹⁰⁰ हमारे देश में सम्मान की यह पद्धति नहीं है। बेनीपुरी ने यात्रा के समय जो डायरी लिखीं उनसे स्पष्ट होता है कि उन्होंने विदेशों के धर्म, कला एवं संस्कृति के वर्णन में उन्हीं बातों की ओर अधिक ध्यान केंद्रित किया जो हमारे देश में नहीं है। कला के क्षेत्र में हमारे देश का अभाव पिछड़ापन सिद्ध करता है।

बेनीपुरी ने यूरोपीय देशों की चित्रकला और मूर्तिकला का भी अवलोकन किया है। उनकी डायरी से पता चलता है कि इंग्लैंड में चित्रकला और मूर्तिकला की पूजा होती है। फ्रांस के संबंध में कि वह केवल क्रांति की ही नहीं, कला की भी

भूमि है। मूर्तिकला में पेरिस का अलग ही स्थान है। अपनी डायरी में देवी जोन की मूर्ति, डायना की मूर्ति, प्राचीन और आधुनिक विविध मूर्तियों की प्रशंसा बेनीपुरी ने की है। वहाँ की चित्रकला एवं मूर्तिकला वहाँ के देश की कला-प्रगति का प्रमाण देते हैं। डायरी में वे पेरिस की कला-प्रदर्शनी का वर्णन करते हैं। इटली की यात्रा करते समय बेनीपुरी ने एक कला-प्रदर्शनी को देखा और उसको डायरी में कुछ इस प्रकार अभिव्यक्त किया—“इटली यूरोप में कलाभूमि रही भी है। आज भी, अपने दुर्दिन के दिनों में भी, इटली अपने उस प्राचीन कला गौरव को नहीं भूली है। प्रदर्शनी में चित्रकला और मूर्तिकला, दोनों के नमूने हैं। पेरिस में हमने जिसे छोटे पैमाने पर, गिने-चुने रूप में देखा था, उसी का यह बृहद्, विशाल रूप है! मूर्तिकला के नाम पर संगमरमर के, काले पत्थर के, इस्पात के, ताँबे के बड़े-बड़े किंरूपकिमाकर, ढोके और चित्रकला के नाम पर रंगों और रेखाओं का वह गड्ढमगड्ढ कि आप दिमाग खरोंचकर भी नहीं जान पाएँ कि यह क्या है?”¹⁰¹ यात्रा के दौरान बेनीपुरी अपनी डायरी में अधिकतर वहाँ की साहित्यकला, संगीतकला, नृत्यकला, नाट्यकला, चित्रकला, मूर्तिकला आदि कलाओं का बड़ी ही लालसा के साथ वर्णन तथा अवलोकन भी करते थे।

वे अपने आप को छोटा-मोटा कलाकार ही समझते थे। बेनीपुरी स्वयं अपने कलाकार रूप की बात करते हुए लिखते हैं—“जी, मैं भी एक छोटा-मोटा कलाकार ही हूँ। जिसे आप शरीर की भंगिमा द्वारा प्रकट करते हैं, उसे कलम द्वारा उतारने की कोशिश करता हूँ।”¹⁰² उनकी डायरी से पता चलता है कि बेनीपुरी कला का एवं कलाकारों का बहुत सम्मान करते थे। जब वे यूरोप यात्रा पर गये, तब उन्हें इस बात पर अफसोस हुआ कि कलाकारों का जो सम्मान यूरोप में होता है, वैसा सम्मान हमारे देश के कलाकारों को नहीं दिया जाता।

पेरिस घूमते समय उन्होंने लिखा कि—“बार-बार सोचता, काश, हमारे देश में चित्रकों, लेखकों और कलाकारों की ऐसी पूजा हो पाती!”¹⁰³ उनकी कला की विशेषता सम्पूर्ण साहित्य में उभर कर आई है। बेनीपुरी ने दिल, दिमाग एवं निष्ठा से हमेशा पत्रकारिता, राजनीति एवं समाज सेवा में कार्यरत रहते हुए भी साहित्यिक

प्रतिभा में कोई रुकावट नहीं आने दी। साहित्य और कला के विविध पक्षों पर बेनीपुरी सोचते हैं एवं जीवन में कला के महत्त्व को मानते हैं।

(ङ) पारिवारिक स्थिति एवं आत्म-संघर्ष

साहित्यिक, राजनीतिक और पत्रकारिता संबंधी अति व्यस्तताओं के बीच उन्होंने अपने परिवार के एक-एक सदस्य की मर्यादा को ध्यान में रखा। यदि हम परिवार को बेनीपुरी के डायरी साहित्य के अंतर्गत देखें तो उनका दृष्टिकोण परिवार को लेकर अत्यन्त सरल और सुलझा हुआ था।

परिवार सामाजिक संगठन की वह महत्त्वपूर्ण इकाई है जहाँ बच्चा जन्म लेता है, पलता है, बड़ा होता है और अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। अतः व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास परिवार पर निर्भर होता है। आचार-विचार भाषा और स्वभाव भी बच्चा परिवार से ग्रहण करता है। बेनीपुरी पर भी अपने परिवार का प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। डॉ० गजानन चव्हाण लिखते हैं—“बालक रामवृक्ष अपनी माता के लाड-प्यार में पला, बचपन में माँ के लाड-प्यार से वह कुछ-कुछ बिगड़ैल और ज़िद्दी बन गया था।”¹⁰⁴

बेनीपुरी की पढ़ाई अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि उनका विवाह हो गया। विवाह की यादों को उन्होंने अत्यधिक मधुर बताया है। इस समय उनकी आयु मात्र सोलह वर्ष की थी। उनकी धर्मपत्नी का नाम उमा रानी था। उमारानी अनपढ़ थीं, किंतु बेनीपुरी अपने वैवाहिक जीवन से पूर्णतः संतुष्ट थे। बेनीपुरी को अपनी धर्मपत्नी से अत्यधिक लगाव था। अपनी धर्मपत्नी के न होने की कल्पना से भी वे घबरा जाते थे। बेनीपुरी अपनी धर्मपत्नी उमारानी की भूमिका के संबंध में डायरी में लिखते हैं—“रानी—इस गँवार, अनपढ़ औरत ने किस तरह मेरी व्यक्तित्व को आच्छादित कर रखा है, मुझे स्वयं आश्चर्य होता है। उसके बिना किस प्रकार यह मेरा घर सूना-सूना लगता है। जब कभी सोचता हूँ, जब वह नहीं होगी तो मैं कैसे रहूँगा, तब घबरा उठता हूँ।”¹⁰⁵ बेनीपुरी पारिवारिक समस्याओं को जैसे-जैसे सुलझाना चाहते थे, वैसे-वैसे उसकी जटिलताओं में उलझते जाते थे।

बेनीपुरी के व्यक्तित्व में दुःसाहस और संघर्ष की भावना का गुण है। रामधारी सिंह दिनकर लिखते हैं कि—“जब तक स्वराज्य का आंदोलन चलता रहा, बेनीपुरी जी ने अपनी घर गृहस्थी की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। तब तक वे अपने सुयश का सौरभ पीकर जीते रहे थे, किन्तु जब यह निश्चित हो गया कि स्वराज्य की अब और लड़ाई नहीं लड़ी जाएगी, बेनीपुरी जी एक साथ साहित्य और परिवार की ओर जोर से झुक गये। उसी जोश में गाँव में उन्होंने एक भारी मकान बना डाला। जब मैंने बेनीपुरी जाकर उस मकान को पहले-पहल देखा, मेरे मुँह से अचानक निकल गया, “यार, तुमने यह क्या किया ? यह मकान तो शहर में बनवाने के लायक था।” बेनीपुरी जी बोले, “तुम किराये की बात सोच रहे हो, मगर मैंने तो अपना स्मारक बनाया है।”¹⁰⁶

डायरी के पन्ने बेनीपुरी की व्यथा-कथा के साक्षी हैं। विपत्तियों और नियति के क्रूर थपेड़ों के बीच भी बेनीपुरी अपने जीवन उद्देश्य से कभी पीछे नहीं हटे। बेनीपुरी केवल संघर्ष में ही विश्वास रखते हैं। 19 फरवरी 1952 की डायरी में अपने संघर्षपूर्ण जीवन के संबंध में लिखते हैं—“यह लंबी राह ऊबड़-खाबड़, कहीं कंकड़, कहीं काँटे, कहीं खड्ड, कहीं खाई सपाट मैदान बहुत कम मिल पाया, यदि मिला भी तो तुरंत उसे छोड़कर तुरंत टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडी पकड़ी; पैरों में कुश-काँटे गड़े, ठोकरें, लगीं ढिल मिलाया, कई बार आँधे मुँह गिरा, लोग हँसे, विरोधियों ने तालियाँ पीटीं झल्लाया किन्तु फिर उसी राह पर बढ़ता रहा। न संबल खोजा, न साथी खोजे। प्रायः ही अकेले चलना पड़ा—जलती दुपहरी में, थरती अधरतिया में। लू की द्वंद्व-शीत की साँय-साँय! सुनहली धूप, चटकती चाँदनी, मंद बयार, शीतल फुआर बहुत ही कम नसीब हो सके। मेरी पचास साल की जिन्दगी की यह पिछली राह— उस ओर देखकर रोमांच अनुभव करता हूँ शांतिमय आनंद नहीं।”¹⁰⁷

इतना ही नहीं इन्सानियत की उत्कट तमन्ना और प्रकृति के विरुद्ध संघर्षपूर्ण परिवर्तन की लालसा इसी परिवेश की देन है। बेनीपुरी को बनाने में इनके गाँव बेनीपुर का योगदान भी कुछ कम नहीं हैं। सारी बात स्पष्ट हो जाएगी—“मेरे सारे विचारों और सिद्धान्तों पर ही नहीं, मेरी भाषा और शैली पर भी इस गाँव की अमिट छाप है! आज मैं जो कुछ हूँ, वह ‘रामवृक्ष’ नहीं है, ‘बेनीपुरी’ है।”¹⁰⁸

बेनीपुरी का बचपन अपने गाँव बेनीपुर और बंशी पचड़ा में बीता। वे थोड़ा नटखट भी थे। “कुछ तो लाड़—प्यार से, कुछ मौसी के प्रेम से उनमें नटखटपन आ गया था। उनके गाँव बेनीपुर ने उन्हें अधिक प्रभावित किया था। उनके गाँव की नदी—बागमती की बाढ़ ने भी अपने चिन्ह मानो बेनीपुरी के जीवन एवं व्यक्तित्व में अंकित कर दिये थे। उनके व्यक्तित्व में जो उत्साह, जोश और क्रान्ति की लहर थी वह उनके बचपन के संस्कार का ही परिणाम था।”¹⁰⁹

बेनीपुरी के माता—पिता की मृत्यु बचपन में ही हो गयी थी। जिसके कारण उनका बचपन अत्यधिक कष्टमय रहा। माँ की मृत्यु पाँच साल की ही अवस्था में हो जाने के कारण वे अपने जीवन में माँ के अभाव का दुःख अनुभव करते रहे। माता—पिता की मृत्यु के पश्चात् बेनीपुरी का लालन—पालन उनके मामा ने किया। अपनी पारिवारिक स्थिति बताते हुए बेनीपुरी लिखते हैं—“मेरा जन्म एक ऐसे परिवार में हुआ, जिसका हर सदस्य हड्डी तोड़ मेहनत करता था, किन्तु जो अच्छी तरह एक साधारण गृहस्थ जीवन व्यतीत नहीं कर पाता था। मेरे पिताजी और दो चाचाजी पियरी रोग—जॉण्डिस से मरे और भरी जवानी में मरे। खेतों में हड्डी गलाकर आओ और घर पर मक्के या मँडुवे की रोटियाँ पाओ या अलुआ—तो फिर जॉण्डिस तो धरा पड़ा है न! मेरे पितामह गाँव के सबसे अच्छे किसान थे, आज तक उनकी किसानी की चर्चा होती है। किन्तु बेचारे सदा परेशान रहे, कर्जों से लदे रहे, क्योंकि भगवान ने उन्हें पाँच बेटे दिए थे और उनमें धर्मनिष्ठा भी थी—इतने सारे मुँह भरना और वह भी ईमानदारी से—यह सम्भव नहीं था।”¹¹⁰

बेनीपुरी की प्रारंभिक शिक्षा उनके मामा के गाँव बंशीपचड़ा में पूरी हुई। वहीं से उनकी देशभक्ति की भावना भी बलबती हुई। वे समाजवाद की स्थापना के पक्षधर थे। बेनीपुरी जी अपनी प्रारंभिक शिक्षा और समाजवादी विचारधारा के संबंध में लिखते हैं—“फिर जो स्कूल में पढ़ने गया तो क्लास में सदा फर्स्ट आने के बावजूद जिसने कभी दूध का मुँह नहीं देखा और जिसे प्रायः एक रुपए की नक़द मेस—फीस नहीं देने के कारण चावल को भुनाकर भकोसना पड़ता—वह समाजवादी नहीं तो क्या होगा?”¹¹¹

बेनीपुरी लिखते हैं—“विवाह के तीसरे वर्ष ही मेरे जीवन में एक तूफान आया। मेरे जीवन में क्या, देश के जीवन में ही। गांधीजी का असहयोग प्रारम्भ हुआ, मैं पढ़ना—लिखना छोड़कर उसमें पड़ गया।”¹¹² असहयोग आंदोलन के संबंध में बेनीपुरी ने बताया है कि—“असहयोग ने भारतीय समाज को जिस तरह जड़ से हिलाया, दूसरे आन्दोलनों में वह बात हर्गिज नहीं देखी गई।”¹¹³ यह आंदोलन अंग्रेजों के सामने था। सही अर्थ में आज़ादी की लड़ाई का यह पहला ठोस कदम था। इसका प्रभाव हमारे देश के नवयुवकों पर भी पड़ा। बिहार प्रदेश में भी यह आंदोलन विराट रूप में फैल चुका था, जो बेनीपुरी जी का विस्तार था। 6 फरवरी 1921 ई० को महात्मा गांधी नागपुर कांग्रेस के बाद बिहार गए थे। फिर असहयोग आंदोलन का नारा लगाते—लगाते गांधी मुजफ्फरपुर पहुँचे। वहाँ उनके भाषण से बेनीपुरी बहुत प्रभावित हुए और असहयोग आंदोलन में जुट गए। महात्मा गांधी ने वचन दिया था कि—“एक वर्ष के लिए असहयोग होता तो हम से स्वराज्य लो।”¹¹⁴ गांधी के प्रयत्न से चंपारन में से अंग्रेजों का राज्य समाप्त हो गया था, इसीलिए बेनीपुरी को भी विश्वास हो गया था कि असहयोग का परिणाम अच्छा ही आएगा।

इस तरह उनके मन में देशभक्ति की लगन और देश सेवा की प्रेरणा ने स्थान लिया लेकिन उस समय उनके परिवार की हालत बड़ी दुःखद थी। एक दिन कर्ज में अपनी ज़मीन का हिस्सा भी बिक गया। ऐसी स्थिति के संबंध में बेनीपुरी ने लिखा है—“किन्तु देशभक्ति का एक रूप यह भी होगा कि पढ़ना—लिखना छोड़कर, घर—द्वार की चिन्ता भूलकर, फकीरी का बाना लेकर इस गाँव से उस गाँव, उस गाँव से इस गाँव देशमाता की मुक्ति का अलख जगाना होगा, यह तो कभी सोचा ही नहीं था।”¹¹⁵

बेनीपुरी की पारिवारिक चिन्ता की सच्चाई इसमें साफ दिखाई देती है। उनके मामा की सुनहली कल्पना, अपने बाबा एवं पत्नी की आशाएँ... इन सब में बेनीपुरी ही एक मात्र आशा का केंद्र था। उनके मामा और पत्नी क्या कहेगी ? उसकी भी उन्हें चिन्ता सता रही थी। इसके बारे में वे लिखते हैं—“घर पर रानी कुछ दिनों तक रोई—धोई थीं, किन्तु, जब अपने पिता की गिरफ्तारी की खबर पा चुकीं, तो फिर क्या कहकर इस काम से मुझे रोकतीं!”¹¹⁶ इस तरह देश की आज़ादी के लिए

असहयोग के माध्यम से वे देशभक्ति के रंग में रंग गए। बेनीपुरी कहते हैं उसने मुझे धीरज दिया है। बसंत पंचमी, 31 जनवरी, 1952 की डायरी में लिखते हैं—“यह नहीं, कभी-कभी मैं उसे झिड़क भी दिया करता हूँ। इधर इतनी परेशानियाँ रहीं कि स्वभाव में जब-तब झुँझलाहट आ जाती है। और ये सारी झुँझलाहटें रानी पर ही बरसती हैं।”¹¹⁷

बेनीपुरी को अपने परिवार के प्रति अजीब मोह था। अपने गाँव के लोगों से भी वे बहुत प्यार करते थे। बेनीपुरी 30 मार्च, 1953 की डायरी में लिखते हैं—“इस बारे में मैं कितना सौभाग्यशाली हूँ—तीन बेटे हैं, तीन पोते हैं, सिर्फ एक बेटी। बड़ी पुतोहू भी काफी कामकाजू लड़की है। जब घर जाता हूँ, अपने भरे-पूरे घर को देखकर फूला नहीं समाता।”¹¹⁸ बेनीपुरी, छठ, दशहरा और होली जैसे त्यौहारों पर अवश्य ही बेनीपुर में होते बेनीपुरी को ये त्यौहार प्रिय थे। घर को देखते समय भी संसार को नहीं भूल पाते। बेनीपुरी 2 मई, 1950 की डायरी में लिखते हैं—“जब संसार के कल्याण के लिए मरता खपता रहता हूँ, घर की स्मृति बनी रहती है। घनघोर राजनीति में पड़ने पर भी साहित्य जीवन में रमा रहा और आज पाँच वर्षों से राजनीति से अपने को दूर रखने की कोशिश करने के बाद भी उसके आकर्षण से अभिभूत हो रहा हूँ।”¹¹⁹ बेनीपुरी एक आदर्श पिता भी थे। उन्हें अपने बच्चों से भी अत्यधिक प्यार था। किंतु कई बार जेल जाने के कारण उन्हें अपने बच्चों की देखभाल के लिए अपने मित्रों का सहारा लेना पड़ता था। “बेनीपुरी एक पिता थे—इस डायरी और पत्र लेखन-काल में तीन पुत्रों—देवेन्द्र, जितेन्द्र और महेन्द्र तथा एक पुत्री प्रभा के पिता। बच्चों के प्रति बेनीपुरी की अनुरक्ति अत्याधिक थी। किन्तु बार-बार जेल जाने के कारण उनकी देखभाल स्वयं नहीं कर सके। उनकी पढ़ाई लिखाई का प्रबन्ध मित्रों के द्वारा करवाया।”¹²⁰ अपने बच्चों की अच्छी शिक्षा-दीक्षा के लिए बेनीपुरी अत्यधिक जागरुक थे। यद्यपि उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी, तथापि वह अपने बच्चों की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सदैव तैयार रहते थे। उनकी डायरी से यह ज्ञात होता है कि—“बेनीपुरी जी का पितृ-हृदय महत्वाकांक्षाओं से भरा-पूरा था। वह बच्चों को उच्च शिक्षा प्राप्त एवं उच्च पदों पर आसीन देखना चाहता था। इसके लिए वह हर जोखिम झेलने के लिए

तैयार था। उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं थी। वह लेखक था—पुस्तकों से, पत्र पत्रिकाओं से, जो कुछ पैसे आते उन्हें बच्चों की पढ़ाई—लिखाई, खान—पान, रहन—सहन जैसी आवश्यकताओं पर निर्ममतापूर्वक खर्च करता था।¹²¹

बेनीपुरी अपने परिवार की खुशहाली के लिए सदैव चिंतित रहते थे। परिवार में कोई बीमार या परेशान हो तो उनका किसी काम में मन नहीं लगता था। 28 अप्रैल, 1950 की डायरी में लिखते हैं—“परसो ख़बर आई, छोटा पोता बीमार है। एक आदमी भेजा, दवा भेज दी। एक आदमी ने बताया है, वहाँ सब अच्छा है। किन्तु बच्चों की बीमारी मुझे बेतरह व्याकुल बना डालती है। दो दिनों से सब काम करते रहने पर भी रह—रह कर चित्त उद्धिग्न हो उठता।”¹²² बेनीपुरी परिवार के साथ रहना चाहते थे। किन्तु परिवार के साथ समय बिताने का अवसर उनके पास बहुत कम होता था, जिसके कारण वे उदास रहते थे। अकेलापन उन्हें परेशान करता था। वे अकेलेपन से दूर निकलना चाहते थे। बेनीपुरी 28 अप्रैल, 1950 की डायरी में लिखते हैं कि—“अब अकेले रहा नहीं जाता। इच्छा होती है, बच्चों के साथ रहूँ, उन्हें चुमकारता रहूँ, उनके साथ खेलता रहूँ। रानी का अभाव भी खटकता रहता है। वह रहे तो खाने—पीने का आराम रहे, वह मुझ पर अंकुश रखकर मुझे आराम से रहने को बाध्य करे, सब तरह से मैं निश्चिन्त रहूँ।”¹²³

जब परिवार के साथ किसी कारणवश बेनीपुरी साथ नहीं होते थे, तो उनके पास एक—मात्र सहारा उनकी यादें होती थीं। वह अक्सर यादों में खो जाते थे, जिसकी अनुभूति मधुरता का एहसास कराती है। 7 मई, 1952 की डायरी में बेनीपुरी कहते हैं कि—“घर की याद आ रही है। बच्चों की याद आ रही है। मन बार—बार पीछे भाग रहा है और तब बढ़ा जा रहा है बम्बई की ओर, पेरिस की ओर! दोनों ओर खिंचाव और दोनों खिंचाव मधुर!”¹²⁴ बेनीपुरी अपने परिवार से कितना अधिक जुड़े थे, इस बात का प्रमाण ‘कैदी की पत्नी’ नामक उपन्यास से भी हो जाता है। उन्होंने इस उपन्यास में अपनी धर्मपत्नी उमारानी की महिमा का गुणगान किया है। “उन्होंने अपने साहित्य में पत्नी के लिए प्रायः ‘रानी’ शब्द का प्रयोग किया है। ‘कैदी की पत्नी’ उपन्यास में इन्होंने उसके गुणगान एवं महिमा गाकर, उसके

वास्तविक जीवन तथा उसके आदर्शों को और जीवन की कठिनाइयों को उभारने की कोशिश की है।¹²⁵

बेनीपुरी कभी वर्तमान में जीने लगते थे, तो कभी भूतकाल की यादों में खो जाते थे, तो कभी उन्हें भविष्य की चिंता सताने लगती थी। बेनीपुरी 30 अप्रैल, 1950 की डायरी में भविष्य के बारे में सोचते हुए लिखते हैं—“नया मकान तैयार हो जाये, दो मंज़िले पर अपने लिए एक कोठरी बना लूँ। मकान के चारों ओर फूल-फल के पौधे लग जाँएँ। उस कोठरी में बैठकर कल्पना कर सकूँ कि हरियाली के समुद्र में बैठा हूँ। मकान के चारों ओर खेत तो हैं ही इस वैशाख में भी हरियाली का अभाव नहीं है। फिर बच्चों के लिए कोई प्रबन्ध हो जाए—देवेन्द्र और जीत्तिन को तो कहीं न कहीं पद पाते हुए देख ही लूँ। तब यहीं रहकर, इस एकान्त, शान्त स्थान में कुछ ऐसी रचनाएँ जिनमें सौन्दर्य हो, स्थायित्व हो लिख जाऊँ।”¹²⁶

बेनीपुरी कई बार जेल गए और परिवार की आमदनी घटती रही। इनकी पत्नी ने सब कुछ संभाला। बेनीपुरी बसंत पंचमी, 31 जनवरी, 1950 की डायरी में लिखते हैं—“रानी मुझसे मिलने (1943 में शायद) गया जेल में गई। सभी बच्चे बीमार; वह भी बीमार। मैं विचलित हुआ। कहा, देखो, इस समय में नजरबंद हूँ। यदि मैं सरकार को शर्त लिख दूँ तो वह शायद छोड़ दे तुम क्या कहती हो ? देखा, उसकी आँखों में आँसू आ गए, किन्तु बड़ी दृढ़ता से कहा—नहीं, ऐसा न कीजिए। मैं ही अकेली अभागिन नहीं हूँ। सारे देश में मेरी जैसी औरतें विपदा काट रही हैं।”¹²⁷

बेनीपुरी चौदह बार जेल गए यानि ज़िंदगी के साढ़े सात साल जेलों में बिताने पर भी बेनीपुरी कभी संघर्ष के सामने झुके नहीं थे, पीछे मुड़े नहीं। सचमुच संघर्षों ने ही बनाया है बेनीपुरी को। संघर्षों की लंबी श्रृंखला एक लंबे समय तक बेनीपुरी के जीवन के साथ चलती है। एक साधारण किसान परिवार में जन्म लिया और अभावों के मध्य रहते हुए भी उन्होंने अपनी प्रतिभा और कार्य कौशल से जीवन में आगे बढ़ते हुए प्रगति-पथ का निर्माण किया। बेनीपुरी के जन्म से लेकर मृत्यु तक की कहानी अनेक छोटे-बड़े संघर्षों से भरी हुई है, लेकिन प्रत्येक नया संघर्ष

उनके जीवन में एक अलग मोड़ ला देता है। बेनीपुरी कहते हैं—‘मेरे जीवन में आकस्मिक घटनाएँ आतीं और मेरी जीवनधारा को बदलती रही हैं।’¹²⁸

बचपन में माता पिता की मृत्यु, असहयोग आंदोलन और जेल की यातनाएँ, पारिवारिक संकट और युग के प्रहारों का मुकाबला करते हुए वे कभी विचलित नहीं हुए। जीवन के आघातों से उनका व्यक्तित्व और भी सोने जैसा दमक उठा।

देखा जाए तो दो बार विदेश भ्रमण के बाद भी पाश्चात्य सभ्यता का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। आचार—व्यवहार तथा रस्मों—रिवाजों के पालन में कहीं भी वे कट्टरता नहीं अपनाते थे। जब वे विदेश—यात्रा पर गए तो उन्होंने जिनेवा में एक पारिवारिक दृश्य देखा। 1 जून, 1951 की डायरी में लिखते हैं—“वह कोई पिता अपने बच्चे को झूला झुला रहा है। बच्चा कितना स्वस्थ, प्रसन्न। काश, अपने देश में ऐसे बच्चे दिखाई पड़ते। शरीर में धूल, आँखों में कीचड़, बालों में जुएँ—अपने देश के वे बच्चे और ये साफ सुथरे, स्वस्थ—सुन्दर बच्चे।”¹²⁹

बेनीपुरी ने एक साथ अनेकों दायित्वों को बखूबी निभाया। देखा जाए तो एक व्यक्ति के लिए बड़ी बात है, इतनी सारी ज़िम्मेदारियों को निभाना लेकिन बेनीपुरी जीवन भर संघर्ष करते रहे पर इनका धैर्य इतना अदम्य और अटूट है कि अपने आत्मविश्वास के बल पर वे प्रत्येक चोट को सहकर जीवन पथ पर आगे बढ़ते रहे।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि डायरी में बेनीपुरी जहाँ एक ओर एक सफल पत्रकार, साहित्यकार, राजनीतिज्ञ व्यक्ति हैं, वहीं दूसरी ओर वे एक पारिवारिक व्यक्ति भी हैं। एक स्थान पर उन्होंने स्वयं इस बात को स्पष्ट किया है कि वे परिवार में आकर सबकुछ भूल जाते हैं, तन्मय हो उठते हैं। यद्यपि उन्हें परिवार के साथ समय बिताने का अवसर कम मिलता था, जिसका उन्हें दुःख था, फिर भी वे अपने पारिवारिक जीवन से सन्तुष्ट थे। कभी—भी संघर्षों के सामने झुके नहीं बल्कि इन संघर्षों से उन्हें और अधिक शक्ति मिलती गयी और इस शक्ति के बल पर वे जनता की सेवा करते रहे।

(च) प्रकृति-चित्रण

देश-विदेश के पहाड़ी रास्ते, बन्दरगाह और उसके आस-पास के स्थान, बगीचे, बड़ी-बड़ी फुलवाड़ियाँ, नहरें, झीलें, छोटे-बड़े खेत तथा वहाँ की फसलें देखकर बेनीपुरी प्रभावित ही नहीं हुए बल्कि उसे अपनी डायरी के माध्यम से पाठकों को भी अवगत कराया है। अतः जहाँ उनकी दृष्टि विदेशी राजनीति की सूक्ष्म-से-सूक्ष्म बातों का अवलोकन करती है वहाँ प्राकृतिक-जगत् का कोना-कोना भी झाँक लेती है।

अपनी डायरी में बेनीपुरी ने प्रकृति को मनोरंजन की दृष्टि से देखा है। संवेदनशील हृदय साहित्यकार होने के कारण प्रकृति के शत-शत रूप उन्हें आत्मीय लगते हैं। उनकी यात्रा डायरी में हमें प्रकृति के स्वाभाविक सौंदर्य की विविध झाँकियाँ मिलती हैं। साथ ही मानव द्वारा अलंकृत प्रकृति के भी विविध रूप उनके डायरी साहित्य में वर्णित हैं। मुक्त प्रकृति के अन्तर्गत पर्वत व नाना दृश्यों नालों के तीव्रतर प्रवाहों नदियों के गहरे भार को सागर तट, पल-पल बदलते बादलों, दुग्ध धवल झरनों के वर्णन बेनीपुरी ने किये हैं। बेनीपुरी यात्रा करते समय ज़मीन से आकाश की ओर दृष्टिपात करते हैं तो वे आकाश की नीलिमा में खो जाते हैं। बादलों के बदलते रंगों और उसकी बनावट का वे बड़े ही सुंदर ढंग से डायरी में चित्रण करते हैं—“नीलिमा के बाद सफेद बादल तह-पर-तह ऐसे लगे हैं कि वे पहाड़-से ही दिखाई पड़ते हैं। किन्तु उनके ऊपर जो धुआँ-धुआँ-सा है, वह तो ज़रूर कोई पहाड़ है।”¹³⁰ बादलों के नीचे, सफेद रंगों के चित्रण के साथ तटभूमि की हरियाली को भी अत्यधिक सुन्दर ढंग से चित्रित किया है। “यह तट भूमि। कितनी सुन्दर मोहक। पथरीली ज़मीन। तट तक उतरने के लिए जगह-जगह रास्ते। रास्ते की बगल में हरियाली-हरियाली। सामने वह बर्फ से आच्छादित पहाड़ी। शिव के ललाट पर त्रिपुंड नहीं-सिर पर श्वेत जटाजूट।”¹³¹ बेनीपुरी ने जहाँ एक ओर प्रकृति की ध्वनि, गति और रंगों का सुंदर चित्रण किया है, वहीं पर उन्होंने मानवीय भावों का आरोप कर प्रकृति को मनुष्य के समान हँसते-खेलते, शोक करते हुए भी चित्रित किया है। “फूलों की सजावट का क्या कहना। बड़े और छोटे फूलों का एक ही क्यारी में किस प्रकार रंगों के मेल पर

ध्यान देते हुए लगाया गया है। नीचे डेज़ी खिल-खिला रही है, तो ऊपर दुल्लिप सिर हिला रहा है। यों ही फूलों और रंगों की अजीब रंगामेजी!"¹³² इसी प्रकार पेरिस की शोभा का मानवीयकरण करते हुए बेनीपुरी ने पेरिस को इस प्रकार चित्रित किया है—"जब लौट रहे थे, पेरिस की शोभा अपने ओज पर थी। सज-धजकर वह हर अतिथि को सादर आमन्त्रित कर रही थी।"¹³³ अपनी यात्रा के दौरान मोहक लगने वाले प्राकृतिक दृश्यों को बेनीपुरी ने अपने साहित्य में बखूबी संजोया है। जब बेनीपुरी प्रभावी एवं मोहक लगने वाले प्राकृतिक दृश्यों का मानवीयकरण करते हैं तब उनमें भावुकता की झलक स्पष्ट दिखाई पड़ती है—"अपने डेरे पर बैठा हूँ। सामने पेड़ है, किन्तु उनके पत्ते-पत्ते धूल से भरे। इधर-उधर विद्यार्थी रहते हैं, किन्तु उनमें कुछ ऐसा नहीं हो पाता कि समझ जाए, ऋतुरात आ रहे हैं। हाँ, वातावरण में कुछ खुनकी है और सामने इस आम के पेड़ में मंजरियाँ झाँकने लगी हैं—वे सकुचा रही हैं कि शहर के इस अप्राकृतिक जीवन में हम कहाँ चली आईं? मंजरियों सकुचाओ नहीं, तुम्हें मेरा सलाम। ऋतुराज, तुम कहाँ हो, मेरा अभिवादन कबूल करो!"¹³⁴

स्विट्ज़रलैंड की उन्मुक्त प्राकृतिक दृश्यों को देखकर तो बेनीपुरी अत्यधिक भावाभिभूत हो जाते हैं। जब वो प्रकृति के मोहक दृश्यों का चित्रण करते हैं उनमें आनन्द एवं कौतूहल सदैव बना रहता है। एक साथ कई इन्द्रधनुष को देखकर बेनीपुरी के मुँह से अनायास ही निकल पड़ता है—"अरे, यह क्या? उधर दाहिनी ओर देखिए—वे क्या हैं? ओहो! कई इन्द्रधनुष एक साथ उग गए हैं। एक के ऊपर एक यों जोड़ा इन्द्रधनुष मैंने कई बार एक साथ उगा देखा है। किन्तु यहाँ तो कई इन्द्रधनुष—कोई इधर, कोई उधर, कई—एक—दूसरे को काटते हुए! यह कैसे हुआ? क्यों हुआ? यह बादल और सूर्यकिरणों की आँख-मिचौनी का करिश्मा है, जो भिन्न-भिन्न घाटियों की पृष्ठभूमि में उन्हें भिन्न-भिन्न आकार ग्रहण करा रहा है—हाँ, सब-के-सब सतरंगी! कितना देखूँ—कितनी आँखों से देखूँ—सुन्दर, अति सुन्दर!"¹³⁵ बेनीपुरी ने जहाँ फूल, पत्तों, बादलों, झीलों एवं पहाड़ी चोटियों का चित्रण अपनी डायरी में किया है, वहीं उन्होंने खेत-खलिहान के सौंदर्य की झाँकियाँ भी प्रस्तुत की हैं। इटली के खेतों की झाँकी प्रस्तुत करते हुए बेनीपुरी कहते

हैं—“इटली में ज्यों—ज्यों घुसते गए, यह स्पष्ट होता गया यह देश मुख्यतः कृषिप्रधान है! गेहूँ की फसल पक रही है। जहाँ देखिए, वहीं लाल—लाल बालियों से भरे खेत! फसल अच्छी लगती है, बालियाँ पुष्ट लगती हैं।”¹³⁶ स्विट्ज़रलैंड की उन्मुक्त प्रकृति के फूल, नाले, पेड़, चोटियाँ एक ही स्थान पर देखकर बेनीपुरी भावुक हो गए। उस अनुभव का यथार्थ, विशद, सफल चित्रण इस प्रकार से किया है—“ये झुरमुटें, ये चकमक फूल, ये उछलते नाले, ये लम्बे—लम्बे पेड़, ये गगनचुम्बी चोटियाँ! हाँ—हाँ, गगनचुम्बी चोटियाँ! अरे, वहाँ देखिए, उस चोटी पर से वह धुआँ—धुआँ क्या झड़ रहा है? धुआँ का स्वभाव है ऊपर उठना, यह नीचे क्या झड़ा जा रहा है। समझे ? यह धुआँ नहीं है। वहाँ से एक झरना झड़ रहा है, उसका पानी छोटे—छोटे कणों में विभक्त हो, यहाँ से धुआँ—धुआँ—सा दीख रहा है।”¹³⁷

बेनीपुरी ने अपनी डायरी में उन्हीं स्थलों और क्षणों को प्रस्तुत किया है जो उनके हृदय को छू चुके थे। प्रकृति के प्रत्येक दृश्य का और उसकी प्रत्येक बात का वर्णन कर मोहक और प्रभावी दृश्यों का भी उन्होंने वर्णन किया है। यूरोप की झीलों का वर्णन बेनीपुरी के यात्रा डायरी में यहाँ—वहाँ मिलता है। साथ ही लंदन का हाईड पार्क, पेरिस में लुव्र स्थिति बगीचा, पेरिस की लुफ्जमबुर्ग फुलवाड़ी आदि को देखकर बेनीपुरी मंत्र मुग्ध हो गए थे और डायरी में उन्होंने उन बगीचों के वर्णन लिखे। अपनी यूरोप—यात्रा में बेनीपुरी को बार—बार यह अनुभव हुआ कि वहाँ के लोग फूल—पौधों के बहुत ही कायल हैं। अपने घरों और सार्वजनिक उपयोग के स्थलों को वे खूब सजाते रहते हैं। रेल स्टेशनों तक को फूल पौधों द्वारा सजाया जाता है। “एक तो प्राकृतिक दृश्य—रंग—बिरंगे फूल; तुरन्त निकली पत्तियों और कलियों से लदे वृक्ष, मखमली घासें, खूबसूरती से निकाली गई पगडंडियाँ!”¹³⁸ जब बेनीपुरी इंग्लैंड यात्रा पर गये तो वह स्ट्रेट फोर्ड वारविक काउन्टी पहुँचे। इस इंग्लैंड को इंग्लैंड की हृदय स्थली कहा जाता है। 17 मई, 1951 की डायरी में इंग्लैंड के बारे में लिखते हैं—“बड़ा ही भव्य भूभाग है। फूलों, पेड़ों, और पंछियों की भरमार। फिर वसन्त की बहार। चेरी, प्लम और एपल के पेड़ क्रमशः लाल, उजले और पीले फूलों से लदे आँखों को मुग्ध कर रहे थे, जमीन पर नीले, बैंगनी और लाल—पीले फूलों की बहार का भी क्या कहना ? क्यारियों में ही फूल नहीं, रास्तों

में जहाँ भी घास—फूस उगे हैं, वहाँ ही फूल है! सचमुच यह भूभाग इंग्लैंड की हृदयस्थली है।”¹³⁹

बेनीपुरी ने डायरी में प्राकृतिक दृश्यों को बड़े ही सजीव एवं मोहक रूप से वर्णित किया है। इसका अन्दाज़ा लगा सकते हैं कि बेनीपुरी को प्रकृति से कितना लगाव था। जब बेनीपुरी लंदन की यात्रा पर गए, तो उन्होंने कीट्स का स्मारक देखा, बहुत लोगों का कहना है कि यह स्मारक इंग्लैंड के सारे स्मारकों में श्रेष्ठतम है। 23 मई, 1951 की डायरी में लिखते हैं—“वह मलबेरी का पेड़ दिखाई पड़ता है, जिसकी डाल पर वह बुलबुल बोली थी जिसकी आवाज़ ने कवि को ‘ओडर टू नाइटिंगल’ लिखने को विवश किया था। बुलबुल चीखती जाती थी, कवि लिखता जाता था। उधर बुलबुल की बोली रुकी, इधर कविता रुकी।”¹⁴⁰

इस स्मारक भवन में कीट्स के हाथ की लिखी वह कविता सुरक्षित है और इसी स्थान पर बैठकर कीट्स ने वह कविता लिखी। उस जगह से उस मलबरी के पेड़ की फुनगी दिखाई देती है। जब पेरिस गए तो उन्होंने लुकजेम्बुर्ग वाटिका देखी—“रंग—बिरंगी फूलों की क्यारियाँ और जहाँ—तहाँ स्थापित सुन्दर प्रतिमाओं के कारण यह वाटिका संसार की सबसे सुन्दर और मनोरम वाटिका कही जाती है।”¹⁴¹

बेनीपुरी ने अपनी डायरी में तीर्थ स्थलों के सौंदर्य का भी वर्णन किया है। 4 फरवरी, 1952 की डायरी में वे राजगृह का वर्णन करते हैं—“यह स्थान चार धर्मों हिन्दू, जैन, बौद्ध और इस्लाम का केन्द्र स्थल है। भारत के अति प्राचीन स्थानों में से है। पहाड़ियों से घिरे होने के कारण बहुत मनोरम भी है और ऐसे गरम जल के झरने भी देश में बहुत कम पाए जाते हैं।”¹⁴² कहा जाता है कि बहुत सी बीमारी इसके पानी में नहाने और पीने से ही दूर हो जाती हैं। बेनीपुरी की दृष्टि ऐसी थी कि वह प्रकृति को देखकर उसके साथ अन्य संदर्भों को भी जोड़ देते हैं। 10 फरवरी 1951 की डायरी में उन्होंने लिखा है—“सुनते हैं ताज चाँदनी में देखने पर बहुत आकर्षक लगता है। किन्तु बादलों के बीच भी यह आज कम सुहावना नहीं लगा। जब फाटक से आगे ताज के रू—ब—रू खड़ा था, अचानक रवि बाबू की कविता याद आ गई—काल के गाल पर आँसुओं की एक बूँद! काल के गाल पर आँसू की एक बूँद! कैसी करुण शोभा!!”¹⁴³

बेनीपुरी ने प्रकृति के जितने भी रूप होते हैं, उनका किसी-न-किसी रूप में वर्णन किया है। उन्हें प्रकृति से जो मिलता-जुलता मिला, वह उसके साथ जोड़ देते हैं। शहरी व ग्रामीण प्राकृतिक वर्णन को अपनी डायरी में लिखा है। संसार के अन्य देशों के समान यूरोपीय देशों में भी जन-जीवन मुख्यतः शहर और गाँवों में बीतता है। बेनीपुरी ने उनका वर्णन भी किया। कला, संगीत, सौंदर्य और सुगंध के लिए प्रसिद्ध पेरिस, प्राचीनता के लिए प्रसिद्ध रोम, झील पर बसे और गोन्दोलो (पतली डोंगी) से भरे हुए, वेनिस प्राकृतिक सौंदर्य की दृष्टि से अनुपम, जेनेवा स्विट्ज़रलैंड की समृद्ध राजधानी बर्न आदि का वर्णन किया है। गाँवों की हरियाली व साज-सज्जा का वर्णन भी किया है—“रास्ते भर फ्रांस की देहात देखते आए। असल में हम जिसे गाँव कहते हैं, वैसे गाँव यूरोप भर में नहीं हैं। न कहीं फूस के घर, न गन्दगी का समुद्र, न फटेहाली की हद। घर-पर-घर, जैसे अपने देश के गाँवों में होते हैं, वैसी बस्ती भी नहीं। खेतों में हरियालियों के बीच जहाँ-तहाँ कुछ खपरैल के मकान, काफी साफ, सुन्दर। यही गाँव हैं।”¹⁴⁴

उनकी डायरी में हम देखते हैं कि बेनीपुरी जब किसी अंग्रेज़ से बात करेंगे तो सबसे पहले वह मौसम की ही चर्चा करेगा। इस प्रकार बेनीपुरी ने देखा कि यूरोपवासी किस तरह प्रकृति को महत्त्व देते हैं। स्पष्ट है कि बेनीपुरी को प्रकृति से बहुत लगाव था। यदि देखा जाए तो बेनीपुरी स्वभाव से प्रकृति प्रेमी, स्वाभिमानी, ईमानदार और विनोदी थे।

उनको फूलों का सदा शौक रहा है। जेल में अपने वार्ड के गुलाब और बेलों के पौधों को तरह-तरह की खाद देकर उन्होंने हरा-भरा किया। बेनीपुरी सदैव सुंदरता की प्रशंसा करते थे। बेनीपुरी को भीड़ में चलने में बड़ा मजा आता था। गाड़ियों में वे अधिकतर किनारे पर बैठते थे, जिससे बाहर के दृश्य देख सकें।

अतः स्पष्ट है कि उनकी डायरी में प्रकृति के नाना-रूपों का यथार्थ चित्रण हुआ है जो कि अत्यन्त सजीव प्रतीत होता है। बेनीपुरी को प्रकृति से विशेष लगाव था। उन्होंने जहाँ-जहाँ भी प्राकृतिक दृश्यों को देखा और जो कुछ भी उन्हें प्रभावी एवं मोहक लगा उसे उन्होंने अपने साहित्य में स्थान दिया। फूल-पत्तों,

नदी-नालों, पहाड़-चोटियों एवं खेत-खलिहानों आदि के मोहक दृश्यों का चित्रण बेनीपुरी ने बड़ी आत्मीयता के साथ किया है।

(छ) यात्राएँ

यात्राएँ बेनीपुरी के साहित्य की अभिन्न अंग हैं जोकि अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं अनेक विशेषताओं से युक्त हैं। अपनी इन यात्राओं में वहाँ की कला और सांस्कृतिक परिस्थिति का, वहाँ के जनजीवन का, प्रकृति का, राजनीतिक, आर्थिक, एवं सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण किया है। बेनीपुरी जी के यात्रा-वृत्तान्त के संबंध में डॉ० रश्मि चतुर्वेदी कहती हैं—“बेनीपुरी जी की यह कृतियाँ मात्र यात्रा-वृत्तान्त ही नहीं हैं बल्कि उस देश स्थान का जिसका चित्रण किया गया है। एक साहित्यिक के द्वारा लिखा गया सांस्कृतिक इतिहास है। बेनीपुरी जी ने अपने यात्रा-साहित्य में उन देशों जहाँ वे गये वहाँ की कला, संस्कृति, प्रकृति और जन-जीवन, आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक सभी स्थितियों-परिस्थितियों का चित्रण किया है।”¹⁴⁵ बेनीपुरी को ‘फेस्टिवल ऑफ ब्रिटेन’ में भाग लेने के लिए भारत के कई प्रधान साहित्यकार और कलाकार के साथ निमंत्रण मिला। बेनीपुरी भी इस यात्रा में सम्मिलित हुए। उनकी पहली विदेश-यात्रा सन् 1951 ई० में हुई थी। इस यात्रा में बेनीपुरी ने इंग्लैंड, ‘स्काटलैंड’, स्विट्ज़रलैंड, फ्रांस, नेपाल आदि देशों का भ्रमण किया था। अपनी पहली विदेश यात्रा की अनुभूतियों को पैरों में पंख बाँधकर (1952 ई०) में व्यक्त किया। ‘पैरों में पंख बाँधकर’ के संबंध में ओंकार शरद का यह कथन उचित लगता है कि—“वह भ्रमण कथा मामूली नहीं है। इसमें दूसरे देशों का वर्णन तो है ही, साथ ही वहाँ की संस्कृति, प्रकृति, राजनीति, मनःस्थिति और आर्थिक स्थिति का भी आँखों देखा वर्णन है मैं तो इन देशों में गये बिना इस भ्रमण कथा को पढ़कर ही इन देशों की सैर करने जैसा अनुभव कर रहा हूँ।”¹⁴⁶ दूसरी बार बेनीपुरी ने भारतीय पत्रकार के रूप में विदेश-भ्रमण किया और अपनी अनुभूति को ‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में व्यक्त किया। इसमें एक साथ कई देशों के यात्रा-विवरण डायरी शैली में लिपिबद्ध हैं। उनके यात्रा-साहित्य की विशेषता है—“भावात्मक और विवरणात्मक दृष्टिकोण की प्रधानता और कलात्मकता, साथ-साथ विदेश के व्यापक

जीवन का हरेक दृष्टिकोण से पूरा परिचय एवं उनकी विशिष्ट भाषा शैली। बेनीपुरी जी की यात्रा-विवरण उपर्युक्त पृष्ठभूमि पर अच्छे ढंग से लिखा गया है। उनके यात्रा विवरण तटस्थता, सूक्ष्म निरीक्षण और सौन्दर्यात्मक उद्घाटन के कारण बेहद आकर्षक बन पड़े हैं।¹⁴⁷

विदेश यात्रा में भी बेनीपुरी का कार्यक्रम सुबह से लेकर रात के बारह बजे तक चलता रहता था। बेनीपुरी को अपने देश के लिए अपार स्नेह, श्रद्धा व आदर का भाव था। “वे देश में रहते या विदेश में किन्तु उनकी नज़र में हर वक्त देश की परिस्थिति नाचती रहती थी। पहले वे मानते थे कि हमारा देश ही संसार के सभी देशों से अच्छा है। लेकिन जब विदेशों में वे जहाँ भी अपने देश से कोई बढ़िया चीज देखते तो उनका हृदय विद्रोह की भावना से भर जाता। कभी-कभी उनका मन भी बिहार की जनता की पीड़ा से द्रवित हो जाता।¹⁴⁸ अतः बेनीपुरी जी की यह विशेषता है कि वे जहाँ भी जाते हैं उस स्थान का अतिसूक्ष्म निरीक्षण करते हैं। 24 मई, 1951 की डायरी में लिखते हैं कि—“घर और बगीचे, नए स्कूल, खेल-कूद, सिनेमा-थियेटर आदि जीवन के सभी भागों के चलते-फिरते चित्र देखकर मन का मुग्ध होना स्वाभाविक है।¹⁴⁹ वहाँ के जन-जीवन के विविध अंगों को कौतूहल भरी दृष्टि से देखते हैं अत्यधिक साहित्यिक आकर्षण के साथ इसे प्रस्तुत करते हैं। बेनीपुरी की यात्रा के वर्णन विषय इतने अधिक व्यापक हैं कि इसमें कला, संस्कृति, राजनीति आदि सभी विषयों का समावेश हो जाता है। “देश-विदेश के पहाड़ी रास्ते, बन्दरगाह और उसके इर्द-गिर्द के स्थान, बगीचे, बड़ी-बड़ी फुलवाड़ियाँ, नहरें, झीलें, छोटे-बड़े खेत तथा वहाँ की फसलें देखकर बेनीपुरी प्रभावित ही नहीं हुए उस अपूर्व आनन्द को उन्होंने पाठकों को भी सहज सुलभ कराया है। बेनीपुरी एक सहृदय साहित्यिक, जागरुक राजनीतिज्ञ ही नहीं नव संस्कृति के समर्थ प्रणेता भी थे। अतः जहाँ उनकी दृष्टि विदेशी राजनीति की सूक्ष्मातिसूक्ष्म बातों का अवलोकन करती है; वहाँ उस देश के सामाजिक, आर्थिक एवं संस्कृति जगत् का कोना-कोना भी झाँक लेती हैं। इसीलिए राजभवन और उसके राजा, पार्लियामेंट और वहाँ के जन-प्रतिनिधि, सामाजिक संस्थाएँ और वहाँ की कार्यपद्धति, कल-कारखाने और वहाँ के मालिक-मज़दूर सम्बन्ध, सांस्कृतिक केन्द्र और वहाँ के कलाकार अपनी सम्पूर्ण विशेषताओं के साथ उनके यात्रा वर्णनों में साकार हो गये हैं।¹⁵⁰

बेनीपुरी ने अपने जीवन में अनेक यात्राएँ की हैं जिनमें भारतीय एवं विदेशी दोनों प्रकार की यात्राएँ शामिल हैं। कन्हैयालाल बी० चौहान के शब्दों में—“बेनीपुरी जी एक ऐसे यात्री थी जिन्होंने केवल अपने देश की ही नहीं किन्तु विदेशी धरती की भी उन्मुक्त भाव से यात्राएँ की थीं। इन यात्रा वर्णनों में सिर्फ दर्शनीय स्थानों का ही जिक्र नहीं है। लेकिन वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों से लेकर वहाँ के जन-जीवन के विविध पहलुओं का भी चित्रण है।”¹⁵¹

बिहार के प्रतिनिधि एवं पत्रकार के रूप में आमन्त्रित होकर बेनीपुरी ने दो बार विदेश-भ्रमण भी किया है। “पहली बार सन् 1951 ई० में एक भारतीय पत्रकार के रूप में उन्होंने इंग्लैण्ड, स्काटलैण्ड, स्विट्ज़रलैण्ड, फ्रांस आदि देशों की यात्रा की। यह विशेष यात्रा 19 अप्रैल से आरम्भ हुई थी और 14 जून को समाप्त हुई।”¹⁵² बेनीपुरी ने विदेश यात्रा को अत्यधिक अद्भुत एवं व्यस्तता से भरा हुआ पल बताया है। वे अपनी विदेश-यात्रा के संबंध में 2 जून, 1951 की डायरी में कहते हैं—“हाँ, पिछले छः सप्ताह पैरों में पंख बँधे रहे! यहाँ से वहाँ, वहाँ से यहाँ। जैसे उड़ रहे हो—फुर्र—फर्र। कहीं विश्राम नहीं, कहीं आराम नहीं! नया आकाश, नई दुनिया, नए-नए दृश्य; नए-नए अनुभव। लगता रहा, जैसे किसी अद्भुत स्थान में बैठकर कोई अद्भुत सिनेमा देख रहा होऊँ—तीव्रतम वेग से रील-पर-रील बदल रहे हों; एक को देखने से तृप्ति भी नहीं हुई कि दूसरी रील शुरू हो गई—सोचने-समझने तक का मौका नहीं। बस, देखे जाइए, देखे जाइए!”¹⁵³

बेनीपुरी की लन्दन यात्रा उन्हें अत्यधिक सुखद अनुभूति दिलाने वाली थी। इस यात्रा के दौरान होने वाली अनुभूतियों तथा प्रतिक्रियाओं का उन्होंने सशक्त वर्णन किया है। बेनीपुरी जी 24 अप्रैल, 1951 की डायरी में लिखते हैं—“हम लंदन की सड़कों से गुजर रहे हैं। काफी धूप है। लंदन में धूप; एक वरदान! इसकी चर्चा प्रायः होती है कि हम लोग भारत से धूप लाए हैं।”¹⁵⁴ फिर उसी दिन 24 अप्रैल की डायरी में लिखते हैं—“बीच-बीच में पार्क आ जाते हैं—उनमें फूल खिले हैं, हरियाली फैली है। शाम के समय इनकी शोभा देखिएगा, यह बताया जा रहा है।”¹⁵⁵ लंदन की यात्रा के समय बेनीपुरी लन्दन पुलिस की सेवा और शिष्टता को चित्रित करते हुए उसी दिन की डायरी में लिखते हैं कि—“लंदन की पुलिस की तारीफ़ बहुत सुनी

थी। अपने कर्तव्य में सजग, साथ ही शिष्टता की मूर्ति। सड़कों के बीच खड़े होकर जो रास्ता बताते हैं, उनके अतिरिक्त कुछ सड़कों पर चौकन्ना घूमते रहते हैं। मैं सड़क से जा रहा था, अचानक किसी का हाथ कंधे पर पड़ा। आँखें घूमीं तो पुलिस की वरदी देखते ही चकरा गया। फिर उन्होंने उँगुली से पीछे की ओर इशारा किया—देखता हूँ मेरी टोपी जेब से खिसक गई! घूमकर टोपी उठाई, उसे धन्यवाद दिया, वह कुछ बुदबुदाता हुआ फिर आगे बढ़ गया।¹⁵⁶

बेनीपुरी के अनुसार लंदनवासियों में शिष्टता एवं सेवाभाव कूट-कूट कर भरा हुआ है। गुमराह हुए व्यक्ति को रास्ता बताना, बुजुर्गों की इज्जत करना, परस्पर प्रेम-भाव से मिलना, अनुशासन में रहना तथा झूठ न बोलना आदि विशेषताएँ अंग्रेजों की स्वाभाविक विशेषताएँ हैं ऐसा बेनीपुरी का मानना है। हवाई जहाज में उड़ना एवं लिखना उनको अधिक अच्छा लगता था। विभिन्न देशों की यात्रा करने के बाद विदाई के समय उनके दिल में दुःख होता था। लंदन छोड़ते समय बेनीपुरी कहते हैं— “जहाँ दो-चार दिन का आवास होता है, मेरे ऐसे भावुक आदमी को उसका विछोह भी खटकता है।”¹⁵⁷

इस प्रकार बेनीपुरी की यात्रा लन्दन के लोगों की मनःस्थितियों का बहुत ही स्पष्ट चित्रण प्रस्तुत करती हैं। भारतीय नागरिकों की तुलना में बेनीपुरी ने यूरोपीय नागरिकों की स्वभावगत विशेषताओं को ऊँचा पाया है। संगठन-शक्ति के संबंध में तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत करते हुए बेनीपुरी कहते हैं—“यूरोप के लोगों में संगठन की शक्ति कुछ अद्भुत ढंग से विकसित हो गई है। इतना बड़ा जलसा किया जा रहा है; किन्तु कहीं भी हल्ला-हंगामा नहीं—ऑफिस में सभा भवन में, सब जगह सुचारु व्यवस्था। अपने यहाँ ऐसी चीज़ की जाती तो तूफान बरपा हुआ रहता। कार्यकर्ता परेशान रहते, अतिथि परेशान रहते, हर जगह कयामत का शोर होता। लेकिन यहाँ सबकुछ पहले से तो है, उसी के अनुसार सारे काम घड़ी की सुई की तरह निश्चित गति से हुए जा रहे हैं। न ऑफिस में दौड़ धूप व सभा में धक्कम-धक्का।”¹⁵⁸

बेनीपुरी जी की यात्राएँ समग्र जीवन की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करने में सफल हुई हैं। जनता के सामान्य आचार-विचार, उनकी संस्कृति, प्रकृति वर्णन तथा

आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों का चित्रण उन्होंने बड़े ही आकर्षक एवं नवीन ढंग से प्रस्तुत किया है। बेनीपुरी की यात्रा-साहित्य की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए 'डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान' कहते हैं कि—“उसमें आनन्द, उल्लास, मनोरंजन एवं कौतूहल आदि सर्वत्र दिखाई देते हैं। गहरी वैयक्तिकता के व्यापक प्रसार के कारण उनके यात्रा साहित्य में नवीनता का आकर्षण सदैव बना रहता है।”¹⁵⁹

निष्कर्ष रूप में कहेंगे कि बेनीपुरी बहुमुखी प्रतिभा के मालिक थे। जहाँ वे एक ओर सफल साहित्यकार के रूप में जाने जाते हैं वहीं दूसरी ओर देश के गणमान्य प्रभावशाली और राजनीतिक व्यक्तियों में भी उनका स्थान अनोखा था। फलस्वरूप उन्हें अतिथि के रूप में विदेश भ्रमण का भी मौका मिला साथ ही उन्होंने भारत के विभिन्न स्थानों की भी यात्राएँ कीं और यात्रा के दौरान होने वाली विभिन्न अनुभूतियों का चित्रण उन्होंने अपनी डायरी में बड़े ही सशक्त ढंग से प्रस्तुत किया।

उपर्युक्त संदर्भों व तथ्यों को ध्यान में रखकर निष्कर्षतः हम यह कहेंगे कि बेनीपुरी की डायरी में हर परिस्थितियों का वर्णन है चाहे वह आर्थिक हो, सामाजिक हो, राजनीतिक हो और उनके तदयुगीन समाज का यथार्थ-चित्रण हमारे सामने प्रस्तुत करती है। उन्होंने अपने डायरी साहित्य में इन परिस्थितियों के साथ-साथ अपने पारिवारिक दृष्टिकोण को भी बड़ी ही सत्यता और यथार्थ पूर्वक वर्णित किया है। पढ़ने वाले का मन व हृदय दोनों ही उत्सुक और व्याकुल भी हो उठते हैं। अपनी यूरोपीय यात्रा के दौरान प्रकृति व परिस्थितियों के हर सुखद एवं दुःखद सभी अनुभवों को अपने डायरी साहित्य में व्यक्त किया है। उनके द्वारा किया गया प्रकृति के नाना रूपों का अध्ययन पढ़ने के बाद ऐसा लगता है कि बेनीपुरी प्रकृति की गोद में पले व बड़े हैं। उनकी डायरी के अध्ययन के पश्चात् हमें यह ज्ञात होता है कि मानो हम स्वयं उन अनुभवों के बीच से गुज़र रहे हैं। इस प्रकार बेनीपुरी का डायरी साहित्य तदयुगीन परिस्थितियों को लेकर वर्तमान समय में प्रासंगिक बना हुआ है।

संदर्भ

1. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-आठ), प्रारंभ से
2. रामवचन राय, भारतीय साहित्य के निर्माता : रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० 39
3. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 178
4. सुभाष चंदर, हिन्दी व्यंग्य का इतिहास, पृ० 82
5. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 64
6. वही, पृ० 14
7. रजनी कोठारी, भारत में राजनीति : कल और आज, पृ० 76
8. डॉ० राम खिलावन तिवारी, माखन लाल चतुर्वेदी-व्यक्ति और काव्य, पृ० 22-23
9. डॉ० गुरुमुख निहाल सिंह, भारत का संवैधानिक एवं राष्ट्रीय विकास, पृ० 135
10. पट्टाभि सीता रमैया, कांग्रेस का इतिहास: (प्रथम अंक), पृ० 65
11. डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, आत्मकथा, पृ० 101
12. डॉ० श्याम वर्मा, आधुनिक हिन्दी-गद्य शैली का विकास, पृ० 174
13. रजनी कोठारी, भारत में राजनीति : कल और आज, पृ० 79
14. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-तीन), भूमिका
15. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 83-84
16. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), जंजीरें और दीवारें (आत्मकथात्मक लेख), पृ० 116
17. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 52
18. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 23

19. वही, पृ० 24
20. वही, पृ० 108
21. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 238
22. वही, पृ० 52
23. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 59
24. वही, पृ० 96
25. वही, पृ० 95
26. वही, पृ० 96
27. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 108
28. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 223
29. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 326
30. "During the decade 1870&80 the agriculturist all over India lost a good deal of the progress that had been made previously.... Only one thing is certain from the evidence before the finance committee and famine commission and other sources, the condition of the agriculturists at the end of this period was one boardiring and extreme property." **Dr. D.R. Gadgil, The Industrial Evolution of Indian recent times, पृ० 31 -32**
31. श्री हरिभाऊ उपाध्याय (संपादक), मेरी कहानी, पृ० 58
32. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 236
33. डॉ० रश्मि चतुर्वेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखा चित्र : एक अध्ययन, पृ० 68
34. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 606
35. वही, पृ० 608
36. वही, पृ० 47-48

37. वही, पृ० 78
38. वही, पृ० 162
39. वही, पृ० 162
40. वही, पृ० 157
41. वही, पृ० 158
42. वही, पृ० 87
43. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 12
44. वही, पृ० 17
45. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 215
46. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 434—435
47. वही, पृ० 436
48. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 347
49. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 476—477
50. वही, पृ० 507
51. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, पृ० 538
52. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 405
53. रामधारी सिंह दिनकर, संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, पृ० 97
54. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—तीन), वन्दे वाणी विनायकौ, (निबंध) पृ० 104—105

55. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 13
56. वही, पृ० 25
57. वही, पृ० 25
58. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 420
59. वही, पृ० 289
60. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 462
61. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 320
62. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 96—97
63. वही, पृ० 165
64. रामधारी सिंह दिनकर, संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, पृ० 100
65. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 37
66. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 115
67. वही, पृ० 117
68. वही, पृ० 32
69. कमला प्रसाद, धनंजय वर्मा, श्यामसुंदर मिश्र, मलय, श्याम कश्यप, (संपादक मण्डल), परसाई रचनावली (खंड—तीन), पृ० 192
70. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 581
71. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—तीन), पृ० 6

72. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 72
73. वही, पृ० 84
74. वही, पृ० 110
75. वही, पृ० 33-34
76. वही, पृ० 20
77. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 52
78. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 56
79. वही, पृ० 52
80. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-तीन), वन्दे वाणी विनायकौ (निबंध) पृ० 126
81. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 380
82. वही, पृ० 380-381
83. वही, पृ० 381
84. वही, पृ० 329
85. वही, पृ० 365-366
86. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 432
87. वही, पृ० 472
88. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-तीन), वन्दे वाणी विनायकौ (निबंध) पृ० 109
89. वही, पृ० 172

90. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ0 464
91. वही, पृ0 457
92. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ0 97
93. डॉ0 जगदीशचन्द्र माथुर, जिन्होंने जीना जाना, पृ0 14
94. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ0 450
95. डॉ0 गजानन चव्हाण, डॉ0 राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ0 20
96. वही, पृ0 320
97. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ0 316
98. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ0 448
99. वही, पृ0 449
100. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ0 332
101. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ0 512
102. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ0 291-292
103. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ0 443
104. डॉ0 गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ0 26

105. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 14
106. रामधारी सिंह दिनकर, संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ, पृ० 103
107. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 19
108. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 26
109. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 26
110. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 74
111. वही, पृ० 74
112. वही, पृ० 35
113. वही, पृ० 38
114. वही, पृ० 96
115. वही, पृ० 39
116. वही, पृ० 41
117. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 105
118. वही, पृ० 169
119. वही, पृ० 35
120. वही, पृ० 14-15
121. वही, पृ० 15
122. वही, पृ० 33
123. वही, पृ० 33
124. वही, पृ० 131

125. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 41
126. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 33
127. वही, पृ० 104
128. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), मुझे याद है (आत्मकथात्मक लेख) पृ० 28
129. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 414
130. वही, पृ० 302
131. वही, पृ० 303
132. वही, पृ० 367
133. वही, पृ० 404
134. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 102
135. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 503
136. वही, पृ० 506
137. वही, पृ० 499
138. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 357
139. वही, पृ० 370
140. वही, पृ० 385
141. वही, पृ० 409
142. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 107

143. वही, पृ० 22
144. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 476
145. डॉ० रश्मि चतुर्वेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखा चित्र: एक अध्ययन, पृ० 80
146. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 225
147. वेदप्रकाश शर्मा (संपादक) समकालीन हिन्दी साहित्य, पृ० 176
148. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 176
149. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 391
150. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 208
151. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 175
152. वही, पृ० 175
153. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 419
154. वही, पृ० 306
155. वही, पृ० 307
156. वही, पृ० 309
157. वही, पृ० 392
158. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 218
159. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 179

पंचम अध्याय

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का
शिल्प—विधान

पंचम अध्याय

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी के डायरी साहित्य का शिल्प—विधान

शिल्प सिर्फ अभिव्यक्ति नहीं है, इसका संबंध संवेदना से होता है। 'शिल्प' शब्द की व्युत्पत्ति के संबंध में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है। "'उणादिकोश' के अनुसार 'शिल्प' शब्द शील समाधों धातु से 'य' प्रत्यय और शील के ह्रस्व लगाकर बनता है। आप्टे के अनुसार इस शब्द की उत्पत्ति शिल + पक है। अमरकोश में शिल्प को 'कर्मकलादिकम्' कहा गया है।"¹

संस्कृत साहित्य में शिल्प शब्द का प्रयोग दो अर्थों में हुआ है, प्रथम—प्रयोग कौशलपूर्ण रचना के लिए, द्वितीय—नृत्य, मृदंग, वादन और मूर्ति निर्माण आदि विभिन्न कलाओं के अर्थ में। अंग्रेजी भाषा में शिल्प के पर्याय के रूप में 'एक्सप्रेसन', 'क्राफ्ट' तथा 'टेकनीक' आदि शब्दों का प्रचलन है; किंतु अनेक वाद—विवाद के पश्चात् यह पूर्णतः स्पष्ट हो गया है कि एक्सप्रेसन शब्द अभिव्यक्ति एवं अभिव्यंजना का पर्याय है और वही टेकनीक शब्द का अर्थ है—शिल्प—तंत्र, शिल्प—प्रविधि, शिल्प के नियम तथा सिद्धांत, इसलिए अंग्रेजों का 'क्राफ्ट' शब्द ही वास्तव में शिल्प का पर्याय है। हिंदी साहित्य में सामान्यतः 'रूप' और 'शिल्प' का प्रयोग समान अर्थ में किया जाता है, परन्तु दोनों में अंतर है, क्योंकि अंग्रेजी में 'रूप' के लिए 'फार्म' तथा शिल्प के लिए 'क्राफ्ट' शब्द का प्रयोग किया जाता है।

हिंदी साहित्य के आलोचक तथा साहित्यकार प्रायः शिल्प शब्द के साथ विधि अथवा विधान शब्द का प्रयोग तो कर देते हैं, किंतु उसके अर्थ में अंतर नहीं करते। चूँकि वास्तविकता यह है कि दोनों में पर्याप्त भेद है। 'विधि' का अर्थ देखें तो नियम, कानून, सिद्धांत आदि और 'विधान' का अर्थ है, प्रबंध, व्यवस्था, संयोजन आदि। इस प्रकार स्वाभाविक है कि 'विधि' और 'विधान' शब्दों में अंतर होने के कारण स्वतः ही शिल्प विधि एवं शिल्प—विधान में भी अंतर हो जाता है।

शिल्प—विधान में रचनाकार की सृजनात्मकता का महत्वपूर्ण स्थान होता है। डॉ० रश्मि चतुर्वेदी शिल्प—विधान के संबंध में लिखती हैं कि—“लेखक अपने अनुभवों, सामाजिक यथार्थ आदि से उद्बलित होते हुए भावों को अपनी कृति में उकेरता है।

लेखक जो कुछ कहना चाहता है या जो कुछ उसने कहा है; वह कृति का भाव-संसार होता है; और जिस ढंग से, जिस प्रक्रिया से जिस ढाँचे से उसे प्रस्तुत किया है वह इसका शिल्प विधान है।² इस प्रकार शिल्प-विधान शब्द कौशलपूर्ण रचना प्रबंध या व्यवस्था के अर्थ का द्योतक है। किसी भी रचना का आरंभ से अंत तक कौशलपूर्ण संयोजन ही शिल्प-विधान कहलाता है।

स्पष्ट है कि रचनाकार नये सौंदर्य-बोध को प्रस्तुत करने के लिए सृजन का नया ढाँचा प्रस्तुत करता है। प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति अनुभूत विषय की सुंदरता पर भी निर्भर करती है, परंतु यदि उचित विषय-वस्तु को भाषा-शैली के उपकरणों द्वारा सजाया जाये तो विषय-वस्तु की अभिव्यक्ति अधिक प्रभावपूर्ण बन जाती है; अतः श्रेष्ठ साहित्यकार भाषा-शैली का महत्त्व अस्वीकार नहीं करता।

विचार, कल्पना, भाव और शैली साहित्य के चार मुख्य तत्त्व माने गए हैं। साहित्य-जगत में शैली के स्वरूप को लेकर निरंतर चर्चाएँ होती रही हैं। उदाहरणस्वरूप, डॉ० नगेन्द्र के अनुसार—“शैली के दो मूल तत्त्व हैं—एक व्यक्ति तत्त्व और दूसरा वस्तु तत्त्व।...वास्तव में शैली के व्यक्ति-तत्त्व और वस्तु-तत्त्व में व्यक्ति-तत्त्व ही प्रधान है, उसी के द्वारा शैली के बाह्य उपकरणों का सम्बन्ध अनेकता में एकता की स्थापना करता है।”³ श्रेष्ठ शैली के संबंध में शिवदान सिंह चौहान का कहना है—“साहित्य में शैली का अर्थ है राष्ट्रचयन और वाक्य-विन्यास का ऐसा ढंग, जो लेखक के व्यक्तित्व और उसके विचार और मन्तव्य को पूर्ण रूप से व्यक्त कर सके। जिस लेखक की भाषा उसके विचारों के अनुरूप हो, उन्हें अधिक से अधिक मार्मिक और सुस्पष्ट ढंग से व्यक्त कर सके, उसी शैली को हम अच्छी या श्रेष्ठ शैली कह सकते हैं।”⁴

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने शैली के बारे में कहा है—“आज शैली का प्रयोग कला और शिल्प के समस्त उपकरणों को अभिव्यक्ति के लिए किया जाता है।”⁵

स्पष्ट है कि शैली एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा लेखक अपने कथ्य की अभिव्यक्ति करता है और स्वतंत्र रूप से मौलिक कृति का निर्माण करता है, क्योंकि

प्रत्येक लेखक का अपना-अपना निजी शिल्प होता है। शैली के संबंध में बेनीपुरी स्वयं लिखते हैं—“शैली तो व्यक्तित्व का अंश होती है। व्यक्ति के विकास के साथ ही शैली का विकास होता है। होते-होते वह दिन भी आता है कि बिना नाम-मुहर के भी लाखों के बीच, व्यक्तित्व की तरह शैली भी आप-से-आप पहचानी जा सकती है। यह मेरा दूसरा सौभाग्य है कि मेरी शैली भी हिन्दी संसार में एक विशिष्ट स्थान बना सकी है। छोटे-छोटे वाक्य, चलते-फिरते मुहावरे, साफ-सुथरे शब्द, यहाँ तक कि छोटे-छोटे पैराग्राफ को मैं उत्तमशैली के प्रमुख उपादान मानता हूँ। शैली अभ्यास खोजती है और व्यक्तित्व के निर्माण की तरह शैली का निर्माण भी प्रारम्भ में कुछ पथ-प्रदर्शन चाहता है।”⁶

इस प्रकार बेनीपुरी ने शैली को व्यक्तित्व का मुख्य अंश माना है, वे मानते हैं कि शैली का विकास भी व्यक्तित्व के विकास के साथ-साथ होता जाता है। बेनीपुरी की शैली में बेनीपुरी स्वयं हर जगह छिपे हुए हैं। छिपे होने में उनकी महानता, उनकी विशेषता छिपी हुई है। वास्तव में बेनीपुरी सरल, सुबोध और सहज शैली में लिखा करते थे।

(क) डायरी साहित्य में प्रयुक्त शैलियाँ

बेनीपुरी एक अनोखे प्रकार के शब्द शिल्पकार के साथ-साथ कुशल डायरीकार भी हैं इसलिए वे अपनी भाषा-शैली के लिए बहुत चर्चित रहे हैं। उन्होंने स्वयं की भाषा-शैली के बारे में लिखा है—“अपनी भाषा और शैली पर मुझे अनायास प्रशंसा मिल चुकी है।”⁷ हिन्दी में वे अपनी विशिष्ट शैली के लिए विख्यात हैं। उन्होंने हिन्दी के गद्य को एक नए साँचे में ढाला था। उनकी लेखनी में एक प्रकार का जादू है, इसलिए उनको कलम का जादूगर कहा जाता है। जिस प्रकार उनके विचारों में विविधता है उसी प्रकार इनका शिल्प-विधान डायरी साहित्य में भी विविध रूपों से सजा हुआ है। डायरी साहित्य उनकी अद्भुत शैली के बहुरंगी रूपों से परिपूर्ण हैं। ‘डायरी के पन्ने’ एवं यात्रा-डायरियाँ ‘पैरों में पंख बाँधकर’, ‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में शैली के विधागत एवं भिन्न-भिन्न रूप देखने को मिलते हैं। जो इस प्रकार हैं—

(i) आत्मकथात्मक शैली

डायरी में लेखक का जीवन व्यवस्थित रूप से पाठकों के सामने उभरकर आता है। लेखक के जीवन की कथा जब किसी पात्र, घटना या स्थिति के साथ अपना संबंध जोड़कर चलती है तब वहाँ आकर आत्मकथात्मक शैली का ही प्रयोग माना जाता है।

डायरी लिखते समय लेखक पूर्ण आत्मीयता के साथ अपने निजी जीवन का चित्रांकन करते चलता है चाहे वह कितना ही कटु क्यों न हो। डायरी में आत्मकथात्मक शैली का प्रचुर मात्रा में प्रयोग होता है, क्योंकि डायरी लेखक से पूर्णतः जुड़ी होती है, और आत्मकथा लेखक के निजीपन की। इस प्रकार जहाँ डायरी होगी, वहाँ आत्मकथात्मक शैली ज़रूर होगी। इस शैली में लेखक प्रायः 'मैं' या 'मैंने' जैसे आत्मबोधक शब्दों का प्रयोग करता है। बेनीपुरी ने अपनी डायरी में अपने निजी जीवन का गहरा चित्रण कर आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग किया है। बेनीपुरी ने कई बार आत्मकथा लिखने का प्रयास किया है। 17 अप्रैल, 1953 की डायरी में वे लिखते हैं कि—“कई बार मैंने भी आत्मकथा लिखने की कोशिश की, छिटपुट आत्मकथात्मक निबन्ध तो प्रायः लिखता रहा हूँ, किन्तु एक सिलसिलेवार चीज़ अभी तक नहीं दे सका। बात यह है कि मेरा जीवन कई हिस्सों में पेश हुआ है, पत्रकार बेनीपुरी, साहित्यकार बेनीपुरी, राजनीतिक बेनीपुरी, समाजवादी बेनीपुरी, फिर पारिवारिक बेनीपुरी की इन सब पर एक-एक पुस्तक लिखी जा सकती थी।”⁸

13 सितम्बर, 1956 की डायरी में आत्मकथात्मक शैली में लिखते हैं—“अभी—अभी डायरी लिख रहा था कि मूर्च्छा की झलक आ रही थी। सचमुच यह ज़र्दा मुझे मार डालेगा। पान—पर पान और हरा पान के साथ ज़र्दा! उस दिन डॉक्टर गयाप्रसाद ने भी सलाह दी, ज़र्दा दीजिए किन्तु मैंने हँसकर टाल दिया। अभी तक मैं अपने को सबल और स्वस्थ माने जा रहा हूँ, जवान मानने की भी गलती कर लेता हूँ, किन्तु अब मैं रोगी हूँ, अंग—अंग में रोग; उस पर बुढ़ापा। लेकिन मन मानता ही नहीं।”⁹ 7 नवम्बर, 1959 की डायरी में अपने परिवार के

आर्थिक संकट को झेलते हुए वे आत्मकथात्मक शैली में लिखते हैं—“समझ में नहीं आता, मैं क्या, करूँ—कैसे करूँ? बेटों को बुला लिया, जित्तिन और ऊषा को बुला लिया है। क्या उन्हें छोड़कर बेनीपुर के लिए चल दूँ? क्या रानी को यहीं छोड़ दूँ, ऊषा को बच्चा होने वाला है, वह बेचारी क्या कहेगी? जब—जब सोचता हूँ, माथा फटने लगता है। अभी तो मैं ही कमाता हूँ। सभी लोग खाते हैं। तब तो मेरी यह हालत है? यदि इनकी कमाई पर जीने का मौका हो, तब क्या होगा? नहीं, मेरे लिए यह स्थिति असहाय है। मैं ममता में सब—कुछ भूल जाता हूँ ; ये लोग इस कमजोरी से नाजायज़ फायदे उठाते रहे हैं। लेकिन सब चीज की एक हद होती है। मुझे अपने को इस नरक से उबारना ही होगा।”¹⁰ इस प्रकार बेनीपुरी ने अपनी डायरी में बड़ी ही सच्चाई से अपने परिवार की आर्थिक संकटों को आत्मकथात्मक शैली में व्यक्त किया है। 30 नवम्बर, 1955 की डायरी में अपने बुढ़ापे को सोचकर वे आत्मकथात्मक शैली में लिखते हैं—“जब मैं सोचता हूँ, मैं छप्पनवाँ पूरा कर रहा हूँ, तो चोट यह लगती है कि उफ, मैं उन्नीसवीं सदी का आदमी हूँ। किसी के दकियानूसीपन की खिल्ली उड़ाते समय नौजवान कहा करते हैं, ये उन्नीसवीं सदी के लोग हैं। मैं अब तक समझता रहा, यह तोहमत तो मुझ पर नहीं लगाई जा सकती। किन्तु इस जानकारी ने यह पूँजी भी छीन ली! मैं उन्नीसवीं सदी का हूँ, उफ।”¹¹

यात्रा डायरी ‘पैरों में पंख बाँधकर’ 19 अप्रैल 1951 की डायरी में पटना से दिल्ली जाते हुये आत्मकथात्मक शैली में भरपूर प्रसन्नता के साथ वे लिखते हैं कि—“यह देखिये, मेरे पैरों में पंख लग गए, उड़ रहा हूँ। हाँ, मेरे पैरों में पंख बँध गए हैं, मैं उड़ रहा हूँ, उड़ा जा रहा हूँ।”¹²

अतः स्पष्ट है कि आत्मकथात्मक शैली डायरी में लेखक के जीवन और व्यक्तित्व का चित्रण अंकित कर देती है, जो आत्मकथात्मक शैली के बिना संभव नहीं है।

(ii) संस्मरणात्मक शैली

बेनीपुरी ने अपनी डायरी में संस्मरणात्मक शैली का भी प्रयोग कर दिखलाया है, उनके संस्मरण छुट-पुट मात्रा में मिलते हैं। संस्मरणात्मक शैली में लेखक का जीवन रचना में आ जाए; यह आवश्यक नहीं है, किंतु उसमें लेखक की घटनाओं, पात्रों व स्थितियों से कुछ न कुछ किसी न किसी प्रकार का संबंध अवश्य होता है; यदि संबंध भी न होगा तो कम से कम लेखक की तीव्र प्रतिक्रियाएँ अवश्य समाहित रहती हैं। जब लेखक स्मरण के आधार पर कोई चित्र लिखता है तब संस्मरणात्मक शैली का प्रयोग करता है।

31 जनवरी 1952 की डायरी में वे संस्मरणात्मक शैली में स्कूल में अपने विवाहित जीवन को स्मरण करते हुए लिखते हैं—“जब शादी हुई, मैं स्कूल में पढ़ रहा था। लोगों ने कहना शुरू किया अब यह क्या पढ़ेगा, किताब के पन्ने उल्टाएगा या आँचल का छोर। किन्तु ऐसे आलोचकों को आश्चर्य हुआ जब शादी होने के बाद भी मेरा पढ़ना जारी ही नहीं रहा; बल्कि इस तरह जारी रहा कि मैं क्लास में सदा फर्स्ट आता।”¹³ 31 जनवरी, 1952 ‘बंसत पंचमी’ की डायरी में उन्हें जेल का प्रसंग याद आता है। इस प्रसंग को वे संस्मरणात्मक शैली में लिखते हैं—“रानी मुझसे मिलने (1943 में शायद) गया जेल में गई। सभी बच्चे बीमार; वह भी बीमार। मैं विचलित हुआ। कहा, देखो, इस समय मैं नजरबंद हूँ। यदि मैं सरकार को शर्त लिख दूँ तो वह शायद छोड़ दे—तुम क्या कहती हो? देखा, उसकी आँखों में आँसू आ गए, किन्तु बड़ी दृढ़ता से कहा—नहीं; ऐसा न कीजिए। मैं ही अकेली अभागिन नहीं हूँ! सारे देश में मेरी ऐसी औरतें विपदा काट रही हैं। आप मेरे दिए अपने पर जिन्दगी—भर के लिए कलंक मत लगाइए अच्छे दिन भी आएँगे, मैं यह सब झेल लूँगी।”¹⁴

18 अप्रैल, 1950 की डायरी में ‘सुन्दरलाल’ जी के विषय में इसी शैली में लिखते हैं—“सुन्दरलाल जी को बचपन से जानता हूँ। जब मैं स्कूल में पढ़ता था, ‘कर्मयोगी’ के सम्पादक के सम्पादक की हैसियत से मशहूर थे। असहयोग के दिनों में ‘भविष्य’ निकाला था। फिर एक लोकप्रिय नेता और वक्ता के रूप में प्रसिद्ध हुए।

हिन्दी में उनकी कोटि के वक्ता तो उन दिनों थोड़े ही थे। विचारों में उग्रता—भाषण में वह शक्ति थी कि जब चाहें हँसा दें, रूला दें;।¹⁵ 16 अगस्त, 1953 की डायरी में बेनीपुरी जी इसी शैली में 'दिनकर' जी से हुई पहली भेंट को कुछ इस प्रकार याद करके लिखते हैं—“याद आता है, दिनकर से जब पहली बार भेंट हुई थी। एक देहाती किशोर—मात्र, सिर पर गोल टोपी पहना करते। चेहरे से भोलापन टपकता। अभी—अभी कविता के क्षेत्र में प्रवेश किया था—किन्तु, उनकी तुकबन्दियों में कहीं—कहीं ऐसी चीज़ चमक उठती; जो साबित करती थी, यह लड़का कुछ होकर रहेगा। स्वभाव से ही प्रतिभा पूजक हूँ। मैंने पीठ ठोंकी, उनकी कविताओं को अपने पत्रों में—“युवक” में “योगी” में प्रमुख स्थान देना प्रारम्भ किया। धीरे—धीरे लोगों की नज़रों में वह चढ़े—ज्यों—ज्यों प्रशंसा मिलती गई, वह और भी निखरते गए और आज यह है!”¹⁶

एक और उदाहरण उनकी 10 अप्रैल, 1959 की डायरी से जिसमें बेनीपुरी 'अखिल भारतीय हिन्दी सम्मेलन' (मुज़फ़्फ़रपुर) के बारे में स्मरण करके लिखते हैं कि—“एक रात की बात तो मैं जीवन—भर भूल नहीं सकता। मुज़फ़्फ़रपुर में अखिल भारतीय हिन्दी सम्मेलन हो रहा था। स्वागत का बहुत सा भार मुझ पर था। दिन—भर मैं दौड़ता—फिरता। रात में किसी एक कलाकार मित्र के घर जाकर सो जाता। गर्मी के दिन थे; छत पर, खुले आसमान के नीचे सो जाता। एक रात सोया था कि अचानक किसी दबाव से नींद टूट गई। पाया, शुक्ल जी हैं। बातें शुरू कर दीं और अन्ततः छाती पर पिस्तौल रखकर बोले—या तो पार्टी में शामिल हो, या जहन्नुम जाओ। मैं थोड़ी देर भौंचक रह गया, फिर कहा—मार डालिए, आपके हाथ से मरकर स्वर्ग ही जाऊँगा, किन्तु किसी स्टेज में कमज़ोरी आ गई, तो अपने को कलंकित करना मैं नहीं चाहता।”¹⁷

इस प्रकार उनकी डायरी में संस्मरणात्मक शैली के अनेकों छुट—पुट उदाहरण देखने को मिलते हैं।

(iii) निबंधात्मक शैली

बेनीपुरी ने डायरी में निबंधात्मक शैली को भी अपनाया है। भिन्न—भिन्न जगहों पर निबंधात्मक शैली का प्रयोग किया है। जैसा कि नाम से ही ज्ञात हो

जाता है। निबंध अर्थात् बंधन मुक्ततया निबंध; अर्थात् किसी विषय विशेष का स्वच्छंद वर्णन। व्यक्ति, घटना के अतिरिक्त बेनीपुरी की डायरियों में स्थितियों, वस्तुओं, स्थानों, वातावरण आदि का यथार्थवत् वर्णन मिलता है। चित्रण की सजीवता के लिए कौशलपूर्ण वर्णन आवश्यक है। बेनीपुरी इस कला में अत्यन्त कुशल हैं। 10 जनवरी, 1955 की डायरी में वे नेपाल के किसानों के विषय में बताते हुए इसी शैली के माध्यम से लिखते हैं—“नेपाल के किसान बड़े कर्मठ होते हैं, साल भर तक खेतों में जुटे रहते हैं। हाँ, जुटे रहते हैं; क्योंकि यहाँ खेतों में बैल से काम नहीं लिया जाता। आदमी ही जोतते हैं, कोड़ते फिर एक खास ढंग के मुँगड़े से ढेले तोड़ते हैं। कोड़ते समय मिट्टी इस तरह रखते हैं कि क्यारियाँ बनती जाती हैं, जिससे सिंचाई में सुविधा हो।”¹⁸

7 फरवरी, 1956 की डायरी में इसी शैली के मध्यम से ‘जयपुर’ शहर के विषय में लिखते हैं—“जयपुर को ‘गुलाबी शहर’ कहा जाता है। सभी मकान प्रायः नारंगी रंग से रंगे। दुकानों के मुँडेर भी खूबसूरत। कुछ लोग इसे ‘भारत का पेरिस’ भी कहते हैं। पेरिस विशाल है। किन्तु खूबसूरती में इसके निकट भारत का कोई शहर नहीं टिक सकेगा यह निस्संकोच कहा जा सकता है। कैसे करीने से पंक्तिबद्ध, बसा है। फाटक और चौराहे देखने ही योग्य। सड़के काफी चौड़ी।”¹⁹ स्पष्ट है कि स्थानों एवं व्यक्ति का वर्णन डायरी में निबंधात्मक शैली को उत्पन्न कर देता है।

7 मई, 1951 की डायरी में बेनीपुरी जी लंदन अर्थात् विलायत की रेल का अनुभव इसी शैली से कुछ इस प्रकार वर्णित करते हैं—“रेल के भीतर पहुँचते ही आपको मालूम होगा कि किसी सजे-सजाए घर में पहुँच गए। सीटें क्या हैं; गद्देदार सोफे हैं। एक पाँत तीन की जगह। बीच में बाँही की तरह बना दिए गए हैं, जिससे एक-एक आदमी एक-एक सीट पर मौज से बैठ सके। गद्दे रंगीन हैं—बड़े ही नेत्ररंजक छींट के। पीठ की ओर भी गद्दे लगे हैं। बड़े सामान तो ब्रेकवान में रखे जाते हैं, छोटे सामानों के लिए ऊपर रेलिंग—सी लगी है। शौचादि के लिए जो कमरा है, वहाँ शीशे आदि सजे-सजाए हैं। ज्यों ही आप भीतर घुसे, बाहर आप—से—आप लिख जायगा। ‘Engaged’ ! ज्यों ही निकलिए फिर ‘Vacant’

लिख जायगा।²⁰ बेनीपुरी का वर्णनात्मक-शैली का पूर्ण प्रकाश हमें डायरी में देखने को मिलता है। 29 मार्च, 1959 'सीवान' की डायरी में जेल का नरकीय जीवन इसी शैली में सजीव बन उठा है—“यह छोटा सा जेल! मैं हज़ारीबाग जेल से यहाँ लाया गया था। रात का समय था। जेल ठसाठस भरा था। अतः औरत-किला को खाली कराकर रात-भर मुझे वहीं रखा गया। वर्षा हो रही थी; हवा के झकोरे चल रहे थे। एक पुराना पलंग कहीं से लाकर डाल दिया गया था। पलंग में खटमल ही खटमल। एक धुँए से काली बनी लालटेन रख दी गई थी। रात-भर मैं उस कोठरी में जगा रहा। जेल के बाहर सामने के पेड़ों की डालियाँ झूल रही थीं; लगता था उन पर प्रेत झूले झूल रहे हों। छप्पर के अन्दर कबूतरों ने घौंसले बना रखे थे; उनकी बीट की दुर्गन्ध से नाक फट रही थी। खिड़कियों से पानी के झकोरे भीतर आ रहे थे। छप्पर भी चू रहा था। बिछावन भी भीगा-भीगा हो गया था। उफ कैसी थी वह रात।”²¹ वर्णनात्मक शैली का प्रयोग बेनीपुरी ने अपनी डायरियों में सभी जगह किया है। व्यक्ति, वस्तु और घटना आदि के ऐसे चित्र खींचे हैं जो पढ़ते ही बनते हैं। बेनीपुरी जी ने 28 सितम्बर, 1951 की डायरी में ‘टालस्टाय’ के जीवन और उसके व्यक्तित्व का अंकन इसी वर्णनात्मक शैली में किया है—“टालस्टाय के जीवन पर बड़ी कड़ी निगाह डाली गई है—वह शराबी था, जुआरी था, अत्यन्त कामुक था। देखने में कुरूप—किन्तु, बड़ा साहसी, बलवान दिन भर पैदल चल सकता, बारह घंटे घोड़े की पीठ पर सवारी कर सकता।... वह घमंडी था, किसी के नमस्कार का भी उत्तर नहीं देता। अपनी पुस्तकों की आलोचना वह बर्दाश्त नहीं कर पाता। बड़ा चिड़चिड़ा; बात-बात पर लड़ने-मरने को तैयार। बड़े घर का बेटा! नौजवानों में रंगरेलियाँ कीं। फौज में काम किया... टालस्टाय प्रतिदिन आठ-दस घंटे तक ज़रूर लिखता। हाँ, उसके अक्षर बहुत खराब होते थे।”²²

इस प्रकार बेनीपुरी ने वर्णनात्मक शैली में टालस्टाय के जीवन पर कड़ी निगाह डाली है। 27 जनवरी, 1952 की डायरी में अपने घर आये पृथ्वीराज एवं उनके साथ आये कलाकार की स्थिति एवं वातावरण का वर्णन करते हैं—“आज मेरे घर पर पृथ्वीराज आए थे। उनके पिताजी थे, उनकी पत्नी थीं, उनका प्यारा

बेटा शम्मीकपूर था और थे एक दर्जन उनके टूप के कलाकार—लड़कियाँ और लड़के। तीन घंटों तक वे मेरे इस गाँव में, मेरे इस नए मकान में ठहरे। बड़ी चहल—पहल रही। लड़कियाँ खेतों में घूमिं, साग खाई, गाँव की कुटीरों और आँगनों में घूमिं। पृथ्वीराज ने भी बड़े आनन्द से समय काटा। चलते समय फोटो लिए। टूप की लड़कियों की मेरे घर की, मेरी और दिनकर की, रानी और अपनी पत्नी की, फिर मेरे पोते लल्लन को खाते समय बीच में करके दोनों और देवेन्द्र और शम्मी को खड़ा करके तस्वीरें लीं। उनके व्यवहारों ने सबको मुग्ध कर लिया। आसपास से काफी लोग आए थे। मेरे दरवाजे पर तीन घंटों तक भीड़ बनी रही।²³

15 मई, 1951 की डायरी में ब्रिटेन के प्रधान नगर 'ग्लासगो' का वर्णन किया है—“यह ग्लासगो है। ब्रिटेन का द्वितीय प्रधान नगर। ग्यारह लाख इसकी जनसंख्या है। क्लाइड नदी पर बसा है यह। जहाज़ बनाने में इस नगर का कोई सानी नहीं है। ब्रिटिश कॉमनवैल्थ के दो सबसे बड़े जहाज़ यहीं बनाए गए थे—‘क्वीन मेरी’ और ‘क्वीन एलिज़ाबेथ’ और सबसे मजबूत जंगी जहाज़ ‘वानगार्ड’ भी यहीं बना था।”²⁴ बड़े ही सहज ढंग से उन्होंने वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया है।

15 मई, 1952 की डायरी में वे बड़ी सूक्ष्मता के साथ पेरिस के ‘इफेल टावर’ का वर्णन करते हैं—“इफेल टावर—एक सौ चौरासी फीट ऊँचा विशुद्ध इस्पात का यह स्तम्भ 1881 की प्रदर्शनी के अवसर पर यह तैयार किया गया। सात हजार टन इस्पात इसमें लगा है, बारह हजार टुकड़े इसमें जोड़े गए हैं, जोड़ने में ढाई लाख पेंच लगे हैं। इफेल नामक इंजीनियर ने इसे दो वर्षों में तैयार किया।”²⁵

बेनीपुरी की संपूर्ण डायरी साहित्य उनके विचारों का परिचायक है। उन्होंने अपनी डायरियों में अपने विचारों को विश्लेषित किया है। उनके जीवन का अधिकतर समय साहित्य, राजनीति और सामाजिक नीति में सुधार के प्रयत्नों में व्यतीत हुआ। इस लम्बे समय में उनके मस्तिष्क—सागर में विचारों की जो लहरें पैदा हुईं उनको उन्होंने अपनी डायरियों में व्यक्त किया। 17 मई, 1950 की डायरी में अपने विचारों के माध्यम से उन्होंने नेतृत्व के सही स्वरूप को निर्धारित किया

है—“नेतृत्व के लिए प्रेम नहीं चाहिए, श्रद्धा चाहिए, भक्ति चाहिए। जब तक भगवान की भावना न आए, तब तक भक्ति नहीं की जा सकती। और श्रद्धा के लिए समता की भावना नहीं, महत्ता की भावना चाहिए। भगवान ऊपर है, महत्ता अपने से बड़ा होने का ही नाम है। इसलिए नेता वही हो सकता है, जिसे लोग अपने से बड़ा, अपने से कुछ दूर समझे। नेता का मंच ऊँचा बनाया जाता है—जिस पर वह खड़ा हो, तो लोग उससे छोटा दिख पड़े। मंच का ऊँचापन प्रबंध की ही आवश्यकता नहीं है, एक मनोवैज्ञानिक सत्य की ओर निर्देश भी है!”²⁶ इस तरह बेनीपुरी ने नेतृत्व का सही स्वरूप अपने विचारों से स्पष्ट कर दिया है। 12 मई, 1959 की डायरी में बेनीपुरी ने ‘विश्वास’ एवं ‘अन्धविश्वास’ के विषय में लिखते हैं—“किसी आदमी के प्रति विश्वास हो, वह ठीक है! किन्तु ये विश्वास जब अन्धविश्वास में परिणत हो जाए, तब प्रत्येक समझदार को भयभीत हो जाना चाहिए। क्योंकि यह अन्धविश्वास आदमी में अकर्मण्यता ला देता है।”²⁷ अतः विश्वास करना किसी के प्रति सही बात है, अन्धविश्वास नहीं। 25 मई, 1952 की डायरी में बेनीपुरी ने इस शैली के माध्यम से पेरिस की संस्कृति के विषय में लिखा है कि—“मैं संस्कृति का चिह्न फूल को मानता हूँ। जहाँ जितने फूल हों, फूलों की दुकानें हों, समझ जाइए, वह नगर उतना ही सुसंस्कृत है। पेरिस संस्कृति की नगरी है। यहाँ पेट में गोहूँ डालकर ही लोग सन्तोष नहीं करते, जब तक कि सीने पर गुलाब नहीं टँका हो!”²⁸ इस प्रकार बेनीपुरी ने संस्कृति का चिह्न फूल को माना है और पेरिस को संस्कृति की नगरी।

वैसे तो संपूर्ण साहित्य ही भावना प्रधान होता है। प्रत्येक रचना में कोई न कोई भावना निहित ही रहती है। वैसे ही उनके संपूर्ण डायरी साहित्य में भाव छापे हुए हैं। रामनवमी, 1952 की डायरी में अति भावुक होकर इसी शैली में लिखते हैं—“ठोकरों ने मुझे आगे बढ़ाया है, पराज्यों ने मेरे लिए विजय के पथ प्रशस्त किए हैं, आँसुओं ने मेरे होठों को हँसी का बाजार बनाया है; लड़ता, झगड़ता, उलझता, सुलझता मैं आगे बढ़ता रहा हूँ, सदैव आगे, सदैव आगे—बस, यही क्रम बना रहे।”²⁹ 8 दिसम्बर, 1953 की डायरी में उनके भाव कितने मार्मिक हो उठे हैं। वे लिखते हैं—“जिसने पीड़ा नहीं उठाई, वह चित्रण किसका करेगा? आनन्द तो एक पाशविक

वृत्ति है। यह बैल को चाहिए या व्यापारी को। कलाकार तो पीड़ा में पलता है, पीड़ा में बढ़ता है। यदि तुम्हें भूख मिलती है, निराशा मिलती है, दुर्भाग्य मिलता है, तो समझो, भगवान तुम पर खुश है।³⁰ 31 जनवरी, 1952 की डायरी में वे 'रानी' के बुढ़ापे को देखकर अत्यन्त भावुक होकर लिखते हैं—“रानी का यह बुढ़ापा—जब—जब उसे देखता हूँ, सिहर उठता हूँ। यह बुढ़ापा मैंने दिया है उसे। और, उसने अपने पर बुढ़ापा लेकर मेरी जवानी को बरकरार रहने दिया। इन पन्द्रह वर्षों में जैसी विपदाएँ आई, मैं भी बूढ़ा हो गया होता, यदि रानी ने ढाल बनकर उनके सारे बार अपने ऊपर नहीं झेल लिए होते।”³¹ इस प्रकार की भाषा—शैली भावुक एवं संवेदनशील व्यक्तियों की चेतना शक्ति को उदबुद्ध करती है। प्रभावपूर्ण भावात्मक शैली की प्रमुख अनिवार्यता—शैली का कल्पना प्रधान होना है। जब कोई साहित्यकार यथार्थ परिस्थिति से उठकर कल्पना लोक में विचरण करने लगता है तो उसकी शैली प्रवाहपूर्ण भावात्मक शैली बन जाती है। 28-29 मार्च, 1950 की डायरी में लिखते हैं—“‘नई धारा’ और ‘चुन्नू-मुन्नू’ मेरे जीवन की अन्तिम साधना है। मेरी कामना है कि जब मैं मरूँ, मेरी चिता पर इन दोनों मासिकों के ताजा अंक कर दिए जाएँ! मेरी आत्मा के लिए सबसे बड़ा संतोष यही होगा।”³² 23 मार्च, 1952 की डायरी में वे इसी शैली के माध्यम से लिखते हैं—“मैं कहा करता, मैं इतना लिख जाना चाहता हूँ कि जब मरूँ, तो लकड़ियों की जगह मेरी रचनाओं की एक-एक प्रति ही रख दी जाए, तो मैं उसी से जलाया जा सकूँ।”³³

इस तरह उनके भाव डायरी पर हावी है। कहीं—कहीं तो बेनीपुरी डायरी लिखते समय इतने भावुक हो जाते हैं कि उनका यह भावोद्वेक पाठकों के भावों को सजग बनाता है।

स्पष्ट है कि बेनीपुरी की डायरी में उनके विचार एवं भाव स्पष्ट रूप से अंकित होते हैं। उनकी डायरी पूर्ण विचारात्मक है। अपनी डायरी में उन्होंने सम्पूर्ण स्थितियों, वस्तुओं, स्थानों, वातावरण इत्यादि का यथार्थ वर्णन किया है। ये शैली उनके संपूर्ण डायरी साहित्य में सर्वत्र मिलती है। वर्णनात्मकता इतना आवश्यक गुण है कि वर्णनात्मकता के बिना कोई भी रचना संपूर्ण नहीं हो सकती इस प्रकार स्पष्ट होता है कि बेनीपुरी ने डायरी में निबंधात्मक शैली का प्रयोग किया है।

(iv) पत्र शैली

पत्र हिंदी साहित्य की एक महत्त्वपूर्ण विधा के साथ-साथ महत्त्वपूर्ण शैली भी है। बेनीपुरी की डायरी में जगह-जगह पर इस शैली का प्रयोग मिलता है। पत्र शैली में वार्तालाप सदैव लिखी होती है अर्थात् यह सामान्यतः संबोधन शैली में वार्तालाप तकनीक पर लिखे जाते हैं। साहित्य में वही पत्र समाविष्ट समझे जाते हैं जो अपनी साहित्यिक गरिमा के कारण मानव समाज को प्रभावित करते हैं। साहित्य में ऐसे लेखकों की गिनती बहुत कम है। जिन्होंने अपने गद्य-साहित्य में पत्र शैली का प्रयोग किया है, किंतु बेनीपुरी ने इस शैली का प्रयोग अपने डायरी साहित्य में कर दिखलाया है।

27 अक्टूबर, 1959 की डायरी में इस शैली का प्रयोग मिलता है। राजनीति से पूरी तरह निराश हो चुके बेनीपुरी जय प्रकाश जी के नाम एक पत्र लिखते हैं। पत्र इस प्रकार है—

“प्रिय जयप्रकाश जी,

यह पत्र बड़े हृदय-मंथन के बाद लिख रहा हूँ। मैंने अपने को राजनीति से तटस्थ सा कर लिया है। प्रिय महावीर, (जपला) की हत्या के बाद तो मैं राजनीति से बिल्कुल निराश हो चुका हूँ। आपने भी तो राजनीति छोड़ ही दी है। अतः राजनीति के विषय में मैं कुछ लिखूँ और वह भी आपके नाम; यह उचित है या नहीं, मैं निर्णय नहीं पाता। तो भी समय-समय पर आपको अपनी हार्दिक भावनाएँ कहता या लिखता रहा हूँ उसी अभ्यासवश यह पत्र लिख रहा हूँ।... आज यह पार्टी क्या है, एक ऐसी सेना जिसका न कोई ‘सेनापति’ हो और न जिसमें कहीं ‘सैनिक’ ही दिखाई पड़ते हों; जिसमें सिर्फ ‘लफटट’ ही ‘लफटट’ (लेफ्टिनेंट) बच रहे हों। ‘लफटटों’ की ये सेना बड़े-बड़े खूबसूरत स्वप्न देख ले, लम्बी-चौड़ी बातें भी कर ले, जो तर्क की दृष्टि से अचूक और अकाट्य सिद्ध हों, किन्तु यह सेना क्या कभी विजय प्राप्त कर सकती है? न भूतो, न भविष्यति। अतः आज आवश्यक यह है कि कोई समर्थ पुरुष इन लफटटों की सेना के आगे खड़ा होकर कहे, ओ लफटटों, यह ढोंग छोड़ो, इस स्वप्न को तोड़ो, अरे, अपने-अपने घर जाओ; जाओ और

तुरन्त!' ऐसा कहकर आप देश का कल्याण कर लेंगे, अपने नए धर्म के लिए अच्छी पृष्ठभूमि बनालेंगे और सबसे बढ़कर अपनी पिछली गलती के लिए प्रायश्चित भी कर लेंगे।... इसी आशा में यह पत्र आपकी सेवा में भेजकर थोड़ी शान्ति का अनुभव कर रहा हूँ।

सस्नेह

रा० बेनीपुरी³⁴

29 सितम्बर, 1954 की डायरी में भी वे पत्र-शैली का प्रयोग करते हैं। पत्र कुछ इस प्रकार है—

“शिक्षा-मन्त्रालय

नई दिल्ली

दिनांक : 25 सितम्बर 1954

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी जी,

आपको याद होगा कि 1952 में भारत-सरकार के शिक्षा-मन्त्रालय ने हिन्दी में कविता, नाटक, उपन्यास, बाल-साहित्य और साधारण साहित्य के क्षेत्रों में श्रेष्ठ मौलिक रचनाओं और अनुवादों को पुरस्कार देने की एक योजना बनाई थी। मुझे आपको यह सूचना देने में बड़ी प्रसन्नता होती है कि हमारे निर्णय-मंडल ने आपकी 'माटी की मूरतें' शीर्षक पुस्तक को उपन्यास और कथा साहित्य (मौलिक) श्रेणी की श्रेष्ठ पुस्तकों में रखा है। इस निर्णय के अनुसार भारत सरकार ने सम्मानार्थ, 2,000 रुपये आपको भेंट करने का निश्चय किया है। आशा है कि आप स्वीकार करके मुझे अनुगृहीत करेंगे।

इस अवसर पर मैं आपको हार्दिक बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि भविष्य में भी आप इसी प्रकार की उच्चकोटि की पुस्तकें देश को देते रहेंगे।

आपका,

हुमायूँ कबीर

सचिव शिक्षा मन्त्रालय

भारत सरकार³⁵

इस प्रकार उन्होंने अपनी डायरी में पत्र शैली का भी प्रयोग कर दिखलाया है।

(v) व्यंग्य शैली

जो प्रभाव सीधी, सरल शैली से प्रखर नहीं होता वो विनोद, व्यंग्य तथा कटाक्ष शैली द्वारा अधिक होता है। समाज के दम्भ, पुराने रीति-रिवाज तथा अंधविश्वास और मान्यताएँ आदि विषयों पर प्रहार प्रायः इसी शैली के द्वारा किया जाता है। बेनीपुरी ने अपने डायरी साहित्य में व्यंग्य शैली के माध्यम से अपने विचारों को खुलकर पाठकों के सामने रखा है। आज़ादी के बाद बनी पहली कांग्रेस सरकार पर तीखा प्रहार एवं लगाये गए नारों के माध्यम से 25 दिसम्बर, 1951 की डायरी में वे व्यंग्य शैली में लिखते हैं—“...नए नारे तो बड़ी सीधी चोट करने वाले हैं— नेहरू राज की क्या पहचान, नंगा भूखा हिन्दुस्तान; बिना कफन के मुर्दे जलते, इस कांग्रेसी राज में; अन्न बिना रह-रह के मरते; इस कांग्रेसी राज में दवा बिना तड़प के मरते; इस अंग्रेज़ी राज में; कांग्रेसी राज हटायेंगे, सोशलिस्ट राज बनाएंगे; कांग्रेसी हुकूमत पर चोट दो, पेड़ वाले बक्से में वोट दो;”³⁶ इस प्रकार लगाये गये नेहरू सरकार के खिलाफ नारों को बेनीपुरी ने व्यंग्य शैली में लिखा है।

बेनीपुरी ने गरीबी, चोरी-डकैती, सामाजिक विषमता आदि की ओर अपनी डायरी में इसी शैली के माध्यम से संकेत भी दिया है। देश की स्वतंत्रता एवं देश की सरकार पर वह तीखा व्यंग्य 29 सितम्बर, 1952 की डायरी में अपने डेरे पर हुई चोरी के बारे में करते हैं—“आजकल पूरी अराजकता है। किसी को स्वराज्य हुआ ही नहीं, चोरों-चक्कारों, डकैतों, हत्यारों के लिए तो स्वराज्य हो ही गया है। आजकल अख़बारों में ऐसी घटनाएँ रोज़ पढ़ा करता हूँ और तमाशा यह है कि दरोगा जी मुझे समझाते हैं कि उन लोगों का कसूर नहीं है, कसूर है सरकार का, उनकी नई नीति का! बहरी सरकार, बहरे उसके अमले!”³⁷ इसी शैली के माध्यम से उन्होंने असंगतियों एवं सरकार का पर्दाफाश किया है। इसी शैली के और भी उदाहरण उनकी डायरी में मिलते हैं। (बंगाल को पार करते हुए) 10 सितम्बर, 1953 की डायरी में बेनीपुरी ने बंगाल की भूमि वहाँ की सुसंस्कृति और सभ्यता नष्ट होती देख राष्ट्रगीत के माध्यम से तीखा व्यंग्य इस शैली के द्वारा किया है—

“वन्दे मातरम्

सुजलाम्—खेत में पानी, खड्ड में पानी, पोखरे में पानी, नदी में पानी—उजला पानी, मटमैला पानी, हरा पानी, सड़ा पानी, बदबूदार पानी, बंगमाता, तुम्हारे, तुम्हारे पानी को प्रणाम!

सुफलाम्—ताड़ का फल, नारियल का फल, केले का फल, गोल फल, अंडाकार फल, लम्बा फल—नाना रूप, नाना आकार, के फलों की माता, ओ बंगभूमि, तुम्हें प्रणाम!

मलयज शीतलाम्—मिल की गन्ध सड़ाँध की गन्ध, मछली की गन्ध; जहाँ मलय—पवन भी नाना गन्ध से आक्रान्त होकर नाक बन्द करने को बाह्य करता है, हे बंग—जननी, तुम्हें प्रणाम!

शस्य—श्यामलाम्—धान की हरियाली, पटुए की हरियाली, साग—पात की हरियाली, सेंवार की हरियाली, एक इंच ज़मीन भी जहाँ हरियाली से नहीं बची हो, हे बंगमाता, तुम्हें प्रणाम!

मातरम्—हाँ तुम सात करोड़ बंगालियों की माता कभी थी, अब दो करोड़ भी तुम्हें, नमस्कार करने वाले नहीं रह गए। अतः मेरा प्रणाम लो।³⁸ स्पष्ट है कि बेनीपुरी ने अपनी डायरी में सामाजिक विषमता, शोषण, गरीबी, पूँजीवाद, संस्कृति, सभ्यता आदि का खुलकर विरोध इस शैली के माध्यम से किया है। बेनीपुरी के मन का आक्रोश इसी शैली के द्वारा व्यक्त होता है। स्वाधीनता के बाद भारत में प्रत्येक क्षेत्र में दिखाई देने वाली असंगतियों, अंतर्विरोधों, मिथ्याचारों की सही टिप्पणी उन्होंने अपनी डायरी में की है।

(vi) चित्रात्मक शैली

बेनीपुरी की चित्रात्मक भाषा, गद्य—भाषा की एक ऐसी विशेषता है जो उनकी सभी प्रकार की गद्य रचनाओं में पूर्णरूप से व्याप्त है। उनकी डायरी में चित्रात्मक भाषा—शैली खूब उभर कर आती है, जिससे सजीवता और भी सजीव बन उठती है। आम तौर पर देखा जाए तो उनकी भाषा व्यक्ति—चित्रों और सामाजिक जीवन की

गतिविधियों को उकेरने में अधिक सक्षम है। कई ऐसे उदाहरण उनकी डायरियों में मिलते हैं। 24 मई, 1954 की डायरी में मसूरी के बाज़ार का चित्र इसी शैली में देखने को मिला है—

“गोरी मेंमें हैं, भूरी सेठानियाँ हैं। फ़ॉक, साड़ी, सत्वार—सब पर रंगीनी की बहार। बच्चे उछल रहे हैं, बूढ़े चहक रहे हैं। सड़कें साफ—सुथरी, दुकानें, सजी—सजाई। पेड़ों से नए पत्ते निकल आए हैं, जहाँ—तहाँ फूल भी दिखाई पड़ते हैं। हाँ जहाँ—तहाँ ही।”³⁹

बड़ी ही सजीवता से बेनीपुरी ने चित्रात्मक शैली का प्रयोग किया है। 23 सितम्बर, 1958 की डायरी में ‘सोनपुर—स्टेशन’ के प्लेटफार्म का चित्र कुछ इस प्रकार प्रस्तुत किया है—“लोग प्लेटफार्म पर टहल रहे हैं, मुँह धो रहे हैं, खा रहे हैं। एक बच्चा नीम का दंतवन चिल्ला—चिल्ला कर बेच रहा है—खरीदिए और सामने उस नल पर मुँह धोइए। वह बेचारी गरीबिन नल के निकट आकर बैठ गई है; फटी धोती से खोलकर सत्तू निकालती है, अलमुनियम के बरतन में रखती है, फिर बरतन में पानी भर किस संकोच से मुँह लटकाए बैठ जाती है और सत्तू सुड़क रही हूँ। घर से अचार लाना नहीं भूली है। उसकी बगल में उसका बच्चा बैठ गया है, वह भी सत्तू सुड़क रहा है, किन्तु उनका मन अधिक आचार पर है—बच्चे चटकार चाटते हैं न?”⁴⁰

एक और उदाहरण उनकी डायरी से प्लेटफार्म पर चहलकदमी करने वालों की सूरतें जिसमें से ‘बेचारी देहाती सुन्दरी’ का चित्र—“माँग में सिन्दूर की मोटी लकीरी; हाथ में चाँदी के कंगन के ऊपर लाह की लहरेदार चूड़ियाँ; ढीली—ढाली चोली, नीचे के कई बटन खुले जिससे उसकी पेट्टी दिखाई पड़ती है। चौड़े कोर की साड़ी।”⁴¹ बेनीपुरी इस प्रकार बड़े ही सूक्ष्म, सौंदर्य के चित्रण में चित्रांकन भाषा का प्रयोग करते हैं।

10 जून, 1952 की डायरी ‘जिनेवा की सुहावनी संध्या’ में बेनीपुरी ने रेस्तोरॉ का बड़ा ही अनुपम और मनमोहक दृश्य उपस्थित किया है—“छोटे—छोटे काठ के ऐसे घेरे बना दिए गए हैं; जहाँ आप निश्चिन्त होकर खा—पी सकें। घेरे के चारों

ओर काठ के बक्सों में फूलों के पौधे हैं। चारों कोनों पर चार छोटे-छोटे स्तम्भ जिन पर फूलों के पौधे, फूलों से लदे। उनके नीचे बत्ती लगा दी गई है। बत्ती जल रही है, फूल हँस रहे हैं। बीच में खूबसूरत टेबुल और कुर्सियाँ! यहाँ खाइए, पीजिए, मजे लीजिए। हर घेरे में लोग बैठे हैं, ग्लास खनक रहे हैं, छुरी-काँटे झनक रहे हैं! बगल में मधुर बँड बज रहा है। उधर फव्वारे से झर-झर पानी झड़ रहा है जिस पर पड़ने वाली रोशनी उसे सतरंगी बना रही है। पेड़ों पर चिड़िया चह-चह कर रही है। स्वर और सौन्दर्य का यह संगम मन-प्राण को तृप्त कर रहा है।⁴² भाषा को चित्रात्मक बनाने के लिए बेनीपुरी विशेषणों का प्रयोग करते हैं। 3 जुलाई, 1950 की डायरी में 'मेहर अली' का विशेषण से युक्त शब्द-चित्र कैसा चित्रात्मक है—“गोरा-चिट्टा चेहरा, घुँघराले बाल, छरहरा बदन! स्वयंसेवकों की वर्दी में वह बहुत अच्छे लगते!”⁴³

इस प्रकार बेनीपुरी ने अपनी डायरी में व्यक्ति-चित्रों एवं उसकी भाव स्थिति के वर्णन में, प्रकृति और सौंदर्य के चित्रण में सामाजिक-जीवन स्थितियों, घटनाओं और सूक्ष्म से सूक्ष्म दृश्यों के अंकन में चित्रात्मक शैली का प्रयोग किया है। जिससे चित्रण सजीव हो उठा है।

(vii) प्रश्न शैली

बेनीपुरी के पास अपने विचारों को पाठकों के लिए सुलभ एवं सहज करने के लिए सीधा उपाय है, प्रश्न शैली। उन्होंने अपनी डायरी में इसका प्रयोग किया है। बेनीपुरी अपने डायरी में भी स्वयं से एवं पाठकों से सीधा प्रश्न करते हैं और उन्हें समझाने की मनोदशा में वर्ण्य विषय को स्पष्ट करते जाते हैं। यह प्रश्नात्मकता उनकी डायरियों में हमें विविध रूपों में मिलती है। 18 दिसम्बर, 1951 की डायरी में बेनीपुरी के मन में अपने साथियों की परेशानी देखकर बार-बार प्रश्न उठता है —“साथियों की परेशानी देखकर मन में दुःख होता है, ग्लानि होती है। कहाँ-कहाँ जाऊँ? और जाने से भी क्या होता है?... किन्तु क्या मनुष्य अनुभवों से भी लाभ उठाता है।”⁴⁴ इस प्रकार बेनीपुरी स्वयं से प्रश्न करते हैं। बेनीपुरी 18 मार्च, 1952 की डायरी में अपने पिछले पचास वर्ष के जीवन पर एक दृष्टि डालते हुये

प्रश्न करते हैं—“अपने साहित्यिक जीवन पर ही क्यों न एक दृष्टि डाल लूँ? किन्तु यह कहानी भी क्या छोटी है? कितने खट्टे—मीठे ही नहीं, तीते—तीते अनुभव? नहीं, रचनाओं के नाम—निर्देश मात्र पर ही सन्तोष करूँ।”⁴⁵ 3-4 जून, 1951 की डायरी में बेनीपुरी मातृभूमि की प्रशंसा करते हुए एवं स्वतंत्रता के लिए दिये गये बलिदान के सामने अपने बलिदान को बहुत ही तुच्छ मानते हुये प्रश्न शैली में लिखते हैं—“पाँच—छः सप्ताह तक जो देखा, वह सपना था न? मातृभूमि, तू कितनी प्यारी लगती है? तेरे लिए क्या—क्या कष्ट न उठाए? बार—बार जेल; जेल जीवन के वे दिन। किन्तु हम तो अब भी जीवित हैं—तुझे स्वतंत्र देख रहे हैं! किन्तु जो तुझ पर बलिदान हो गए? उनके सामने हमारा बलिदान कितना तुच्छ? इतने सारे बलिदान किस लिए? तेरे किस सौन्दर्य ने हमें मोहित किया, अभिभूत किया? तेरा रूखा—सूखा अंचल; तेरी सिकुड़ी—सहमी सन्तान! यह अंचल अब हरीतिमा से, रंगीनी से चमक उठेगा? तेरे बेटे, तेरी बेटियाँ कब सौन्दर्य और शौर्य से मंडित होंगे?”⁴⁶

इस प्रकार उनकी डायरी में प्रश्न शैली का भिन्न—भिन्न जगहों पर प्रयोग हुआ है।

(viii) संबोधन शैली

बेनीपुरी ने डायरी में पाठकों से अन्तरंग संबंध जोड़ने के लिए पाठकों को संबोधित करते हैं और साथ ही साथ स्वयं को भी। लेखक किसी व्यक्ति विशेष को भी संबोधित कर सकता है और किसी स्थान, भवन आदि को भी। 31 जनवरी, 1952 की डायरी में वे अपनी धर्मपत्नी को संबोधित करते हुए लिखते हैं—“रानी मेरी रानी— एक बार सोचा था, अपनी इस अर्द्धांगिनी पर एक पुस्तक ही लिखकर उसके ऋणों से मुक्त होने की चेष्टा करूँ, किन्तु ऐसा हो नहीं सका। ‘कैदी की पत्नी’ में उसकी एक झलक भरी, किन्तु पूरी तस्वीर कहाँ उभर पाई!”⁴⁷ ‘बापू की कुटिया में बैठकर’ 9 अक्टूबर, 1952 की डायरी में वे बापू को संबोधित करते हुए लिखते हैं—“बापू, तुम चले गए, यह धक्का हमने, सारे राष्ट्र ने किसी तरह सह ही लिया। किन्तु जब यह सोचता हूँ कि बाँस—काठ, चटाई की बनी यह कुटिया आठ—दस

वर्षों के बाद भी नहीं रहने पाएगी। लाख चेष्टा करने पर भी समय का कीट इसे चाट जाएगा, कुटिया की जगह यहाँ, शून्यता ही शून्यता ही रहेगी, तब हृदय और भी विचलित हो जाता है। मानव को पूजकर हमें सन्तोष नहीं, तो हम उसे पत्थर की मूर्ति बनाकर सन्तोष कर लेते हैं;⁴⁸

इस तरह बेनीपुरी संबोधन शैली का प्रयोग करते हुए अपने भावों को प्रकट कर देते हैं। बेनीपुरी स्वयं को संबोधित करते हुए 22 जनवरी, 1956 की डायरी में लिखते हैं—“नहीं बेनीपुरी, नहीं। इतना मत दौड़ो। न वह पुराना शरीर; न वह पुरानी स्फूर्ति! दिन भर दौड़ो; रात में अंग—अंग टूटे! ऐसा करेंगे, तो कितने दिन जी सकोगे! अरे, इतने काम बाकी हैं; यदि इस प्रकार अपने को थका डालोगे, तो फिर कैसे जी सकोगे? भगवान के नाम पर, अपने पर कृपा करो बेनीपुरी!”⁴⁹ इस तरह बेनीपुरी अपने भावों को संबोधित करते हुए नहीं रह पाते हैं। डायरी में उन्होंने जगह—जगह पर स्वयं को संबोधित किया है। 23 अप्रैल, 1951 की डायरी में बेनीपुरी जी ‘ऐरोप्लेन’ को संबोधित करते हुए लिखते हैं—“और ज़रा देखिए, हमारे इस ऐरोप्लेन को। B.O.A.C. के ऐरोप्लेन आराम और सुरक्षा के लिए प्रसिद्ध हैं। अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्रों में उड़ने वाले इनके प्लेन के तीन हिस्से होते हैं। बीच में चौबीस सीटें होती हैं, पीछे सोलह सीटें और आगे कैप्टन आदि के लिए जगह। कैप्टन के अलावा फर्स्ट अफसर, नैविगेटिंग अफसर, रेडियो अफसर। आगे और पीछे के हिस्सों और बीच के हिस्सों के मध्य में ट्वायलेट और ड्रेसिंगरूम होते हैं।”⁵⁰

अतः स्पष्ट हो जाता है कि बेनीपुरी ने अपनी डायरी में संबोधन शैली का प्रयोग संभवतः किया है।

(ix) संवाद शैली

संवाद शैली में लेखक विषयवस्तु को इस तरह प्रस्तुत करता है कि मानो पाठक सामने बैठा है और लेखक उसे संबोधित कर रहा है। आम तौर पर देखा जाए तो संवाद शैली का प्रयोग नाटकीयता में संभव है। फिर भी इस शैली का प्रयोग हमें उनकी डायरी में देखने को मिलता है, क्योंकि यह बेनीपुरी की प्रतिभा कौशल का ही परिणाम है कि उन्होंने अपने डायरी साहित्य में जहाँ—तहाँ संवाद शैली का

भी प्रयोग किया है। 4 अक्टूबर, 1953 की डायरी में संवाद शैली का प्रयोग हुआ है—“केशव ने कहा—“लक्ष्मण सिंह, इधर आओ।” केशव की पुकार सुनकर जब वह उनकी ओर बढ़ा, पता चला, वह तो अन्धा है। जीप से टकराने—सा लगा था। “उधर नहीं, इधर”—केशवजी की ओर वह रो—रोकर बढ़ा।

केशवजी ने पूछा—“केसर का क्या हाल है?”

“अब कुछ अच्छी है बाबू, दो दिनों से बुखार नहीं आया।”

“पथ्य क्या देते हो? कुछ फल—फल देते तो हो।

भिखमंगे की अन्धी आँखें छलछला आईं!

फल कहाँ से आए बाबू? रोटी और आलू दे रहा हूँ! बिना आलू के रोटी खाती ही नहीं।”

केशव जी ने कहा—“यह देखो, तुम्हारे नेता आए हैं! बेनीपुरी का नाम सुना है न?”

“अब सबको भूला जा रहा हूँ, बाबू। कौन किसका है इस दुनिया में।” अन्धे भिखमंगे के हृदय से एक आह निकली और वह थोड़ी देर में जैसे हमारे चारों ओर व्याप्त हो गई।⁵¹

इस शैली के माध्यम से लेखक उपदेश भी देता है तो कभी प्रश्न भी करता है और कभी—कभी तो विरोधी मतों का खंडन एवं मंडन भी। 16 जून, 1952 की डायरी में बेनीपुरी और सौदे बेचने वाली सुन्दर लड़की का संवाद कुछ इस प्रकार है—“मैंने कहा—तुम बहुत खूबसूरत हो, उसने कहा, क्या सच? फिर पूछा—क्या भारत चलोगी? फिर उसी तरह मुसकराते कहा—मैं भारत को प्यार करती हूँ। किन्तु मैं गरीब हूँ, पैसे कहाँ हैं? मैंने कहा चलो, हमारे साथ! अब वह खिलखिला पड़ी। ओहो, आप मज़ाक कर रहे हैं। मैं सच कहती हूँ, आपका देश मुझे बहुत ही प्रिय लगता है। चलते समय पूछा, तुम्हारा नाम? उसने कहा—कोजा।”⁵²

इस प्रकार बेनीपुरी ने डायरी साहित्य में स्वाभिकता लाने के लिए संवाद शैली का सफल प्रयोग कर दिखलाया है।

(x) प्रतीकात्मक शैली

प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग बेनीपुरी ने अपनी डायरी में किया है। यदि किसी रचना में उद्देश्य को अति मुखर बना दिया जाए तो रचना की शक्ति कम हो जाती है। इसलिए उद्देश्य को गुह्य रूप देकर रचना को कलात्मक बनाने के लिए प्रतीकों का प्रयोग शिल्प के अंतर्गत किया जाता है! बेनीपुरी ने डायरी में विभिन्न प्रतीकों का प्रयोग करके प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग किया है।

15 अगस्त, 1950 की डायरी में बेनीपुरी प्रतीकात्मक शैली में लिखते हैं—
“शलवार, ढीले कुर्ते, ओढ़नी—सभी रंग—बिरंग! मंडलियाँ इधर—उधर बिखरी—देवियाँ अधिक, देवता कम! तितलियाँ फुदक रहीं और भौरे भिन्ना रहे। क्या ये—तितलियाँ थीं—उफ कितनी मोटी। एक पान की दुकान पर खड़ा था, तो देवियों की एक जोड़ी आ गई—डर लगा, कहीं, भहरा पड़ी, तो मैं मलबे के नीचे दब मरूँगा।”⁵³ इस चित्र में तितलियाँ, देवियाँ युवा स्त्रियों की प्रतीक और देवता एवं भौरे पुरुष का प्रतीक है।

13 नवम्बर, 1951 चुनाव के चक्कर में बेनीपुरी जी ने ‘भूकम्प’ को सरकार में विकर्षण का प्रतीक माना है। “काँग्रेस की सरकार में उनमें जो विकर्षण पैदा हो गया है, उसके प्रदर्शन के लिए वे बेचैन हैं। मुझे ऐसा लगा कि एक राजनीतिक भूकम्प होने जा रहा है।”⁵⁴

प्रतीकात्मक शैली का एक और उदाहरण उनकी 7 जनवरी, 1952 की डायरी में मिलता है। बेनीपुरी एक अच्छा देश बनाने की कल्पना करते हैं। वे तितली को बच्ची का प्रतीक एवं मधुमक्खी को युवती का प्रतीक मानते हैं।

“हमें एक ऐसा देश बनाना है... जहाँ की बच्चियाँ तितलियाँ हों, जहाँ की युवतियाँ मधुमक्खियाँ हों, जहाँ की वृद्धाएँ आशीर्वाद बिखेरती हों!”⁵⁵

अतः स्पष्ट है कि बेनीपुरी ने अपनी डायरी में प्रतीकात्मक शैली का प्रयोग भी किया है।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि बेनीपुरी ने डायरी जैसी छोटी विधा में भी शैली के विविध रूपों को अपनी डायरी में समाहित कर लिया है। डायरी विधा में बेनीपुरी द्वारा संपूर्ण शैलियों को समाहित कर लेना एक कौशलपूर्ण एवं गौरवपूर्ण की बात है। इसलिए बेनीपुरी एक श्रेष्ठ साहित्यकार के साथ-साथ श्रेष्ठ शैलीकार भी हैं। मैथिलीशरण गुप्त ने बेनीपुरी की जैसी भाषा-शैली पहले गणेश शंकर विद्यार्थी में पाई थी। इस संबंध में स्वयं बेनीपुरी स्पष्ट करते हुए कहते हैं—“शैली जीवन से पृथक् कोई वस्तु नहीं है। गणेशजी की शैली का स्रोत उनका बलिदानी जीवन है; मेरी शैली का स्रोत मेरा तूफानी जीवन रहा है! मेरी शैली में जो प्रवाह है, गति है, जोर है, वह मेरी ज़िन्दगी में है।”⁵⁶ वास्तव में उनके व्यक्तित्व ने उनकी शैलियों के निर्माण होने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। शैलीकार के रूप में बेनीपुरी द्वारा डायरी में प्रस्तुत विभिन्न शैलियों के विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि बेनीपुरी की शैली अनेक रूपी है, बहुरंगी है जो उनके विशाल व्यक्तित्व को भी प्रकट करती हैं।

(ख) भाषागत विशेषताएँ

भाषा पर असाधारण अधिकार के बिना कोई भी साहित्यकार अपने को पूर्ण रूप में अभिव्यक्त नहीं कर सकता। डॉ० गजानन चव्हाण भाषा के संबंध में लिखते हैं—“मँजी हुई, परिष्कृत और जानदार भाषा के अभाव में उच्चकोटी का चिन्तक, हर दर्जे का भावुक और प्रचंड ज्ञानी भी अपने चिन्तन, भावना और ज्ञान की अभिव्यंजना सफल रूप में नहीं कर सकता। यदि किसी के पास अभिव्यंजक गुण से युक्त शब्दों का अभाव हो प्रभावपूर्ण वाक्य रचना की कमी हो, लोकोक्तियों की न्यूनता हो और वर्ण विषय को लिए भावों का होना न होना—दोनों स्थितियाँ समान हैं।”⁵⁷ बेनीपुरी जनता के लेखक थे। वे कठिन भाषा को साहित्य-सर्जन में कभी भी अनिवार्य नहीं मानते थे; इसलिए उनकी भाषा बहुत ही सीधी, सरल होते हुए भी चोटदार और व्यंजना-शब्द शक्ति से परिपूर्ण है। सरल व्यावहारिक और प्रवाहयुक्त भाषा के साथ-साथ उसमें गहरा अपनापन है। वे अपनी भाषा में भावों के अनुसार ही उपयुक्त शब्दों को चयन करते हैं। बेनीपुरी की भाषा की सरलता

शैली और भावों की गंभीरता से कोई भी पाठक बिना प्रभावित हुए नहीं रह सकता है।

एक बड़े साहित्यकार होने के साथ-साथ बेनीपुरी जी स्वतंत्रता संग्राम के सेनानी, कर्मनिष्ठ, क्रान्तिकारी-पत्रकार, समाज-सुधारक और एक अद्भुत शब्द शिल्पकार हैं। बेनीपुरी एक मौलिक शैलीकार भी हैं। मौलिक शैलीकार के रूप में उन्होंने एक नई शैली को जन्म दिया है, जिसके संबंध में साहित्य के बड़े-बड़े विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रस्तुत किये हैं—

डॉ० रवीन्द्र भ्रमर लिखते हैं कि—“एक विशिष्ट प्रकार की अलंकृत भाषा तथा भावुकता प्रधान शैली के कारण हिन्दी गद्य के इतिहास में रामवृक्ष बेनीपुरी का अपना स्थान है।”⁵⁸

डॉ० गंगाप्रसाद गुप्त ‘बरसैया’ कुछ इस प्रकार कहते हैं कि—“उनकी भाषा सरल, मधुर एवं आत्मीयता के गुण से ओत-प्रोत है। वाक्य अत्यन्त छोटे, पर पूर्ण। इनकी भाषा को साधारण से साधारण व्यक्ति भी समझ सकता है। वे जब जेल-जीवन का वर्णन करते हैं तो उस समय के सारे चित्र, सारा वातावरण सामने सजीव हो उठता है और पाठक भी उसकी अनुभूति करने लगता है।”⁵⁹

डॉ० आनन्द नारायण शर्मा उनकी शैली के संबंध में कहते हैं कि—“बेनीपुरी जी की भाषा-शैली स्वतंत्र रूप से विवेचन-योग्य है। यहाँ केवल इतना कहना संभव होगा कि वह विषय वस्तु के अनुरूप लोक गांधी है।...उनके वाक्य छोटे-छोटे और व्यंजनार्थ होते हैं, जिसमें ध्वनिचित्रों की प्रधानता है। शब्दों और वाक्यों की पुनरुक्ति से वे एक विशिष्ट नाटकीय प्रभाव और लय उत्पन्न कर देते हैं।”⁶⁰

राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त ने उनकी शैली-शिल्प के संबंध में ठीक ही कहा था—“यह लेखनी है, या जादू की छड़ी आपके हाथ में। उनके साहित्य में न केवल विषय वस्तु का फैलाव है, प्रत्युत शिल्प का वैविध्य भी।”⁶¹

रामवचन राय बेनीपुरी की भाषा के संबंध में लिखते हैं कि—“उनकी भाषा में पत्रकारिता की प्रवाहमानता, राजनीति की प्रखरता और साहित्य की रसमयता की

त्रिवेणी है। उनके कार्य-व्यापार और जीवन-चर्या का प्रभाव उनकी भाषा पर भी था। इसीलिए उनकी भाषा में जीवंतता और शैली में सम्मोहन है।⁶²

उपर्युक्त विभिन्न लेखकों एवं विद्वानों द्वारा बेनीपुरी की भाषा-शैली के संबंध में कहे गए कथनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि बेनीपुरी का भाषा पर असाधारण अधिकार है, उनकी लेखनी में गहरापन, सजीवपन, रस की अनुभूति, सौंदर्य का आभास और न जाने कितने भिन्न-भिन्न रूप उभर कर हमारे सामने आते हैं। बेनीपुरी की शक्ति उनकी भाषा में है। उनकी भाषा में सशक्ता होने के साथ-साथ सबसे प्रमुख एवं अनिवार्य गुण उसकी सहजता है। बेनीपुरी के मन में सदैव रस की गंगा बहती थी। इसलिए जड़ चीज़ में भी उनको चेतनता की अनुभूति होती थी। उनकी समस्त कृतियों के साथ-साथ डायरी-साहित्य में यह विशेषता प्रमुख रूप से देखने को मिलती है। जो इस प्रकार हैं—

(i) प्रकृति का मानवीकरण

जड़ पदार्थों में चेतना का आरोप कर संवेदनशीलता का प्रचुर प्रयोग इसी कला का एकमात्र लक्ष्य है। छायावाद में इस कला की बड़ी धूम थी। अब तो गद्य-साहित्य में भी मानवीकरण हर जगह दिखाई देता है। बेनीपुरी जी की डायरी में कहीं-कहीं मानवीय भावों का आरोप कर प्रकृति को भी मनुष्य के समान हँसते-खेलते हुए चित्रित किया है। 25-27 जून, 1952 की डायरी में बेनीपुरी प्रकृति पर मानवीय भावों का आरोप करते हुए लिखते हैं—“गीली मिट्टी की सुगंध जैसे दिमाग को तर कर रही हो। धुले-धुलाए पेड़ आगत-पत्रिका के समान जैसे स्वागत में हाथ पसारे खड़े हों।... पानी की बूँदें शरीर पर जैसे गुलाब वर्षा कर रही हों।”⁶³

16 जुलाई, 1955 की डायरी में बेनीपुरी जी प्रकृति का मानवीकरण करते हैं अर्थात् जड़ पदार्थ में भी चेतनता का आभास ‘लीची की विटपी’ के माध्यम से करते हैं जिसमें लेखन की पैनी दृष्टि का परिचय भी मिलता है—“एक-एक कोपल और पत्ते को देखता हूँ। कितने भले लगते हैं। लीची की वह विटपी तो नन्हीं दुलहिन-सी लगती है। लाल-लाल पत्तियों की लाल साड़ी पहने।”⁶⁴ इस

प्रकार एक सच्चे कलाकार की आँखें बहुत गहराई तथा सूक्ष्मता तक पहुँच जाती हैं। 12 जून, 1952 की डायरी में वे प्रकृति का मानवीयकरण करते हुए लिखते हैं—“त्यों—त्यों पहाड़ियों के सौन्दर्य से आँखें निहाल हो रही हैं। अभी वर्षा हुई थी यह वरदान हो गया। प्रकृति जैसे अभी स्नान करके श्रृंगार कर रही हो!”⁶⁵

बेनीपुरी में किसी भी भाव चित्र को प्रतीकों के माध्यम से प्रकट करने का अद्भुत कौशल है। नीरस घटनाओं के चित्रण में भी उन्होंने अपनी डायरी में अपने सदाबहार व्यक्तित्व से जान डाल दी है। अपनी विदेश—यात्रा का वर्णन करते समय बेनीपुरी कभी—कभी मधुर कल्पना में डूब जाते और कहते हैं—“पेरिस घूँघट हटाये तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही होगी, फिर वहाँ विश्राम कहाँ?”⁶⁶

इस प्रकार बेनीपुरी की डायरी में मानवीयकरण दिखाई देता है। क्योंकि जड़ पदार्थ में भी चेतनता का आभास उसी कलाकार को मिलता है जिसके हृदय में रस की गंगा बहती है और बेनीपुरी इसमें अग्रणी हैं।

(ii) बिंब—विधान

बेनीपुरी विलक्षण शैलीकार थे इसलिए हमें उनकी डायरी में नाना रूप—रंगों की शैलियाँ मिलती हैं। शब्द—शिल्पीकार अपनी शैली को और भी अधिक शक्तिशाली बनाने के लिए बिंबों का विधान करता है। उनकी डायरी में यह शैली भी भरपूर मात्रा में चित्रित होती है। पाठक की आँखों के सामने यथार्थ दृश्य उपस्थित करने में लेखक को यहाँ सफलता मिलती है। एक साथ कई बिंबों के विधान में वही कलाकार सफल सिद्ध होता है, जिसकी कलम में सूक्ष्म से सूक्ष्म को पकड़ने की क्षमता होती है। बेनीपुरी जी इस बिंब—विधान में पूर्णतः सफल हैं। वे अपनी डायरी साहित्य में अनेक बिम्बों का सुन्दर समायोजन करते हैं। उदाहरण के लिए—6 जून, 1950 की डायरी से बिंब—विधान—“आह! गाँव का कैसा भयावना दृश्य है। छप्पर जल गए, घर की चीजें जल गई—बच गई हैं। जली—अधजल दीवारें; अन्न की कोठियाँ या एकाध मोटी लकड़ियाँ; दीवारें लाल हो गई हैं; कोठियाँ आवा की तरह लगती हैं और लकड़ियाँ लुकाठियों की तरह।”⁶⁷

28 जून, 1953 की डायरी में समस्तीपुर स्टेशन का कितनी यथार्थता के साथ बिंब प्रस्तुत किया है—“क्या है यह स्टेशन! चारों ओर गन्दगी। कहीं जूठी

पत्तलें, कहीं, छिलके। मक्खियाँ भिन्ना रहीं! कुत्ते, गन्दे, बदबूदार घूम रहे। बारात के दिन, खचाखच लोग। साँस लेना भी मुश्किल। किन्तु, इन्हीं के बीच बैठा हूँ। कहाँ जाऊँ?... वह एक लड़की—कैसी बेहया! सभी से हँस-हँसकर बातें कर रही है। अभी उस बीड़ीवाले के झोले में हाथ रखकर ज़बरदस्ती बीड़ी निकाल ली है; जवान बीड़ीवाला हँसता रह गया और अब उस बूढ़े को डाँट रही है, क्यों इस तरह पच-पच थूक रहे हो! एक रसिक बोल रहे हैं—मुँह का दरवाज़ा टूट गया है बेचारे का। लड़की अब उससे बातें कर रही है। उसी बेतकल्लुफी ओर बेहयाई से!”⁶⁸ बेनीपुरी ने अपनी डायरी में बड़े ही यथार्थ रूप से दृश्य-बिंबों को उपस्थित किया है। उन्होंने नये-नये उपमानों का प्रयोग बिंब-विधान में भी किया है। विदेश-यात्रा के दौरान लेखक ने 22 मई, 1952 की डायरी में पेरिस में लगने वाले अंतर्राष्ट्रीय मेले में नृत्य का दृश्य-बिंब उपस्थित किया है—“क्या नृत्य, कैसा नृत्य! पेरिस की ये परियाँ—सुनहले बाल, पतली नाक, सुराहीदार गर्दन, छाती पर खिले-अधखिले फूल, पतली कमर, पृथुल नितम्ब, गोल जाँघ, सुडौल पिंडलियाँ! कभी लचकती, कभी उछलती; कभी कमर को कमानी बना लेती, कभी पैरों में पंख बाँध लेतीं आगे देखिए, पीछे देखिए, अगल देखिए, बगल देखिए। शर्म क्या, संकोच क्या?”⁶⁹

इस प्रकार स्पष्ट है कि बेनीपुरी की डायरी में बिंब-विधान का संभवतः चित्रण मिलता है।

(iii) कल्पना का प्रयोग

बेनीपुरी की शैली में कल्पना की उड़ान है। उनका कहना था कि जवानी का संबंध अवस्था से उतना नहीं होता जितना कि मनोवृत्ति से होता है। अगर दिल जवान है तो शिल्प को भी जवान दिखना पड़ेगा। उनकी डायरी में कल्पना की उड़ान सर्वत्र देखने को मिलती है। 7 जनवरी, 1952 की डायरी में वे देश को विकसित एवं सुसभ्य बनाने की कल्पना करते हैं—“हमें एक ऐसा देश बनाना है जिसमें बच्चों के बदन पर पूरे गोشت हों, उनके गालों पर लाली हो, उनकी आँखों में कीचड़ और बालों में जुएँ नहीं हों, वे रंग-बिरंगे वस्त्रों से आच्छादित हों, वे किलकारियाँ मारते हों, उछलते हों, कूदते हों।...जहाँ जवानों की आँखें धँसी न हों, गाल पिचके न हों, छाती सिकुड़ी न हो—जो सबल हों—चौड़ी छाती वाले, बलिष्ठ

भुजाओं वाले, दृढ़ धारणा वाले; जो झूमते चलें तो धरती धसके; जो ठठाकर हँसें, तो आसमान गुंजित हो उठे। हमें एक ऐसा देश बनाना है, जहाँ बुढ़ापा अभिशाप नहीं हो, सूखी टाँग, झुकी कमर, हाथ में लाठी लिए, कंकाल ऐसे लोग जहाँ घूमते-फिरते दिखाई नहीं पड़े।⁷⁰ बेनीपुरी जैसे कलाकार की पैनी एवं सूक्ष्म-दृष्टि वर्तमान को देखकर कभी अतीत की यादों में विचरण करने लगती है तो कभी भविष्य के सुनहरे सपने, सुनहरे विचारों में डूब जाती है या सतरंगी कल्पना की उड़ान भरने लगती है। 23 अप्रैल, 1951 की डायरी में प्राकृतिक सौंदर्य वर्णन में भी कल्पना-भाव एवं कल्पना-विलास देखने को मिलता है। "अहा! अहा! अहा हा! कितना सुन्दर। चारों ओर उजले बादलों से घिरा वह घूसर पहाड़ जिस पर उजली-उजली धारियाँ। लगता है, क्षीर समुद्र से अभी शंकरजी निकले हैं त्रिपुंड धारण किए हुए! हाँ क्षीर समुद्र से विष्णु नहीं, शंकर! और त्रिपुंड ही कैसे कहें? यहाँ तो पुंड-ही-पुंड झलक रहे हैं!"⁷¹

इस प्रकार उनकी शैली में कल्पना विलास, कल्पना भाव एवं कल्पना है, जो डायरी में जगह-जगह चित्रित है।

(iv) संवेदनशीलता

बेनीपुरी की शैली में मानवीय संवेदना की प्रमुख भूमिका है। लेखक की संवेदना ही उसकी शैली का प्राण है। बेनीपुरी की डायरी में उनकी मानवीय संवेदना व्यक्त होती है। कहीं-कहीं पर डायरी लिखते समय बेनीपुरी पाठक के समक्ष बातें करते हुए दिखाई देते हैं। उनकी डायरी में संवेदनशीलता इस प्रकार है—"पहले कुछ पी लीजिए, यहाँ पीना गुनाह नहीं है! तौबा तोड़ने की इससे बढ़कर कौन जगह मिलेगी? यह स्वर्ग है, सामने वह उर्वसी है, यह अमृतघट है—गटागट पीजिए, अमरता प्राप्त कीजिए! फिर जो रुचे खाइए और जाइए!"⁷² इस प्रकार लेखक अपनी संवेदना के आदान-प्रदान से पाठक का विश्वास जीतता है।

लंदन में जब वर्षा झमाझम होने लगती है तब कुंजों की छाया में एक-दूसरे के करीब सिमटकर बैठे हुए प्रेमी-प्रेमिकाओं का चित्रण करते हैं—"कभी किसी एक कदम्ब के नीचे, किसी एक कृष्ण की कमली से किसी एक राधा ने वर्षा ने अपनी

साड़ी को भींगने से बचाया, तो हमारे यहाँ कविता—पर—कविता लिख दी गई। यहाँ तो हर वृक्ष के नीचे, कितने ही जोड़े, एक ही बरसाती लबादे से अपने तन को भींगने से बचा रहे हैं—किन्तु मन को?"⁷³

लेखक अपने पाठकों के समक्ष अपने साथ जीवन की विभिन्न ऊबड़—खाबड़ और सुंदर गलियों में घुमाने ले जाता है जिससे पाठक को ऊब या थकान का अनुभव महसूस नहीं होता। अपनी डायरी में लिखते हैं—"बगल—बगल अंगूर की खेतियाँ हैं। अंगूर की लताएँ थोड़ी—थोड़ी दूर पर पंक्तियों में लगाई जाती हैं। कमाचियों पर उन्हें चढ़ाया जाता है। वहाँ देखिए, कुछ लड़कियाँ यह शुभ कर्म किस कौशल से कर रही हैं—नाजुक लताएँ कहीं टूट न जाएँ! इन्हें नाजुक उँगलियाँ ही सँभाल सकती हैं। अंगूर की लताओं के बीच अंगूर की बेटियाँ—इन्हें देखते ही आपको नशा नहीं चढ़ जाए। तो बाजी रख लीजिए!"⁷⁴

इस प्रकार यहाँ बेनीपुरी जी पाठक को सिर्फ आनंद ही नहीं देते साथ ही साथ स्वर्ग जैसे मधुर विधानों से परिचित भी कराते हैं। उनकी शैली में संवेदना रश्मियों से झिलमिल करती हुई प्रतीत होती है। बेनीपुरी का अपनी जन्मभूमि से जो रागात्मक संबंध है, वही उनकी रचनाओं को संवेदना के मधुर रस से जोड़े रखती है। बेनीपुरी की संवेदना शैली शब्दों के माध्यम से पाठकों की संवेदना को जगाने के लिए प्रयत्नशील बन पड़ती है।

(v) सहज एवं सरल भाषा का प्रयोग

किसी भी रचना के लिए यह अति आवश्यक है कि उसकी भाषा सहज एवं सरल हो। बेनीपुरी का डायरी साहित्य को पाठक आसानी से समझ लेते हैं, क्योंकि उनमें प्रयुक्त की गयी भाषा—शैली बहुत ही सुलझी हुई है। इस बात को स्पष्ट करते हुए बच्चन सिंह उनकी भाषा के बारे में कहते हैं—"बेनीपुरी जी की भाषा में या तो आवेगमयता मिलेगी या प्रशान्ति। उसमें जटिलता कहीं भी नहीं है।"⁷⁵ इस प्रकार उनकी जो अद्भुत शैली है उसमें सरलता और सादगी ही है। बेनीपुरी बड़े ही सादगी एवं सरलता से 16 मई 1951 की डायरी में मौसम का चित्रण करते हैं—"आज मौसम भी बड़ा अच्छा रहा है। ग्लासगो से जब हम चले आसमान साफ

था। ज्यों-ज्यों ट्रेन आगे बढ़ती गई, धूप खिलने लगी।शीशे की खिड़कियाँ; जब धूप शरीर से स्पर्श करने लगी, बड़ा आनन्द आया!"⁷⁶ उनकी भाषा-शैली में सरलता के साथ-साथ नवीनता तथा चुटीलेपन का भी अच्छा मेल है। बेनीपुरी स्वयं इस बात पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं—"जो लोग समझते हैं कि उत्कृष्ट रचना के लिए क्लिष्ट भाषा का प्रयोग करना अनिवार्य है। उनकी सूझ-बूझ पर मुझे तरस आता है। संसार के जितने बड़े साहित्य-सृष्टा हुए हैं उनकी भाषा ऐसी रही है कि साधारण जन भी उसका स्वाद ले सके फिर, मुझे यह सदा याद रहा है कि मेरी रचनाएँ सबसे पहले मेरे बाल-बच्चे ही पढ़ा करते हैं। छपती तो हैं ये पीछे, मूल प्रति के रूप में ही वे पढ़ने के लिए छीना-झपटी करने लगते हैं। अतः भाषा में सरलता और भावों में शिष्टता का मुझे सदा स्मरण रहता है।"⁷⁷ अतः वह सदा सीधी, सरल, सहज भाषा का प्रयोग करना उचित समझते हैं। 16 मई, 1952 की डायरी में बगीचे के सौंदर्य का वर्णन बड़े ही सरल और सादगीपूर्ण ढंग से किया है—"बगीचे के दोनों छोर पर दो तालाब हैं जहाँ छुट्टियों के दिनों में बच्चे अपने कागज़ की नाव भँसाते हुए, किलोल करते हुए पाए जाते हैं। पेड़ों की कतारे बड़े सलीके से सजाई गई हैं। फूलों की क्या रियाँ भी मन को मोह लेती हैं। सबसे बढ़कर रास्ते के किनारे-किनारे की मूर्तियाँ। एक-एक मूर्ति आँखों को जड़ीभूत करने वाली देखते रहिए, देखते रहिए।"⁷⁸

इस प्रकार बेनीपुरी ने अपने संपूर्णतः डायरी साहित्य में चमत्कारिक ढंग से सरलतम भाषा-शैली का प्रयोग किया है।

(vi) यथार्थता का पुट

उनका पूरा डायरी साहित्य यथार्थ के धरातल पर खरा उतरता है, क्योंकि उसमें कहीं भी बनावटीपन नहीं है, चाहे वो उनका परिवार हो, आर्थिक स्थिति हो, समाज हो और चाहे वो राजनीति हो। एक कुशल राजनीतिज्ञ होने के बावजूद भी वह राजनीति के पक्षधर नहीं थे। 10 नवम्बर, 1958 की डायरी में बेनीपुरी ने कितने यथार्थ भाव से राजनीति का वीभत्स रूप दिखाया है—"मेरे गाँव के ही निकट एक आदमी भुखमरी से मर गया है। मैंने उस पर विधान सभा में कार्यस्थगन

का प्रस्ताव दिया। मैंने पूरा चित्र रखा कि किस प्रकार वहाँ के सर्किल अफसर की असावधानी और उपेक्षा के कारण ऐसा संभव हो सका है। मेरे समर्थन में कई लोग बोले। मैंने यह भी कहा है कि उसी अफसर ने जाँच की है, अतः उस पर विश्वास नहीं किया जाए। लेकिन कैसा तमाशा है, हमारे खाद्यमंत्री ने उसी रिपोर्ट को अमिट सत्य मानकर मुझ पर 'व्यंग्य कसना शुरू किया? समूची सभा ने विरोध में आवाज़ उठाई। ऐसा हो—हल्ला मचा कि सभा स्थगित कर देनी पड़ी! कैसा तमाशा है, जिसने जिन्दगी भर देश की सेवा की, उस पर विश्वास नहीं करके डेढ़-दो सौ रुपल्ली के नौकर की रिपोर्ट को ही अकादय सत्य मान लिया जाए। मैंने यहाँ तक कहा कि यदि मेरी बात असत्य सिद्ध हो तो मैं इस्तीफा दे दूँगा, आप फिर से जाँच कराइए, या मेरे साथ स्वयं चलिए। किन्तु, कौन ध्यान देता है, इन बातों पर। यहाँ तो नौकरशाही का बोलबाला है। मैंने खाद्यमंत्री को बहुत डाँटा भी; क्योंकि वह सदा नौकरशाही का गुण गाते फिरते हैं।”⁷⁹

इस प्रकार स्पष्ट है कि उनकी शैली में कितना खरापन है, कितनी यथार्थता है। वे समाज की राजनीति की विकृतियों से खीज उठते थे, इसलिए उनकी शैली में कहीं-कहीं चिड़चिड़ापन भी है लेकिन यथार्थ कहीं नहीं छूटता है। 26 जनवरी, 1959 की डायरी में लिखते हैं—“आज 26 जनवरी है :1930 में पहली बार हमने स्वतंत्रता-दिवस मनाया था। कैसा उत्साह था? आज स्वतंत्रता प्राप्त किए बारह साल हो गए। किन्तु कहाँ है वह उत्साह? अब स्वतंत्रता-दिवस सरकारी नौकरों का दिवस हो गया है। हाँ, स्वतंत्रता उन्हें ही मिली है; मनमाने ढंग से वे जनता को जिस प्रकार चूसें, लूटें। बेचारी जनता पहले विदेशी सरकार से लूटी जा रही थी; आज देशी नौकरशाही से।”⁸⁰

इस प्रकार बेनीपुरी ने समाज, राजनीति, भारतीय सरकार, एवं विदेशी सरकार के कुकर्मों का यथार्थ-चित्रण करने में कभी भी हिचकिचाहट की अनुभूति नहीं की है। उनकी डायरियों के एक-एक पन्ने यथार्थ को पूरी तरह से पकड़े हुए हैं।

15 अगस्त, 1959 की डायरी में बेनीपुरी ने अपनी आर्थिक स्थिति को कितनी ईमानदारी और कितने यथार्थ के साथ प्रस्तुत किया है—“पहले सोचता था, मैं अपने को प्रकाशन की झंझट से भी अलग कर लूँ। लेकिन अब देख रहा हूँ, यदि अपने को सार्वजनिक कामों में भी लगाना है, तो सबसे पहले मुझे आर्थिक स्थिति पर ध्यान देना होगा। और उसके लिए प्रकाशन ही एक ज़रिया रह गया है। कागज़ के महंगा होने पर भी प्रकाशन में एक रुपया डालने पर पाँच रुपये का स्टॉक बनता है। यदि हर महीना हम पाँच सौ रुपया डालते जाएँ, तो एक साल में हम तीस हजार का अपना स्टॉक बना ले सकते हैं! यदि तीस हजार का यह स्टॉक बन जाए, तो दो-तीन साल में ही हाथ-हथफेर से मुक्त होकर एक लाख का स्टॉक बना ले सकते हैं। फिर तो कोई चिन्ता नहीं।”⁸¹

बेनीपुरी ने बहुत ही सच्चाई से अपने डायरी के पन्ने को लिखा है। एक ओर आर्थिक संकट का उदाहरण, उनकी 10 नवम्बर, 1959 की डायरी में प्रस्तुत है—“पैसे-पैसे के लिए मुँह ताकिए। देहात के बूढ़ों को देखा है, मरते समय तक सन्दूक की कुंजी अपने पास रखते हैं। क्या इन्हीं दिनों के डर से। कुछ काम करना चाहता हूँ, कुछ पैसे इकट्ठा करना चाहता हूँ, किन्तु लगता है, जनवरी के पहले कुछ हो जाना संभव नहीं है। आज दो दिनों से ही सौ रुपये के लिए छटपटा रहा हूँ, कहीं से प्राप्त नहीं कर पाता।”⁸²

इस प्रकार बेनीपुरी ने डायरी के पन्नों में यथार्थ का समावेश बड़े ही सहज ढंग से किया है उनकी डायरी में कहीं भी बनावटीपन नहीं है। इसलिए बेनीपुरी का डायरी साहित्य ‘डायरी’ शब्द को सही परिभाषित करता है, क्योंकि डायरी शब्द का सही मायनों में अर्थ ‘यथार्थ’ ही है। उनका डायरी-साहित्य अपने-अपने समय का यथार्थ प्रस्तुत करते हुए चलता है। डॉ० गजानन चव्हाण कहते हैं कि—“यदि मन में तूफान हो और लेखनी में शक्ति न हो तो मन का तूफान हवा एक साधारण झोंका बनकर रह जाता है। यदि हृदय में भावनाओं का प्रचंड आवेग हो और लेखनी यदि लँगड़ी हो तो वह आवेग एक सामान्य लहर-सा उठकर बैठ जाता है।”⁸³

बेनीपुरी भाषा पर अपना पूर्ण अधिकार रखते थे। उनके मन में तूफान भी है और लेखनी में शक्ति भी है। इसलिए बेनीपुरी उच्चकोटि के साहित्यकार हैं जिन्होंने अपने मनोनुकूल भाषा को नया रूप भी दिया।

(vii) भाषा-शैली के प्रमुख उपकरण

श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने डायरी साहित्य में इस डायरी में हिंदी के शब्दों के अतिरिक्त यद्यपि उन्होंने संस्कृत, अरबी, फ़ारसी, अंग्रेज़ी आदि भाषाओं के शब्द एवं मुहावरें-कहावतें, छोटे-छोटे वाक्य, अलंकार, सूक्तियाँ, शब्द-युग्म, विशेषण, ध्वन्यात्मक शब्दों आदि का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त बेनीपुरी ने डायरी में कवियों के दोहे, पंक्तियाँ और उर्दू भाषा के शायरों के शेरों का भी यथास्थान प्रयोग किया है। जो निम्नलिखित इस प्रकार है—

शब्द चयन

बेनीपुरी ने डायरी में उन शब्दों का प्रयोग किया है जो व्यवहार में प्रचलित होते हैं। उन्होंने जनता की जुबान पर चढ़े हुए शब्दों को अपनी डायरी में अपनाया है। बेनीपुरी शब्द-विधान में बहुत सजग रहते थे; वस्तुतः लिखते समय शब्दों पर अधिक ध्यान नहीं देते थे। अनायास ही जो शब्द लेखनी पर आ जाते थे, सहज भाव से उसे अपनाते चलते थे। बेनीपुरी का शब्द-कोश जितना समृद्ध है उतनी ही उनकी भाषा-शैली समृद्ध है। 'शब्द' भाषा का सबसे छोटा अंश है इसलिए भाषा-शैली से पूर्व हमारा ध्यान बेनीपुरी के शब्द चयन की ओर जाता है।

बेनीपुरी ने 'डायरी' में अरबी, फ़ारसी, उर्दू, अंग्रेज़ी भाषा के विविध विदेशी शब्दों का प्रयोग किया है। बेनीपुरी की शब्दावली कुछ इस प्रकार है—

अरबी भाषा के शब्द

'डायरी के पन्ने' में आए अरबी शब्द

तारीख़ (पृ० 27), हैसियत (पृ० 30), ज़बरदस्त (पृ० 31), बदतमीज़ी (पृ० 32), ख़बर (पृ० 33), ज़्यादा (पृ० 34), ज़रूर (पृ० वही), जिल्द (पृ० वही), नतीजे (पृ० 35), तलाक़ (पृ० वही), गज़ब (पृ० 36), बर्बाद (पृ० 37), खास (पृ० 37),

सहूलियत (पृ० 38), अन्दाज़ (पृ० 42), कब्ज़ा (पृ० 44), मुहर्रम (पृ० 45), कफन (पृ० 47), सूरत (पृ० 49), जहन्नुम (पृ० 50), दावा (पृ० 53), खिलाफ (पृ० 55), अफसोस (पृ० 58), कर्ज़ (पृ० 61), दहेज (पृ० 64), ख़राब (पृ० 67), तारीफ़ (पृ० 68), कशमकश (पृ० 70), ताज (पृ० 74), नुक़सान (पृ० 79), मसीहा (पृ० 81), औरत (पृ० 82), दकियानूस (पृ० 91), इश्तहार (पृ० 94), नकाब (पृ० 171), ग़ैरहाज़िर (पृ० 191),

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए अरबी शब्द

लिखावट (पृ० 364), बेपरदगी (वही, पृ० 390), सलीका (वही, पृ० 400)

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आए अरबी शब्द

लाज़िमी (पृ० 455), प्यालियाँ (पृ० 466), बेतहाशा (पृ० 504), शराफ़त (पृ० 518), खिलाफ (पृ० 522), इत्यादि।

फ़ारसी भाषा के शब्द

‘ढायरी के पन्ने’ में आए फ़ारसी शब्द

शानदार (पृ० 27), जोश (पृ० 28), दिल (पृ० 30), पशोपेश (पृ० 35), पेशा (पृ० 48), बेकाबू (पृ० 53), खुदा (पृ० 55), जायदाद, उस्ताद (पृ० 61), बेवकूफ (पृ० 62), पेशा (पृ० 67), मज़ा (पृ० 69), दरख़्वास्त (पृ० 70), बेदाग (पृ० 72), गुस्ताख़ी (पृ० 73), अस्मान (पृ० 74), दगाबाज़ी (पृ० 77), इस्तीफ़ा (पृ० 78), रोज़गार (पृ० 82), बेहयाई (पृ० 188), शोहरत (पृ० 189), ग़नीमत (पृ० 264) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए फ़ारसी शब्द

सिफ़ारिश (पृ० 361), कलम (वही पृ० 386), इत्यादि।

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आए फ़ारसी शब्द

इज़ाफ़ा (पृ० 428), दस्तख़त (पृ० 434), सुपुर्द (पृ० 435), हजामत (पृ० 481), रज़ामंदी (पृ० 487), जवाहरात (पृ० 521), इत्यादि।

अंग्रेज़ी भाषा के शब्द

‘ढायरी के पन्ने’ में आए अंग्रेज़ी शब्द

चीफ़ मिनिस्टर (पृ० 27), स्पीकर (वही, पृ०), प्रेसीडेन्ट (वही, पृ०), पेंशन (पृ० 32), हेलिकॉप्टर (पृ० 34), सोशलिस्ट (पृ० 35), लाइट (पृ० 39), मैजिस्ट्रेट (पृ०

44), मास्टरपीस (पृ० 46), पार्ट (पृ० 48), टेबलेट (पृ० 51), स्टेज (पृ० 53), रॉयल्टी (पृ० 55), रीडर (पृ० 57), कैनवास (पृ० 60), मेडिल (पृ० 62), फोन (पृ० 64), एक्सप्रेस (पृ० 65), एरियल (पृ० 68), पार्लियामेन्टरी बोर्ड (पृ० 77), कन्ट्रोल (पृ० 87), पासपोर्ट (पृ० 112), इन्चार्ज (पृ० 261), साइटिका (पृ० 270), रिलीफ (पृ० 274), स्टाम्प (पृ० 340), वैलकम (पृ० 341), वाइस चांसलर (पृ० 369), प्रोफेसर (पृ० 415), लाइब्रेरी (पृ० 421), एपॉडिसाइटीज (पृ० 499) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए अंग्रेजी शब्द

इन्फॉर्मेशन (पृ० 290), रिफ्रेशमेन्ट (पृ० 292), लिफ्ट (पृ० 293), कैप्टेन (पृ० 294), ऑफिस (पृ० 295), प्राइवेट सेक्रेटरी (पृ० 297), ट्वायलेट (पृ० 299), मैकनिकल इंजीनियरिंग (पृ० 300), व्हाइट हॉल (पृ० 311), प्लेट (पृ० 312), करिकुलम (पृ० 335), सैंडविच (पृ० 354), डिज़ाइन (पृ० 259), रेवोल्यूशन (पृ० 408) इत्यादि।

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आए अंग्रेजी शब्द

स्क्रिप्ट (पृ० 448), प्लेन (पृ० 424), रेडियो (वही, पृ०), स्टेशन (वही, पृ०), सिगरेट (पृ० 426), कम्युनिस्ट (पृ० 435), पौलेस (पृ० 438), परेड (पृ० 443), कौमेडी (पृ० 445), ऑपेरा हाउस (पृ० 448), कॉन्फ्रेंस (पृ० 448), स्टाल (पृ० 450), रिसेस (पृ० 458), टैक्सी (पृ० 459), वारंट (पृ० 463), मोटर (पृ० 466), थियेटर (पृ० 468), वीजा (पृ० 469), ऑफिस (पृ० 469), म्यूज़ियम (पृ० 474), गार्डन (पृ० 479), साइंस (पृ० 482), सिनेमा (पृ० 491), रॉयल (पृ० 492), कम्युनिस्ट (पृ० 494), पार्लियामेन्ट (पृ० 498), गाइडबुक (पृ० 502), चर्च (पृ० 515) इत्यादि।

ढायरी में प्रयुक्त हुए अरबी, फ़ारसी एवं अंग्रेजी को शब्दों को देखकर यह अनुमान नहीं लगाना चाहिए कि बेनीपुरी संस्कृत के शब्दों से दूर रहे हैं। उनकी ढायरी में संस्कृतनिष्ठ शब्दों का खूब प्रयोग हुआ है।

संस्कृतनिष्ठ शब्द

‘डायरी के पन्ने’ में आए हुए संस्कृतनिष्ठ शब्द

मस्तिष्क (पृ० 27), अभिभूत (वही पृ० 27), सज्जित (पृ० 28), अनुसंधान (पृ० 29), उच्छृंखल (पृ० 31), तदजनित (पृ० 32), आर्द्रता (वही पृ० 32), अंकुश (पृ० 33), हठात् (वही, पृ० 33), स्थायित्व (वही, पृ० 33), शाश्वत (पृ० 34), तन्मयता (वही, पृ० 33), सामंजस्य (पृ० 35), मुग्ध (पृ० 36), हृदय (पृ० 38), कृतित्व (पृ० 39), तरुण (पृ० 42), वंचित (वही, पृ० 42), अभ्युन्नति (पृ० 44), उद्घोष (पृ० 45), सृजन (पृ० 56), आत्मस्थ (वही, पृ० 56), भर्त्सना (पृ० 62), स्नान (पृ० 63), मूर्च्छा (पृ० 71), प्रणाम (पृ० 91), सात्विक (पृ० 92), अर्पण (वही, पृ० 92), सदैव (पृ० 95), अनर्थ (पृ० 97), आह्वान (पृ० 101), उत्कृष्टता (वही, पृ० 101), ऋण (पृ० 102), ज्योत्सना (पृ० 104), सशस्त्र (पृ० 106), शीर्ण (पृ० 113), विद्रूप (पृ० 114), प्रशस्त (पृ० 121), दरिद्र (पृ० 125), आतिथ्य (पृ० 132), सौहार्द (पृ० 191), उत्कंठा (पृ० 192), वितृष्णा (पृ० 195), संकीर्ण (पृ० 211), मृदंग (पृ० 202), अक्षुण्ण (पृ० 206), ऐश्वर्य (पृ० 255), वात्सल्यता (पृ० 260) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए हुए संस्कृतनिष्ठ शब्द

ज्वलंत (पृ० 290), उल्लंघन (वही, पृ० 290), अभिवादन (पृ० 291), संस्कृत (पृ० 292), निश्छल (पृ० 294), शिष्ट (पृ० 299), निपुण (वही, पृ० 299), उदघृत (पृ० 298), भावभंगिमा (पृ० 300), मातृत्व (वही, पृ० 300), उत्तम (पृ० 312), नख (पृ० 404), शिख (वही, पृ० 404), क्षीण (वही, पृ० 404), पृथुल (वही, पृ० 404) इत्यादि।

उड़ते चलो, उड़ते चलो में आए हुये संस्कृतनिष्ठ शब्द

प्रदर्शनी (पृ० 446), चित्त (पृ० 448), स्वादिष्ट (पृ० 452), आत्मसात् (पृ० 454), शृंगार (वही, पृ० 454), तत्पर (पृ० 455), तटस्थ (वही, पृ० 455), सम्मिश्रण (पृ० 456), उन्मुक्त (पृ० 459), स्वच्छन्द (वही, पृ० 459), भृकुटि (पृ० 460), औद्वित्य (पृ० 464), जिह्वा (वही, पृ० 464), स्तम्भ (पृ० 466), ग्राह्या (पृ० 491), तृप्त (पृ० 496), शीतल (पृ० 501), स्मृति (पृ० 521), आकृष्ट (पृ० 522), गन्तव्य (पृ० 526) इत्यादि।

इस प्रकार बेनीपुरी ने अपने डायरी साहित्य में सैकड़ों प्रचलित अरबी, फारसी, अंग्रेजी एवं संस्कृतनिष्ठ शब्दों का प्रयोग किया है। बचपन से ही बेनीपुरी ने उर्दू, अंग्रेजी और बंगला भाषा का अध्ययन किया था, इसलिए उनके डायरी साहित्य में विदेशी शब्द खूब प्रचलित हुए हैं। उन्हें संस्कृतनिष्ठ शब्दों से न तो विशेष लगाव था और न ही विदेशी भाषा के शब्दों से परहेज़ था। वास्तव में वे अर्थ-व्यंजक किसी भी शब्द को अपनी शैली में स्थान देते थे, अतः उर्दू-फारसी की प्रचलित शब्दावली को उन्होंने अपने डायरी-साहित्य में अपना लिया।

शब्द-युग्म

कई साहित्यकार अनेक सार्थक शब्दों में अर्थ की सीमा के विस्तार के लिए, उन शब्दों के साथ उन्हीं की ध्वनि के आधार पर बने हुए शब्दों को जोड़कर उनके युग्म बना देते हैं। वे शब्द-युग्म कहलाते हैं। बेनीपुरी की डायरी में भी कई शब्द-युग्म देखने को मिलते हैं।

‘डायरी के पन्ने’ में आए हुए शब्द-युग्म

भूरी-भूरी (पृ० 28), बड़े-बड़े (पृ० 29), भरा-पूरा (वही, पृ० 29), भीड़-भाड़ (पृ० 30), ताना-वाना (वही, पृ० 30), खेती-बाड़ी (पृ० 33), गीत-नृत्य (पृ० 34), आनन्द-विनोद (वही, पृ० 34), घर-छप्पर (पृ० 36), मरता-खपता (पृ० 35), इधर-उधर (पृ० 40), ठाठ-बाट (पृ० 43), धनी-गरीब (पृ० 44), शादी-खुशी (पृ० 45), बाजा-गाजा (वही, पृ० 45), खेला-कूदा (पृ० 46), भोजन-शयन (पृ० 51), सैर-सपाटा (पृ० 53), पल-पल (पृ० 59), चूर-चूर (पृ० 60), उत्थान-पतन (पृ० 62), ऊभ-चुभ (पृ० 63), झीसी-फुहीं (पृ० 63), चर्र-मर्र (पृ० 71), नोक-झोक (पृ० 73), अंट-संट (वही, पृ० 73), बूँदा-बाँदी (पृ० 75), ईर्ष्या-द्वेष (पृ० 84), भला-बुरा (पृ० 85), जात-पाँत (वही पृ० 85), सड़े-गले (पृ० 86), लूट-खसोट (पृ० 87), शोर-दौर (पृ० 89), विस्मय-विमुग्ध (पृ० 93), बुरा-धमका (पृ० 94), दाँव-पेंच (पृ० 97), चहल-पहल (पृ० 100), टूट-फूट (पृ० 106), चटक-मटक (पृ० 112), लल्लो-चप्पो (पृ० 113), नौकरी-चाकरी (पृ० 115), छुई-मुई (पृ० 433), गर्जन-तर्जन (पृ० 126), आमोद-प्रमोद (पृ० 182), मान-उपमान (पृ० 193),

लिपाई-पुताई (पृ० 222), हुष्ट-पुष्ट (पृ० 262), ज्यों-त्यों (पृ० 270), मोल-तोल (पृ० 283), तितर-बितर (पृ० 284), दिव्य-भव्य (पृ० 299), यंत्र-तंत्र (पृ० 304), इर्द-गिर्द (पृ० 434) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए हुए शब्द-युग्म

टेढ़ी-मेढ़ी (पृ० 289), रोम-रोम (पृ० 290), चहल-पहल (पृ० 291), अश्रु-प्रवाह (वही, पृ० 291), खोया-खोया (वही, पृ० 291), सूरत-शक्ल (पृ० 295), अजर-अमर (पृ० 365), लालन-पालन (पृ० 378), घर-घुस्सन (पृ० 385), तखड़-पखड़ (पृ० 392) इत्यादि

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आए हुए शब्द-युग्म

रास-हास (पृ० 426), चलती-फिरती (पृ० 480), उछलती-कूदती (पृ० 480), भाग-दौड़ (पृ० 483), उठा-पटक (वही, पृ० 483), चरने-चुगने (वही, पृ० 483), स्वागत-सत्कार (पृ० 486) हाय-हाय (पृ० 489), मोल-तोल (पृ० 495), घूम-घामकर (पृ० 498), थक-थकाकर (पृ० 498), नाच-गान (पृ० 508), आकार-प्रकार (पृ० 515), घुल-मिल (पृ० 517), काला-कलूटा (पृ० 522), तहस-नहस (पृ० 523), ध्वस्त-पस्त (पृ० 524), टूटी-फूटी (पृ० 525) इत्यादि।

ध्वन्यात्मक शब्द

ध्वनि को ज्यों का त्यों व्यक्त करना एक कठिन कार्य है लेकिन एक सफल साहित्यकार अपनी रचनाओं में ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रयोग अवश्य करता है। बेनीपुरी जी ने अपनी डायरियों में नाद सौंदर्य से युक्त ध्वन्यात्मक शब्दों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है।

‘डायरी के पन्ने’ में आए हुए ध्वन्यात्मक शब्द

साँय-साँय, हू हू, हा: हा: (पृ० 45), उँह, उँह (पृ० 47), खाँव-खाँव (पृ० 55), छल-छल: (पृ० 130), चकमक, टिमटिम (पृ० 131), झमाझम (पृ० 132), रिमझिम (पृ० 134), हचड़-हचड़, धम-धम, झिनझिना (पृ० 136), झर-झर-झर (पृ० 141), कूँ कूँ, चर्-चों (पृ० 145), कु कूँ-कूँ (पृ० 149), चहचहाहट (पृ० 150), जगमग (पृ०

178), चकाचक, झर-झर (पृ० 179), फुसुर-फुसर (पृ० 183), घर-घर (पृ० 222), गुड़गुड़-गुड़गुड़ (पृ० 229), किट-किट (पृ० 235), कुहू-कुहू (पृ० 245), खर-खर (पृ० 250), घुन-घुन, घुन-घुन (पृ० 263), चम-चम (पृ० 269), कलकल-छलछल (पृ० 328), खो खो (पृ० 329), चें चें (पृ० 330), हा हा-ही ही (पृ० 339), चर, धम्म, चकमक-जगमग (पृ० 345), खड़खड़ा (पृ० 351), घन-घन (पृ० 355), जगमग-झलमल (पृ० 401), गड़-गड़ाहट (पृ० 434), ठक-ठुक, ठाँय-ठाँय (पृ० 548) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए हुए ध्वन्यात्मक शब्द

सर-सर-सर (पृ० 289), हड़-हड़-हड़-हड़, साँय-साँय, सर-सर-सर (पृ० 291), घिन-घिन (पृ० 306), खड़-खड़ (पृ० 309), फुर-फुर (पृ० 311), गड़गड़ाहट (पृ० 316), चहचह, झिर-झिरकर (पृ० 343), चें-चें (पृ० 374), जगमग-जगमग, झलमल (पृ० 391), टिप-टिप (पृ० 400), झलमल-झलमल (पृ० 404), झकझक-झलमल (पृ० 414), झिलमिल (पृ० 415), हड़-हड़ : साँय-साँय (पृ० 416), फुर-फुर (पृ० 419)

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आए हुए ध्वन्यात्मक शब्द

सर-सर (पृ० 428), जमाझम (पृ० 480), हा-हा, ही ही, खिलखिल-खिलखिल (पृ० 483), चमचम, जगमग, झर-झर, चह-चह (पृ० 496), चकमक (पृ० 504), छल-छल (पृ० 506), चमचम (पृ० 508), झर-झर (पृ० 527), बक-बक (पृ० 530) इत्यादि।

विशेषण

विशेषण भाषा-शैली का महत्वपूर्ण अंग होता है। बेनीपुरी ने भाषा को चित्रात्मक बनाने के लिए डायरी में विशेषणों का खूब प्रयोग किया है। विशेषणों के प्रयोग से भाषा तो समृद्ध होती ही है साथ ही अभिव्यक्ति भी चित्रात्मक हो जाती है। डायरी में आये हुए विशेषण शब्द इस प्रकार हैं—

‘डायरी के पन्ने’ में आए हुए विशेषण शब्द

लाल टोपी, लाल झंडा, चिलचिलाती धूप, गरम झोंके (पृ० 38), फौजी पोशाक (पृ० 42), सुन्दर पुष्ट शरीर (पृ० 43), अधजली दीवार (पृ० 44), लाल-लाल जिह्वाएँ (पृ० 45), गोरा-चिट्ठा चेहरा, घुँघराले बाल, छरहरा बदन (पृ० 52), गोरी लड़की, नए लोग (पृ० 53), सुन्दर महल (पृ० 54), बाल मुलायम, बोली मधुर (पृ० 80), काली हँडिया (पृ० 88), पिछड़ी जाति (पृ० 89), अच्छा नतीजा (पृ० 90), पीले-पीले फूल (पृ० 110), सुनहरी धूप, चटकती चाँदनी, शीतल फुआर (पृ० 112), लाल घाघरा (पृ० 129), काले-काले बादल (पृ० 137), सुन्दर इमारतें, चमचमाती मोटरें (पृ० 174), सुन्दर जिल्द (पृ० 222), काला-कलूटा आदमी (पृ० 286), सुनहरी धूप (पृ० 311), उत्तम नृत्य (पृ० 335), काली सी औरत (पृ० 351), लम्बी दाढ़ी, सफाचट चेहरा (पृ० 503) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए हुए विशेषण शब्द

पीली मिट्टी (पृ० 294), काले धब्बे (पृ० 299), रंगीन घाघरा, भूरे बादल (पृ० 300), नीला क्षितिज (पृ० 301), काली पहाड़ी, पथरीली ज़मीन (पृ० 303), काला कोट, चमकीली चोटियाँ (पृ० 304), नाक लाल, आँखें नीली (पृ० 310), काले-काले पत्ते (पृ० 315), गोरे साहब (पृ० 325), लाल फ्रॉक (पृ० 363), लम्बी गर्दन, चौड़ी चोंच (पृ० 367), काला चेहरा (पृ० 403), गुलाबी चेहरा, सुनहरे बाल (पृ० 415) इत्यादि।

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आए हुए विशेषण शब्द

धीमी रोशनी (पृ० 442), पतली कमर, लाल परी (पृ० 454), लाल पैसिल (पृ० 457), सुरसुरी दौड़ (पृ० 459), भयानक चेहरे, रंगीन झरने (पृ० 490), हरी धरती, नीला आसमान (पृ० 497), काली शेरवानी, काली पोशाक (पृ० 525) इत्यादि।

उपर्युक्त विशेषणों से स्पष्ट है कि बेनीपुरी ने बड़े ही चुटीले, आकर्षक एवं जीवंत विशेषणों का प्रयोग अपनी डायरी में किया है।

वाक्य-विन्यास

वाक्य-विन्यास में लेखक पात्र, भाव एवं प्रसंग के औचित्य के अनुसार परिवर्तन करते हैं। उनकी डायरी में वाक्य-विन्यासों की कतिपय विशेषताएँ दिखाई देती हैं। उदाहरण के लिए—छोटे-छोटे वाक्य रचना, कहीं न कहीं प्रश्नवाचक वाक्य तो कहीं पर विस्मयादि-बोधक वाक्य आदि। वाक्य रचना में शब्दों का सुंदर, सहज, सुगठित, सामंजस्य पूर्ण चयन भी है।

बेनीपुरी की सबसे बड़ी वाक्य-विन्यास की विशेषताएँ हैं, छोटे-छोटे वाक्य। बेनीपुरी के संदर्भ में क्षेमचन्द्र सुमन लिखते हैं कि—“छोटे-छोटे वाक्यों में आप जो बात लिखने की क्षमता रखते हैं, वह हिंदी में तो क्या, भारत की किसी भी भाषा में ढूँढने से उपलब्ध नहीं होगी।”⁸⁴

उनकी डायरी में वाक्य-विन्यास के उदाहरण प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। 6 जून, 1950 की डायरी में छोटे-छोटे वाक्य-विन्यास के उदाहरण इस प्रकार हैं—“याद आता है, कभी-कभी लगातार कई दिनों तक पन्द्रह घंटों तक सोता ही रहा हूँ—हाँ, एक ही दौर में नहीं; सोया; उठा, खाया, सोया, सोया—फिर उठा, घूमा; जलपान किया, सोया; उठा, गप्प हुई, सोया। जिस तरह मुझमें काम करने की अद्भुत क्षमता है, उसी तरह सोने की भी।”⁸⁵

10 फरवरी, 1951 की डायरी में—“दूर से देखा, निकट से देखा। आगे-पीछे से देखा, अगल-बगल से देखा। आँखें खोलकर देखा, आँखें मूँदकर देखा। बाहर देखा, भीतर देखा। प्रेमिका की तरह देखा, अर्द्धांगिनी की तरह देखा। हृदय से एक ही पुकार आती थी—उफ, कैसी करुण शोभा!”⁸⁶

9 मार्च, 1952 की डायरी में नट जाति के चित्रण में वाक्य-विन्यास इस प्रकार है—“नट जाति अमूमन खूबसूरत होती है। मर्द कुश्तीबाज़ होते हैं; औरतें बड़ी चपला। औरतें गोदना गोदती हैं, मर्द आल्हा गाते हैं। वीरों का कड़वा सबल स्वस्थ कंठ से, तभी मजा! जब इन दोनों से सुन रहा था, लग रहा था, पहले सुनता था, उसका विद्रूप है। तो भी प्रेम से सुना।”⁸⁷

इस प्रकार डायरी साहित्य में बेनीपुरी को छोटे-छोटे वाक्यों में लिखने की जो क्षमता प्राप्त है, वह उल्लेखनीय एवं प्रशंसनीय है। उनकी भाषा की लयात्मकता

छोटे-छोटे वाक्यों के कारण से है। उनकी डायरी में आये हुये प्रसंगों एवं घटनाओं के चित्रण में यह विशेषता पायी जाती है। वास्तव में बेनीपुरी एक प्रतिभाशाली एवं कौशलपूर्ण साहित्यकार थे, अतः वे बने बनाये रास्ते पर चलने की अपेक्षा स्वयं नया मार्ग बना लेते थे, इसलिए उन्होंने वाक्य रचना के संबंध में अपना रास्ता स्वयं ही खोज लिया था। बेनीपुरी के डायरी साहित्य में भाव, विचार, कल्पना, सपने और चित्रों की इतनी भीड़ है कि संक्षिप्त परिच्छेदों में भी अभिव्यक्ति हो जाती है।

मुहावरे

भाषा को सजीव बनाने के लिए बेनीपुरी ने डायरी में अनेक मुहावरों का प्रयोग किया है। जिससे उनकी डायरी की भाषा में शक्ति आ गई है। मुहावरे भाषा में लाक्षणिकता का सौंदर्य उत्पन्न करते हैं। उनकी डायरी में प्रयुक्त मुहावरे इस प्रकार हैं—

‘डायरी के पन्ने’ में आए मुहावरे

टूट पड़ना (पृ० 28), मुँह की खाना (पृ० 32), गाल फुलाना (पृ० 33), औँधे मुँह गिरना (पृ० 36), भूत सवार होना (पृ० 37), पीठ ठोकना (पृ० 38), श्री गणेश करना, बात काटना (पृ० 39), खप जाना (पृ० 43), हड्डी तोड़ काम करना (पृ० 44), रंगरलियाँ मनाना (पृ० 47), पिंड छूटना (पृ० 48), सिर चढ़कर बोलना, भूखों मरना (पृ० 53), हाथ हथफेर कर लेना (पृ० 55), कल्याण करना (पृ० 56), लोहा मानना (पृ० 63), फूट डालना, अपना उल्लू सीधा करना, कीचड़ फेंकना, एक दूसरे पर छुरी चलाना (पृ० 71), चुटकियाँ लेना, पैर के नीचे से ज़मीन खिसकना (पृ० 72), उल्टी गंगा बहाना (पृ० 73), तिलमिला जाना (पृ० 74), लोट-पोट होना (पृ० 75), हाथ बैटाना (पृ० 70) मुँह बनाना (पृ० 88), काम तमाम करना (पृ० 89), आँखें चमक उठना (पृ० 90), गद्गद होना (पृ० 91), बात खटकना, दाँत पीसना (पृ० 93), निछावर करना (पृ० 103), चार चाँद लगना (पृ० 104), खिल्ली उड़ाना (पृ० 24), बाल की खाल निकालना (पृ० 203), एक पंथ दो काज (पृ० 219), गले पड़ना (पृ० 237), चार चाँद लगना (पृ० 288), रंगे हाथों पकड़ना (पृ० 291) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए मुहावरे

दाँतों तले अंगुली दबाना (पृ० 295), मुँह फुलाना (पृ० 300) आँखे भर आना (पृ० 336), आँखें पथरा जाना (पृ० 342), आँखें चकरा जाना (पृ० 414)

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आए मुहावरे

नाक—भौं सिकोड़ना (पृ० 445), चार चाँद लगना (पृ० 485) मुँह ताकना (पृ० 495) इत्यादि।

कहावतें—लोकोक्तियाँ

बात को अधिक स्पष्ट और प्रभावकारी बनाने के लिए बेनीपुरी जी ने कहावतें या लोकोक्तियों का प्रयोग जायरी में किया। लोकोक्तियों का प्रभाव सब से अधिक होता है, क्योंकि जन—मन के साथ इनका लम्बा सम्पर्क बना हुआ है।

‘जायरी के पन्ने’ में आई हुई कहावतें—लोकोक्तियाँ

ऊपर मक्खन, मक्खन : भीतर इस्पात, इस्पात। (पृ० 40), कहाँ राजा भोज और कहाँ गंगू तेली (पृ० 75), पानी में मछरी नौ—नौ कुटिया बरखरा (पृ० 84), सोलह आना सत्य कहना (पृ० 102), समस्थ के नहीं दोष गुसाई (पृ० 106), जे जीवे से खेले फाग जे मरे से लेखा लाग (पृ० 115), देर आयद, दुरुस्त आयद (पृ० 145), तीन बुलाए तेरह आए (पृ० 159), कारज धीर होत है, फिर काहे होत अधीर (पृ० 165) आम के आम—गुठलियों के दाम (पृ० 184), चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरी रात (पृ० 195), एक पंथ दो काज (पृ० 219), जैसा देश, वैसा भेष (पृ० 256) एक लाख पूत, सवा लख नाती—ता रावण घर दिया न बाती (पृ० 283), अन्त भला तो सब भला (पृ० 287) न जहर खा, न माहुर खा : मरे के मन होय तो पूँरनी—या जा (पृ० 486), मुँह देखे की मित्ताई (पृ० 515), सहिये सबै जो दैव सहायत (पृ० 536), साठा तब पाठा (पृ० 553), लागी से दिआई लेकिन बाजी इसन चौकी (भोजपुरी कहावत पृ० 573) चौथे पन जाईहि नृप कानन (पृ० 594) दूध का जला मठा फूँक—फूँक कर पीता है (पृ० 288) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आई हुई कहावतें—लोकोक्तियाँ

छोटे मुँह बड़ी बात (पृ० 339)

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आई हुई कहावतें—लोकोक्तियाँ

काटो तो खून नहीं (पृ० 435), मधुरेण समापयेत (पृ० 493) रोटी एक दिन की और शराब एक वर्ष की (पृ० 517), जंगल में मंगल (पृ० 459) इत्यादि।

अलंकार

बेनीपुरी की भाषा की एक अन्य विशेषता अलंकारिकता है। वैसे तो उनकी डायरी में अलंकारों की अधिकता तो नहीं है किंतु कहीं—कहीं प्रवाहपूर्ण भावों के चरित्रांकन एवं उन्हें सजाने के लिए उन्होंने अपनी डायरी में उपमा, उत्प्रेक्षा और रूपक आदि अलंकारों का भी प्रयोग किया है। बेनीपुरी के विषय में यह बात उल्लेखनीय है कि उन्होंने भाषा को अलंकृत करने के लिए कहीं पर भी शब्दों को तोड़ा—मरोड़ा नहीं है और ना ही कहीं पर जानबूझकर प्रयास किया है।

‘डायरी के पन्ने’ में आए हुए अलंकार

1. “धूल की चीज अपनी बिरादरी में जा मिली। एक दिन सारी देह जिसमें मिलेगी, मानो इस दाँत ने हाथ से खिसक कर सूचना दी और चेतावनी कि मिट्टी से यह मोह ठीक नहीं!”⁸⁸ (उत्प्रेक्षा अलंकार)
2. “जंगल की ओर से बहुत—सी भेड़ों के झुंड के झुंड चले आ रहे थे। ऐसा लगा कि उनके पीछे बुद्ध भगवान एक लंगड़े मेमने को कंधे पर रखे हुए चले आ रहे हैं!”⁸⁹ (उपमा अलंकार)
3. “बुढ़ापे में जब बाहर नहीं निकलता, घर में ही एक तरह लम्बे डग लेकर टहलता, मानो कोई सन्तरी पहरें पर घूम रहा हो!”⁹⁰ (उत्प्रेक्षा अलंकार)
4. “अंधकार पेड़ों को नई शक्तें दे रहा है—कोई गजराज बन रहा है, कोई चिंपाजी। कोई जिराफ, कोई मृगराज!”⁹¹ (रूपक अलंकार)
5. “काले चेहरे के बीच दाँत और जीभ की लम्बाई ऐसी शोभनी है मानो अंधेरी रात में डीज़ की लालटेन जल उठी।”⁹² (उत्प्रेक्षा अलंकार)

6. "एक ओर बिजलियों की कतारें जगमगा उठती हैं, दूसरी ओर सौफ्ट और हार्ड कोक बनाने के लिए पिजाबे जल उठते हैं। ये पिजाबें ऐसे लगते हैं, जैसे अनेक चिताएँ, एक साथ जल रही हों। वैसा ही धुँआ, वैसी ही दुर्गन्ध!"⁹³ (उपमा अलंकार)
7. "जब लेटा, ऐसा थका हुआ था कि लेट गया मुर्दे की तरह।"⁹⁴ (उपमा अलंकार)
8. "अब सूरज डूबने की तैयारी में है, समुद्र का जल, उससे दूर होकर झील—सा बन गया है। उसमें मुर्दापन है! सामने जीवन लहरा रहा है। पीछे मृत्यु का सन्नाटा है और जब सूरज उसके परे, पर्वत के पीछे मुँह छिपाने जा रहा है।"⁹⁵ (रूपक अलंकार)
9. "बादल का वह टुकड़ा हमारे सामने से भागा जा रहा है। अब बादल के ऐसे असंख्य टुकड़े—मानो बन्धन तुड़ाकर अनेक बछड़े इधर—उधर भागे जा रहे हैं।"⁹⁶ (उत्प्रेक्षा अलंकार) इत्यादि।

‘पैरों में पंख बाँधकर’ में आए हुए अलंकार

1. "यहाँ की जवान लड़कियाँ लाल रंग अधिक पसन्द करती हैं—उसे पहनकर तो वह लाल ज्वालामुखी—सी लगती हैं?"⁹⁷ (उपमा अलंकार)
2. "झील में कितनी ही नावें पाल लगाए खड़ी हैं—मानो उड़ने के पहले पखेरुओं ने पंख फैला दिए हों।"⁹⁸ (उत्प्रेक्षा अलंकार)
3. "झील के उस पार पहाड़ियाँ। पहाड़ियों पर बर्फ की धारियाँ—मानो शिव शंकर धारीवाल की धारीदार कम्बल ओढ़कर बैठे हो।"⁹⁹ (उत्प्रेक्षा अलंकार)

‘उड़ते चलो, उड़ते चलो’ में आए हुए अलंकार

1. "मैं प्राय ही उसके किसी रंगीन रेस्तोरों की रंग—बिरंगी छतरियों के नीचे बैठकर किन प्यासी नज़रों से देखता रहा हूँ। कभी स्वर्ग में मेनका उर्वशी रही होंगी; यहाँ वे हमारे सामने जा रही हैं। क्या जा रही

है? नहीं; अप्सराओं—सी या तो उड़ रही हैं या हवा में तैरती—सी बढ़ रही हैं।”¹⁰⁰ (उपमा अलंकार)

2. “उसके उजले रेशम के बाल, चाँद के टुकड़े—सा छोटा ललाट”¹⁰¹ (उपमा अलंकार)
3. “कोटि—कोटि बूँदें बन रहीं, उछल रहीं। नीले पानी पर वे ऐसी लगतीं कि नीलम की थाल में किसी ने पारे की महीन बूँदियाँ बिखरा दी हों”¹⁰² (उपमा अलंकार)
4. “जब वह बोलती तो लगना सितार का तार छू गया।”¹⁰³ (उपमा अलंकार) इत्यादि।

उपर्युक्त उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि बेनीपुरी ने अपनी डायरी में अलंकारों का प्रयोग किया है।

सूक्तियाँ

मानव कल्याण के लिए सफल साहित्यकार शिक्षा, उपदेश, जीवन के मूल्यों एवं सत्यों को अपनी कृतियों में सूक्ति के रूप में प्रकट करता है। सूक्तियों के माध्यम से जीवन के सूक्ष्म तथ्यों का प्रकटीकरण होता है। ये सूक्तियाँ भावपूर्ण एवं प्रभावयुक्त होती हैं। बेनीपुरी ने अपनी डायरी में सूक्तियों का प्रयोग किया है। सूक्तियाँ बेनीपुरी की भाषा को संवारती हैं साथ ही साथ निखारती भी हैं। इनके प्रयोग से बेनीपुरी की भाषा अत्यन्त सजीव एवं आकर्षक बन गई है। डायरी में ये सूक्तियाँ नीति वाक्यों में कहीं—कहीं उपदेशात्मक भाव में हैं और कहीं—कहीं पर व्यवहारिक तौर पर हैं। इस प्रकार बेनीपुरी जी की डायरी में स्वनिर्मित सूक्तियों का प्रयोग भी बढ़ता गया है। कुछ सूक्तियों के उदाहरण इस प्रकार हैं—

‘डायरी के पन्ने’ में आई हुई सूक्तियाँ

1. “मित्र से बढ़कर कोई शत्रु नहीं, परिवार से बढ़कर कोई शोषक नहीं।”¹⁰⁴
2. “नेतृत्व के लिए आवश्यक है कि तुम जनता से ऊपर खड़े हो।”¹⁰⁵
3. “कला को खिलौना बनाओ खुराक नहीं।”¹⁰⁶

4. "जैसी देश की दशा है, कला भी तो वैसी ही बनेगी"¹⁰⁷
5. "जो प्रतीक्षा करते हैं वह भी सेवा करते हैं।"¹⁰⁸
6. "कला को नैतिकता से दूर रखकर हम सर्वनाश की ओर ही दौड़ेंगे।"¹⁰⁹
7. "जैसे लोग होते हैं वैसा ही शासन उन्हें मिलता है।"¹¹⁰
8. "सम्पन्नता के बिना निश्चिन्ता कैसी?"¹¹¹
9. "किंकर्तव्यविमूढ़"¹¹²
10. "भारी बोझ दोनों के लिए बुरा है, बैल के लिए और आदमी के लिए भी।"¹¹³
11. "स्थान बदलते ही आदमी इतना बदल जाता है, आदमी से राक्षस हो जाता है।"¹¹⁴
12. "कला यदि सच्ची कला हो और उसकी अराधना श्रद्धा से ही की जाए तो वह फल ही देती है।"¹¹⁵
13. "न भूतों, न भविष्यति"¹¹⁶
14. "पोशाक भले ही बदले हृदय तो नहीं बदलता"¹¹⁷
15. "सत्य सदा ही सुन्दर है, भले ही उसका चेहरा कितना भी कुरूप दिखाई पड़े!"¹¹⁸
16. "कटु सत्य में सुहावनी झूठ से अधिक सौन्दर्य है!"¹¹⁹
17. "यदि लम्बी उमर चाहते हो तो स्वजन-प्रियजन के बिछोह-दुख को बर्दाश्त करने के लिए तैयार रहो।"¹²⁰
18. "यदि चाहते हो कि बड़ी कीर्ति मिले, तो उससे भी बड़ी गाली सुनने के लिए तैयार रहो।"¹²¹

बेनीपुरी ने जायसी में पाश्चात्य विद्वान लेखकों द्वारा लिखी गई पुस्तकों की अच्छी-अच्छी उक्तियों को भी अपनी जायरियों में उदाहरण के लिए नोट कर लिया है।

हेमिंग्वे की 'दि ओल्डमेन एंड दि सी' की भावायुक्त सूक्तियाँ 10 जुलाई, 1955 की डायरी में मिलती हैं—

1. "आदमी हारने के लिए नहीं बनाया गया है, आदमी बरंबाद हो सकता है, हार नहीं सकता!"¹²²
2. "हवा हमारी मित्र है और समुद्र भी, यद्यपि उसमें दोस्त और दुश्मन, दोनों हैं। और शय्या भी हमारी मित्र है, जब आदमी हार गया हो, तो सबसे बड़ी मित्र।"¹²³
3. "मैं क्यों हारा? कुछ ज़्यादा दूर बढ़ गया था।"¹²⁴
24 अक्टूबर, 1956 की डायरी में बेनीपुरी 'इमर्सन' की सूक्तियाँ लिखते हैं—
4. "जीवन तो एक प्रयोग है। जितने अधिक प्रयोग कर सको, उतना ही अच्छा! क्या हुआ, यदि वे तीखे हुए; क्या हुआ, यदि तुम असफल रहे और एकाध बार धूल में गिर पड़े। उठ खड़े हो, फिर तुम्हें ठोकर खाने से डर नहीं लगेगा।"¹²⁵
5. "अच्छा लेखक सदा अपने बारे में लिखता है, हाँ उसका ध्यान उस सूत्र पर रहता है जो संसार को उससे जोड़ता है!"¹²⁶
6. "किसी लेखक की शैली उसके दिमाग की आवाज़ है। काठ के दिमाग से काठ की आवाज़ आयेगी। सत्य वंशी की तरह सुरीला और वीणा की तरह झंकार वाला होता है।"¹²⁷
7. "पूरी ईमानदारी की कमी ही असफलता की जननी है।"¹²⁸
8. "अज्ञान ही पाप है; जो चोरी करता है वह अपने को ही चुराता है। जो धोखा देता है वह अपने को ही धोखे में रखता है। जो कर्ज लेता है वह अपना ही कर्जदार बनता है तथा जो दूसरे को देता है, उतना ही अपना लाभ करता है।"¹²⁹
9. "आदमी के पहचान के लिए देखो कि वह क्या पढ़ता है, किनकी संगत में रहता है, किनकी प्रशंसा करता है, उसकी पोशाक कैसी है? उसकी रुचि कैसी है? वह कैसी कहानी कहता है, वह चलता कैसे है, उसकी आँखें इशारा कैसे करती हैं, उसके मकान का रुख, उसके कमरे की सजावट ये सब उसके

व्यक्तित्व की झाँकी देते हैं, क्योंकि संसार में पृथक् कुछ नहीं है, सब एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं।¹³⁰

इस प्रकार उनकी डायरी में पाश्चात्य विद्वानों की अच्छी उक्तियाँ भी मिलती हैं।

बेनीपुरी की डायरी में हमें कुछ अंग्रेज़ी की भी सूक्तियाँ और अच्छे कथन भी मिलते हैं जिनमें से कुछ रोमन में लिखे हुए हैं।

1. "ऑल द ब्यूटीफुल इवेन ह्यूमेनली ब्यूटीफुल डाइज, सेव इन आर्ट"¹³¹
2. "But break my heart, for I must hold my tongue"¹³²
3. "मनी सेवड इन मनी अर्न्ड"¹³³
4. "When you are in the right-you can afford to keep your temper, and when are in the wrong you can not afford it and lose it"¹³⁴

इस प्रकार स्पष्ट है कि बेनीपुरी की डायरी में स्थान-स्थान पर सूक्तियों का प्रयोग हुआ है, जिसके कारण लेखक की भाषा में सजीवता और प्रभावोत्पादकता आ गई है।

काव्य का प्रयोग

बेनीपुरी ने अपने डायरी साहित्य में भाषा-शैली को एक नया रूप प्रदान किया है उन्होंने डायरी जैसी छोटी सी विधा में भी भाषा-शैली के नए-नए प्रयोग कर दिखलाए हैं। उन्होंने डायरी को प्रभावशाली एवं समृद्ध बनाने के लिए दोहे, चौपाई, शेर, लोक एवं ग्रामीण भाषा में उक्तियाँ, पंक्तियाँ व गीत और अंग्रेज़ी के पद्य भी डायरी में ये उनका कौशल ही तो है जो उन्होंने डायरी में भी कर दिखलाया है।

8 मार्च, 1959 की डायरी में अन्य कवि का दोहा लिखते हैं—

“रहिमन निज मन की विधा

मन ही राखी गोय,

सुनि अठिलैंहे लोग सब,

बाँटि न लैंहे कोय।”¹³⁵

23 सितम्बर, 1958 की डायरी में किसी अन्य कवि का दोहा वर्णित है —

“कामरूप के कामिनी श्याम बरनि सुकुमारि

अधर धरति नस—नस रमति काटति सकल खुमारि!”¹³⁶

23 मई, 1950 की डायरी में तुलसीदास के पद की पंक्तियाँ मिलती हैं—

“बन्दौ गुरुपद पदुम परागा; सुरुचि सुबास सरस अनुरागा”¹³⁷

उन्हीं की एक और अन्य पद की पंक्तियाँ —

“आगे चले बहुरि रघुराई, रिष्यमूक पर्वत नियराई”¹³⁸

16 जुलाई, 1955 की डायरी में ये कुछ पद की पंक्तियाँ मिलती हैं—

“होई है सो जो राम रचि राखा’,

को करि तर्क बढावे साखा!”¹³⁹

‘विनय—पत्रिका’ के एक—एक पद में भक्ति और तन्मयता समाहित है।

“कबहुँक दौं यहि रहनि रहौंगो”¹⁴⁰

तुलसीदास का एक अन्य पद जिसमें वे ‘पर—हित’ पर जोर देते हैं—

“परहित सरिस धर्म नहिं भाई,

पर—पीड़ा सम नहिं अधमाई !...

परहित बस जिनके मन—माहिं

तिन कहँ जग दुर्लभ कछु नाहिं।”¹⁴¹

1 जून, 1957 की डायरी में ग्रामीण—अंचल एवं लोक—संस्कृति की भाषा का प्रयोग करते हैं—

“कल लै, सँधि, सराहि कै, सबँ रहँ गहि मौन,

गंधी—गंध गुलाब कौ गँवई गाहक कौन!”¹⁴²

31 मई, 1955 की डायरी में भी लोक—भाषा को अपनाते हैं—

“साधो करमन की गत न्यारी,

मूरख—मूरख राज करे औ पंडित बने भिखारी।”¹⁴³

5 फरवरी, 1959 में बेनीपुरी के मस्तिष्क में अजीब—अजीब बातें उठा करती हैं। ग्रामीण—अंचल की भाषा—शैली में लिखते हैं—

“छिम माँ चटक छिनहुँ माँ मद्धिम,

जस बुझात खन होत दिया!

ऐसे ही कुछ बुझ पड़त हैं

हमारी अक्किल कै लच्छन!"¹⁴⁴

19 अप्रैल, 1959 की डायरी में 'संस्कृत' की पंक्ति वर्णित है—

"शरीरं या पातयामि; कार्यं वा साधयामि!"¹⁴⁵

15 अगस्त, 1950 की डायरी में 'जोश' का शेर लिखते हैं—

"वे मुझसे खफा हैं, मैं उनसे खफा हूँ

मगर बातें करने को जी चाहता है!"¹⁴⁶

13 सितम्बर, 1953 की डायरी में लिखते हैं—

एक विद्यार्थी स्वयंसेवक ने बेनीपुरी से कहा कि आपकी वाणी में जादू है! तब बेनीपुरी स्वयं पर ग़ालिब का शेर लागू करते हैं—

"वो मसायले तसव्वुफ वो तर्जें बयाँ ग़ालिब,

सब वली तुझे समझते, गर न बादखार होता!"¹⁴⁷

25 अप्रैल, 1952 की डायरी में 'स्वामी रामतीर्थ' का शेर मिलता है—

"भागती फिरती थी दुनिया जब तलब करने थे हम।

जबकि नफरत उससे की अब बेकरार आने को है!"¹⁴⁸

30 मार्च, 1953 की डायरी में; डायरी शुरू करने से पहले बेनीपुरी 'इक़बाल' का शेर लिखते हैं—

"सितारों से आगे जहाँ और भी हैं,

अभी इश्क के इम्तिहाँ और भी हैं।

तू शाही है, परवाज़ है काम तेरा,

तेरे सामने आस्माँ और भी हैं!"¹⁴⁹

20 मई, 1953 की डायरी में बेनीपुरी को यह उर्दू का शेर बार—बार याद आता है—

"पुराने अहबाब चल बसे सब,

कहीं पे होंगे दो चार बाकी!"¹⁵⁰

18 दिसम्बर, 1958 की डायरी में 'अकबर' का शेर मिलता है—

"जब ग़म हुआ चढ़ा ली दो बोटलें इकट्ठी।

बायज़ की दौड़ मस्जिद अकबरी की दौड़ भट्ठी!"¹⁵¹

31 मार्च, 1959 की डायरी में यह शेर लिखते हैं—

“कह रहा है आसमाँ यह सब समाँ कुछ भी नहीं;
पीस दुँगा एक गर्दिश में जहाँ कुछ भी नहीं।”¹⁵²

23 अप्रैल, 1951 में बेनीपुरी जी ‘जोश’ का यह शेर लिखते हैं —

“जमीं इस वक्त एक बहमो गुमाँ है
मेरे शहपर के नीचे आस्माँ है।”¹⁵³

23 अप्रैल, 1951 की डायरी में बेनीपुरी एक और अन्य शेर लिखते हैं—

“एक हम हैं कि लिया अपनी भी सूरत को बिगाड़
एक वह हैं जिन्हें तस्वीर बना आती है।”¹⁵⁴

बेनीपुरी ने अपनी डायरी में अंग्रेज़ी के पदों को भी लिखा है—

16 मई, 1951 की डायरी में बेनीपुरी ने ‘शेक्सपीयर’ का यह पद वर्णित किया है—

“Life’s a walking shadow
a poor player
that struts and frsts
His houp upon the stage
And then there is no more.”¹⁵⁵

शेक्सपीयर की समाधि पर ये कुछ पंक्तियाँ अंकित हैं जिसे बेनीपुरी ने 20 मई, 1951 की डायरी में लिखा है —

“Good, Frend for Jesus sake forbear
to dig the dust enceosed hearte
Blese be ye man yt spares thes stones
and curst be he yt moves my bones”¹⁵⁶

इस प्रकार बेनीपुरी ने डायरी में उच्च-कोटि के कवियों के दोहे, लोक पंक्तियाँ एवं ग्रामीण-अंचल के गीत चौपाईयाँ व उर्दू शायरों के शेर एवं अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध कवि शेक्सपियर के अंग्रेज़ी के पदों का प्रयोग किया है। जिनके प्रयोग से डायरी की भाषा समृद्ध, सशक्त एवं प्रभावशाली हो गयी है।

उपर्युक्त संपूर्ण विवरण से स्पष्ट है कि बेनीपुरी की शक्ति उनकी भाषा-शैली में है। उनकी भाषा-शैली सशक्त है। शैली की जटिलता कला-कृति की उपयोगिता को नष्ट कर देती हैं; किंतु बेनीपुरी की भाषा-शैली सहज, सरल एवं स्पष्ट है। बेनीपुरी की शैली में नितांत मौलिकपन है। बेनीपुरी के डायरी साहित्य का शिल्प-विधान सशक्त एवं भाषा समृद्ध है। ये उनके कौशल की ही बात है कि उन्होंने डायरी जैसी छोटी विधा में भी संपूर्ण शैलियों को समाहित कर लिया है। यथा-डायरी, आत्मकथात्मक, संस्मरणात्मक, निबंधात्मक, पत्र शैली, वर्णनात्मक, चित्रात्मक, व्यंग्यात्मक, प्रतीकात्मक, संवाद, संबोधन, प्रश्न इत्यादि शैलियों का प्रयोग किया है। इस प्रकार उनकी शैली के जितने रूप हैं, साथ ही साथ उतने ही रंग भी। जो उनके विशाल व्यक्तित्व को भी प्रकट करते हैं। वास्तव में उनके व्यक्तित्व ने उनकी शैलियों के निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनकी भाषा सजीव, समर्थ और भावानुकूल है। उसमें भावों के अनुरूप उपयुक्त शब्दों का सहज प्रयोग किया गया है। जिसमें अरबी, फ़ारसी, अंग्रेज़ी, संस्कृतनिष्ठ आदि शब्द हैं। इसके साथ ही साथ उन्होंने ध्वन्यात्मक शब्द, शब्द-युग्म, विशेषण आदि का जगह-जगह प्रभावशाली प्रयोग किया है। उन्होंने अनेक सरल और जन-प्रचलित मुहावरों एवं लोकोक्तियों आदि का प्रयोग जगह-जगह पर किया है। भावों को मूर्तमान करने के लिए जगह-जगह अलंकारों की सहायता ली है, जिसमें उनकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति दिखाई देती है। जीवन के गंभीर अनुभवों को व्यक्त करने वाली भावपूर्ण सूक्तियों का प्रयोग किया है। अपनी डायरी में उन्होंने काव्य का प्रयोग प्रभावशाली ढंग से किया है। व दोहे, शेर, पद इस प्रकार भाषा-शैली के क्षेत्र में बेनीपुरी जी की देन से नए प्रतिमान भी स्थापित किए हैं। बेनीपुरी ने हिंदी डायरी साहित्य को विविधता, विविध रूप-रंग और राष्ट्रीय एवं सामाजिक चेतना को सशक्त वाणी दी है। इस संदर्भ में उनके डायरी साहित्य का और उनकी विविधतापूर्ण भाषा-शैली का जितना मूल्यांकन हो उतना कम ही है।

संदर्भ

1. डॉ० कमल किशोर गोयनका, प्रेमचन्द के उपन्यासों का शिल्प विधान, पृ० 13
2. डॉ० रश्मि चतुर्वेदी, रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्र : एक अध्ययन, पृ० 230
3. डॉ० नगेन्द्र, भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका, पृ० 53
4. शिवदान सिंह चौहान, आलोचना के मान, पृ० 153
5. आ० नन्ददुलारे वाजपेयी, नया साहित्य : नये प्रश्न : पृ० 23
6. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-दो), नेत्र-दान (नाटक) (भूमिका)
7. वही, (भूमिका)
8. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 171
9. वही, पृ० 443
10. वही, पृ० 593-594
11. वही, पृ० 397-398
12. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 289
13. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 103
14. वही, पृ० 104
15. वही, पृ० 30
16. वही, पृ० 197
17. वही, पृ० 557
18. वही, पृ० 305
19. वही, पृ० 416
20. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 341

21. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने,
पृ० 552
22. वही, पृ० 80
23. वही, पृ० 99—100
24. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर,
पृ० 364
25. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते
चलो पृ० 437
26. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने,
पृ० 41
27. वही, पृ० 564
28. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते
चलो पृ० 459
29. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने,
पृ० 121—122
30. वही, पृ० 226
31. वही, पृ० 104
32. वही, पृ० 28
33. वही, पृ० 118
34. वही, पृ० 589—592
35. वही, पृ० 277
36. वही, पृ० 87
37. वही, पृ० 142
38. वही, पृ० 200—201
39. वही, पृ० 264
40. वही, पृ० 514

41. वही, पृ० 514—515
42. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 496
43. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 52
44. वही, पृ० 86
45. वही, पृ० 115
46. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 419
47. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 102
48. वही, पृ० 147
49. वही, पृ० 410
50. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 299
51. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 216
52. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 521
53. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 64
54. वही, पृ० 84
55. वही, पृ० 92
56. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—तीन), हवा पर (निबंध) पृ० 19
57. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 163—164

58. धीरेन्द्र वर्मा (संपादक), हिन्दी साहित्य कोश, (भाग—दो), पृ० 492
59. डॉ० गंगाप्रसाद गुप्त, हिन्दी साहित्य में निबन्ध और निबन्धकार, पृ० 216
60. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 263
61. वही, पृ० 262—263
62. रामवचन राय, भारतीय साहित्य के निर्माता: रामवृक्ष बेनीपुरी, पृ० 10
63. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 134
64. वही, पृ० 361
65. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 503
66. वही, पृ०
67. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 44
68. वही, पृ० 188
69. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 554
70. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 92
71. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 303
72. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 172
73. वही, पृ० 123
74. वही, पृ० 162
75. बच्चन सिंह, आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० 424

76. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर, पृ० 368
77. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-दो), नेत्रदान (नाटक), पृ० 21
78. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), उड़ते चलो, उड़ते चलो पृ० 439
79. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 519
80. वही, पृ० 536—537
81. वही, पृ० 579
82. वही, पृ० 594—595
83. डॉ० गजानन चव्हाण, रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, पृ० 164
84. डॉ० कन्हैयालाल बी० चौहान 'चिराग', रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ० 281
85. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने, पृ० 44
86. वही, पृ० 74
87. वही, पृ० 114
88. वही, पृ० 57
89. वही, पृ० 106
90. वही, पृ० 124
91. वही, पृ० 130
92. वही, पृ० 166
93. वही, पृ० 174
94. वही, पृ० 203
95. वही, पृ० 204
96. वही, पृ० 292

97. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर,
पृ० 319
98. वही, पृ० 396
99. वही, पृ० 414
100. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), उड़ते चलो, उड़ते
चलो पृ० 475
101. वही, पृ० 475
102. वही, पृ० 477
103. वही, पृ० 521
104. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने,
पृ० 41
105. वही, पृ० 41
106. वही, पृ० 42
107. वही, पृ० 56
108. वही, पृ० 56
109. वही, पृ० 102
110. वही, पृ० 114
111. वही, पृ० 115
112. वही, पृ० 170
113. वही, पृ० 284
114. वही, पृ० 369
115. वही, पृ० 320
116. वही, पृ० 590
117. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड—चार), पैरों में पंख बाँधकर,
पृ० 298

118. डॉ० गजानन चव्हाण, डॉ० राजेश्वर प्रसाद सिंह (संपादक), डायरी के पन्ने,
पृ० 228
119. वही, पृ० 228
120. वही, पृ० 360
121. वही, पृ० 360
122. वही, पृ० 360
123. वही, पृ० 446
124. वही, पृ० 446
125. वही, पृ० 446
126. वही, पृ० 443
127. वही, पृ० 473
128. वही, पृ० 447
129. वही, पृ० 447—448
130. वही, पृ० 448
131. वही, पृ० 58
132. वही, पृ० 70
133. वही, पृ० 236
134. वही, पृ० 146
135. वही, पृ० 142
136. वही, पृ० 515
137. वही, पृ० 42
138. वही, पृ० 42
139. वही, पृ० 361
140. वही, पृ० 362
141. वही, पृ० 362

142. वही, पृ० 468
143. वही, पृ० 347
144. वही, पृ० 541
145. वही, पृ० 559
146. वही, पृ० 65
147. वही, पृ० 204
148. वही, पृ० 125
149. वही, पृ० 156
150. वही, पृ० 176
151. वही, पृ० 523
152. वही, पृ० 553
153. सुरेश शर्मा (संपादक), बेनीपुरी ग्रंथावली (खंड-चार), पैरों में पंख बाँधकर,
पृ० 302
154. वही, पृ० 305
155. वही, पृ० 366
156. वही, पृ० 379

उपसंहार

उपसंहार

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल गद्य की अनेक नई विधाओं के प्रवर्तन का काल है। आत्मकथा, यात्रा-वृत्तान्त, संस्मरण, रेखाचित्र, रिपोर्टाज, इंटरव्यू, पत्र, जीवनी आदि गद्य विधाओं के साथ साहित्य-जगत में एक विशिष्ट विधा विकसित हुई जिसे डायरी कहा गया। इसका आगमन भारतेंदु-काल की देन है। प्रारंभ में जो डायरियाँ लिखी गयीं, वे अपने स्वतंत्र व मौलिक रूप में थीं, क्योंकि डायरी लेखक को अपने व्यक्तिगत जीवन से जुड़ी हुई बातों के छपने की आशंका नहीं थी। आज डायरियाँ प्रकाशित होने के लिए लिखी जाने लगी हैं। अनेक पत्रिकाओं में साहित्यकारों की डायरियों के अंश छप रहे हैं। आज डायरी साहित्य खूब लिखा जा रहा है और प्रकाशित भी हो रहा है, इससे उसकी प्रकृति में बदलाव आया है।

डायरी एक स्वतंत्र गद्य-विधा होने के साथ-साथ शैली के रूप में अन्य विधाओं में व्याप्त होने का भी सामर्थ रखती है। इसका उदाहरण अन्य विधाओं की अनेक रचनाओं में डायरी विधा का उपयोग है। जिस प्रकार एक विधा में अन्य अनेक विधाओं का आवागमन होता है उसी प्रकार डायरी विधा भी दूसरी विधाओं में स्थान पाती है। डायरी बहुत ही व्यक्तिगत विधा होती है और इसमें आदमी का सच्चा रूप सीधे व्यक्त होता है। व्यक्ति विशेष की अभिव्यक्ति केवल व्यक्ति की ही नहीं, व्यक्तियों और युग की अभिव्यक्ति भी है। साहित्य की आधुनिकता इस तरह की अभिव्यक्ति के साथ जुड़ी है। डायरी लिखना एक कठिन काम है, क्योंकि इसमें सच्चाई को बड़े बेबाक ढंग से लिखा जाता है।

बेनीपुरी आधुनिक हिंदी गद्य लेखन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण रचनाकार हैं। गद्य की अनेक विधाओं जैसे—कहानी, नाटक, उपन्यास, संस्मरण, निबंध, रेखाचित्र, आत्मकथा, यात्रा-वृत्तान्त, जीवनी व डायरी लेखन में एक सफल लेखक के रूप में बेनीपुरी का योगदान सराहनीय है। सन् 1925 ई० से बेनीपुरी ने लिखना प्रारंभ किया। बेनीपुरी का साहित्य उनके समाजवादी आदर्शों का रचनात्मक रूप है। समाज, इतिहास और संस्कृति ने मिलकर उनके साहित्यिक मानस का निर्माण किया। शायद यही कारण है कि उनका रचना-कर्म और जीवन-संघर्ष एक दूसरे

से जुड़ा हुआ है। श्री रामवृक्ष बेनीपुरी बीसवीं शताब्दी के तीसरे से लेकर छठे दशक तक लेखन-प्रक्रिया में सक्रिय रहे। इन वर्षों में उन्होंने सिर्फ साहित्य के संसार में नहीं वरन् राजनीति और पत्रकारिता में भी अपना पूरा सहयोग व योगदान दिया। बेनीपुरी ने अपने साहित्य में समाज की हर परिस्थितियों व वास्तविकताओं को केंद्रित किया है। अपने संपूर्ण साहित्य में वे कहीं भी व्यक्तिवादी नहीं दिखाई देते। उनकी रचनाओं का यथार्थ-जीवन सत्य से उद्घाटित होता है। ऐसा ही लेखक जनता का लेखक होता है। बेनीपुरी ऐसे ही लेखक हैं जिनका अस्तित्व जनता के जीवन से जुड़ा है।

बेनीपुरी डायरी विधा को साहित्यिक गरिमा प्रदान करने वाले भारतीय लेखक थे। बेनीपुरी ने जो डायरी लिखी वह ऐसी डायरी नहीं है, जिसमें दिन-रात की घटनाओं का केवल विवरण मात्र दिया गया हो, बल्कि वह एक साहित्यिक रचना है जिसमें उनकी जीवन की परिकल्पना, समाज एवं राजनीति के संदर्भ में उनके विचार एवं अवधारणाएँ हमें देखने को मिलती हैं। बेनीपुरी की डायरी केवल व्यक्तिगत संबंधों, इच्छाओं, सफलताओं-असफलताओं और सुख-दुःख के द्वन्द्वों का लेखा-जोखा भर नहीं है, उसमें उनके समय की साहित्यिक गतिविधियाँ भी अंकित हैं। इसमें बेनीपुरी जी की रचना-प्रक्रिया और लेखन-प्रकाशन की चिंताओं, विवादों के साथ-साथ सम्मान-पुरस्कार की रणनीतियों और तुच्छताओं को भी समझने में काफी सहायता मिलती है।

बेनीपुरी चिंतनशील साहित्यकार थे। उन्होंने न केवल अपनी रचनाओं में इस चिंतनशीलता का परिचय दिया है, बल्कि अपनी डायरी में भी जगह-जगह व्यक्ति, समाज, देश, राजनीति, धर्म आदि के विषय में अपने छिटपुट विचारों में भी प्रतिबिंबित किया है। इसीलिए उनकी डायरी किसी का रोज़नामचा न होकर एक चिंतनशील साहित्यकार की रचना है; जिसमें कहीं काव्यात्मकता, कहीं कहानीपन, कहीं आलोचना, कहीं विश्लेषण-मूल्यांकन, कहीं हास्य-व्यंग्य-विनोद और कहीं गहन आत्मविश्लेषण एवं तत्त्वचिंतन है। यह डायरी जहाँ उनके व्यक्तिगत जीवन पर प्रकाश डालती है वहीं तत्कालीन साहित्यिक एवं राजनीतिक जीवन से भी साक्षात्कार कराती है। वैसे उनकी डायरी का एक बड़ा हिस्सा सरस, साहित्यिक एवं

रोचक है। बेनीपुरी ने अपनी डायरी में रोज़ घटित होने वाली घटनाओं का वर्णन ही नहीं किया, बल्कि उससे घटित होने वाली मानसिक प्रतिक्रिया को भी अंकित किया है। डायरी में उनके चिंतन के विभिन्न पक्ष जैसे—समाज, देश, राजनीति, आर्थिक, साहित्य, शिक्षा, नारी, क्रांति, कला, रूढ़िवादिता, नव—निर्माण, समाजवाद आदि पक्षों को स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

उनकी डायरी में सहजता के साथ—साथ चिंतन—मनन, व सृजननिरूपण की गंभीरता हमें साफ़ दिखाई देती है। उनकी डायरी में उनका स्वतंत्र विचारधारा वाला व्यक्तित्व उभर कर सामने आता है। इस डायरी में व्यक्त वैयक्तिकता का भी एक सामाजिक स्वर है। इनकी डायरी में दैनिक कार्यक्रमों की श्रृंखला बनी हुई है। कोई आता है, बतियाता है, सुख—दुःख का आदान—प्रदान होता है; नए सवाल उठते हैं, नये उत्तर निकलते हैं, समकालीन वातावरण के रंग उभरते हैं। इस डायरी में भावी कल्पनाएँ, सोच—विचार की तरंगें, समाज में घटित प्रसंगों पर सुखात्मक—दुखात्मक प्रतिक्रियाएँ, परिवार की चिंताएँ, उसमें व्याप्त प्रतिध्वनियाँ हैं। इनकी डायरी में सभी कुछ अनौपचारिक रूप से अंकित है।

बेनीपुरी की डायरी उनके द्वारा भोगे हुये सत्य का दस्तावेज़ है। उनकी डायरी में जीवन की सच्चाई है। उनकी डायरी से उनके अत्यन्त मानवीय और संवेदनशील व्यक्तित्व का निकट से परिचय मिलता है। बेनीपुरी की डायरी की जीवंतता उनकी आत्मा से बंधी है। बेनीपुरी की डायरी पढ़ने पर ज्ञात होता है कि बेनीपुरी जिस क्षण डायरी लिखते हैं, उस क्षण वे शब्दों में, भावों में, अभिव्यक्ति के रूप में होते हैं। यह डायरी उनको संपूर्ण समझने, पहचानने में सहायक बनती है; क्योंकि डायरी में उनकी आत्मा जीती है, वे स्वयं जीते हैं। उनकी डायरी जीवन के यथार्थ की प्रस्तुति है। 'डायरी के पन्नों' में भाव, विचार, चिंतन, मनन, कल्पना आदि इन सभी का समावेश है।

उनकी यह डायरी राजनीतिक विचाराधारा से प्रेरित है। बेनीपुरी के डायरी—लेखन में राजनीति एक केंद्रीय तत्त्व के रूप में है। उनकी डायरी में राजनीतिक पक्ष अत्यधिक उभरकर सामने आया है, क्योंकि राजनीति बेनीपुरी की जिंदगी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उनके डायरी के पन्नों को पढ़ते हुए हमें

यह अनुभव होता है कि बेनीपुरी भारतीय जनता के कल्याण व देश की सुख-समृद्धि के लिए कितने चिंतित थे। एक सामाजिक चिंतक व राजनीतिक नेता के रूप में बेनीपुरी देश की जनता व उसकी समस्याओं पर हमेशा ध्यान देते थे। बेनीपुरी मनुष्य और समाज की नियति को निर्धारित करने वाली इस राजनीति के प्रति सजग दिखाई देते हैं। वह जानते हैं कि इसके प्रति बेखबरी से अनेक प्रकार के छल, फरेब पैदा होते हैं। उनकी डायरी में राजनीतिक एवं सामाजिक संदर्भ बार-बार आते हैं, क्योंकि वे साहित्यकार होने के साथ-साथ राजनीतिक एवं समाजसुधारक व्यक्ति थे। बेनीपुरी की डायरी उनके समकालीन राजनीतिक इतिहास का दस्तावेज़ है। जगह-जगह राजनीतिक घटनाएँ अंकित हैं। इसमें उन्होंने अपने समय की राजनीतिक पेंचीदगियों का यथार्थ ब्यौरा प्रस्तुत किया है। अपने देश की ही नहीं, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय राजनीति की भी सूक्ष्म जानकारी दी है। उनकी डायरी में राजनैतिक सामाजिक चेतना और एक सुसंगत समझ भी है। आज की भ्रष्ट और खोखली राजनीति के संदर्भ में बेनीपुरी का डायरी साहित्य जीवंत, शाश्वत और कारगर प्रतीत होता है।

बेनीपुरी सामाजिक रूप से ऐसे क्रांतदर्शी, विवेकशील और संपन्न जागरूक विचारवान व्यक्ति हैं, जिनके पास ज्ञानात्मक संवेदना और संवेदनात्मक ज्ञान है। वे व्यक्ति और समाज के रिश्तों को समझते हैं और धर्मध्वजियों के पाखंडपूर्ण हस्तक्षेप का खुलकर विरोध करते हैं। बेनीपुरी मनुष्यता के प्रति किए जाने वाले हर षडयंत्र के विरुद्ध खड़े दिखाई देते हैं। इस प्रकार वे व्यक्ति की नियति और अस्मिता के लेखक ही नहीं हैं, बल्कि सामाजिक जीवन की विडम्बनाओं के विश्लेषक भी हैं। सर्वहारा वर्ग की वेदना से वे पूर्णतः जुड़े हुए हैं। उन्हीं के लिए संघर्षरत हैं। उनकी डायरी सामाजिक-राजनीतिक समझ की व्याख्या कर देती है।

महत्त्वपूर्ण तथ्य यह भी है सभी परिस्थितियों के साथ नारी-जीवन से जुड़ी समस्याएँ भी तथा उसके प्रति बेनीपुरी की चिंता हमें उनकी डायरी के पन्नों में जगह-जगह देखने को मिलती है। भारत में स्त्रियों की बुरी दशा को देखकर उनका खून खौलता रहता था। वह उनकी समस्याओं के मूल जड़ तक पहुँचना चाहते थे। बेनीपुरी सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक क्षेत्रों में जाति-पाँति,

ऊँच-नीच की भेद-भाव को देखकर अत्यन्त चिंतित व दुःखी होते थे। उनका कहना था कि व्यक्ति की सोच का दायरा छोटा रहा तो वह कभी उन्नति नहीं कर सकता, अतः उसके खुले मस्तिष्क से विचार कर इन समस्याओं को दूर करना होगा तभी समाज विकास की ओर अग्रसर होगा। आज के राजनीति व समाज में जो गंदगी है वह तभी दूर हो सकेगी। समाज के दबे-कुचले लोगों के जीवन की वास्तविकताओं का उद्घाटन उन्होंने अपनी डायरी में भी किया है क्योंकि समाज का यथार्थ हमेशा उनकी पृष्ठभूमि में होता है।

ब्रिटिश शासनकाल में भारतीय जनता को अनेकानेक आर्थिक कठिनाईयों से गुज़रना पड़ा। जिसकी झलक हमें उनके संपूर्ण डायरी साहित्य में देखने को मिलती है। आर्थिक सुधार के लिए बेनीपुरी परिश्रम पर जोर देते हैं। देश की गरीबी के संकेत भी उनके डायरी साहित्य में जगह-जगह मिलते हैं। अपनी दोनों यात्रा में यूरोपीय देशों की आर्थिक परिस्थितियों का विशद वर्णन भी किया है। देश-विदेश के आर्थिक ढाँचे का यथार्थ वर्णन करते हुए उन्होंने उत्पादन के साधन व आर्थिक तंगी तथा उसके संकट को भी साहित्य में स्थान दिया है।

बेनीपुरी की डायरी में उनके अपने स्वभाव का सूक्ष्म विश्लेषण है। जीवन के सभी उतार-चढ़ाव को उन्होंने अपनी डायरी में रेखांकित किया है। इसमें छोटे-छोटे प्रसंगों का बड़ी सुंदरता से अंकन हुआ है। बेनीपुरी के डायरी के पन्नों में उनके द्वारा पढ़ी हुई साहित्यिक रचनाओं की विशेषताएँ दर्ज हैं; जिनके बीच से गुज़रते हुए हम लगातार महसूस करते हैं कि बेनीपुरी किस प्रकार अपने व्यक्तित्व को विकसित और समृद्ध करने की ग्रहणशीलता को लगातार आगे बढ़ाते रहते हैं; साथ ही बेनीपुरी ने समय-समय पर पढ़ी गई विदेशी साहित्यिक रचनाओं का परिचय अपनी सोच के अनुरूप दिया है। प्रस्तुत डायरी में साहित्य-संसार से संबंधित विविध गतिविधियों की सूचनाएँ मिलती हैं। अतः बेनीपुरी की डायरी हिंदी साहित्य की नहीं बल्कि विश्व साहित्य का संपूर्ण परिदृश्य है।

बेनीपुरी ने डायरी में भारतीय एवं पाश्चात्य महानतम् कलाकारों व उनकी कलाओं का परिचय दिया है। बेनीपुरी ने अपनी डायरी में कला के विविध रूप और रंग को उद्घाटित किया है। वे जीवन में कला के महत्त्व को स्वीकार करते हैं।

बेनीपुरी वह साहित्यकार हैं जो उत्तम सामाजिक संरचना के लिए सदैव जूझते हुए प्रयासरत रहे। ठहराव उनकी प्रकृति में नहीं था। उनकी डायरी से उनकी विचारधारा पूर्णतः स्पष्ट हो जाती है। बेनीपुरी की डायरी का चिंतन-क्षेत्र व्यापक है उन्होंने डायरी में जीवन के सभी क्षेत्रों का अध्ययन किया, समस्याओं पर विचार किया और उनकी वास्तविकताओं को पहचाना। उन्होंने अपनी डायरी में अपनी मान्यताओं को व्याख्यायित किया है। इस प्रकार बेनीपुरी की डायरी उनकी विविध चहुँमुखी मान्यताओं की परिचायक है।

स्पष्ट है बेनीपुरी का लक्ष्य केवल डायरी साहित्य की रचना मात्र नहीं था, बल्कि उनकी डायरी लगभगतः सभी क्षेत्रों को अपने आप में समेटे हुए है। बेनीपुरी डायरी के पन्नों में स्वयं की निजी जिंदगी व घटनाओं को महत्त्व नहीं देते, बल्कि उन घटनाओं पर उनकी प्रतिक्रियाओं का समावेश भी देखने को मिलता है। डायरी में उनका आत्म-विश्लेषण रहा है। जो भी व्यक्ति उनके जीवन में महत्त्वपूर्ण थे उन्होंने उन सभी को अपनी डायरी में अंकित किया तथा जगह-जगह टीका-टिप्पणी करते चले हैं। उनकी डायरी पढ़ने के पश्चात् हमें यह देखने को मिलता है कि वह प्रतिक्रियावादी व्यक्ति थे।

उनकी विदेश-यात्रा के दौरान लिखी डायरी यूरोपीय भ्रमण, दर्शन, भाव-विचार, यूरोपीय कला, कला-कृतियों का सूक्ष्म अध्ययन मिलता है। बेनीपुरी ने अपने जीवन काल में दो बार विदेश यात्राएँ की थीं। पहली यात्रा के एक-एक बिंदु को बेनीपुरी ने डायरी शैली में लिखित शीर्षक 'पैरों में पंख बाँधकर' के अंतर्गत प्रस्तुत किया। यह बेनीपुरी के जीवन के सुखद अनुभवों का प्रथम सजीव चित्रण है। इसमें बेनीपुरी की पूरी मनोदशा इसमें दिखाई पड़ती है। दूसरी विदेश-यात्रा 'उड़ते चलो, उड़ते चलो' भी डायरी शैली में लिखी हुई है। इसमें बेनीपुरी ने फ्रांस, इंग्लैंड, रोम, इटली और स्विट्ज़रलैंड का वर्णन किया है। इसमें यात्रा के सभी मधुर अनुभवों को बेनीपुरी ने बड़ी सुंदरता से चित्रित किया है। महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि जब हम इन रचना को पढ़ते हैं तो लगता है हम स्वयं हवाई जहाज पर उड़ते हुए यात्रा का सुखद आनंद ले रहे हैं। इनमें उन्होंने अपनी विविध अनुभूतियों का आँखों देखा हाल शब्दों में बाँधकर प्रस्तुत किया है। बेनीपुरी की डायरी शैली में लिखी यह

रचनाएँ आनंद, उल्लास, मनोरंजन, नवीनता आदि विशेषताओं से भरी हुई दिखाई देती हैं। रचनाओं में जगह-जगह पर लेखक का व्यक्तित्व व जीवन-दर्शन व्यक्त हुआ है। बेनीपुरी ने अपनी रचनाओं के माध्यम से सदैव देश के नव-निर्माण व देश की नव-रचना का सपना देखा तथा उसे पूरा करने के लिए अपनी डायरी में भिन्न-भिन्न सुझाव भी दिए हैं। बेनीपुरी ने अपने डायरी शैली में लिखे यात्रा साहित्य में सांस्कृतिक जगत का वास्तविक चित्रण किया है; उनकी दोनों विदेश-यात्रा डायरी ऐतिहासिक महत्त्व रखती हैं। दोनों यात्रा-डायरियों में बेनीपुरी ने यूरोपीय देशों की राजनीति, सामाजिक, आर्थिक स्थिति को स्पष्ट रूप से अंकित किया है साथ ही साथ वहाँ की साहित्य, कला और संस्कृति वहाँ का जन-जीवन लोक-प्रवृत्ति, कृषि और प्रकृति आदि विषयों पर सजीव अंकन किया है। स्पष्ट है कि उन्होंने अपनी दोनों यात्रा-डायरियों में देश-विदेश की भौगोलिक स्थिति से लेकर वहाँ के जन-जीवन के विविध रूपों को अंकित किया है।

बेनीपुरी की यात्रा-डायरियाँ यूरोपीय जनता की मनः प्रवृत्तियों को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करती हैं। बेनीपुरी की डायरी में गहरी संवेदना, तीखी अनुभूतियाँ, सक्रिय-विचार और सूक्ष्म दृष्टि का परिचय मिलता है, साथ ही उन्होंने अपने यात्रा-साहित्य में विदेशी जनता के बाह्य आचार-विचार, संस्कृति, वहाँ की प्रकृति, जन-जीवन, खान-पान, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियों आदि सभी का अत्यन्त सजीव चित्रण किया है। बेनीपुरी के यात्रा-साहित्य में कटु व मधुर दोनों ही अनुभवों का अध्ययन दिखाई देता है साथ ही हमें इन रचनाओं में बेनीपुरी के दर्शक व आलोचक दोनों ही रूप देखने को मिलते हैं।

डायरी में उनकी विदेश-यात्राएँ, ध्येय, उद्देश्य स्वदेश लौटने पर अपनी महत्वाकांक्षा की पूर्ति सिद्ध करने की ग़ज़ब की स्फूर्ति, साथ ही साथ आर्थिक चिंता, आत्म-संघर्ष, अध्ययन-मनन-चिंतन की व्यस्तता, नयादेश, नया समाज, और नया परिवेश, बनाने में अपने व्यक्तित्व को खपाने की बेतहाशा ललक-लगन साफ तौर पर दिखती है। यात्रा डायरी में यूरोपीय कला-कृतियों का बारीक निरीक्षण, भारतीय-पाश्चात्य, धर्म-दर्शन, संस्कृति, साहित्य, भाषा, कला, लोक व्यवहार की महत्त्वता आदि विषयों पर चिंतन-विचार-विश्लेषण प्रभावी रूप से अंकित है। इन

यात्रा डायरी को पढ़कर हम केवल साहित्यिक आनंद की अनुभूति ही नहीं प्राप्त करते, बल्कि देश-विदेश की अत्यंत सूक्ष्म एवं संवेदनशील जानकारी भी हासिल करते हैं।

बेनीपुरी की डायरी से पता चलता है कि बेनीपुरी के जीवन में परिवार का अत्यधिक महत्त्व था। व्यक्ति को जो आत्मीयता और प्रेम अपने परिवार से प्राप्त होता है। वह अन्यत्र नहीं मिल सकता। बेनीपुरी अपने परिवार के सदस्यों के बीच अत्यधिक सुख का अनुभव करते थे। स्पष्ट है कि बेनीपुरी एक पारिवारिक व्यक्ति भी थे।

बेनीपुरी के डायरी साहित्य से संभवतः यह पूर्णतः ज्ञात हो जाता है कि बेनीपुरी सदैव प्रकृति के प्रेमी रहे हैं, प्राकृतिक दृश्यों को देखकर वह अनायास ही उसकी ओर खिंचे चले जाते थे। वे एक भावुक हृदय के साहित्यकार थे। उनका प्रकृति से प्रेम होना स्वाभाविक था। डायरी में बेनीपुरी का भावुक हृदय प्राकृतिक सौंदर्य को देखकर अत्यधिक आनन्दित होता है। उनके प्रकृति-प्रेमी होने के संकेत उनके डायरी साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ते हैं।

उनकी डायरी लेखक के आत्म-चित्रण वर्णन-चित्रण के क्रम में एक संबंध निर्वाह है साथ ही साथ उनकी डायरी शिल्प की दृष्टि से भी एक स्वतंत्र लेखन है। उनकी डायरी में स्वाभाविकता, सच्चाई, सरलता और सजीवता का गुण मिलता है। उनकी डायरी का गद्य समूचा विषय-वर्णन और शिल्प-शैली की दृष्टि से सहज ही सहज है। किसी भी सृजन की सफलता का श्रेय सहजता को भी भली-भाँति जाता है, उनकी डायरी में उनका बुद्धि-पक्ष सहजता व सशक्ता से उभरा है। बेनीपुरी की डायरी सरल, सहज, प्रवाहपूर्ण और गहन अर्थ को वहन करने में पूरी तरह समर्थ है।

उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् यह स्पष्ट होता है कि डायरी में उनका जीवन दर्शन और व्यापक विश्व दृष्टि है। बेनीपुरी की डायरी अपने समय के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक आदि अन्य क्षेत्रों की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करने में महत्त्वपूर्ण एवं सशक्त भूमिका निभाती है। अर्थात् उनकी डायरी विलक्षण वैविध्य से भरी हुई है। बेनीपुरी डायरी में एक तारतम्य है, जो उनके जीवन और व्यक्तित्व से

सीधा जुड़ा है। बेनीपुरी ने अपनी व्यक्तित्व प्रेरणा को सार्वजनिक बनाने के लिए डायरी के पन्नों की रचना की। उनका जीवन वैविध्यपूर्ण अनुभवों से मुक्त था जिसके कारण बेनीपुरी ने रसात्मक, वैविध्यपूर्ण व रोचक डायरी लिखी। इस प्रकार बेनीपुरी की डायरी हर परिस्थितियों के विरुद्ध एक चुनौतीपूर्ण सकारात्मक प्रतिक्रिया है; एक ऐसी प्रतिक्रिया जो ठोस रूप में हिंदी साहित्य जगत में डायरी लेखन का आदर्श बन गई है। बेनीपुरी का डायरी साहित्य संवेदना की सर्जनात्मक उपलब्धि के रूप में स्वीकार किया जाता है। ये हिंदी गद्य साहित्य के लिए गौरव का विषय है।

ग्रंथ-सूची

ग्रंथ-सूची

आधार ग्रंथ

1. बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष, : डायरी के पन्ने, बेनीपुरी चेतना समिति, बेनीपुरी
(लेखक) चव्हाण, मुज़फ्फरपुर, 2006
गजानन/सिंह,
राजेश्वर प्रसाद (संपा०)
2. बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष : बेनीपुरी ग्रंथावली, खंड-चार पैरों में पंख बाँधकर
(लेखक) शर्मा, सुरेश (यात्रावृत्तान्त), राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,
(संपा०) 1998
3. बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष : बेनीपुरी ग्रंथावली, (खंड-चार) उड़ते चलो, उड़ते
(लेखक) शर्मा, सुरेश चलो, (यात्रावृत्तान्त) राधाकृष्ण प्रकाशन, नई
(संपा०) दिल्ली, 1998
4. बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष : बेनीपुरी ग्रंथावली, (खंड-आठ) मेरी डायरी,
(लेखक) शर्मा, सुरेश राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998
(संपा०)

सहायक ग्रंथ

1. अग्रवाल, भारत भूषण : हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव, ऋषभ चरण
जैन एवं सन्नति, दिल्ली, 1961
2. अज्ञेय, सच्चिदानन्द : अपने अपने अजनबी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन,
वात्स्यायन नई दिल्ली, सप्तम संस्करण : 1978
3. अज्ञेय : अरे यायावर, रहेगा याद ?, नेशनल पब्लिशिंग
हाउस, दिल्ली, नया सर्वोद्भूत संस्करण : 1965
4. अज्ञेय : आत्मनेपद, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, 1960
5. अज्ञेय : एक बूँद सहसा उछली, भारतीय ज्ञानपीठ, नई
दिल्ली, छठा संस्करण : 2008
6. अज्ञेय : नदी के द्वीप, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, तीसरा
संस्करण : 1951

7. अज्ञेय : शेखर : एक जीवनी पहला-भाग, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, 1944
8. अमरनाथ : हिंदी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2009
9. अमृतराय : बीज, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, नवीन संस्करण : 1984
10. अमृता प्रीतम : अमृता की डायरी, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 1985
11. अरोड़ा, सुधा : बगैर तराशे हुए (कहानी संग्रह), इकाई प्रकाशन, इलाहाबाद, 1968 ई०
12. असद, माजदा : गद्य की नई विधाओं का विकास, ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली, 1991
13. असद, माजदा : गद्य के विविध रूप, ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली, 1990
14. ओझा, दशरथ : समीक्षा-शास्त्र, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, द्वितीय संस्करण : 1956
15. उपाध्याय, देवराज : जैनेन्द्र के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली, 1968
16. उप्रेती, रेखा प्रवीण : हिन्दी का यात्रा-साहित्य (सन् 1960 से 1990 तक), हिन्दी बुक सेंटर, नई दिल्ली, 2000
17. 'कमलेश', पदम सिंह शर्मा : हिन्दी गद्य विकास और परम्परा, साहित्य संस्थान, नवीन शाहदरा, दिल्ली
18. कुमार, अजित : अंकित होने दो, भारतीय ज्ञानपीठ काशी, 1962
19. कोठारी, रजनी दुबे, अभय कुमार (हिंदी प्रस्तुति एवं संपा०) : भारत में राजनीति : कल और आज, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2005

20. कौशिक, विश्वम्भर : दुबेजी की डायरी, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, नाथ शर्मा 1958
21. खण्डेलवाल, : हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ, विनोद पुस्तक जयकिशन प्रसाद मन्दिर, आगरा, दसवाँ संस्करण : 1966
22. खन्ना, शान्ति : आधुनिक हिन्दी का जीवनीपरक साहित्य, सन्मार्ग प्रकाशन, बैंगलो रोड, दिल्ली, 1963
23. गुप्त, गंगाप्रसाद : हिन्दी साहित्य में निबन्ध और निबन्धकार, रचना 'बरसैया' प्रकाशन, इलाहाबाद, 1971
24. गुरु, राजेश्वर (संपा०) : गोदान, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1976
25. गुलाबराय : काव्य के रूप, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, संशोधित संस्करण : 1967
26. गुलाबराय : मेरी असफलताएँ, साहित्य-रत्न-भण्डार, आगरा, 1960
27. गोयनका, कमल : प्रेमचंद के उपन्यासों का शिल्प विधान, सरस्वती किशोर प्रेस, दरियागंज, दिल्ली, 1963
28. चंदर, सुभाष : हिन्दी व्यंग्य का इतिहास, भावना प्रकाशन, दिल्ली, 2008
29. गोरे, बलभीमराज : हिन्दी, भाषा, लिपि व साहित्य, विकास प्रकाशन, कानपुर, 1998
30. चतुर्वेदी, पंकज : आत्मकथा की संस्कृति, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2003
31. चतुर्वेदी, रश्मि : रामवृक्ष बेनीपुरी के रेखाचित्र : एक अध्ययन, साहित्य निलय, बौद्धनगर, कानपुर, 2005
32. चतुर्वेदी, रामस्वरूप : समकालीन हिन्दी साहित्य विविध परिदृश्य, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, द्वितीय संवर्द्धित संस्करण : 2000

33. चतुर्वेदी, रामस्वरूप : हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पंद्रहवाँ संस्करण : 2001
34. चव्हाण, गजानन : रामवृक्ष बेनीपुरी और उनका साहित्य, साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, 1984
35. चिदानन्द, तारिणी : साहित्य तथा उसकी विविध विधाएँ, तारामण्डल चरणदास प्रकाशन, अलीगढ़, 1985
36. चुघ, सत्यपाल : प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की शिल्प विधि, इकाई प्रकाशन, इलाहाबाद, 1968
37. ' चौहान, कन्हैयालाल : रामवृक्ष बेनीपुरी व्यक्तित्व एवं कृतित्व, प्रियकान्त बी० 'चिराग' प्रकाशन, अहमदाबाद (गुजरात), 2001
38. चौहान, शिवदान सिंह : आलोचना के मान, रणजीत प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिशर्स, दिल्ली, 1958
39. जार्ज, जेकब पी० : आधुनिक हिन्दी गद्य और गद्यकार, ग्रन्थम रामबाग, कानपुर, 1966
40. जैन, नेमिचन्द्र : अधूरे साक्षात्कार, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, द्वितीय संस्करण : 1989
41. जैनेन्द्र कुमार : परख, पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली, 1965
42. जैनेन्द्र कुमार : साहित्य का श्रेय और प्रेय पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण : 1976
43. जोशी, जीवन प्रकाश : गद्यकार बच्चन, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, 1976
44. तिवारी, रामचन्द्र : हिन्दी का गद्य-साहित्य, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, तृतीय संस्करण : 1992
45. तिवारी, राम खिलावन : माखनलाल चतुर्वेदी : व्यक्ति और काव्य, ग्रंथ भारती, कानपुर, 1966
46. दिनकर, रामधारी सिंह : दिनकर की डायरी, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1986

47. दिनकर, रामधारी सिंह : मेरी यात्राएं, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1986
48. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्कृति के चार अध्याय, उदयाचल, राजेन्द्र नागर, पटना, पंचम संस्करण : 1960
49. दिनकर, रामधारी सिंह : संस्मरण और श्रद्धांजलियां, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, 1987
50. देवराज : अजय की डायरी, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1960
51. देवराज : आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य और मनोविज्ञान, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1963
52. द्विवेदी, शान्ति प्रिय : परिव्राजक की प्रजा, इंडियन प्रेस, लिमिटेड, इलाहाबाद, 1952
53. द्विवेदी, हजारी प्रसाद : साहित्य-सहचर, नैवेद्य निकेतन, रवीन्द्रपुरी, वाणारसी, 1965
54. नगेन्द्र : भारतीय काव्य-शास्त्र की भूमिका, भाग-2, नई सड़क, दिल्ली, 1955
55. नगेन्द्र : हिन्दी वाङ्मय बीसवीं सदी, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, 1962
56. नगेन्द्र (संपा०) : हिन्दी साहित्य का इतिहास, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, अड़तीसवां एवं उनतालीसवां संस्करण : 2011
57. नाहर, रतिभानु सिंह : हिन्दी साहित्य : एक ऐतिहासिक अध्ययन, भारती भवन, पटना-1, 1969
58. नेहरू, पण्डित : मेरी कहानी, सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली, जवाहरलाल (संपा) सातवां संस्करण : 1948
59. नेहरू, जवाहरलाल : हिन्दुस्तान की कहानी, सस्ता साहित्य मण्डल (लेखक)/ टण्डन, प्रकाशन, नई दिल्ली, दसवीं बार : 2003
रामचंद्र (संपा०)

60. परीख, नरहरि द्वा० : महादेवभाभी की डायरी, पहला भाग, नवजीवन
(संपा०) प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, 1948
61. पोतदार, वसंत : यायावर की डायरी, पराग प्रकाशन, दिल्ली, 1982
62. प्रकाश, अरुण : गद्य की पहचान, अंतिका प्रकाशन, गाज़ियाबाद,
2012
63. प्रचंडिया, आदित्य : जैनेन्द्र के उपन्यास, तारामण्डल, अलीगढ़, 1994
64. प्रसाद, कमला/वर्मा, : परसाई रचनावली, खंड तीन, राजकमल प्रकाशन,
धनंजय/मिश्र, श्याम नई दिल्ली, 2005
सुन्दर/मलय/कश्यप
श्याम
65. प्रेमचंद : कुछ विचार, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, वर्तमान
संस्करण : 1982
66. बच्चन, हरवंश राय : बच्चन रचनावली, खंड-आठ, राजकमल प्रकाशन,
(लेखक), अजित नई दिल्ली, चौथा संस्करण: 2006
कुमार (संपा०)
67. बजाज, रामकृष्ण : जमुनालाल की डायरी, सस्ता साहित्य मण्डल,
(संपा०) नई दिल्ली, 1966
68. बेढ़ब बनारसी : लफ्टंट पिंगसन की डायरी, हिन्दी पॉकेट बुक्स
प्राइवेट लिमिटेड, शाहदरा, दिल्ली, 1968
69. भाटिया, कैलाश चन्द्र : विद्या विविधा, भारत प्रकाशन मंदिर, अलीगढ़,
1987
70. भाटिया, कैलाश चन्द्र : साहित्य में गद्य की नई विविध विधाएँ, तक्षशिला
प्रकाशन, नई दिल्ली, 1996
71. भारती, धर्मवीर : ठेले पर हिमालय, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन,
वाराणसी-5, द्वितीय संस्करण : 1970
72. 'मंगल', लालचन्द गुप्त : आधुनिक युगबोध और साहित्य, निर्मल बुक
एजेंसी, कुरुक्षेत्र, 2003

73. माचवे, प्रभाकर : द्वाभा, साहित्य भवन इलाहाबाद, द्वितीय संस्करण: 1959
74. माथुर, जगदीश चंद्र : जिन्होंने जीना जाना, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1971
75. मानव, विश्वम्भर : पीले गुलाब की आत्मा, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, 1962
76. मिश्र, रामदरश : आते-जाते दिन, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, 2008
77. मिश्र, रामदरश : आस-पास, इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली, 2010
78. मिश्र, रामदरश : जयवर्धन की पहचान, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1973
79. मुक्तिबोध, गजानन : एक साहित्यिक की डायरी, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी-5, 1964
80. यादव, राजेन्द्र : उखड़े हुए लोग, राधाकृष्ण प्रकाशन, नयी दिल्ली, दसवां संस्करण : 2001
81. यादव, राजेन्द्र : दुनिया : समानान्तर, अक्षर प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1978
82. यादव, राजेन्द्र : शह और मात, अक्षर प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण : 1980
83. यायावर, भारत (संपा0) : फणीश्वरनाथ रेणु चुनी हुई रचनाएँ-3, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1990
84. रघुवंश : हरी घाटी, भारतीय ज्ञानपीठ, काशी, 1961
85. राघव, रांगेय : धरती मेरा घर, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 1960
86. राय, गोपाल : उपन्यास की सरंचना, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2006
87. राय, रामवचन : भारतीय साहित्य के निर्माता : रामवृक्ष बेनीपुरी, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, पुनः मुद्रण : 2004
88. राय, विवेकी : बबूल, अनुराग प्रकाशन, वाराणसी, 2001

89. राय, विवेकी : मनबोध मास्टर की डायरी, जगताराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1984
90. वर्मा, धीरेन्द्र : मेरी कालिज डायरी, साहित्य भवन (प्रा०) लि०, इलाहाबाद, 1958
91. वर्मा, श्याम : आधुनिक हिन्दी गद्य शैली का विकास, ग्रन्थम रामबाग, कानपुर, 1961
92. वर्मा, श्रीकांत (लेखक) : श्रीकांत वर्मा रचनावली, खंड-दो, राजकमल त्रिपाठी, अरविन्द प्रकाशन, नयी दिल्ली, पहली आवृत्ति : 1999 (संपा०)
93. वाजपेयी, नन्ददुलारे : नया साहित्य : नये प्रश्न, मैकमिलन, दिल्ली, 1978
94. वार्धेय, लक्ष्मी सागर : आधुनिक हिन्दी साहित्य, हिन्दी परिषद, इलाहाबाद यूनीवर्सिटी, 1954
95. विपिन चन्द्र : आधुनिक भारत का इतिहास, ओरियंट ब्लैक खान प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पुनर्मुद्रित : 2012
96. विपिन चन्द्र / मुखर्जी, मृदुला / मुखर्जी, आदित्य : आज़ादी के बाद का भारत, 1947-2000, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, द्वितीय संस्करण : 2002
97. शुक्ल, ओम् : हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास, अनुसंधान प्रकाशन, कानपुर, 1964
98. शर्मा, ओमप्रकाश : जैनेन्द्र के उपन्यासों का शिल्प पांडुलिपि प्रकाशन, दिल्ली, 1975
99. शर्मा, रमेश चन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ़, 1996
100. शुक्ल, रामचन्द्र : हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, संवत् 2035 वि०
101. शुक्ल, विश्वनाथ : आस्ट्रेलिया की डायरी, तारामण्डल प्रकाशन, अलीगढ़, 1983

102. शुक्ल, सरला : पाश्चात्य जीवनी कला, राजर्षि पुरुषोत्तमदास
टण्डन हिन्दी भवन, लखनऊ, 1963
103. शर्मा, सुरेश (संपा०) / : बेनीपुरी ग्रंथावली, खंड-एक, राधाकृष्ण प्रकाशन
बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1998
(लेखक)
104. शर्मा, सुरेश (संपा०) / : बेनीपुरी ग्रंथावली, खंड-दो, राधाकृष्ण प्रकाशन
बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1998
(लेखक)
105. शर्मा, सुरेश (संपा०) / : बेनीपुरी ग्रंथावली, खंड-तीन, राधाकृष्ण प्रकाशन
बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1998
(लेखक)
106. शर्मा, सुरेश (संपा०) / : बेनीपुरी ग्रंथावली, खंड-चार, राधाकृष्ण प्रकाशन
बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1998
(लेखक)
107. शर्मा, सुरेश (संपा०) / : बेनीपुरी ग्रंथावली, खंड-पाँच, राधाकृष्ण प्रकाशन
बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1998
(लेखक)
108. शर्मा, सुरेश (संपा०) / : बेनीपुरी ग्रंथावली, खंड-छः, राधाकृष्ण प्रकाशन
बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1998
(लेखक)
109. शर्मा, सुरेश (संपा०) / : बेनीपुरी ग्रंथावली, खंड-सात, राधाकृष्ण प्रकाशन
बेनीपुरी, श्रीरामवृक्ष प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1998
(लेखक)
110. शर्मा, हरवंशलाल : हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास (चतुर्दश भाग),
(संपा०) / भाटिया, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, वि०सं० 2027
कैलाश चन्द्र
(सहायकसंपा०)

111. श्रीलाल : मकान, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, चौथी आवृत्ति
: 1982
112. सत्येन्द्र : समीक्षा के सिद्धान्त, विनोद पुस्तक मन्दिर,
आगरा, चतुर्थ संस्करण : 1968
113. सरकार, सुमित / : आधुनिक भारत (1885-1947), राजकमल
डोभाल, सुशीला प्रकाशन, नई दिल्ली पाँचवीं आवृत्ति : 2002
(हिन्दी अनु०)
114. सहगल, मनमोहन : उपन्यासकार, जैनेन्द्र मूल्यांकन और मूल्यांकन,
साहित्य भारती, 1976
115. सिंघल, शशिभूषण : साहित्य-विधाएँ, आधुनिक प्रकाशन, दिल्ली, 2002
116. सिंह, कमलेश : हिन्दी आत्मकथा : स्वरूप एवं साहित्य, नेशनल
पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, 1989
117. सिंह, नामवर (संपा०) : मलयज की डायरी-1 (1951-1960), वाणी
प्रकाशन, नई दिल्ली, 2000
118. सिंह, बच्चन : आधुनिक हिन्दी साहित्य का इतिहास, लोकभारती
प्रकाशन, इलाहाबाद, 1979
119. सिंह लाल साहब : डॉ० रांगेय राघव और उनके उपन्यास, अनुपमा
प्रकाशन, बम्बई, 1962
120. सुरेन्द्रन, आर० : स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास, लोकभारती प्रकाशन,
इलाहाबाद, 1996
121. सेक्सेरिया, सीताराम : एक कार्यकर्ता की डायरी, भारतीय ज्ञानपीठ,
काशी, 1972
122. सोनवणे, चन्द्र भानु : हिन्दी गद्य साहित्य, ग्रन्थम रामबाग, कानपुर,
सीताराम 1975
123. हरिमोहन : साहित्यिक विधाएं : पुनर्विचार, वाणी प्रकाशन,
दिल्ली, द्वितीय संस्करण : 2005

अंग्रेजी ग्रंथ

1. D.G. Naik : *Art of Autobiography*, Vidarbha Marathwada Book Company, Poona, India, 1962.
2. D.R. Gadgil : *The Industrial Evolution of Indian Recent Times*, Oxford University Press, Ely House, London, Fifth edition, 1971.
3. Legouis and Cazamian's : *History of English Literature*, Vol: 3, Shree Publication, New Delhi, 1996.
4. Roy Pascal : *Design and Truth in Autobiography*, First Published, Great Britain, U.S.A., 1960.
5. William Henry Hudson : *An Introduction to the Study of Literature*, George G. Harrap and Co. Ltd. London, Second edition, 1913.

शब्दकोश

1. आचार्य रामचन्द्र शर्मा : प्रमाणिक हिन्दी कोश, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1996
2. नगेन्द्र (संपादक) : मानविकी पारिभाषिक कोश, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1968
3. राम प्रसाद त्रिपाठी : हिन्दी विश्वकोश (खंड-पाँच), नागरी प्रचारिणी सभा, वाणारसी, 1965
4. धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी साहित्य कोश, भाग-एक, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, तृतीय संस्करण : 1985
5. धीरेन्द्र वर्मा : हिन्दी साहित्य कोश, भाग-दो, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, तृतीय संस्करण : 1985

अंग्रेजी शब्दकोश

1. *A Educational's New Millennium Advanced 21st Century Dictionary*, Bashir A Qureshi, Educational Publishing House, Delhi, 2011.
2. *A Dictionary of Literary Terms and Literary Theory*, J.A. Cuddon, John Wiley & Sons, 1998.
3. *Dictionary of Literary Terms*, J.A. Cuddon, Clarion Books, delhi, 1980.
4. *The New Encyclopaedica Britanica*, Vol. 4, Robert P. Gwinn, The University of Chicago, 15th edition: 1986.
5. *The New Shorter Oxford English Dictionary*, Vol. 1, Oxford University Press, 6th edition: 2007.
6. *The Oxford English Urdu Dictionary*, Shan-ul-Haque, 9th Edition, Oxford University Press, 1995.

पत्रिकाएँ

1. आजकल, प्रताप सिंह बिष्ट (संपादक), मई-जून 1994
2. आजकल, प्रताप सिंह बिष्ट (संपादक), अक्टूबर, 1995
3. आजकल, सुभाष सेतिया (संपादक), अगस्त, 1999
4. आजकल, सुभाष सेतिया (संपादक), दिसम्बर, 1999
5. आजकल, सुभाष सेतिया (संपादक), जनवरी, 2001
6. आजकल, सीमा ओझा (संपादक), सितम्बर, 2012
7. आजकल, कैलाश दहिया, फरहत परवीन (संपादक), दिसम्बर, 2013
8. इन्द्रप्रस्थ भारती, विजय बहादुर सिंह (संपादक), जनवरी-मार्च, 2006
9. कथादेश, हरिनारायण (संपादक), नवम्बर, 2010
10. दस्तावेज़, विश्वनाथ प्रसाद तिवारी (संपादक), अक्टूबर-दिसम्बर, 2004
11. प्रगतिशील वसुधा, वर्ष-4, अंक 2, जुलाई-सितम्बर, 2007
12. प्रगतिशील वसुधा, वर्ष-4, अंक-3, अक्टूबर-दिसम्बर, 2007
13. प्रगतिशील वसुधा, वर्ष-4, संख्या-1, अक्टूबर-दिसम्बर, 2007
14. प्रगतिशील वसुधा, वर्ष-5, संख्या-2, अक्टूबर-दिसम्बर, 2007

15. प्रगतिशील बसुधा, कमला प्रसाद (संपादक), जनवरी-मार्च, 2010
16. वर्तमान साहित्य, कूँवरपाल सिंह (संपादक), दिसम्बर, 2007
17. वर्तमान साहित्य, नमिता सिंह (संपादक), मार्च, 2011
18. वर्तमान साहित्य, नमिता सिंह (संपादक), जनवरी, 2013
19. वर्तमान साहित्य, नमिता सिंह (संपादक), फरवरी, 2013
20. वागर्थ, विजय बहादुर सिंह (संपादक), अगस्त, 2008
21. वागर्थ, विजय बहादुर सिंह (संपादक), अगस्त, 2009
22. वागर्थ, विजय बहादुर सिंह (संपादक), सितम्बर, 2010
23. वागर्थ, विजय बहादुर सिंह (संपादक), मई, 2010
24. साक्षात्कार, हरिभटनागर (संपादक), जून, 2003
25. साक्षात्कार, हरिभटनागर (संपादक), अगस्त, 2003
26. साक्षात्कार, हरिभटनागर (संपादक), मार्च, 2004
27. साक्षात्कार, हरिभटनागर (संपादक), अप्रैल, 2004
28. साक्षात्कार, हरिभटनागर (संपादक), अप्रैल-मई, 2010
29. हंस, राजेन्द्र यादव (संपादक), जून, 2011
30. हंस, राजेन्द्र यादव (संपादक), मई 2013